पारीक जाति का इतिहास भाग-३

हमारी कुलदेवियाँ

लेखक
रघुनाथ प्रसाद तिवाडी 'उमङ्ग'

प्रकाशक
तिवाडी मदनलाल पारीक शोध संस्थान, जयपुर

प्रथम सस्करण २०००

•

•

पुस्तक प्राप्ति स्थान
१ एफ-३७ ए घीया मार्ग
बनीपार्क जयपुर
२ बनविहारी भवन
नाहरगढ रोड नुक्कड
चादपोल बाजार जयपुर

•

प्रकाशक
तिवाडी मदनलाल पारीक शोध सस्थान
एफ-३७-ए घीया मार्ग बनीपार्क जयपुर

•

कम्प्यूटर कम्पोजिग
एक्सीलेन्स कम्प्यूटर्स
१५९-ए नाहरगढ नुक्कड
चादपोल बाजार जयपुर

•

मूल्य ३०१ रु मात्र

•

मुद्रक
राजस्थान प्रिन्टिग वर्क्स
जयपुर

HAMARI KULDEVIYAN by Raghunath Prasad Tiwari Umang

विषय-सूची



अम्बामाता – बैराठ



आदिकुमारिका कुमारिका

पृष्ठ १०५



असनोतरी (सिद्धिदात्री) पृष्ठ १०१



किसरिया – माताजी पृष्ठ १०१(१०३)

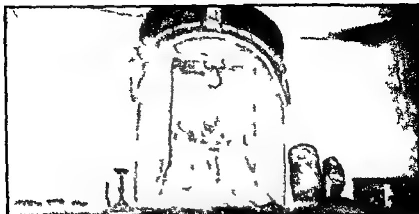


आद्याशक्ति भगवती दुर्गा

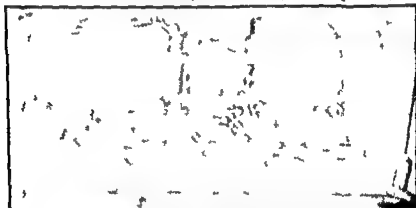


कुञ्जल माता (डेह – नागौर)

पृष्ठ १६९



मद्रकाली (भक्री – नागौर) पृष्ठ १५७(१६१)



भद्रकाली (त्योद काजीपुरा – साँभर) पृष्ठ १५७(१६४)



भद्रकाली (भवाल मेड़ता) पृष्ठ १५७(१६०)



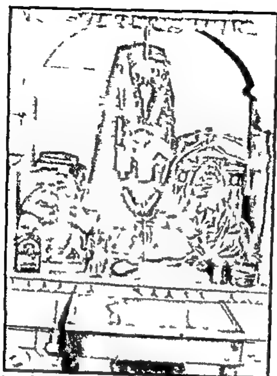
केसरी माता

पृष्ठ-१७९

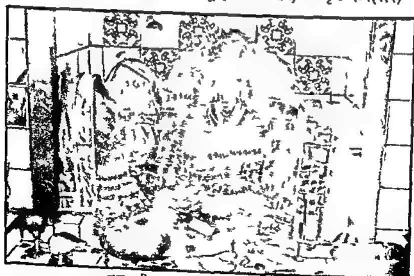


चामुण्डा माता खण्डेला पृष्ठ १९१(२००)

खीवज क्षेमजा माता कठौति (नागौर) पृष्ठ १८५



ब्रह्माणी (चतुर्मुखी) माता – पल्लू (सरदारशहर) पृष्ठ-२०३(२१६)



ब्राह्मणी माता (त्रिवेणी – शाहपुरा) पृष्ठ-२०३



जीण माता

पृष्ठ-२३३



तारामाता पृष्ठ-२५३



माता त्रिपुरसुन्दरी -- बाँसवाड़ा पृष्ठ-२६१(२७०)



नानणमाता नाद (पुष्कर)

पृष्ठ-२७५(२८०)

नानणमाता नाद (पुष्कर)

पृष्ठ-२७५(२८०)



पाण्डुक्यामाता — मेडता पृष्ठ २९१(३०८)



परापाढाय माता — डीडवाना पृष्ठ २९१(३०२)



परा कन्याकुमारी

पृष्ठ २९१(२९८)



बिजल विद्युद्रुपा माता पृष्ठ ३११



कुण्डलिनी शक्ति स्वरूपा भगवती ललिता

पृष्ठ-३११



सच्चियाय माता

पृष्ठ ३२५



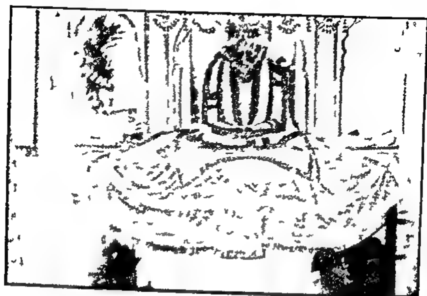
साकम्भरी
माता
सिकराय
(खण्डेला)

पृष्ठ ३४३(३५३)



साकम्भरी माता — साम्भर

पृष्ठ ३४३(३६६)



सुरसा सुरसाय मशा माता – आमेर पृष्ठ ३८३(३९१)



सुदर्शनमाता – सुदर्शनपुरा (कायमसार) पृष्ठ ३७३(३७५)

परमश्रद्धेय पिताश्री मदनलालजी तिवाड़ी (खण्डेला वाले)
की पुण्य–स्मृति मे सादर समर्पित श्रद्धा–सुमन



श्री मदनलालजी तिवाड़ी

जन्म पौष शुक्ला १ बुद्धवार वि स १९६२ (२७ दिसम्बर १९०५ ई)
निर्वाण चैत्र शुक्ला ८ (दुर्गाष्टमी) रविवार वि स २०३१ (३१ मार्च १९७४ ई)

जिनके स्नेहपूर्ण शुभाशीर्वाद के फलस्वरूप
प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रणयन सभव हुआ



रघुनाथ प्रसाद तिवाडी उमङ्ग
लेखक

भूमिका

जो कुछ हम अपने चारो ओर देखते है, सुनते है, जिसका अनुमान करते है अथवा परिकल्पनाएँ करते है, वह सब आखिर है क्या ? उसका मूल कारण क्या है, विकास और स्थिति का क्या रहस्य है और अन्त में इसका विलय कैसे, कहाँ हो जाता है ? यह एक अत्यन्त प्राचीन अथवा शाश्वत प्रश्न है—

कि कारण ब्रह्म कुत स्म जाता
जीवाम केन क्व च सम्प्रतिष्ठा ।
अधिष्ठिता केन सुखेतरेषु
वर्तामहे ब्रह्मविदो व्यवस्थाम् ॥
(श्वेताश्वतरोपनिषत् १-१)

जगत् का कारण क्या है, हम लोगो के जन्म का कारण क्या है, हम कैसे जी रहे है, अन्ततोगत्वा हमारी स्थिति कहाँ है, विपरीत परिस्थितियो मे भी हम किस कारण से टिके हुए है ? इत्यादि—

वेद से इसका उत्तर मिलता है—

'पुरुष एवेद सर्व यद्भूत यच्च भाव्यम्' यह जो कुछ है, हो चुका है और होने जा रहा है वह सब पुरुष ही है। यह पुरुष कौन ? क्या वह अकेला यह सब कुछ कर रहा है ? पुरुष प्रजापति है, वही इस महती सृष्टि-प्रक्रिया में छन्द, स्पन्दन या फड़कन के रूप मे अभिव्यक्त होता है।

प्रजापतिरेव छन्दोऽभवत्'
(शतपथ ब्राह्मण ७ २ ३ १०)

यह प्रजापति ओर छन्द क्या है ? कल्पना कीजिए, अतीत के अतीत काल म एक ऐसा युग था जब कुछ भी नहीं था— सर्वत्र अन्धकार था, तम ही तम छाया हुआ था, काई लक्षण प्रत्यक्ष नही था, न कोई जानने वाला

था, न कुछ ज्ञात था।[१] उस प्रशात अवस्था मे, जो एक तरगहीन, क्षोभविहीन परमप्रशात अधकार के सागर के समान थी, न जाने कैसे, कब, कहा से और क्यो एक प्रकार का स्पन्दन या फडकन पैदा हुई, बुदबुदे से उठे और तरगे उत्पन्न हुई। ये बुदबुदे या केन्द्रबिन्दु व्यक्त हुए अथवा हिरण्यगर्भ मे से हिरण्यरूप मे प्रकट हुए। हिरण्य का अर्थ व्यक्त, प्रकाशमान या तेजो-युक्त है और अव्यक्त, अप्रकाशित एव अधकारपूर्ण स्थिति का नाम हिरण्यगर्भ है। वह परम प्रशान्त, अस्पन्द, अज्ञात जो कुछ भी है वही परब्रह्म है। उसमें स्वगुणा से युक्त देवात्मशक्ति निगूढ रहती है। देव अर्थात् द्युतिमान् स्वप्रकाश, आत्म अर्थात् चित्-शक्ति और स्वगुण अर्थात् सत्व, रज और तम नामक गुणों का सम्मिलित रूप अचित्शक्ति है। जब तक वह परब्रह्म परम प्रशान्त रहता है उसमे वह शक्ति समान रूप से व्याप्त रहती है परन्तु स्पन्द के कारण वैपम्यावस्था उत्पन्न होते ही उस शक्ति-समुद्र म असख्य बिन्दु अथवा केन्द्र व्यक्त होगए। यही शक्ति का उद्भव या प्रादुर्भाव कहा जाता है। यही महाशक्ति का उन्मेप है जिससे जगत् का उदय होता है और इसी के निमेप से प्रलय हो जाता है।[२] इसी महाशक्ति को आद्या शक्ति कहते है– इसी से ससार का आदि अथवा आरम्भ होता है।

---

१ तादि नकौ नकी जदि तावड आभ न उग्गण अरस न अनड़।
क्रम्म न ध्रम्म नकौ जदि काळी ब्रहमड रूप नमो विगताळी ॥१०॥
माताजी री वचनिका

२ निमषान्मषाभ्या प्रलयमुदय याति जगती
तवत्याहु सन्ता धरणिधरराजन्यतनये।
तदुन्मषाज्जात जगदिदमशष प्रलयत
परित्रातु शङ्क परिहतनिमेषास्तव दृश ॥
(शङ्कराचार्यकृत-आनन्दलहरी)

हे पर्वतराज हिमालय की पुत्री! सन्ता का मत है कि आपक पलक मारत ही जगत् का प्रलय हा जाता है और पलक उघाडत ही उसका उदय हा जाता है। अब की बार दृगा का उन्मष हान स जो यह ससार बन कर खडा हा गया है वह कहीं पुन प्रलय क गर्भ म न समा जाय इसीलिए शायद आपन पलक मारना छाड दिया है।

— दवताओं की आखें नहीं झपकती हैं एसी मान्यता है।

अइयो सगति अनत प्रगट किया सारी प्रथी।
मुगराळी मैमत राखी तूही ज रिधू॥२१॥
— माताजी री वचनिका

परात्पर विभु अपनी ही शक्ति स आवृत (ढके हुए) ह। वह कहीं से आवृत ओर कही अनावृत है, इन दोना ही स्थितियो को साक्षी रूप में देखते रहते है।

य स्वात्मनीद निजमाययाऽवृत क्व च तत्तिरोहितम्,
अविद्धदृग् साक्ष्युभय तदीक्षते सोऽवतु माम् परात्पर ॥

अनावृत भाग और आवृत भाग दोनो ही परमात्मा के अविच्छिन भाग है। आवृत भाग ही ससार है। यह परमात्मा की अपनी ही मायाशक्ति से आच्छन्न हे। यह माया ही आद्याशक्ति कही गयी है। इसके विविध भेद है। ज्ञान, बल और क्रिया इसके स्वाभाविक रूप है। ज्ञान से पदार्थ (वस्तु) का बोध होता है, बल से उसका परीक्षण किया जा सकता है और क्रिया से उसका उपयोग होता है। इस तिकडी से ही जगत् की समस्त वस्तुए नियमित है।

यत्किंचिज्जगति त्रिधा नियमित वस्तु त्रिवर्गादिक
तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वत ॥
—लघुस्तव, १६

ससार मे जितनी भी त्रिवग से युक्त वस्तुए है वे सब त्रिपुर नाम्नी शक्ति के ही रूप हे।

यही नही, ससार की सभी वस्तुआ में शक्ति का निवास हे। स्वय इश्वर भी शक्ति के बिना कुछ नही कर सकते। जब शक्ति विश्वजननव्यापार म प्रवृत्त होती हे तभी ससार की रचना और विस्तार होता हे। अकेला ईश्वर कुछ नही करता।

शिय शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्त प्रभवितु
न चेदेव देवो भवति शक्त स्पन्दितुमपि॥

अकेला शिव तो शक्ति के बिना हिल-डुल भी नही सकता। शिव शब्द ही (इ) मात्रा के बिना 'शव' होकर रह जाता है।

इस प्रकार शक्ति ही जगत् के अणु-अणु म व्याप्त है। जितनी विद्याय है वे सब शक्ति के ही भेद है तथा ससार म जितने स्त्री पदार्थ है वे सब शक्ति के ही रूप है।

विद्या समस्तास्तव देवि भेदा , स्त्रिय समस्ता सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयेतत्, का ते स्तुति स्तव्यपरा परोक्ति ।।६।।
— श्री दुर्गासप्तशती, ११-६

देवी! सम्पूर्ण विद्याए तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हे। जगत् में जितनी स्त्रिया हे, वे सब तुम्हारी ही मूर्तिया हे। जगदम्ब! एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है? तुम तो स्तवन करने योग्य पदार्थो स परे एक परा वाणी हो।

नवदुर्गा आद्या महाशक्ति को दुर्गा कहा गया है क्योकि इसका रहस्य दुर्गम है। आदि म दुर्गा के नव स्वरूप माने गये हैं यथा—

प्रथम शैलपुत्री च द्वितीय ब्रह्मचारिणी।
तृतीय चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्।।
पचम स्कन्दमातेति षष्ठ कात्यायिनीति च।
सप्तम कालरात्रीति महागोरीति चाष्टमम्।।
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता ।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना।।

इन नामों स दुगा के प्राकट्य ओर विकास का क्रम ज्ञात होता है, यथा प्रथम शैलपुत्री अर्थात् यह हिमालय की पुत्री हे। फिर क्रमश इनका विकास हुआ।

माता के प्रथम स्वरूप का नाम शेलपुत्री है। पर्वतराज हिमालय के घर पुत्री के रूप म उत्पन्न हान के कारण इनका नाम शैलपुत्री, पार्वती आदि पडे।

नव दुगाआ म प्रथम शैलपुत्री दुर्गा का महत्त्व और शक्तिया अनन्त है। नवरात्रि पूजन में प्रथम दिवस इन्ही की पूजा ओर उपासना की जाती है।

शक्ति क दूसरे स्वरूप का नाम ब्रह्मचारिणी है। ब्रह्म शब्द का अर्थ तपस्या है। इन्हाने नारद के उपदेश से भगवान शकर का पति रूप म प्राप्त करने के लिए अत्यन्त कठोर तपस्या की थी। इसी दुष्कर तपस्या क कारण इन्हे तपश्चारिणी अर्थात् ब्रह्मचारिणी नाम स कहा गया। तपस्या के क्रम में इन्होंने पत्ता का भी खाना बन्द कर दिया इसलिए इनका नाम अपर्णा भी हुआ।

इसी आदि प्रकृति ने रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु की उत्पत्ति है- वही सर्वत्र देदीप्यमान है।[1]

सम्पूर्ण सृष्टि का अन्तर्भाव प्रतिष्ठा, ज्योति और यज्ञनामक शक्तियों के अन्तर्गत हो जाता है। सृष्टि का मूल कारण अक्षर-पुरुष सब से पहले इन्ही तीन रूपों में विकसित होता है। प्रत्येक पदार्थ में स्थितितत्व अथवा शक्ति होती है जिससे उसमें ठहराव या अस्तित्व आता है। इस शक्ति का नाम ब्रह्मा है। 'ब्रह्मा वै सर्वस्य प्रतिष्ठा' वही सृष्टि की मूलाधार शक्ति है। उत्पन्न होने वाली समस्त वस्तुओं में पहले प्रतिष्ठा का जन्म होता है। गतिसमुच्चय का नाम ही प्रतिष्ठा है। गति दो प्रकार की है, एक सब ओर जाने वाली गति, जो सर्वतो दिग्गति कहलाती है और दूसरी दो विपरीत दिशाओं में जाने वाली गति। इन दोनों के समन्वय से स्थिति उत्पन्न होती है। यही प्रथम सृष्टि है। स्थिति के अनन्तर क्रिया उत्पन्न होती है। बीज जब पृथ्वी में ठहर जाता है तदन्तर अकुरित होने की क्रिया होती है। प्रतिष्ठा के बाद नाम, रूप और कर्म के सम्बन्ध से वस्तु को स्वरूप प्राप्त होता है अर्थात् नाम, रूप और कर्म ही उस वस्तु का भान कराते हैं। यह भाति अथवा ज्योतिशक्ति ही इन्द्र के नाम से अभिहित है। स्वरूप प्राप्त होने के अनन्तर वस्तु में अन्न का आदान और विसर्ग होने लगता है। अन्न से तात्पर्य उस तत्त्व से

---

१ दवी ती दीवाण त्रिहु लाक में ताहरी।
विसन रुद्र ब्रह्माण्ड आद हि सिरज्या ईसुरी॥२०॥

—माताजी री वचनिका

शब्दाना जननी त्वमत्र भुवन वाग्वादिनीत्युच्यस
त्वत्त केशववासवप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति ध्रुवम्।
लीयन्त खलु यत्र कल्पविरतौ ब्रह्मादयस्त ऽप्यमी
सा त्व काचिदचिन्त्यरूपमहिमा शक्ति परा गीयस॥१५॥

—लघुस्तव

ह माता आप ही शब्दों (शब्दब्रह्म) की जननी हैं इसीलिए आप वाग्वादिनी नाम स समस्त भुवनो म विख्यात है विष्णु ब्रह्मा और इन्द्रादिक सभी शक्तियाँ आप ही से आविर्भूत होती है और कल्पान्त म आप ही में लीन हो जाती हैं। आपके रूप और महिमा का ठीक ठीक चिन्तन करना कठिन है, इसीलिए पराशक्ति के नाम से आपका स्तवन किया जाता है।

है जिसके आदान और विसर्ग से प्रतिष्ठा की स्थिति बनी रहती है। जड और चेतन सभी अन्न का आदान ओर विसर्ग करते है। जो शक्ति तत्तत्पदार्थ की स्थिति कायम रखने के लिए अन्न को खीचती है उसी का नाम विष्णु है। अन्न की सज्ञा साम है। अन्न को खींचकर जिसमे आहूति दी जाती है वह अग्नि है। साम की आहूति से अग्नि की प्रतिष्ठा बनी रहती है, वह घार, उग्र अथवा रुद्र नही होता। इस प्रकार विष्णु, सोम और अग्नि नामक शक्तियो के द्वारा यज्ञसष्टि होती रहती है। यह सृष्टि की तीसरी सीढी है। यही यज्ञ है, विष्णु है— 'यज्ञो वै विष्णु ।' इसमे विष्णु, सोम और अग्नि शक्तिया का अन्तर्भाव रहता है। ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु, अग्नि और सोम ये पाँचो ही अक्षरब्रह्म की शक्तियाँ है और इनसे पचाक्षरसृष्टि सभव होती है।

साम अन्न है और अग्नि अन्नाद अर्थात् अन्न को खाने वाला। जब तक अन्नाद को अन्न मिलता रहता है, वह शान्त रहता है— उसकी शक्ति बनी रहती है। अग्नि ही रुद्र है। सोम-तत्त्व अथवा शक्ति के सयोग से वह शान्त हाकर शिव बन जाता है। जब तक अन्न की आहूति नही दी जाती वह अग्नि रुदन करता हे इमीलिए रुद्र कहलाता हे। अन्नाहूति ही वह शक्ति है जा रुद्र को शिव अर्थात् कल्याणकारक बनाती है। सूर्य साक्षात् अग्नि है, रुद्र है। औपधि, वनस्पति आदि रस-गर्भित पदार्थो से वह अन्न का आहरण करता है तभी तक 'कल्याणा का निधान' बना रहता है। अन्नाहुति बन्द हाने पर रुद्ररूप बनकर सहारक बन जाता है। तात्पर्य यह है कि शिव का शिवत्व शक्ति के समन्वय पर निर्भर है। अव्यय-पुरुष की चिद्धनशक्ति का ही नाम साम है। यह विशाल अन्तरिक्ष म सर्वत्र व्याप्त रहती है, वही इन्द्र, रुद्र, विष्णु ब्रह्मादि-शक्तियो को स्व-स्वरूप म कायम रखती है। इसी का नाम महामाया है, यही हिरण्मय सोर-रुद्र को शिव बनाने वाली हैमवती (हिमभाव-सम्पन्ना) उमा है, शक्ति है। इस महाशक्ति का आलम्बन प्राप्त किय बिना ब्रह्म का ज्ञान नहीं हो सकता।

ऊपर कह चुके है कि चिद्घन अव्ययपुरुष की चित्-शक्ति ही जगत् का कारण है। पञ्चाक्षर-सृष्टि म इन्द्र, अग्नि और सोम इन तीन देवताओ की समष्टि को शिव-नाम से अभिहित किया जाता है। अग्नि और सोम क योग स ही जगत् बनता है— अग्नीषोमात्मक जगत्'— इन्द्र उसका भा, ज्योति

अथवा रूप प्रदान करता है। शिव से शक्ति का समन्वय होने पर वह परिणामी हो जाता है। शिव अधिष्ठान है और शक्ति उसकी अधिष्ठात्री, दोनो में अभिन्नता है। शक्ति ओर शक्तिमान के मिले हुए विलास का ही परिणाम जगत् है। अकेला ब्रह्म अथवा शिव जगत् का कारण नही हो सकता क्योकि वह निर्विकार है।

शक्तिजात हि ससार तस्मिन् सति जगत्त्रयम्।
तस्मिन् क्षीणे जगत् क्षीण तच्चिकित्स्य प्रयत्नत ॥

यह ससार शक्ति का ही कार्य है। शक्ति के आविभाव से तीनो ही जगत् उत्पन्न होते है और शक्ति का तिरोभाव होने पर उनका अभाव हो जाता है अत उसी शक्ति का चिन्तन करना चाहिए।

शिव की यह शक्ति दृश्यमात्र जगत् में, प्रत्येक शरीर म और जड़-चेतन-पदाथ मे विद्यमान है। चेतन की चेतनता और जड़ की जडता यही है। यह अव्यक्तरूप से दृश्य-अदृश्य जगत् म व्याप्त है और विश्व मे अनेक रूपो मे अभिव्यक्त होती है[१], यथा— विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शाति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, वृत्ति, दया, दीप्ति, तुष्टि, पुष्टि, भ्रान्ति आदि।[२] भक्त भी अपनी-अपनी भावनानुसार दुर्गा, महाकाली, महासरस्वती, अन्नपूणा, राधा, सीता, श्री-नामा से इसी महाशक्ति की आराधना करते हे, अथवा—

देशकालपदार्थात्मा यद्वस्तु यथा यथा।
तत्तद्रूपेण या भाति ता श्रये सविद कलाम् ॥
(यागिनीहृदयतन्त्र)

---

१ अन्त स्थिताप्यखिलजन्तुषु तन्तुरूपा
विद्योतसे बहिरिहाखिलविश्वरूपा।
का भूरि शब्दरचना वचनातिगासि
दीन जन जननि! मामव निष्प्रपञ्चम॥

२ प्रथमा विष्णुमाया च द्वितीया चतना तथा
बुद्धिर्निद्रा क्षुधा छाया शक्तितृष्णावथाष्टमी॥
क्षान्तिर्जातिस्तथा लज्जा शान्ति श्रद्धा च कान्तिका।
लक्ष्मीर्वृत्ति स्मृतिश्चैव दया दीप्तिस्तथैव च॥
तुष्टि पुष्टिस्तथा माता भ्रान्ति सर्वात्मिका तथा॥

(लघुसप्तशती—पृथ्वीधराचार्यकृत)

जो देश, काल, पदार्थ और आत्मा भेद से वस्तुओ के पृथक् पृथक् रूपों मे व्यक्त हाता है— ब्रह्म की उसी सवित्कला[१] का आश्रय ग्रहण करता है।

सवित्कला के सोपाधिक विविध रूप मायाशक्ति के परिणाम है। माया अपरिच्छिन्न ब्रह्म को परिच्छिन्न या मापने योग्य-सा बना देती है। जिससे मापा जा सके वह माया अथवा वह परमचैतन्य की नैसर्गिकपूर्णता को आवत करके जीव को भूलभूलैया म डाल देती है और वह उस स्व-स्वरूप की पूर्णता को न पहचानता हुआ मा या (यह वह नहीं है, इस भाव) के चक्कर में पड जाता है।

पहले कह चुके हे कि यह सब कुछ 'पुरुष' है। पुरुष से सामान्यरूप म जीव वा मनुष्य का ही अर्थ नही लेना है अपितु सृष्टि का प्रत्येक कण, सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु भी चैतन्यरूप पुरुष है जिसका प्रकृतिरूपा शक्ति से एकीभाव है। ब्रह्माड का एक-एक रजकण या अणु-परमाणु अपनी परिच्छिन्नता या आणवी चेतना को अभिव्यक्त करता है।

लोक म हम पदार्थो की शक्ति उनकी गति से मापते है। गति ही शक्ति है। किसी मे चलने-फिरने, कार्य करने, भार उठाने, सोचने-समझने आदि की जो सामर्थ्य या गति होती है उसको शक्ति कहते है। इसी प्रकार जिनको हम जड अथवा अचेतन पदार्थ कहते है उनमे भी किसी स्थान पर टिके रहने, भार को रोकने स्वय भारशील होने की शक्ति का माप हम करते है। शक्ति तन्तु रूप स सभी पदार्थो म अनुस्यूत है। शक्तिरहित पदार्थ का कोई भौतिक अस्तित्व नहीं रहता। उसका अन्तर्भाव कहाँ, कैसे हाता है, यह लम्बा विषय है। हम जिस पृथ्वी पर रहते है और जिसको अचला कहते है वह स्वय गतिमयी है। उसम गति भी एक तरह की नही, कई प्रकार की है। पहले वह अपनी धुरी पर घूमती है और इधर-उधर मडलाती भी रहती है। धुरी पर घूमने के परिणामस्वरूप दिन-रात का लक्ष्य हम करते है परन्तु मण्डलाने की गति बहुत

---

१ सवन्न स पूर्व अवस्था म परमज्ञान की सज्ञा परा सवित् हाती है। सवन्न अथवा स्पन्दन क अनन्तर प्रापञ्चिक ज्ञान क आधार पर वही सवित विविध कलाओ क रूप म व्यक्त हाती है। सदाशिव ईश्वर रुद्र विष्णु ब्रह्मा अग्नि सोम अथवा चन्द्रमा की सब मिलाकर १४ कलाएँ मानी गई हैं। इनका विवरण सौभाग्यरत्नाकर आदि ग्रन्थो म देखना चाहिए।

नवदुर्गाओ मे तीसरी शक्ति का नाम चन्द्रघण्टा है। इनका यह स्वरूप पराशान्तिदायक और कल्याणकारी है। इनके मस्तक पर घण्टे के आकार का अर्धचन्द्र है इसी कारण इन्हे चन्द्रघण्टा देवी कहा जाता है।

देवी के चौथे स्वरूप का नाम कूष्माण्डा है। अपनी मद (हल्की) हँसी द्वारा अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने के कारण इन्हें कूष्माण्डा देवी के नाम से कहा गया। कूष्माण्ड कुम्हड़े (कद्दू-कोळा) को कहते है जिसकी बलि इनको सर्वाधिक प्रिय है।

भगवती का पाचवा स्वरूप स्कन्दमाता का है। स्कन्द शिव के पुत्र का नाम है, यह कार्तिकेय के नाम से भी जाने जाते हे। इनकी माता होने के कारण ही इनका नाम स्कन्दमाता हुआ। कमल इनका आसन है इसलिए इनको पद्मासना (कमलासना) कहते है। सूर्यमण्डल की अधिष्ठात्री देवी होने क कारण इनका उपासक अलौकिक तेज कान्ति से सम्पन्न हो जाता है।

दुर्गा के छठे स्वरूप का नाम कात्यायिनी है। कत नामक ऋषि के पुत्र कात्य के गोत्र म प्रसिद्ध कात्यायन उत्पन्न हुए। इनकी पुत्री के रूप म उत्पन्न हाने क कारण इनका नाम कात्यायिनी हुआ। महर्षि कात्यायन ने ही सर्वप्रथम इनकी पूजा की इसलिए इनका नाम कात्यायिनी हुआ।

भगवती दुर्गा का सातवा स्वरूप कालरात्रि का है। यह दिखने मे अत्यन्त भयानक ओर काली होने पर भी सदैव शुभ फल ही देने वाली है इसी कारण इनका एक नाम 'शुभङ्करी' भी है।

शक्ति का आठवा स्वरूप महागौरी है। इनको आठ वष की बालिका के रूप मे पूजा जाता है, 'अष्ट वर्षा भवेद गौरी'। शिवजी को वर के रूप मे प्राप्त करने के लिए इन्होंने घोर तपस्या की। इसी के क्रम म इनके शरीर का रग काला पड गया परन्तु भगवान शिव ने गगा जल से मल-मल कर स्नान कराया तब यह विद्युत्-प्रभा के समान कातिमती-गौर हो गई, तभी से इनका नाम महागौरी पडा।

देवी का नवा स्वरूप सिद्धिदात्री का है। यह सब प्रकार की सिद्धि देने वाली है।

इन्ही देवियो के विभिन्न रूप देश-काल और मान्यता के आधार पर सर्वत्र प्रचलित हुए यहा तक कि देश-काल-कुल और व्यक्तियों के आधार पर इनके नाम बनते चले गये।

माता दुर्गा स्वय शक्तिस्वरूपिणी जगन्माता है। उन्होने ही अपनी मानव सन्तति को शक्ति प्रदान की है। केवल यही नही, उन्होने विविध लीलाओ के उदाहरण से यह भी सिद्ध कर दिया कि हम अपनी शक्ति को कहा और किस प्रकार काम म लाना चाहिए।

अद्भुत लीलामयी महाशक्ति की ही सत्ता सम्पूर्ण पदार्थो म चेतना रूप म सर्वत्र विद्यमान है। यही नही जड पदार्थ भी शक्ति स विहीन नही हे। यदि शक्ति न हा तो पत्थर पर पत्थर कैसे टिका रहे ? जल मे गति कहा से आये ?

किसी न किसी कार्य का सम्बन्ध भी किसी विशेष देवता या दवी से स्थापित होने लगा—– यहा तक कि विभिन्न शारीरिक अवस्थाओं को भी देवी का रूप माना गया यथा दुगा सप्तशती म आया है कि—–

जो देवी सब प्राणियो म क्षुधारूप मे स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो दवी सब प्राणियो म छायारूप म स्थित है, जा देवी सब प्राणियो म शक्तिरूप म स्थित है, जो देवी सब प्राणियो म स्थित है, जो दवी सब प्राणियो म क्षान्ति (क्षमा) रूप म स्थित है, जा देवी सब प्राणियो म जातिरूप से स्थित है, जो देवी सब प्राणियो मे लज्जारूप म स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में शातिरूप में स्थित है, जो दवी सब प्राणियो म श्रद्धारूप म स्थित हे जो देवी सब प्राणियो मे कान्तिरूप में स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। (५/२३-५५)

परमात्मका का विष्णुस्वरूप अणु-अणु मे व्याप्त है। इसी प्रकार उसकी महाशक्ति भी प्रत्येक अणु मे अनुप्रविष्ट है। इस प्रकार जगत् का प्रत्येक अणु देवस्वरूप एव देवीस्वरूप है। इसीलिए प्रत्येक पत्थर को देवता रूप मान लिया जाता है। उसी म दवी भी है। व्रणाक्ति पत्थर को शीतला माता के रूप में पूजा जाता है, यह सब जानते हे। देवी का यह व्यापक रूप सर्वत्र पूजित

हुआ। अपनी-अपनी श्रद्धानुसार लोगो ने देवी का नाम और रूप निर्मित कर लिया, इसीलिए देवी को विश्वव्यापिनी कहा गया है। विभिन्न समुदायो, क्षेत्रो और स्थानों मे वहा के रहने वाले लोगो की मान्यतानुसार देवी का स्वरूप निर्धारित हुआ। इस प्रकार लोकदेवी, ग्राम देवी और कुल देवी आदि के रूप मे देवी पूजी जाने लगी।

आद्याशक्ति को ज्योतिस्वरूपा कहा गया है। सभवत इसीलिए नवरात्र मे अष्टमी के दिन गृहणिया जलते कोयले पर घृत की आहूति देकर ज्योति प्रज्ज्वलित करती है और पूरा परिवार उसका दर्शन करता है। मातेश्वरी का प्रकाश विद्युत्-प्रकाश के समान कहा गया है इसीलिए देवी का एक नाम विद्युदुज्ज्वला भी हे जो समयान्तर मे 'बीजल' बन गया।

जब ब्रह्म में शक्ति अथवा बल उद्‌बुद्ध हो जाता है तब सृष्टिक्रम चालू होता है। ब्रह्म की सज्ञा रस हे और बल की सज्ञा माया। यह बल रस से कभी पथक् नही होता किन्तु कभी सुप्त, कभी उद्‌बुद्ध ओर कभी कुर्वद्रूप (कार्य करता हुआ) रहता है। जब बल सुप्त रहता है तो वह रस निर्विशेष ब्रह्म कहलाता है। इसका वाणी वर्णन नही कर सकती, मन उस तक पहुँच नही पाता।

'येतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह'

उद्‌बुद्ध बलवाला ब्रह्म परात्पर कहलाता है, वह नि सीम होता हे। उद्‌बुद्ध बल जब नि सीम ब्रह्म को ससीम बना देता हे, उसे परिच्छिन्न कर देता हे तो उसकी सज्ञा पुरुष हो जाती है। इसी पुरुष से जगत् की उत्पत्ति होती हे तब वह सत्य अथवा प्रकृति नाम से भी जाना जाता है।

अव्यय पुरुष दिव्य, अमूर्त, अज, अप्राण, अमान, शुभ्र, अक्षर और पर से भी परे होता है। उसमें क्रिया नहीं होती, वह लिप्त नहीं हाता, न वह कार्य है, न कारण है, उसमे घटा-बढी भी नही होती, परन्तु रस और बल के सघर्ष के परिणामभूत पुरुष म अनन्त शक्तियाँ उद्भूत होती है। ज्ञान, बल और क्रिया उसकी स्वाभाविक शक्तियाँ है— अन्य सभी शक्तिया का इन्ही में अन्तर्भाव हो जाता है। यही शक्तियाँ ससृति-प्रपञ्च की सर्जिका है—

न तस्य कार्य करण च विद्यत
न तत् समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यत।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च॥
(श्वेताश्वतरोपनिषत् ६-८)

अक्षर पुरुष को ही अव्यक्त, पराप्रकृति और परब्रह्म आदि नामो से सम्बोधित करते है। इसी प्रकृति के साथ जब पुरुषसज्ञक ब्रह्म का समन्वय होता है तब विश्व रचना होती है। तत् तु समन्वयात्' अथवा, जैसा गीता मे कहा गया है—

मयाध्यक्षेण प्रकृति सूयते च चराचरम्।' (९-१०)

मुझ अधिष्ठाता के समन्वय से यह प्रकृति चराचर जगत् को पैदा करती है।

सृष्टि मे जो कुछ प्रकृष्ट है और जो कुछ सृष्ट हुआ है वह सब प्रकृति ही है—

प्रकृष्टवाचक प्रश्च कृतिश्च सृष्टिवाचक ।
सृष्टौ प्रकृष्टा या देवी प्रकृति सा प्रकीर्तिता॥

इच्छा, ज्ञान और क्रिया इन तीनों महाशक्तियो के प्रतीक रूप म ही पराशक्ति के पाश, अकुश और धनुष, बाण नामक आयुधो की कल्पना की गई है—

इच्छाशक्तिमय पाश अकुश ज्ञानरूपिणम्।
क्रियाशक्तिमये बाणधनुषी दधदुज्ज्वलैम॥

पाश इच्छाशक्ति का प्रतीक है। जैसे, मनुष्य पाश मे उलझ कर फँसता ही चला जाता है वैसे ही इच्छाशक्ति के फन्दे में पड कर वह उलझता जाता है और उसका ससार बढता है, ज्ञान का प्रतीक अकुश है जो अविद्या अथवा भ्रम की ओर बढते हुए मन-मतग को सचेत करता है, धनुष और बाण क्रियाशक्ति क नमूने है।

मद होती है। पृथ्वी की तीसरी गति सूर्य की परिक्रमा करने की है जिससे हम वर्ष और मास का हिसाब लगाते है। अब सूर्य भी अपने इर्द-गिर्द घूमने वाले ग्रहों ओर उपग्रहो के साथ कृत्तिकामण्डल का चक्कर लगाता है ओर अभिजित् नक्षत्र की ओर बढ़ता है। सूर्य के चक्कर लगाने वाले ग्रह के रूप में पृथ्वी की यह चौथी गति है। फिर कृत्तिकामण्डल भी सौर-मण्डल के समान किसी बृहद्ब्रह्माड की परिक्रमा कर रहा है। वह पृथ्वी माता की पञ्चम गति मानी जा सकती है— परन्तु इससे आगे शक्ति का स्वरूप अज्ञात और अपरिमेय है। वह 'महतो महीयान्' है। इसी प्रकार बृहद्ब्रह्माण्ड से लेकर हमारे पशु, पक्षी, कृमि, कीट, पतगादि सभी चर पदार्थो के शरीरो का सघटन करने वाले अणु-परमाणुओ में भी गति रूप से वही शक्ति व्याप्त है। यही नही पेडा में, पत्तियो म, वनस्पति म भी उसी गति-शक्ति का रूप विद्यमान है। बीज से अकुर का विस्फोट गति का ही स्पष्ट रूप है, पत्तियाँ निकलना, शाखाओं मे रस-सचार होना आदि ऊर्ध्वगति वनस्पति म स्पष्ट रूप से परिलक्षित है। मिट्टी, ढेला, पत्थर, लोहपिण्ड आदि को हम निर्जीव ओर जड पदार्थ कहते है परन्तु कण-सहति ओर अधोगामिनी गति-शक्ति उनम भी होती है। अन्यथा एक से एक कण कैसे जुड़ा रहता है? ऊपर उछालते ही वह पदार्थ नीचे आ पडता है— यदि पृथ्वी न रोक ले तो और भी नीचे चला जाय। यह उसमे गति-शक्ति नहीं है तो क्या है?

हमारे शरीर सूक्ष्म-जीवकणा से बने है जिनको 'सैल' या कोष कहते है। प्रत्येक जीव कण म भी गति होती है। ये व्यवस्थित रूप से एक दूसरे के प्रति आकृष्ट और विकृष्ट होते रहते हे— इन कणा क अवयव अणु भी सजीव परमाणुओ से बने है। इसी प्रकार जिनको हम जड पदार्थ कहते है उनका भी विशकलन करने पर ज्ञात होता है कि प्रत्येक कण अणु और परमाणु भी अनेक विद्युत-कणा से बनता है। विद्युदणु दो प्रकार के होते हे— पॉजिटिव' और 'निगेटिव' इनको धन-अणु और ऋण-अणु कहेंगे। प्रत्येक धनाणु के चारो ओर ऋणाणु चक्कर लगाता है। वैज्ञानिको ने इस ऋणाणु की प्रदक्षिणा करने की गति का हिसाब लगाकर बताया है कि वह एक सैकिण्ड म एक लाख अस्सी हजार मील की रफ्तार से गतिमान है। इसी प्रकार प्रत्येक ऋणाणु की

प्रदक्षिणा परमाणु करता रहता है जो अणुओं से घिरा हुआ है। जैसे सौरमण्डल है वैसे ही प्रत्येक पिण्ड में वह परमाणु मण्डल क्रियाशील रहता है। इसीलिए कहा गया है कि 'अण्ड सो पिण्ड' अर्थात् जो कुछ ब्रह्माण्ड में हो रहा है वही सब प्रत्येक पिण्ड में हो रहा है। जिस प्रकार नक्षत्रों और ग्रहों में से कुछ हिस्से टूट-टूट कर नए उपग्रहादि बन जाते हैं और सौरमण्डल में अपनी स्थिति और गति बनाए रहते हैं उसी प्रकार से ऋणाणु भी छिटक-छिटक कर एक परमाणुमण्डल से दूसरे परमाणुमण्डल में अटकते हैं— परन्तु अपनी गति पकड़े रहते हैं। यह विसहति ही विविध पदार्थ रचना का कारण होती है। वैज्ञानिकों का वीक्षण और हिसाब यहाँ ही समाप्त नहीं हो जाता। प्रत्येक ऋणाणु भी अनेक सूक्ष्म सूक्ष्मतम अणु से निर्मित होता है जिसे प्रभाणु कहते हैं। प्रभाणु की गति का हिसाब एक लाख छियासी हजार तीन सौ मील प्रति सैकिण्ड के वेग से लगाया है। यही प्रभाणु जब छिटक-छिटक कर एक ऋणाणुमण्डल से अपर में सक्रान्त होते हैं तभी हमारी आँखें प्रभावित होती हैं अर्थात् उन पर रोशनी का प्रभाव पड़ता है। फिर, प्रभाणुओं के भी मण्डल होते हैं। प्रत्येक प्रभाणु अनेक कर्पाणुओं से बनता है और फिर प्रत्येक कर्पाणु की स्थिति सर्गाणु पर निर्भर है। इन सर्गाणुओं की गति का अनुमान लगाना, इनका माप करना या इनके स्वरूप की कल्पना करना असंभव है। इन्हीं से सर्ग अथवा सृष्टि का आरम्भ मान कर वैज्ञानिकों ने सांस ले ली है। परन्तु, यदि हम कल्पना करते चले जायें तो सर्गाणु की स्थिति भी उससे कहीं सूक्ष्म-सूक्ष्मतर अणु से बनती होगी। यों प्रकृति की किसी अवधि तक पहुँच कर वाणी भी लौट जाती है, मन भी हाथ फैलाकर रह जाता है। वही उसका 'अणोरणीयान्' रूप है। अन्ततोगत्वा यह सब अणु-प्रपञ्च एक ऐसे अणु के इर्द-गिर्द होता है जिसको 'स्थाणु' कहते हैं। वह स्वयं किसी भी गति विकार से प्रभावित नहीं है— इसीलिए स्थ-अणु है। इसी के चारों ओर विश्ववल्ली का प्रसार होता है। जैसे एक निष्पत्र नीरस स्थाणु (सूखा ठूठ) से लिपटकर फूल पत्तों से सम्पन्न सुशोभित वल्लरी उसके मूलस्वरूप को ढक लेती है और एक सुखद सुवासित एवं मोहक वातावरण बना देती है उसी प्रकार स्थाणु के चारों ओर विविध अणुमण्डल का प्रसार होता है और वह मूलतत्त्व उसमें अन्तर्निहित

रहता है।[1] शक्ति और शक्तिमान का एकीभाव होकर भी शक्ति का स्वरूप ऊपर उभर आता है।

ऊपर शास्त्रीय एव भौतिक विज्ञान के आधार पर जो यत्किञ्चित् विवेचन हुआ है उससे समझना चाहिए कि इस विचित्रताओ से भरे अनन्त विश्व मे हमे जो नाना प्रकार के अनुभव होते है वे सब वस्तुत शक्ति के आत्म-प्रकाश के ही परिणाम है। विश्व के मूल मे शक्ति पारमार्थिक रूप से परम तत्त्व-स्वरूप म विराजमान है। यह आद्याशक्ति समस्त तत्त्वो से परे भी है और सर्वतत्त्वमयी एव प्रपञ्चस्वरूपा भी है। इसी मे जगत् का बीज निहित है। शक्ति का अवलम्बन (ग्रहण) किये बिना आत्मप्रकाश अथवा आत्मज्ञान की सभावना नही है। जिस प्रकार आइने के सामने खडा होकर पुरुष प्रतिबिम्बरूप म अपने को पहचानता है[2] और कहता है 'मै यह हूँ', उसी प्रकार परमात्मा भी अपनी प्रकृति अथवा

---

१ इसी भाव का भगवत्पाद शकराचार्य न आनन्दलहरी म या व्यक्त किया है—
सपर्णामाकीर्णां कतिपयगुणै सादरमिह
श्रयन्त्यन्ये वल्लीं मम तु मतिरव विलसति।
अपर्णैका सेव्या जगति सकलैर्यत्परिवृत
पुराणोऽपि स्थाणु फलति किल कैवल्यपदवीम्॥

बहुत स लाग कितन ही गुणा क कारण सपर्णा या पत्राकीर्ण वल्ली का आश्रय ग्रहण करत है परन्तु मरा ता मत है कि इस जगत् म एकमात्र अपर्णाशक्ति (पत्र रहित वल्ली या पार्वती) की ही सवा करना समुचित है कि जिसस आश्लिष्ट स्थाणु (ठूठ अथवा शिव) भी (मोक्षरूपी) फल दन क योग्य बन जाता है।

२ मुखाभासको दर्पण दृश्यमाना
मुखत्वात् पृथक्त्वेन नैवास्ति वस्तु।
चिदाभासको धीषु जीवोऽपि तद्वत्
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽयमात्मा॥
(हस्तामलकम्)

दर्पण म जो मुख का प्रतिबिम्ब दिखाई दता है वह मुख ही है और कुछ नहीं इसी प्रकार प्रकृति क बुद्धिरूप स्वच्छ स्वरूप में जो चिद्रूप ब्रह्म (Ultimate Consciousness) का प्रतिबिम्ब पडता है वह तद्रूप (उसी का स्वरूप) है।

यह प्रतिबिम्ब ही जीव है। बुद्धिगत उपाधि भद क कारण अन्त करण दर्पण क भी अनन्त भद हो जात है इसलिए अनन्त प्रतिबिम्ब भद स अनन्त जीवात्मा की सृष्टि है।

शक्तिरूपा आत्मशक्ति मे निज का दर्शन करता है। जब आत्मा अपनी प्रकृति को पहचान लेता है तो वह कहता है 'मै यह हूँ, पूर्ण हूँ'। यही 'पूर्ण अहता' सत् चित् और आनन्दमय परमेश्वर की धनीभूत अभिव्यक्ति है। इस पूर्णाहता' की उपलब्धि के लिए पुरुष और प्रकृति अथवा शिव और शक्ति का योग परमावश्यक है। न अकेला शिव, न अकेली शक्ति जगत् का निर्माण करने म समर्थ है। जैसे प्रतिबिम्ब के अस्तित्व के लिए वस्तु और दपण दोना आवश्यक है उसी प्रकार सच्चिदानन्दघन की प्रतिबिम्बरूपा मूर्ति को प्रकट करने के लिए शक्ति-दर्पण भी परमावश्यक है।

विशुद्ध प्रकृति-दर्पण म प्रतिबिम्बित परमचित् के अनन्तभेद ही अनन्तजीव है। प्रत्यक जीव प्राकत-शक्ति (माया) के दीर्घकालीन सम्पर्क के कारण चिदानन्दमय स्व-स्वरूप को भूल कर उसकी प्राप्ति के लिए भटकता फिरता है। परन्तु, जब तक प्रकृतिमाता प्रसन्न होकर अपना पर्दा नही हटा लेती तब तक उसका परम आनन्दस्वरूप का ज्ञान नहीं होता। इसीलिए प्राणिया के समस्त व्यापार में प्रत्यक्ष ओर अप्रत्यक्ष रूप से शक्ति माता को प्रसन्न करने का ही प्रयत्न चलता रहता है। विविध प्रकार के शुभाशुभ कर्मो और कार्यों के द्वारा सापेक्षरूप से जीव आनन्द का अनुभव करता है। कर्मो की शुभता और अशुभता के फलस्वरूप विविध योनियों में जन्म ग्रहण करता हुआ, अन्नमय, प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोषो में प्रकृति के वश मे रहता हुआ जब कभी वह आनन्दमय कोष मे प्रवेश पा जाता है तो उसके प्राकृत बन्धनों मे कुछ ढिलाई आ जाती है अथवा प्रकृतिमाता प्रसन्न होकर अपनी पकड़ को शिथिल कर देती है तो वह जीव स्वातन्त्र्य का अनुभव करता हुआ अपने चिदानन्दमय स्वरूप को पहचान कर परमानन्द की अनुभूति करता है। अत शक्तिस्वरूपा प्रकृति माता की कृपाप्राप्ति के लिए ही अपनी-अपनी प्रवृत्ति क अनुसार कर्म करते हुए समस्त भूत उसका अर्चन करते रहते है और उसी के द्वारा मानव को स्व-स्वरूपापलब्धिरूप सिद्धि प्राप्त होती है।[१]

---

१ यत प्रवृत्तिर्भूताना यन सर्वमिद ततम।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दन्ति मानवा ॥

(भगवतगीता)

इस प्रकार ज्ञात हुआ कि स्व-स्वरूप को पहचानने को छटपटाते हुए मानव के लिए शक्ति-साधना की प्रवृत्ति स्वाभाविक और अनिवार्य है। बिना शक्ति (बल) के आत्मा की उपलब्धि नहीं हो सकती—

'नायमात्मा बलहीनेन लभ्य ।'
(भगवद्गीता)

इस रहस्य को ऋषियो ने ध्यान और योग के द्वारा ज्ञात किया।[1] देश और काल भेद से उसके प्रकार और नामादिको म अन्तर अवश्य दिखाई देता है परन्तु मूल में समस्त ससार एकमात्र शक्ति के अधीन है और उसी के साधनाराधन मे लगा हुआ है। वेदोपनिषदादिक अत्यन्त प्राचीन साहित्य में तो अजा आद्याशक्ति आदि रूपो मे शक्ति-सदर्भ मिलता ही है, बाद के बौद्ध साहित्य मे भी प्रज्ञापारमिता, वज्रवाराही, तारा[2], मणिमेखला[3], करुणा, शून्यता आदि शक्तिरूपिणी देवियो की आराधना के विस्तृत और विशुद्ध विवरण प्राप्त है। जैन-शासन मे भी प्रत्येक तीर्थङ्कर की शासन-सत्ता तत्रशक्ति और सारस्वतकल्प को इष्ट माना गया है। बाइबिल और कुरान मे भी ईश्वर की श्वसनशक्ति को सृष्टि का कारण माना गया है तथा कहा गया है 'आदि सष्टि म शक्ति का स्थान प्रमुख' हे।'[4] इस प्रकार शक्ति की सर्वव्यापकता ओर सर्वमान्यता स्वयसिद्ध हे।

लौकिक अर्थो मे शक्ति की परिभाषा और मान्यता अन्तरग में एक होते हुए भी बाह्यरूप म बदलती रही है। वैदिक कर्मकाण्ड युग मे अधिकाधिक यज्ञो का अनुष्ठान करने वाला ही शक्तिशाली समझा जाता था। 'शतक्रतु' 'सहस्रयज्वा' आदि शब्द इसके प्रमाण है। उपनिषदो मे ब्रह्मनिष्ठ ओर आत्मदर्शी

---

१ त ध्यानयोगानुगता अपश्यन्
दवात्मशक्ति स्वगुणैर्निगूढाम्।
य कारणानि निखिलानि तानि
कालात्मयुक्तान्यधितिष्ठत्यक ॥
(श्वताश्वतरोपनिषद्)

२ बौद्ध ॐकार अथवा प्रणव को तार कहते हैं उसकी पत्नी तारा कहलाती है।

३ समुद्र क तूफानों म रक्षा करन वाली दवी।

४ खल्कनामिन् कुल्ल शयीन जौजैन्।
(कुरानशरीफ)

अल्लाह पाक न फरमाया है कि मैन सब चीज जोडा क रूप म पैदा की है।

का ही बल सर्वश्रेष्ठ माना जाता था। बाद मे 'यस्य बुद्धिर्बल तस्य' की उक्ति प्रयोग मे आई और अन्ततागत्वा 'लाठी जिसकी भैस' भी चरितार्थ होती रही ओर होती भी है। वर्तमान मे वैज्ञानिक आविष्कारो की होड लगी हुई है। अणु शक्ति की वेगवत्ता और प्रध्वंसिनी क्रिया का दर्शन करके कुछ लोग फूले नही समा रहे है और विश्व मे सर्वश्रेष्ठता का दावा कर रहे है। वस्तुत यह अनात्मभाव अथवा जड भाव के ही आधिक्य के कारण है। परन्तु, प्रकृति, आद्याशक्ति, माया, जो भी हम कहे, जगत् का अथवा अपनी सृष्टि का समत्व नष्ट नही होने देती क्योकि उसकी मूल स्थिति, अमान, अस्पन्द, अनादि ब्रह्म मे निहित है। यह दृश्य, कल्पनीय और कल्पनातीत भी है। विश्व, ब्रह्माण्ड आदि नाम से कहा जाने वाला प्रपञ्च केवल उस ब्रह्म मे किञ्चित् स्पन्दमात्र से उदबुद्ध चित्-शक्ति का विलास है— परन्तु, वह स्वय और उसमे अन्तर्निहित एकीभूता अनुद्‌बुद्ध अक्षुब्ध शक्ति उस उद्‌बुद्ध अश से कितनी बडी है यह सहज ही में सोचा जा सकता है। ससार के सभी तथाकथित सृष्टिकर्ता, रक्षक और विनाशक तत्त्व अपना क्षणिक चमत्कार-सा दिखावेगे और भुनगो के समान अस्थायी चमक दिखाकर विलुप्त हो जावगे, [१] शेष रह जावेगा वह अशेष जिसमे न निमेष है, न उन्मेष।

भगवती शक्ति विश्वजननी है। वह विश्व के हित मे समय समय पर जब भी अविद्याजन्य क्लेश बढ जाते है तो, अपनी श्रेयस्करी एव क्लेशहारिणी कलाओ को विकसित करती है और विश्व व्यापार मे अनिष्ट की बाधा को दूर करती है—

---

१ श्रीमच्छङ्कराचार्य ने कहा है—

विरिञ्चि पञ्चत्व व्रजति हरिराप्नाति विरतिं
विनाश कीनाशा भजति धनदो याति निधनम्।
वितन्द्रा माहेन्द्री विततिरपि सम्मीलितदृशा
महासहारेऽस्मिन् विहरति सति त्वत्पतिरसौ॥

(सौन्दर्यलहरी)

सृष्टि का विरचन वाला ब्रह्मा पञ्चत्व (मृत्यु) को प्राप्त हो जाता है हरि (विष्णु) अपने कार्य से विरत हो जाते हैं। (क्रियाहीन होकर समाप्त हो जाते है) यमराज का विनाश [illegible] जाता है कुबेर की मृत्यु हो जाती है महेन्द्र का समस्त प्रसार और व्यापार आँख मूँद लेता है (समाप्त हो जाता है) परन्तु हे सति (सत् शक्ति!) इस महासहार मे भी तुम्हारा पति विहार करता रहता है।

इत्थ यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदावतीर्याह करिष्याम्यरिसक्षयम्॥
(सप्तशती)

'जब जब दानवो द्वारा बाधा उपस्थित की जायेगी तो मे अवतीर्ण होकर दुष्टो का क्षय करूगी।' जगज्जननी के इसी कारुण्य म आस्था रखता हुआ मानव भगवती शक्ति की विविध प्रकार से उपासना करता है क्योकि विश्व मे स्थिति अथवा सहार के देव-तत्त्वो की हीनता यदि किसी मे आ भी जाय तो उसे इतना हीन नही माना जाता जितना कि शक्तिहीन होने पर। कोई अपनी स्थिति बनाए रखने मे अथवा शत्रुओ का सहार करने म आशानुकूल सफल नही होता है तो कोई बात नही, परन्तु यदि वह हिम्मत अथवा शक्ति ही खो बैठे तो तिरस्करणीय हो जाता है। किसी को विष्णुहीन या रुद्रहीन कह कर तिरस्कृत नही किया जाता, किन्तु यदि वह शक्तिहीन हो गया है तो निकम्मा ही माना जाता है। इसीलिए शक्ति की साधना सतत चलती रहती है।

ससार मे, मुख्यत प्राणियो मे, अस्तित्व के लिए सघर्ष ही प्रधान है। परस्पर विरोधी तत्त्व एक दूसरे को हटा कर या नष्ट करके अपनी स्थिति को दृढ एव कायम रखने के लिए सघर्ष म शक्ति का प्रयोग करते है और इसी के लिए शक्ति-सचय के प्रयत्न करते रहते है। देवासुर-सग्राम से लेकर आज तक के महायुद्धादिक इसी तथ्य पर आधारित है। मानवो के अन्तर्बाह्य सघर्ष भी इसी के परिणाम है। इन सघर्षों मे जहाँ बल-प्रयोग के द्वारा अनिष्ट तत्त्वो का अपसारण अथवा विनाश आवश्यक हे वहाँ समान एव हितकर तत्त्वो की सहति अथवा उनका सघटन भी परमावश्यक है। इसीलिए सघ को शक्ति कहा गया है। सघ-शक्ति अस्तित्व के लिए एक महान् आवश्यक एव अपरिहार्य गुण है। राज्य, महाराज्य, साम्राज्य, भौज्य आदि की परिकल्पना, वर्ण-व्यवस्थानुसार जातिसघटना एव सामाजिक निर्माण आदि भी इसी सघशक्ति की साधना के परिणाम है। इसी प्रकार राष्ट्रशक्ति भी उसी चितूशक्ति का बाह्य रूप है जो जगत् के मूल म निवास करती है। देश-विशेष मे उत्पन्न हुए जन-समूह की सामाजिक इच्छा-शक्ति के पिण्ड का ही नाम राष्ट्र है। गतिशील सार्वभौम शक्ति की क्रियाशीलता से ही इसकी उत्पत्ति होती है। इसी म रहकर मानव अपने समाज के माध्यम से अपनी आकाक्षाओं की पूर्ति करता है। आदर्शो

की क्रियान्विति के साधन ढूढता है, श्रेयस् सप्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। अपना हित राष्ट्र हित म मानता है। राष्ट्र की कीर्ति बढाने मे अपना योग आवश्यक समझता है।[१]

जिस प्रकार अणु-सहति से अणुमण्डल और फिर उसके सतत गुणन-विस्तार से असख्य सर्गाणुमण्डल, कर्पाणुमण्डल, प्रभाणुमण्डल, नक्षत्र-मण्डल, सौर-मण्डल, कत्तिकामण्डल और विश्व-मण्डल आदि बनते हैं वैसे ही प्रत्येक जन के शक्ति-कण से जाति, समाज, देश और राष्ट्र का निर्माण होता है। फलत राष्ट्रों की सहति से विश्व-राष्ट्र-मण्डल का निर्माण होता है। राष्ट्र के जन-जन की विकसित इच्छाशक्ति ही समष्टि रूप म प्रबुद्ध राष्ट्र-शक्ति के नाम से अभिहित होती है। व्यक्ति का विकास ही राष्ट्र का विकास है। जिस प्रकार व्यक्ति के विकास का चरम लक्ष्य अपने सत्, चित् और आनन्दमय स्व स्वरूप की उपलब्धि मे है उसी प्रकार राष्ट्र के चरम विकास का लक्ष्य भी सत्य, शिव और सुन्दर की प्राप्ति में निहित है। जिस प्रकार जीव की परिच्छिन्न-शक्ति अव्यक्त, अव्यय ब्रह्म की आदि-महाशक्ति का ही अश है उसी प्रकार प्रत्येक जन और तदनु राष्ट्र विश्व-राष्ट्र का अश है। राष्ट्र को ही शक्ति कहा जाता है। अधिकाधिक शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रो की प्रतीक रूप म विश्व-शक्ति (World Power) कहने का उदाहरण सामने है। जैसे-जैस व्यक्ति का विकास होता है, वह पूर्व-पूव सकीर्ण वृत्त से आगे बढता हुआ उत्तरोत्तर वहद्वत्त मे प्रसार करता है। माता की कोख, गोद, घर के प्रागण, गाव, नगर, प्रदेश, देश, राष्ट्र, राष्ट्रमण्डल और विश्व के दायरो को तोड कर वह विकसित होने की इच्छा करता है। पूर्ण-प्रबुद्ध व्यक्ति की मातृ-भावना अपनी माता, भौगोलिक-परिधि म आए हुए मातृ-भूमि या अमुक राष्ट्र नाम से अभिहित भूखण्ड तक ही सीमित नही रहती। वह अखिल विश्व की जन्मदात्री अनन्त

---

१ उपैतु मा देवसख कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धि ददातु मे।

(श्रीसूक्त)

हे देवताओं के मित्र अग्नि! मुझ कीर्ति और धन प्राप्त हो। मैं इस राष्ट्र म उत्पन्न हुआ हूँ, अत मुझ य दोनों सुलभ हो।

शक्ति से सम्बद्ध है। परन्तु, इन अन्तर्वृत्तो का कोई महत्त्व ही न हो, यह बात नही है। ये सब सीढियाँ है जिनके द्वारा उत्तरोत्तर उच्च स्थिति में पहुँचा जाता है। अत हमारी शक्ति-उपासना का आध्यात्मिक स्वरूप जहाँ परम चित्-शक्ति के साक्षात्कार के प्रति प्रयत्नशील होने मे है वहाँ लौकिक रूप म अपने व्यक्तित्व-विकास द्वारा क्रमश विश्व राष्ट्र मे अपनी स्थिति को समझते हुए उसे सुसमृद्ध और समुन्नत बनाने के प्रयत्नों मे योगदान के रूप म निहित है।

जब हम किसी पदार्थ अथवा आदर्श को प्राप्त करने की इच्छा करते है तो वह हमारा इष्ट हो जाता है। उसकी प्राप्ति के लिए जिन उपायों, क्रियाओ अथवा साधनो को हम गम्भीरतापूर्वक अपनाते है वे ही हमारी उपासना के उपकरण बन जाते है। वे हमें हमारे इष्ट के पास ले जाकर बैठा देते है। अत उपासना का अर्थ वह साधन है जो हमें हमारे इष्ट को प्राप्त कराता है। इष्ट-प्राप्ति के लिए शक्ति का उपयोग आवश्यक होता है, इसलिए जब हम अभीष्ट वस्तु की उपलब्धि के लिए अपने में अन्तर्निहित शक्ति को उद्बुद्ध करने के जो उपाय अथवा साधन अपनाते है वही हमारी शक्ति-साधना है, उपासना है। शारीरिक शक्ति के लिए विविध प्रकार की शारीरिक क्रियाओ और योगासनादि की नियमित साधना की जाती है। इसी प्रकार मानसिक एव आध्यात्मिक शक्ति की सम्प्राप्ति क लिए मत्र-जाप और शब्द-साधन आदि आवश्यक होते है। वस्तुत मत्र-साधन भी योग के ही अन्तर्गत माना जाता है। अत योग-साधन को ही शक्ति-उपासना का मुख्य रूप कहा जाता है। योग के द्वारा हम माया-शक्ति को प्रसन्न करके उसे अपना आवरण हटाने के लिए कृपावती बनाते है और इस साधन के द्वारा जीव का ब्रह्म से योग होना सभव होता है अथवा लौकिक अर्थ में हमारे इष्ट से हमारा योग होता है, इसी कारण इसे योगमाया कहते है। यही हमारी समस्त उपलब्धियो के लिए आधार शक्ति है।

इष्ट-प्राप्ति के लिए अनिष्ट तत्त्वा का निवारण भी आवश्यक होता हे और उसमे भी शक्ति का प्रयोग अनिवार्य है। परस्पर विरोधी शक्तिया के सघर्ष का ही नाम युद्ध है। सृष्टि का प्रत्येक कण और जीव अस्तित्व के लिए सघर्षरत रहता है। राग, द्वेष, मोह, अस्मिता और अभिनिवेश, ये अविद्या रूपी पञ्च-क्लेश कहलाते है, जो वैराग्य, ज्ञान, ऐश्वर्य और धर्म-स्वरूप विद्या-बुद्धि को आवृत करते रहते है। इन्ही के सघर्ष रूप मे आदि से अब तक युद्धादिक होते रहे है। 'सप्तशती' का चण्डी-असुर युद्ध वर्णन इसी का प्रतीक है। महिषासुर पशुभाव

और क्रोध का द्योतक है, इसी प्रकार धूम्रलोचन और मधु-कैटभ मोह के, चण्ड-मुण्ड अहंकार के, रक्तबीज काम का और शुम्भ-निशुम्भ लोभ के मूर्तिमान् नमूने है। ये सब अविद्या-विकार जब-जब प्रबल होते है, तभी देवता या दिव्यभाव आदिशक्ति की शरण मे जाकर इनके उत्पात को शान्त करने के लिए प्रार्थना करते है, अविद्या बल के आवरण को हटाकर विद्या बल को प्रबुद्ध करने को सचेष्ट होते है। अविद्याजन्य विकार आसुरी-सम्पत् कहलाते है, इनका हनन करके इनको पराविद्या की दैवी-सम्पत् मे परिणत करना ही शक्ति की उपासना है। इन विकारो के हनन का नाम ही बलि है, वही यज्ञ है।

योग, यज्ञ और बलि आदि तान्त्रिक क्रियाओ के साथ ही शक्ति-उपासना में मत्रो का भी बडा महत्त्व है। मन्त्र के द्वारा मूल साधन-शक्ति अधिक शक्तिशालिनी होकर व्यक्त होती है। वस्तुत परा चित्शक्ति मत्र में ही व्यक्त होती है और जाप के द्वारा साधक मत्र को जागृत करता है। वायु की लहरियों से जिस प्रकार अग्नि प्रज्वलित होती है उसी प्रकार मन्त्र जाप से जीव-शक्ति उद्दीप्त होती है। मत्र अक्षरो से बनते है, अक्षर ब्रह्म का स्वरूप है। मत्र से विश्व-विज्ञान की सप्राप्ति और ससार-बन्धन से मुक्ति-लाभ होता है।[1]

भूत मात्र मे शक्ति का निवास है।[2] नाम, रूप गुणादि भेदो के कारण विविधता प्रकट होती है। इसी कारण उपासना के भेद उत्पन्न होते है। परन्तु सब का लक्ष्य एक ही है ओर वह है आत्मानुभव। दुर्गा, चण्डी, महाविद्या आदि भेद और विविध उपासना के प्रकार एक ही महाशक्ति की कृपाप्राप्ति के साधन है। यही क्या, हमारी प्रत्येक हरकत उसी महामाया की उपासना का रूप है।

साधु-परित्राण, दुष्कृत-विनाश और प्राकृत धर्म-सस्थापन के लिए शक्ति के विविध रूप अवतरित होते रहते है और लोक मे प्रकृति विभेद से उपासना के विभिन्न प्रकारों का आविष्कार होता रहा है।[3] सृष्टि - शक्ति, ब्राह्मी शक्ति

---

१ इस विषय पर विशेष सूचना के लिए भूमिका लेखक द्वारा सम्पादित भुवनेश्वरी महास्तोत्र का प्रास्ताविक परिचय पढ़ना चाहिए।

२ जड धेठ एगर जीव जगि साग मझ सगति।
ता विण प्रम क्रम न थियै भगवति नह भगवत्ति॥ १७॥
— माताजी री वचनिका पृ २१

३ वचनिका मे भी शक्ति के विविध रूपों के नाम गिनाए गय है देखिए पृ ३८ ३९

के नाम से पूजित होती है, इसी प्रकार लय-शक्ति को माहेश्वरी शक्ति कहते है, इसके एक ही इशारे मे समस्त विश्व-प्रपञ्च का लय हो जाता है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव अपने अपने व्यापार बन्द कर देते है। आसुरी वृत्तियो के पुञ्ज का दमन करने वाली और दैवी शक्ति-समूह का विकास करने वाली शक्ति 'कौमारी' कहलाती है। नव दुर्गाओं म यह ब्रह्मचारिणी नाम से प्रसिद्ध है। यह शक्ति अपने आविर्भाव के लिए लोक म कुमारिका शरीर को ही आलम्बन बनाती है। नवरात्र मे कन्याओ का पूजन, समय-समय पर दुष्टो और असुरो का विनाश करने हेतु इसी शक्ति के पूजन का प्रतीक है। राजस्थान और गुजरात मे आवड़, आछी (इच्छा), चर्चिका, खोडियार, करणी आदि शक्तियो का अवतार कन्या रूप मे ही हुआ ओर वे इसी रूप मे पूजी जाती है। वैष्णवी-शक्ति ससार की रक्षिका है। जगत् की सृष्टि, स्थिति और सहार मे इसका श्रेयस्कर रूप रहता है।[1] सर्वप्रथम आत्मा को परिच्छिन्न एव आवृत करने वाली काल शक्ति है। इसीलिए परमात्मा अथवा महान् आत्मा को आवृत करने वाली शक्ति महाकाली कहलाती है। सब कुछ इसी क गर्भ म विलीन हा जाता है। महाकाल से इसका ऐक्यभाव है। यही शक्ति अवान्तर भेद से वराही भी कहलाती है। लोक मे वराही या वाराही माता का पूजन इसका प्रतीक है। मनुष्य जब तक अपने स्वरूप को नही जान लेता तब तक वह श्रेष्ठत्व की ओर उन्मुख नही होता। यह स्व-स्वरूप-परिचायिका शक्ति नारसिही नाम से कही जाती है क्योकि यह नर को नरो मे सिह अर्थात् श्रेष्ठ आत्मज्ञानवान् होने को उन्मुख करती है। चेतन्य-वर्ग मे गति ओर प्रकाश-दायिनी शक्ति ऐन्द्री नाम से पूजित है। इसी प्रकार प्रवृतिरूपा चण्डा-प्रकृति और निवृत्तिरूपा मुण्डा-प्रकृति का हनन करके उनका महाप्रलय मे लय करने वाली शक्ति का चामुण्डा नाम से पूजन होता है। शक्ति के इन्हीं प्रधान रूपो की अनन्त नामा से अनन्त प्रकार से उपासना की जाती है।

पुराणो मे कथा आई है कि दक्ष का यज्ञ विध्वस्त करने के बाद शिवजी सती के शव को लेकर कन्धे पर धरे हुए इधर-उधर उद्भट रूप से घूमने

---

१ गास्वामी तुलसीदासजी न सीताजी का शक्ति का यही रूप माना है—
सृष्टिस्थितिसहारकारिणीं क्लशहारिणीं।
सर्वश्रेयस्करीं सीता नताऽह रामवल्लभाम्॥

लगे। सभी देवता इससे चिंतित हुए। तब विष्णु ने अपने चक्र से उस सती के मृतदेह के टुकड़े-टुकड़े कर दिए, वे टुकड़े इक्यावन स्थानों पर बिखर गए और तुरन्त पाषाण-रूप में परिणत हो गए। ऐसे प्रत्येक स्थान पर एक शक्ति का रूप और एक भैरव पूजित होने लगा। यही सब स्थान शक्तिपीठों के नाम से प्रसिद्ध हुए।[१]

जिस प्रकार संसार में प्रबल होते हुए आसुरी भाव का संहार करने के लिए समय-समय पर पुरुष के रूप में यावदपेक्षित वैष्णवी शक्ति के अवतार हुए हैं और होते रहते हैं उसी प्रकार स्त्री-देहों में भी लोक में शक्ति के अनेक रूप प्रकट हुए हैं।[२] धर्मरक्षा, अनिष्टनिवारण और दुष्टसंहार की विशिष्ट शक्तियों का जिन स्त्री-शरीरों में उद्भव और प्राकट्य हुआ वे ही शक्ति का अवतार

---

१ विष्णुचक्रेण सछिन्नास्तद्देहावयवा पृथक्।
विपतु पृथ्वीपृष्ठ स्थान स्थान महामुने॥
महातीर्थानि तान्यव मुक्तिक्षेत्राणि भूतले।
सिद्धपीठा हि त दशा देवानामपि दुर्लभा ॥
भूमौ पतितास्तु ते छायामावयव क्षणात्।
जग्मु पाषाणता सर्वलोकाना हितहेतव ॥

इन शक्तिपीठों का तन्त्रचूड़ामणि ग्रन्थ में विस्तार से वर्णन किया गया है। इनके आधार पर देश के कितने ही भौगोलिक स्थानों का भी ज्ञान होता है साथ ही देवियों के नामों और शक्तियों के रहस्य भी विदित होते हैं यथा— सिन्धुदेश में हिंगुला नामक स्थान पर शक्ति के ब्रह्मरन्ध्र का पात हुआ था। वहाँ शक्ति का हिंगुला नाम से ही पूजन होता है। बाद में चारणों में अवतार लेने वाली एक देवी हिंगलाज नाम से प्रसिद्ध हुई और वह आद्याशक्ति का रूप मानी गई। हिम अथवा साम भाव को प्राप्त होने वाली शक्ति को हिंगुला कहते हैं।

हिम गच्छतीति हिंगु

इसी प्रकार अर्बुदारण्य क्षेत्र में आरासण स्थान पर शक्ति का वामकुच (हृदय) भाग गिरा था। वहाँ इसी भाग की पूजा होती है।

देवी भागवत में ऐसे एक सौ आठ शक्तिपीठों का वर्णन है। देवीगीता में ७२ पीठ गिनाए हैं। इसी प्रकार विभिन्न ग्रन्थों में विभिन्न वर्णन मिलते हैं।

२ सुर सान्निध कज्ज ब्रह्माणी रूप अनेक विध करिय।
— माताजी री वचनिका २६ पृ २५

मानी गई। राजस्थान और गुजरात के चारणो मे तो 'नौलख लोवडियाळ'[१] प्रसिद्ध है। इनमे शक्ति के काली, दुर्गा, चण्डी और ब्रह्मचारिणी रूपो के अश उद्भूत हुए है। हिंगुलाज, आवड, हुली, गुली, छाछी (चर्चिका), करणी, लालबाई, फूलवाई आदि नामों से स्थान-स्थान पर ये देवियाँ पूजी जाती है और इनकी महिमा का बखान करने के लिए अनेक काव्यो का निर्माण हुआ है, जो प्राचीन राजस्थानी साहित्य की समृद्धि के अभिन्न अग है।

भारतीय जन-जीवन का आधारस्तम्भ धर्म ही रहा है। भारतीय मानव ने धर्म की परिभाषा उस सतत प्रयत्न को माना है जिसके द्वारा प्रकति-परिच्छिन्न जीव-स्वरूप अवयव समस्त आवरण को हटाकर सत्-चित्-आनन्द धनरूप, अपरिच्छिन्न, ब्रह्मस्वरूप, अवयवी से ऐक्यभाव के लिए उन्मुख हो सके। इसके लिए वह निरन्तर प्रकृति या माया अथवा शक्ति को प्रसन्न करने के लिए कार्यरत रहता है। व्यक्तिगत, कौटुम्बिक, सामाजिक, प्रदेशीय, देशीय एव राष्ट्रीय आदि समस्त व्यापारों मे भारतीय मानव जीवन-शक्ति की उपासना से ओत-प्रोत है। दैनिक जीवन का आचार, कौटुम्बिक विधान, सामाजिक गठन-देश व्यवस्था और राष्ट्रीय भावना आदि समस्त व्यापारो मे शक्ति सम्प्राप्ति का विधान है। यम, नियम, प्राणायामादि, व्यक्ति के लिए शारीरिक और आध्यात्मिक-शक्ति प्राप्त करने के साधन है, प्रत्येक कुटुम्ब, कुल, ग्राम ओर राष्ट्र की देवियाँ नामाकित है, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय-शक्तिपर्व नियत है तथा हमारा समस्त वाड्मय, शब्दशक्तिमय तो है ही, वह शक्ति-महिमा से भरा पडा है। उदाहरणार्थ, वर्ष मे दो बार नवरात्र पर्व पर विशेष रूप से शक्ति-समाराधन का विधान हमारे जन-जन मे शक्ति-सप्राप्ति की भावना का सचार करता है। यह पर्व राष्ट्र की सघ-शक्ति को उद्बुद्ध करता है। घर-घर मे चण्डी-चरित्र (दुर्गा-सप्तशती) का पारायण होता है जिससे हमे अध्यात्म एव सघशक्ति का सदेश मिलता है। नवरात्र पर्व मे नाद और बिंदु से समुद्भूत ससार का रहस्य ज्ञात करने वाले ब्राह्मण और साधक शरीरस्थ पट्चक्र के स्नायुजाल में गूंजने वाले अविनश्वर अक्षरसघात के द्वारा अनन्त शक्ति के स्रोत से सम्पर्क स्थापित करत है। सप्तशती के अनेक श्लोक बीजाक्षरगर्भित है और सम्पुट सहित पारायण

१ एक विशष प्रकार का ऊनी वस्त्र जिस दवियाँ आढ़ती है, लावडी कहलाता है।

करने से मुख्यश्लोक की १४००० आवृत्तियाँ सहज ही में हो जाती है। जब देव-राष्ट्र पर असुरो का आतक छाया और अकेले देवराज की शक्ति पर्याप्त न हुई तो समस्त देवों ने सगठित होकर समवेत-शक्ति का आह्वान किया और उसी शक्ति ने असुरो का सहार कर देवो का श्रेयस्-सम्पादन किया। इस आख्यान से हमारे राष्ट्र मे वर्ण-व्यवस्थानुसार जिस वर्ग को देश-रक्षा का भार सौपा गया है उसका उद्बोधन होता है। सघ-शक्ति का माहात्म्य इससे समझा जा सकता है। नवरात्र मे क्षत्रियो द्वारा शस्त्रास्त्र-पूजन, अश्वपूजन और विविध वाहनों का पूजन तथा एकत्रित होकर बन्धु-बान्धवो सहित उत्सव मनाने की प्रथा शक्ति-सचयन एव सघ-सगठन की द्योतक है।

शक्ति के विविध रूपो की कल्पना करके शक्ति-ग्रन्थो म भगवती के विविध आयुधो, वाहनो और मुद्राओ के विवरण दिए गए है। इनके रहस्यो का अध्ययन जहाँ ज्ञान-पट खोलने में सक्षम है वहा लोक में समाज के दैनिक जीवन, व्यवहार, व्यापार, आकाक्षाओ और विविध मनोभावनाओ के अन्तर्गर्भित तात्पर्यो और सास्कृतिक विकास को समझ लेने का भी मधुर माध्यम है। इसी प्रकार विविध स्थानो म निर्मित मदिरो की वास्तु-विशेषता और प्रतिमा-विधान के अध्ययन का विषय भी मानव-मन और मस्तिष्क के चरम विकसित स्वरूप का दर्शन तो कराता ही है— साथ ही, हमारे अतीत के अतीव समुज्ज्वल समय का भी स्मरण कराता है और हमारी सुषुप्त सी शक्तियों का उद्बोधन करता है।

इस प्रकार सकल चराचरमयी, सर्वभूतमयी और समस्त विद्यामयी महाशक्ति के स्वरूप का चिन्तन, तत्सम्बन्धी साहित्यादि उपकरणो का अध्ययन एव मनन तथा राष्ट्रशक्ति म उसका दर्शन करना, अनिष्टतत्त्वों का अपसारण कर इष्ट और सौभाग्यकारक तत्त्वों का विकसित करना आदि सभी सत्क्रियाय भगवती शक्ति की सदुपासना के अन्तर्गत है।

सर्वव्यापिनी देवी की आराधना सभी समाजों म होने लगी। अपनी-अपनी भावना के अनुसार लोगो ने देवी के स्वरूप और प्रतिमाए निर्मित की।

पारीक समाज अपना उद्भव ब्रह्मा पुत्र महर्षि वसिष्ठ से मानता है। महर्षि वसिष्ठ मत्र-द्रष्टा एव गोत्र-प्रवर्तक थे। वैदिक सदर्भ के अनुसार उनके आठ

पुत्रा और तीन पौत्रो ने ऋग्वेद के अनेक मण्डलो की ऋचाओं के दर्शन किये, विशेषत सप्तम मण्डल म।

इन्ही पुत्र-पौत्रो के वश का विस्तार और प्रसार हुआ। विभिन्न गोत्रो और अवटका का इन्ही से उद्भव हुआ। आगे चलकर जिन-जिन समुदाया म उनकी मान्यताओ क अनुसार देवी की आराधना हुई वही परम्परा रूप मे अब तक चली आती है। यह भी स्मरणीय है कि जिस वश अथवा कुल म किसी महिला मे दैवीय चमत्कार की अवतारणा हुई तो वही देवी के रूप मे पूजित होने लगी। एसे चमत्कार चारण जाति मे अधिक पाये जाते है। इस प्रकार देवी के अनेक ही नहीं अनन्त रूपो की अवधारणा बनती चली गई।

इन परम्परागत देविया के उद्भव, पूजा-स्थल और पूजा प्रकारा के विषय म बधुवर श्री रघुनाथ प्रसाद जी तिवाडी ने अनेक स्थला की यात्रा करके तथा सम्बद्ध ग्रन्था का अवलोकन करके तथ्या को ढूढ निकाला है। यह ता नही कहा जा सकता कि यह अध्ययन सम्पूण ओर निरवद्य है परन्तु सामान्य जिज्ञासुओं की आकाक्षा की पूर्ति अवश्य कर सकता है। कोई भी पारीक-बन्धु अपनी कुल-देवी के विषय म इस सदर्भ ग्रन्थ को टटोलकर अपनी पिपासा को शात कर सकता है।

मै साशीर्वाद श्री तिवाड़ी जी को बधाई देता हू और इस पुस्तक का पारीकों के घर-घर में प्रचार चाहता हू।

दुर्गाष्टमी, २०५६ वि — गोपाल नारायण बहुरा
१८ १० १९९९
बहुराजी का बाग, टाक फाटक,
जयपुर-३०२०१५

प्राक्कथन

हमारे परिवारो म आज जिन देवियो की पूजा-उपासना की जाती है, उनका मूल वेद और वैदिक साहित्य में निहित है। ऋग्वेद में अग्नि को सर्वोत्कृष्ट देवता घोषित करते हुए उसकी घृत-सिंचन द्वारा पूजा, बर्हिस्थापित कर अग्नि को उस पर प्रतिष्ठापित कराने वाले तीन हजार तीन सौ उन्तालीस देवताओं का उल्लेख मिलता है। यथा–

त्रीणि शतात्री सहस्राण्यग्नि त्रिशच्च देवा नव चासपर्य्यन्।
औक्षन् घृतैरस्तृणन बर्हिरस्मा आदिद्धोतार न्यसादयन्त॥
(ऋ ३/९/९)

ब्राह्मण ग्रन्थो मे देवो मे आठ वसु, ग्यारह रुद्र और बारह आदित्यों के योग से देवो की सख्या निर्धारित की गई है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इनमे इन्द्र और प्रजापति को और सम्मिलित करके ऋक्, यजु , अथर्ववेद और शतपथादि ब्राह्मण ग्रन्थो के वचनो को उद्धृत करते हुए देवताओं की सख्या ३३ निश्चित की है। इनमे प्रजापति उपास्य है और अन्य व्यवहार सिद्धि के हेतु से है। गुणो के कारण देवताओ की सख्या असख्य हो सकती है। यजुर्वेद अध्याय १४ मत्र २० **'अग्निर्देवता वातो देवता, सूर्यो देवता, चन्द्रमा देवता, वसवो देवता रुद्रा देवताऽऽदित्या देवता, मरुतो देवता विश्वेदेवता, बृहस्पतिर्देवता, वरुणो देवता'** मे अनेक देवताओ का वर्णन है। इन सभी देवताओ की चार श्रेणियाँ है— १ अमूर्तिमान् चेतन (केवल परमेश्वर), २ मूर्तिमान् (प्रत्यक्ष) चेतन– (माता-पिता, अतिथि, आचार्यादि), ३ अमूर्तिमान अचेतन (वायु रुद्रादि), ४ मूर्तिमान अचेतन (अग्नि, सूर्यादि)।

इनमे अमूर्तिमान वा मूर्तिमान् चेतन देवता उपास्य और गुण ग्रहणत्व और अमूर्तिमान् वा मूत्तिमान् अचेतन देवताओं के उपकार ग्रहण करना उचित है।

लोक में देव या देवता शब्द का प्रयोग मनुष्येतर दिव्य गुण सम्पन्न आत्माओ, सूर्यचन्द्रादि ग्रह-नक्षत्रो और जगत् के कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता परमेश्वर के अर्थ म ही प्रयुक्त हुआ करता है, पर वेदो मे अन्य भी अनेक अर्थों में देव या देवता

शब्द का प्रयोग होता है। वेदों की वर्णनशैली एक परात्पर ब्रह्म से लेकर औषधि वनस्पति पर्यन्त नाना वस्तुओं को देव या देवता नाम से सम्बोधित करती है। चारों वेदो में देव शब्द कही एक वचन मे प्रयुक्त हुआ है, कही द्विवचन मे और कहीं बहुवचन मे भी– अत सिद्ध है कि देव एक भी है और अनेक भी। मनुष्य देहधारी होते हुए भी सदाचारी, उत्तम प्रकृति वाले विद्वान परोपकारी जनो को भी वैदिक सदर्भ मे देव कहा जाता है। देव और देवता शब्दो मे स्वरूप और प्रत्यय में भेद होते हुए भी अर्थ मे कोई विशेष अन्तर नही है। दोना शब्दो की निष्पत्ति मे दिव् धातु निहित है।

इस ससार मे जो अच्छे गुण वाले पदार्थ है, वे दिव्य गुण, कर्म और स्वभाव वाले होने से देव या देवता कहे जाते है। देवताओ का देवता होने से महादेव सबका धारक, रक्षक, पालक और प्रलय करने वाला, सबका अधिष्ठाता है। वह परमात्मा है। इस उपास्यदेव परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ नाम ओ३म् कहा गया है। वैदिक ग्रन्थो में परमात्मा के शताधिक नामों मे अनेक नाम स्त्रीवाची भी मिलते है। अग्नि, कालाग्नि, पृथिवी, माता, देवी, शक्ति, श्री, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ऐसे ही नाम है। ऋग्वेद २/६/१७ के अनुसार परमेश्वर का मातृरूप ही शक्ति है। उसे अदिति कहा गया है। वही विश्व का अटल, शाश्वत आधार और समस्त देव देवताओं की जननी है, वही माता, वही पिता, वही रक्षिका है। स्रष्टा और सृष्टि भी वही है। वही सब कुछ है। (१०/१०/१२५) मे उसे ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी, जगदम्बा कहा गया है। वह सर्वज्ञ, सर्वतन्त्र स्वतत्र और ऐश्वर्य की प्रदात्री है। समस्त विश्व की वही विभूति है।

ऋग्वेद मे श्रद्धा, इड़ा, शची, इन्द्राणी, वरुणानी, आग्नेयी, सूर्या, वर्षाकर्णी, यमी, रोदसी, अश्विनी, अदिति, रात्रि, उषा, मति, प्रमति, धी, मही, भारती, आप , सरस्वती आदि नाम मिलते है। चारों वेदो में और वैदिक साहित्य में ही इन विशिष्ट देवियो की सख्या चालीस से ऊपर पहुँच जाती है।

शाक्त, शैव, वैष्णवादि सम्प्रदाय के साहित्य मे भी प्राय वे ही नाम मिलते है। इनमें वृहती, इन्द्राणी, शची, माया, स्वाहा, उषा, अदिति, स्वधा, रात्रि, प्रमति, अनुमति, मनीषा, श्रद्धा, इडा, यमी, सरस्वती, भारती, दक्षिणा, दीक्षा, गौरी, वाक्, सार्पराज्ञी, ब्रह्मजाया, वरुणानी, अश्विनी, विराज, आप , नदी आदि अनेक प्रसिद्ध देवियो के साथ-साथ इषु, निर्ऋति, तविषी, सीता, स्वधा जैसी अप्रसिद्ध और अरण्यानि और औषधि जैसी देवियो की भी चर्चा हुई है।

पुराणा और विभिन्न सम्प्रदायो के साहित्य मे मिलने वाले देवियों के नाम प्राय उनकी वैदिक शक्तियो के बदले हुए नाम है। ब्राह्मण कुलो मे पूजित कुल देविया के कतिपय नाम वैदिक है, कुछेक पोराणिक और कुछ अन्य स्थानवाची या उनमे निहित गुणा के आधार पर निश्चित किये मिलते है। पारीक ब्राह्मण समाज की कुलदेविया म चतुमुखी, सुरसा, अम्बा और गौरी नाम वैदिक ही प्रतीत हाते है। चतुर्मुखी सभवत ब्रह्मा की शक्ति ब्राह्मी का ही नाम है– जिसका चारो वेदो पर पूर्ण अधिकार हो। सुरसा सरस्वती का अपर नाम है। वाणी ही सरस्वती है। वाग्वै सरस्वती, वाचा एव एनमेतद् अभिषिञ्चति'। इसी का एक नाम मनीषा (मनसा) है। शक्ति का ही अपरनाम आदद्या– शक्ति है, जिस पुराणा मे दुर्गा, कुमारिका आदि नामों से उल्लिखित किया गया है– इसी के यथाप्रसग सौम्य और क्रूर रूप देकर लोक म अपनी श्रद्धानुसार मूर्त आकार देकर पूजा की जाती रही है।

लोक म पूजित नव दुर्गा या नव गौरी का आख्यान (नामोल्लेख) ऋग्वेद १/१६४/४१ मे प्राप्त होता है–

गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा'चतुष्पदी।
अष्टापदी नवपदी बभूवषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन्॥

पुराणों मे ओर लोक म गौरी स्त्रीरूपधारिणी शक्ति है, जो पार्वती (शकर की पत्नी) के रूप मे चर्चित है और उन्ही का १ मुख निर्मालिका गोरी, २ ज्येष्ठा, ३ सौभाग्यगोरी, ४ शृगार गोरी, ५ विशालाक्षी, ललिता, भवानी, मगला, महालक्ष्मी और नवगोरी के नाम से दर्शन-पूजन नवरात्र के अवसर पर होता है।

गौरी शब्द गौर शब्द का स्त्रीलिग है। व्याकरणिक निष्पत्ति के आधार पर 'गायति शब्द करोति गवते व्यक्त अव्यक्त शब्दयतीति वा गौर' अर्थात् जो व्यक्त अथवा अव्यक्त शब्द करे उसे गौर कहना चाहिए। व्यक्त शब्द करने वाला मनुष्य ही हो सकता है। वैदिक शब्दकोष निघण्टु १/११ तथा ५/५ म गौरी शब्द वाड्नाम तथा पदनाम म पढ़ा गया है। श्री देवराज यज्वा ने अपने भाष्य म गौरी शब्द की कई प्रकार स व्युत्पत्ति दर्शायी है– यथा 'गुरी उदद्यमने धातु से गुर्गति उदयच्छति स्वमभिधेयम् इति गौरी। उदद्यमने चारु प्रकाशनम्।' अथात् जो अपने वाच्यार्थ को भलीभाति पकाशित कर सके। इस व्युत्पत्ति से उदद्यमशील नारी को गौरी कहा जा सकता है। महर्षि यास्क

ने निरुक्त ११/२८ मे स्त्री देवताओ की चर्चा करते हुए लिखा है– 'गौरी रोचते ज्वलति कर्मण अयमपीतरो गौरीवर्ण एतस्मदेव प्रशस्त्यो भवति।' निरुक्त टीकाकार आचार्य स्कन्द और दुर्गसिह ने टीकाओ में लिखा है— 'गौरी मध्यमस्थाना स्तनयित्नुलक्षणा वाग् विद्युद्वा। सा पुन दीप्तिमन्तौ।' अर्थात् अन्तरिक्ष स्थानीयो विद्युद्रूपा गर्जित लक्षणा जो वाणी है वही गौरी शब्द से अभिप्रेत है– क्योकि वह दीप्तिमती, चमकीली होती है। इस प्रकार जो वर्षा के समय चमकती हुई गरजती हुई विद्युत भी गौरी कही जायगी।

महर्षि दयानन्द ने गौर पद का अर्थ ऋ ४/५८/२ के भाष्य में लिखा है– 'योगवि सुशिक्षिताया वाचि रमते स गौर' और यजुर्वेद १७/९० मे 'यो वेद विद्या वाचि रमते स गौर' अर्थात् जो सुशिक्षिता वाणी मे, वेद्वाणी म रमण करता है, आनन्दित होता है वह पुरुष गौर पद वाची है। इसी प्रकार जो वेद विद्या मे, वाणी में रमण करने वाली स्त्री हो– वह गौरी कही जायगी।

उपर्युक्त ऋग्वेद के नवपदा गौरी सूचक मत्र की व्याख्या महर्षि दयानन्द ने स्त्रीपरक की है। उनके अनुसार एक पदी से नवपदी पर्यन्त सभी शब्द गौरी=विदुषी स्त्री के विशेषण हे। उनके शब्दो मे मत्र का अर्थ इस प्रकार है— 'एक **पदी**= एक वेदाभ्यासिनी= एक वेद का अध्ययन करने वाली, **द्विपदी**= अभ्यस्त द्विवेदा (दो वेदो का अभ्यास करने वाली), **चतुष्पदी**= चतुर्वेदाध्यापिका (चार वेदों को पढाने वाली), **अष्टापदी**= चतुर्वेदोपवेदविद्यायुक्ता= चार वेद और चार उपवेदो की विद्या से युक्त, **नवपदी**= चतुर्वेदोपवेद व्याकरणादि शिक्षायुक्ता= चार वेद, चार उपवेद और षडगो मे प्रधान व्याकरणादि शिक्षायुक्त (बभूवपी) अतिशयेन विद्यासु भवन्ती) अतिशय करके विद्याआ मे प्रसिद्ध होती सहस्राक्षरा (सहस्राणि असख्यातान्यक्षराणि यस्या सा) असख्यात अक्षरों= (अविनाशी शक्तियों) वाली होती हुई, परमे व्योमन्= सबसे उत्तम आकाश मे समान व्याप्त निश्चल- परमातमा के निमित्त प्रयत्न करती है और (सलिलानि तक्षती)= जलानी व निर्मलानि वचनानि (जल के समान निर्मल वचनो को छाटती (छानती) अर्थात् अविद्यादि दोषो से अलग करती हुई है वह नारी गौरी (मिमाय) प्रसिद्ध होती है।

वे अन्य अर्थ निम्न प्रकार करते है– द्वितीय विभक्त्यन्त मानकर)— स्वय तो चार वेद, चार उपवेद, व्याकरणादि शिक्षा से युक्त हो ही और साथ में अन्य गौरी= वेद ज्ञान की आभा से= गौरवर्णयुक्त विदुषी स्त्रियों को भी शब्द कराती हो– ऐसी नारी ही विश्वकल्याणकारिणी होती है।

यही गौरी पुराणो में और लोक में गौरी पार्वती आदि नामो से पूजि है। अम्बा, चामुण्डा, कुमारिका, काली, भद्रकाली, परा, त्रिपुरा जैसे नाम भ पुराणों से ग्रहण किये गये है। शाकम्भरी नाम शाक (फल-फूल वनस्पति आदि द्वारा पूजित देवी का नाम है, तो अशनायितोदरी ऐसी देवी का नाम है जिसका उदर सदैव बुभुक्षित रहता है। अश्नोत्तरी नाम इसी का विकृत रू प्रतीत होता है। कृशोदरी नाम की देवी इसी का अपर नाम है जिसकी प्रतिमा मिलती है। सकराय नाम शकराणक गाव मे स्थापित होने से पडा प्रतीत होत है। समराय शाकम्भरी का ही विकृत नाम है, जिसका मदिर शाकम्भरी य साभर म है। त्रिपुराय, समराय, सकराय, सुरसाय, पराय, सुच्चाय, अमराय आदि देवियो के अत में प्राप्त 'आय' शब्द राय का बिगडा रूप है। यह शब्द राज्ञी (या रानी) का वाचक है। धनोप की माता जैसी कतिपय मातृकाअ के नामों म आज भी राय शब्द जुडा प्राप्त होता है, यथा– धनोपराय माता।

'पारीक जाति का इतिहास' और 'पारीक महापुरुष' जैसी महत्त्वपूर्ण पुस्तकं का प्रणयन कर श्री रघुनाथ प्रसाद तिवाडी जी 'उमग' ने अपने समाज की जो सेवा की है– उसकी सर्वत्र प्रशसा की जा रही है। प्रस्तुत पुस्तक उसी माला मे पिरोया गया तीसरा पुष्प है। श्री तिवाडी जी ने इसमें सम्पूर्ण शास्त्र परम्परा के विवरण के साथ देश मे पूजित मातृकाओ और पारीक ब्राह्मण जाति के अवटकों म मान्य कुलदेवियों का परिचय प्रस्तुत करने का पूर्ण प्रयास किय है। उन्होंने राजस्थान में विभिन्न स्थानों की यात्राएँ करके इन कुलदेवियों के पूजा-स्थलो की खोज करने म अथक परिश्रम किया है। इसके लिये वे प्रशस के पात्र है। इन देवियों के उपासक गृहस्थों म से अधिकाश को इन स्थान के विषय म जानकारी नही है। आशा है– यह पुस्तक उनके लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। श्री तिवाड़ीजी ने मुझको पुस्तक का प्राक्कथन लिखने का अवसर दिया, तदर्थ मे उनका आभारी हूँ।

गेलड़ाश् की हवेली,
माग
२००१ (राज)

आमुख

[– शक्ति क्या है ? – शक्ति का आशय एव स्वरूप– शक्ति की उपासना– मानव मात्र के उद्धार हेतु शक्ति का प्राकट्य– महादेवी से विश्व की उत्पत्ति– ब्रह्मरूपा भगवती की सर्वव्यापकता– पुराणो एव ऋग्वेद की देविया– देवी-शब्द का अर्थ– देवी पूजा की प्राचीनता और प्रमुख देविया– शक्ति पूजा की व्यापकता– देवी पूजा की व्यापकता के कुछ प्रमाण– विश्व मे देवी की व्यापकता– शक्तिपीठ जहा शक्ति के अग गिरे– नव दुर्गा– दस महाविद्याएँ– षोडश मातृकाओ का स्मरण एव कुल देवी– ६४ योगिनियो के नाम– भारत मे नारी पूजा– कुल देवी– आदिशक्ति ही पारीको की कुल देवी– पारीको की कुल देवियो की सख्या– अवटकानुसार पारीको की कुल देविया– कुल देवी– नाम एव मान्यता– पारीक समाज की कुल देवियो के स्थान– अनेक माताओ की एक-सी कथा– लोक देविया– लोकमाताओ/देवियो का वर्गीकरण– राजस्थान की कतिपय लोक देवियाँ– मा के श्री चरणो मे प्रणाम– देवियो के दर्शनार्थ एव अध्ययनार्थ लेखक की यात्रा– आभार।]

मानव ने आदि काल से ही उपासना या पूजा का कोई न कोई विपय निश्चित कर रखा है। उसकी उपासना का केन्द्र-बिन्दु शक्ति भी रहा है। जो शक्ति है वही परमात्मा है और जो परमात्मा है वही शक्ति है। शक्ति का आदिस्वरूप देवी है। वह जगत् की सष्टिकर्त्री है। सम्पूर्ण प्राणियो को आश्रय देने के लिए देवी एकमात्र अवलम्ब है, आश्रय है। पुराणो मे यह मत व्यक्त किया गया है कि ब्रह्मा म जो सृजन शक्ति है, विष्णु म जो पालन शक्ति हे तथा शिव मे जो सहार शक्ति है एव सूर्य म जो प्रकाश शक्ति है तथा शेष और कच्छप में जो पृथ्वी को धारण करने की शक्ति है, अग्नि में जलाने की, वायु मे हिलाने-डुलाने की शक्ति है, इस प्रकार सबमे जो शक्ति विद्यमान है, वही आद्याशक्ति है। वही सनातन शक्ति प्रकृति है। सारे जगत् की उत्पत्ति इसी से हुई है। वह विश्व की जननी है।

शक्ति क्या है?[१]

शक्ति की कल्पना तथा आराधना भारतीय धर्म की अत्यन्त पुरानी और स्थायी परम्परा है। अनेक रूपो मे शक्ति की कल्पना हुई है, प्रधानत मातृरूप मे। इसका विशेष पल्लवन पुराणो और तन्त्रो में हुआ। हरिवंश और मार्कण्डेय पुराण के देवीमाहात्म्य म देवी अथवा शक्ति का विशेष वर्णन और विवेचन किया गया है। देवी को उपनिषदो का ब्रह्म तथा एकमात्र सत्ता बतलाया गया है। दूसरे देव इसी की विभिन्न अभिव्यक्तिया है। दैवी शक्ति का यह सिद्धान्त भारत में सर्वप्रथम व्यक्त हुआ है। इस प्रकार वह (शक्ति) विशेष पूजा तथा आराधना के योग्य है। मनुष्य जब अपने मनोरथ की पूर्ति कराना चाहता है तो उसी से अनुनय-विनय करता है। शिव और शक्ति अभिन्न है।

शाक्त साहित्य म शक्तिरहित शिव को शवतुल्य अशक्त बताया गया है। शक्ति ही शिव या ब्रह्म की विशुद्ध कार्यक्षमता है। अर्थात् वही सृष्टिकर्त्री एव प्रलयकर्त्री है तथा सब दैवी कृपा तथा मोक्ष प्रदान उसी के कार्य है। इस प्रकार शिव मे भी शक्ति का प्राधान्य अधिक माना जाता है। शक्ति से ही विशेषण 'शाक्त' बनता है जो शक्ति-उपासक सम्प्रदाय का नाम है। शक्ति ब्रह्मतुल्य है। शक्ति ब्रह्म का क्रियाशील भाग है तथा ब्रह्म को सभी उत्पन्न वस्तुओ तथा जीवों के रूप में वह व्यक्त या द्योतित करती है जबकि ब्रह्म अव्यक्त एव निष्क्रिय है। शक्ति मूल प्रकृति है तथा सारा विश्व उसी (शक्ति) का प्रकट रूप है।

शक्ति का आशय एव स्वरूप[२]

ॐ सर्वचैतन्यरूपा तामाद्या विद्या च धीमहि।
बुद्धि या न प्रचोदयात्॥
(देवीभागवत १-१-१)

'जो सर्वचैतन्यस्वरूपा, विश्व की आदि-भूता, मूल प्रकृति एव ब्रह्मविद्यास्वरूपिणी भगवती जगदम्बिका है हम उनका ध्यान करते है, वे हमारी बुद्धि को तीव्र बनाने की कृपा करे।' ऐसी प्रार्थना सभी देवी-भक्त करते है।

---

१ हिन्दू धर्मकोश म डॉ राजबलि पाण्डेय पृ ६१३

२ कल्याण भागवततत्वाक वर्ष ५५ अक १ (१९८१) पृ ८०१

उसी मा की 'गायत्री', 'मूलप्रकति', 'महाशक्ति', 'भगवती', 'अदिति' इत्यादि नामो से आराधना की जाती है।

शास्त्रो मे शक्ति शब्द के अनक अथ मिलते ह। यथा– 'सामर्थ्य', 'बल' और 'पराक्रम' इत्यादि। इसका अभिप्राय 'कार्य सम्पन्न करने की सामर्थ्य से है। मीमासको के अनुसार वह वस्तु, जो कारण के साथ अपृथक् सिद्ध रहकर कार्योत्पादन मे उपयोगी हो– 'शक्ति' कहलाती है। विष्णुपुराण मे निम्नाक्ति तीन प्रकार की शक्तियो का वर्णन है– पग (विष्णुशक्ति), अपरा (क्षेत्रज्ञशक्ति) और अविद्या (कर्मशक्ति)।

विष्णुशक्ति परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथापरा।
अविद्या कर्मसज्ञाना तृतीया शक्तिरिष्यते॥
(विष्णु पुराण ६- ७- ६१)

जीवात्मा को क्षेत्रज्ञ कहते है और तीसरी शक्ति अविद्या ही कर्म-नाम से प्रसिद्ध है।

ऋग्वेद के अनुसार परमेश्वर का मातृरूप ही शक्ति है। उसे ही 'अदिति' कहा गया है। वही विश्व का अटल, शाश्वत आधार ओर समस्त देवताओ की जननी है। वही सबकी माता-पिता एव रक्षिका है। वही स्रष्टा एव सृष्टि दोनो है, वही सब कुछ है (ऋग्वेद २-६-१७)। जगदम्बा ही ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी है, वे ही ऐश्वर्य प्रदान करती है। वे सर्वज्ञ है। उन पर किसी का भी प्रभुत्व नहीं है। यह अखिल विश्व उनकी ही विभूति है (ऋग्वेद १०-१०-१२५)।

शक्ति की उपासना[१]

पुराणो के परिशीलन से पता चलता है कि प्रत्येक सम्प्रदाय के उपास्य देव की एक शक्ति है। गीता म भगवान् कृष्ण अपनी द्विधा प्रकृति, माया की बारम्बार चर्चा करत है। पुराणा मे तो नारायण और विष्णु के साथ लक्ष्मी के, शिव के साथ शिवा के सूय के साथ सावित्री क, गणेश के साथ अम्बिका

---

१ हिन्दू धर्मकाष ल राजबलि पाण्डय पृ ६१३ १४

के चरित और माहात्म्य वर्णित है। (इनके पीछे जब सम्प्रदायों का अलग-अलग विकास होता है तो प्रत्येक सम्प्रदाय अपने उपास्य की, शक्ति की उपासना करता है।) इनके पीछे जब सम्प्रदायो का अलग अलग विकास होता है तो प्रत्येक सम्प्रदाय अपने उपास्य की शक्ति की उपासना करता है। इस तरह शक्ति उपासना की एक समय ऐसी प्रबल धारा बही कि सभी सम्प्रदायों के अनुयायी मुख्य रूप से नही तो, गौण रूप से शाक्त बन गये। अपने उपास्य के नाम से पहले शक्ति के स्मरण करने की प्रथा चल पड़ी। सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, उमामहेश्वर, गौरीगणेश इत्यादि नाम इसी प्रभाव के सूचक है। सचमुच सारी आर्य जनता किसी समय शाक्त थी और इसके दो दल थे, एक दल म शैव, वैष्णव और गाणपत्य आदि वैदिक सम्प्रदायों के दक्षिणाचारी थ और दूसरी ओर बौद्ध, जैन और अवैदिक तांत्रिक सम्प्रदायों के शाक्त वामाचारी थे। इतना व्यापक प्रचार होने के कारण ही शायद शाक्तों का कोई मठ या गद्दी नहीं बनी। इनके पच महापीठ या इक्यावन पीठ ही इनके मठ समझे जाने चाहिए।

मानव मात्र के उद्धार हेतु शक्ति का प्राकट्य

इस प्रकार हम देखते है कि प्रकृति की जितनी भी शक्तियाँ है वे सब ईश्वरीय शक्ति की ही अभिव्यक्तियाँ है। इसी से उस मूल शक्ति को सर्वसामर्थ्ययुक्त कहा गया है। विश्व मे जहा कही शक्ति का स्फुरण दिखता है वहा सनातन प्रकृति अथवा जगदम्बा की ही सत्ता मानी जाती है।

वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश की जननी है। वह समस्त क्रिया की मूल है। इसीलिए हिन्दू धर्मशास्त्र सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, सृष्टिपालक विष्णु एव सृष्टि सहारक रुद्र को जगज्जननी से उत्पन्न हुए मानते है।

समय समय पर शक्ति की अभिव्यक्ति होती रहती है। वही देवी का स्वरूप होता है। भगवती देवी ने अपने अवतार लेने का प्रयोजन बताते हुए स्वय कहा है—

साधूना रक्षण कार्य हन्तव्या येऽप्यसाधव ।
वेदसरक्षण कार्यमवतारैरनेकश ॥
युगे युगे तानेवाहमवतारान् बिभर्मि च।
(दे भा ५-१५-२२-२३)

अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषो की रक्षा करना, वेदो को सुरक्षित रखना और जो दुष्ट है, उन्हे मारना– ये मेरे कार्य है, जो अनेक अवतार लेकर मेरे द्वारा किये जाते है। प्रत्येक युग मे मे ही उन-उन अवतारों को धारणा करती हू।

गीता मे भी भगवान् कृष्ण ने प्राय ऐसा ही कहा है—

परित्राणाय साधूना विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥
(४। ८)

'श्रेष्ठ पुरुषों का उद्धार करने के लिए, पाप कर्म करने वालो का विनाश करने के लिए और धर्म की भली-भाति स्थापना करने के लिए मै युग-युग में प्रगट हुआ करता हू।'

महादेवी से विश्व की उत्पत्ति

एकमात्र देवी की शक्ति सष्टि से पूर्व थी, उन्होने ही ब्रह्माण्ड की सृष्टि की, वे कामेश्वरी के नाम से विख्यात है। वे ही शृगार की कला कहलाती है। उन्ही से ब्रह्मा उत्पन्न हुए, विष्णु प्रगट हुए, रुद्र प्रादुर्भूत हुए। समस्त मरुद्गण उत्पन्न हुए, गाने वाले गधर्व, नाचने वाली अप्सराये और वाद्य बजाने वाले किन्नर सब ओर उत्पन्न हुए। योग सामग्री उत्पन्न हुई, सब कुछ उत्पन्न हुआ, समस्त शक्ति सम्बन्धी पदार्थ उत्पन्न हुए, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज तथा जरायुज, सभी स्थावर-जगम प्राणी-मनुष्य उत्पन्न हुए। वे ही अपरा शक्ति है। वे ही शाम्भवी विद्या, कादि विद्या अथवा हादि विद्या या सादि विद्या अथवा रहस्य रूपा है। वे ॐ अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप से वाणी मात्र मे प्रतिष्ठित है। वे ही जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों पुरो तथा स्थूल, सूक्ष्म और कारण इन तीनों प्रकार के शरीरों को व्याप्त कर बाहर और भीतर प्रकाश फैलाती हुई देश, काल और वस्तु के भीतर असग रहकर महात्रिपुरसुन्दरी प्रत्येक चेतना है।[१]

ब्रह्मरूपा भगवती की सर्वव्यापकता

वे ही आत्मा है, उनके अतिरिक्त सभी असत्य और अनात्मा है। अत वे ब्रह्मविद्यास्वरूपा, भावाभाव की कला से विनिर्मुक्त, चिन्मयी विद्याशक्ति,

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७), पृ ८

अद्वितीय ब्रह्म का बोध कराने वाली तथा सत् चित् आनन्दरूप लहरों वाली श्री महात्रिपुरसुन्दरी बाहर और भीतर प्रविष्ट होकर स्वय अकेली ही सुशोभित हो रही हे। उनके अस्ति, भाति और प्रिय– इन तीनों रूपो मे जो अस्ति है, वह सन्मात्र का बोधक हे। जो भाति है, वह चिन्मात्र है ओर जो प्रिय है, वह आनन्द है। इस प्रकार श्री महात्रिपुर-सुन्दरी सभी रूपो म विद्यमान है। तुम और मे, सारा विश्व और सारे देवता तथा अन्य सब कुछ महात्रिपुर-सुन्दरी ही हे। ललिता नामक वस्तु ही एक मात्र सत्य है, वही अद्वितीय, अखण्ड परब्रह्म तत्त्व है।[१]

जो भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण करते हैं उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। वे नि सदेह भक्त की रक्षा करती हैं। सभी माताए सभी प्रकार की योग-शक्तियो से सम्पन्न है। चामुण्डा वाराही, वैष्णवी, कौमारी, लक्ष्मी, ब्राह्मी के अतिरिक्त देवी के ओर भी अनेक नाम है और उसके स्वरूप का वर्णन अनेक प्रकार के आभूषणो से तथा नाना प्रकार के रत्नो से विभूषित रूप म किया गया है। ये सम्पूर्ण देविया अपने भक्तो की रक्षार्थ क्रोध म भरी हुई है तथा भक्तो की रक्षार्थ शख, चक्र गदा, शक्ति, हल, मूसल, खेटक, तोमर, परशु, पाश कुन्त और त्रिशूल तथा उत्तम शाङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथो मे धारण करती है। दैत्यो के शरीर का नाश करना भक्तो को अभयदान देना और दवताओ का कल्याण करना यही उनके शस्त्र धारण का उद्देश्य है।

पुराणों एव ऋग्वेद की देवियाँ [२]

दुर्गासप्तशती म देवी को एक ओर तो शेषशायी विष्णु को जगाने के लिए प्रजापति की प्रार्थना पर उनके नेत्र, मुख नासिका, बाहु, हृदय और वक्ष-स्थल से निकलने वाली कहा गया है और दूसरी ओर देवी की प्रार्थना पर क्रुद्ध होने पर विष्णु सहित ब्रह्मा, शकर, इन्द्र आदि सभी देवो के सम्मिलित तेज से निर्मित होने वाली कहा गया है। जिस देवता का जेसा रूप, जैसी वेश-भूषा और जैसा वाहन था ठीक वैसे ही साधनो से सम्पन्न होकर उसकी शक्ति असुरो से युद्ध करने के लिए प्रगट हुई। ऋग्वेद म श्रद्धा, इडा, शची

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ २

२ कल्याण– भागवततत्त्वाक वर्ष ५५ (१९८१) पृ ४८८ ८९

इन्द्राणी, वरुणानी, आग्नेयी, सूर्या, वर्षाकर्णी, यमी, रोदसी, अश्विनी, अदिति, रात्रि, उषा, मति, धी, मही, भारती, आप , सरस्वती आदि अनेक देविया का उल्लेख है। आम्भृणीवाक् का सूक्त (१०-१२५) तो सभी देवीभक्तो म देवीसूक्त के रूप म ही समादृत होता हे। ऋग्वेद में ही नही, अपितु चारो वेदा मे तथा वैदिक साहित्य मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चालीस देविया वर्णित हे।

वेदिक देवियो की स्वरूप परीक्षा से ऋग्वेदगत अनेक रहस्यो पर प्रकाश पडता हुआ प्रतीत होता है। अत वेदिक कर्मकाण्ड, दर्शन तथा पुराण के क्षेत्र मे यह विपय बहुत कुछ लाभप्रद सिद्ध हो सकता है। देवी की कल्पना शाक्त, वैष्णव तथा शेव सम्प्रदायो म है और देवियों के प्राय बहुत से नाम भी वही है। अत बृहती, इन्द्राणी, शची, माया, स्वाहा, उषा, अदिति, स्वधा, रात्रि, प्रमति, अनुमति, मनीषा, श्रद्धा, इडा, यमी, सरस्वती, भारती, दक्षिणा, दीक्षा, गोरी, राष्ट्री, वाक्, सार्पराज्ञी, ब्रह्मजाया, वरुणानी, अश्विनी, विराज, आग्नेयी, आप , नदी आदि अनेक प्रसिद्ध देवियो के साथ-साथ कृपा, इपु, निर्ऋति, तविपी, सुति, सीता, पड्उर्वी, स्वधिपति कृपा जैसी अप्रसिद्ध तथा अरण्यानी एव औपधि जैसी विचित्र देवियों की भी चर्चा हुई है।

ऋग्वेद के दशम् मण्डल के १२५ वें सूक्त में आदिशक्ति जगदम्बा कहती है—

'मै ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी हू। मै ही सारे कर्मो का फल भुगताने वाली और ऐश्वर्य देने वाली हू। म चेतन एव सर्वज्ञ हू। मै एक होते हुए भी अपनी शक्ति के नाना रूपो मे भासती हू। मै मानव जाति की रक्षा के लिए युद्ध बनती हू और शत्रु का सहारकर पृथ्वी पर शाति की स्थापना करती हू। म ही भूलोक और स्वर्ग लोक का विस्तार करती हू। म जनक की जननी हू। जैसे वायु अपने आप चलती हे वैसे ही मे भी अपनी इच्छा से समस्त विश्व की स्वय रचना करती हू। म सर्वथा स्वतत्र हू। मुझ पर किसी का प्रभुत्व नही है। मे आकाश और पथ्वी से परे हू। अखिल विश्व मेरी विभूति है। मै अपनी शक्ति से यह सब कुछ हू।'

देवी हिन्दू धमकोष[1] के अनुसार देवी का अर्थ निम्न प्रकार है—

देव' शब्द का स्त्रीलिग 'देवी' है। देवताओ की तरह अनेक देवियो

---

१ हिन्दू धर्म काष ल डा राजबलि पाण्डय, पृ ३३१

की भी सत्ता मानी गयी है। शाक्त मत का प्रचार होने पर शक्ति के अनेक रूपो की अभिव्यक्ति देवियो के रूपो मे प्रचलित होती चली गयी।

महाभारत ओर पुराणो में देवी के विविध नामो और रूपो का वर्णन पाया जाता है। देवी, महादेवी, पार्वती, हेमवती आदि इसके साधारण नाम है। शिव की शक्ति के रूप में देवी के दो रूप है— (१) कोमल और (२) भयकर। प्राय दूसरे रूप मे ही इसकी अधिक पूजा होती है। कोमल अथवा सौम्य रूप मे वह उमा, गौरी, पार्वती, हैमवती, जगन्माता, भवानी आदि नामो से सम्बोधित होती है। भयकर रूप मे इसके नाम है– दुर्गा, काली, श्यामा, चण्डी, चण्डिका, भैरवी आदि। उग्र रूप की पूजा मे ही दुर्गा और भैरवी की उपासना होती है, जिसमें पशुबलि तथा अनेक वामाचार की क्रियाओं का विधान है। दुर्गा के दस हाथ है, जिनमे वह शस्त्रास्त्र धारण करती है। वह परम सुन्दरी, स्वर्णवर्ण और सिहवाहिनी है। वह महामाया रूप से सम्पूर्ण विश्व को मोहित रखती है। चण्डीमाहात्म्य के अनुसार इसके निम्नाकित नाम है— १ दुर्गा, २ दशभुजा, ३ सिहवाहिनी, ४ महिषमर्दिनी, ५ जगद्धात्री, ६ काली, ७ मुक्तकेशी, ८ तारा, ९ छिन्नमस्तका, १० जगद्गौरी। अपने पति शिव से देवी को अनेक नाम मिले है, जैसे बाभ्रवी, भगवती, ईशानी, ईश्वरी, कालञ्जरी, कपालिनी, कौशिकी, महेश्वरी, मृडा, मृडानी, रुद्राणी, शर्वाणी, शिवा, त्र्यम्बकी आदि। अपने उत्पत्ति स्थानों से भी देवी को नाम मिले है यथा कुजा (पृथ्वी से उत्पन्न), दक्षजा (दक्ष से उत्पन्न), अन्य भी अनेक नाम है– कन्या, कुमारी, अम्बिका, अवरा, अनन्ता, नित्या, आर्या, विजया, ऋद्धि, सती, दक्षिणा, पिंगा, कर्बुरी, भ्रामरी, कोटरी, कर्णमुक्ता, पद्मलाछना, सर्वमगला, शाकम्भरी, शिवदूती। तपस्या करने के कारण इसका नाम अपर्णा तथा कात्यायनी है। उसे भूतनायकी, गणनायकी तथा कामाक्षी या कामाख्या भी कहते है। उसके भयकर रूप के और भी अनेक नाम है– भद्रकाली, भीमादेवी, चामुण्डा, महाकाली, महामारी, महासुरी, मातगी, राजसी, रक्तदन्ती आदि।

देवी-पूजा की प्राचीनता और प्रमुख देविया[१]

भारतीय जीवन में देवी-पूजा की जड़ बहुत गहरी है। ईसा से एक शताब्दी पूर्व का एक यूनानी लेखक बताता है कि बहुत प्राचीन काल से भारत के दक्षिणी अन्तरीप पर कन्याकुमारीदेवी की पूजा होती आ रही थी। जैन और

१ कल्याण– भागवततत्त्वाक वर्ष ५५ (१९८१) पृ ४८८ ८९

बौद्ध मतावलम्बियो ने शिव-विष्णु तक को छोड़ दिया, परन्तु देवी की कल्पना वहा भी प्रवेश कर गयी और बौद्धों की 'तारा' तथा जैनों की 'श्यामा' के बहुत से उल्लेख मिलते है। हरिवशपुराण, काश्मीरी एव महाभारत दक्षिणी शैवागम, वैष्णवागम तथा शाक्तागम मे देवी की उपासना सागोपाग रूप में मिलती है। हडप्पा आदि की खुदाई मे बहुत सी स्त्री-मूर्तिया मिली है, जो विद्वानो के मतानुसार महामातृदेवी की मूर्तिया है और उन मूर्तियो से मिलती-जुलती है जो बिलोचिस्तान, पश्चिम एशिया, भूमध्यसागर के इजियन तट, मैसोपोटामिया, कैस्पियन समुद्र तट, एशिया माइनर, सीरिया, फिलीस्तीन, साइप्रस, यूनान के कुछ द्वीपो तथा मिस्र मे बहुत सख्या मे मिली है। हडप्पा से प्राप्त एक लम्बी मुहर पर एक ऐसी देवी की मूर्ति है जिसके योनि भाग से एक अकुर निकल रहा है। यह सम्भवत पृथ्वीदेवी का चित्र है।

प्रमुख देविया मे दुर्गा, काली, लक्ष्मी और सरस्वती के अनेक रूप प्राप्त होते है। इनमे से अष्टभुजा या दशभुजा दुर्गा, सिहवाहिनी, महिषमर्दिनी आदि नाम से और चतुर्भुजा, काली, कपालिनी आदि नाम से देवी के भीषण रूप को प्रगट करती है। वीणा-पुस्तक-धारिणी हसारूढा सर्वशुक्ला सरस्वती देवी के मृदु तथा मधुर रूप की द्योतक है। लक्ष्मी और सरस्वती की क्रमश धन तथा विद्या के लिए ही उपासना की जाती है। चेचक के निवारण के लिए उत्तर भारत म शीतला और दक्षिण भारत में ज्येष्ठा की पूजा बहुत प्रचलित रही है। इसके अतिरिक्त कालीघाट (बगाल) की काली, आसाम की कामाख्या, उडीसा की विरजा, मिर्जापुर (उ प्र) की विन्ध्यवासिनी, हरिद्वार की चण्डी, पजाब की तथा दक्षिण की कन्याकुमारी देवी का विशेष महत्त्व है। शाक्तो के अनुसार सारे भारत में देवी के इक्यावन स्थान पवित्र हैं, क्योंकि इन स्थानों पर विष्णुचक्र से खण्डित होकर सती के शरीरखण्ड इतस्तत जा गिरे थे। तत्र साहित्य मे काली, तारा, मातगी, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला और कमलात्मिका ये दस महाविद्याए कही गयी है।

शक्ति पूजा की व्यापकता

नेपाल में प्रचलित एक लाख श्लोको में निबद्ध शक्ति-सगम-तन्त्र म शाक्त सम्प्रदाय का विस्तार से वर्णन है। इसके उत्तर भाग के प्रथम खड के आठवें पटल म श्लोक सख्या ३ से २५ पर्यन्त में एतद् विषयक प्राप्त विवरण निम्न प्रकार है—

' सृष्टि की सुविधा के लिए यह प्रपञ्च रचा गया है। शाक्त, सौर, शैव, गाणपत्य वैष्णव, बौद्ध आदि यद्यपि भिन्न नाम वाले सम्प्रदाय हे, परन्तु वास्तव मे ये एक ही वस्तु है। विधि भेद से भिन्न दिखाई देते है। इनम परस्पर निन्दा, परस्पर द्वेष एव प्रपच के ही लिए हैं। वस्तुत मत एक ही है। निन्दक की सिद्धि नही होती। जो ऐक्य मानते है उन्ही को उन्हीं के सम्प्रदाय से सिद्धि मिलती है। काली और तारा की उपासना इसी ऐक्य सिद्धि के लिए प्रचलित हुई। यह महाशक्ति, भला, बुरा, सुन्दर और क्रूर दोनो को धारण करती है। यही मत प्रकट करने के लिए शाक्त तत्त्व ने शास्त्र-कीर्तन किया है। चौदहा विद्याओ को एकत्त्व प्रतिपादन के लिए ही प्रकट किया है। प्रकृत विषय इस प्रकार है— जगत्तारिणी देवी चतुर्वेदमयी, कालिका देवी, अथर्ववेदाधिष्ठात्री, काली और तारा क बिना अथर्ववेदविहित कोई क्रिया नही हो सकती। केरल म कालिका, कश्मीर मे त्रिपुरा और गौड देश में तारा तथा य ही पीछे काली रूप म उपास्या होती ह। '

इससे पता चलता है कि पूर्व मे साम्प्रदायिका म, जिनम शाक्त भी सम्मिलित हैं– वे अवश्य ही वैदिक शाक्त है। तान्त्रिक शाक्त धर्म या वामाचार का प्रचलन बाद म हुआ।

पुराणो के परिशीलन से ज्ञात हाता है कि प्रत्यक सम्प्रदाय के उपास्यदेव की एक शक्ति अवश्य है। गीता मे भगवान् कृष्ण अपनी द्विधा प्रकृति की, अपनी माया की, बारम्बार चर्चा करते हे और पुराणा मे तो नारायण और विष्णु के साथ लक्ष्मी का, शिव के साथ शिवा का, सूर्य के साथ सावित्री का गणेश के साथ अम्बिका का चरित्र और महात्म्य वर्णित है। इनके बाद म जब सम्प्रदाया का अलग-अलग विकास होता है तो प्रत्येक सम्प्रदाय अपने उपास्य की शक्ति की भी उपासना करता है। इस प्रकार शक्ति उपासना की एक समय ऐसी प्रबल धारा बही कि सभी सम्प्रदाय वाल, मुख्य रूप से नही तो गौण रूप स ही सही, शाक्त बन गय। शक्ति को अपन उपास्य के नाम के पहले स्मरण करने की प्रथा चल पडी। सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, उमामहेश्वर गौरीगणेश इत्यादि नाम इसी प्रभाव के सूचक है। उसी समय की यह उक्ति है कि द्विजमात्र, जो वेदमाता गायत्री की सन्ध्योपासना करते है, शाक्त है और सचमुच ही सारी आर्य जनता किसी समय शाक्त थी। इन

शाक्तों के दो दल थे, एक दल में शैव, वैष्णव, सौर, गाणपत्य आदि वैदिक सम्प्रदाया के शाक्त दक्षिणाचारी थे ओर दूसगी आर बोद्ध, जेन आदि अवैदिक तान्त्रिक सम्प्रदायो मे शाक्त वामाचारी थे। इतना व्यापक प्रचार होने के कारण ही शायद शाक्ता का कोई मठ या गद्दी नही बनी। इनके पांच पीठ या इक्यावन पीठ ही इनके मठ समझे जाने चाहिए।[1]

देवीपूजा की व्यापकता के कुछ प्रमाण[2]

देवी-पूजा की व्यापकता का सबसे वडा प्रमाण यही है कि हिगलाज से लेकर कामाख्या तक और कन्याकुमारी से कारमीर तक ऐसा कोई स्थान नही, जहा देवी-पूजा के कोई न कोई प्रमाण अब भी न मिलते हो। राजस्थान म तो गाव-गाव मे दवी के छोटे-छोटे मदिर है। उत्तरप्रदेश, मध्यभारत तथा अन्य स्थाना मे जहा मदिर कम है, वहा ऐसी जातिया पाई जाती हे जो डोलियो में लिए देवी-प्रतिमा के दर्शन कराती हे और देवी के भजन गाकर सुनाती ह। हिमाचल प्रदेश मे ज्वालाजी, चामुण्डा, मातश्वरी, ब्रजेश्वरी तथा चित्तपूर्नी आदि देवियो की उपासना सर्वप्रचलित है। ऐसा कौन-सा गाव होगा जहॉ कि हिन्दू लोग नवरात्र के दिना म (जो व्रत नही रखते वे भी) कन्याओं को देवी मानकर भाजन न कराते हो। पुराणो मे[3] सभी स्त्रियो का दवी का ही रूप बतलाया गया है। पुराणों का जिन लागा ने नाम भी नही सुना होगा वे भी प्राय स्त्रियो का देवी कहते सुने जाते हे। कुछ लोग तो कुमारी कन्या के रूप म धूप-दीप, नैवेद्य आदि से विधिवत् देवी-पूजा करते है। वेदो म जिन द्वार देवियों का वर्णन आता है, उनके प्रसग को दखते हुए इन देवियो को दरवाजे की अधिष्ठात्री देवी तो नहीं माना जा सकता, परन्तु आजकल विवाह के अवसर पर जो द्वारपूजा की रस्म कही-कही होती हे, उसमें स्वय दरवाजे की पूजा न होकर दरवाजे पर आये हुए वर की पूजा होती है। अत वेदो की द्वार-देविया सभवत एसी देविया है जा या तो विश्वरहस्य की द्वारस्वरूपा समझी जाती हो या मनुष्य देह की द्वा नामक विद्वति से सम्बधित शक्तिया हो।[4]

---

१ हिन्दुत्व– रामदास गौड प ७२० २१
२ कल्याण– भावगततत्त्वाक वर्ष ५५ (१९८१) पृ ४८९
३ तुलना कीजिए– विद्या समस्ता तव दवि भदा स्त्रिय समस्ता सकता जगत्सु।
४ इय विद्वतिर्वैदा (एतरय उपनिषद)।

इस प्रकार हम देखते है कि जनमानस मे देवी-पूजा की व्यापकता सर्वत्र उपलब्ध होती है। हिमाचल-प्रदेश मे घर-घर होने वाली कुलदेवी या अन्य दवीरूपा की पूजा भी देवी शक्ति के एकमेव शक्ति तत्व की उपासना का ही पूर्ण परिवर्तित रूप है। इसके मूल मे एक ऐसा देवीतत्त्व है जो पुराणो तथा आगमो की देवी-उपासना या शक्ति पूजा का आधार है अथवा परमश्वर के मातृरूप को सामने प्रस्तुत करता है।

देवी की विश्व व्यापकता[१]

मानव ने आदि काल से कोई-न-कोई उपासना या पूजा का विषय अपना रखा है। आर्थर एवलन (Avlon) के अनुसार देवी वस्तुत ईश्वर का ही मातृरूप है। उत्तरी यूरोप के प्राचीन धर्म मे प्रमुख १२ देवों और आठ दवियो के अतिरिक्त अनेक अन्य देविया भी मानी जाती थी। ग्रीस मे अकेले ज्योस (द्यो) की ही अनेक पत्निया थी, जिनम अन्य नामो के अतिरिक्त मेतिस (मति) थेमिस (ऋत) जैसी देविया की भी गणना हो जाती है। इनके अतिरिक्त ऐटे, प्रोफेसिस, चारिस, अर्थेनी, पर्सेफोन आदि अनेक देविया ग्रीस में पूजी जाती थी। हिटराइट की देरकेटो, सीरिया की एश्तोरेथ तथा फ्रिजिया की साइबेले देवी ग्रीस की एफ्रोडाइट के रूप म देखी जा सकती है। विद्वानो का मत है कि देवी की पूजा किसी-न-किसी रूप म यहूदी धर्म के पूर्व अरब देशो मे भी की जाती थी। बेबीलोन की इश्तर, सीरिया की आर्तमिस तथा नार्वे की दूदून का नाम भी विश्व की प्रसिद्ध देवियों में गिना जा सकता है।

सातवी शताब्दी ईस्वी (मुहम्मद द्वारा इस्लाम के प्रचार ओर अरब क मदिग का नष्ट कर दिय जाने तक) अरब में तीन मातृका (शक्ति देवी) मदिर विद्यमान थ। एक मक्का से साठ मील ताइफ (नगर) म काबा और लात म, दूसरा मक्का म और तीसरा मक्का से ढाई सौ मील दूर मदीने के पास मनात म। इन मदिरा में प्रतिष्ठित देवी प्रतिमाएँ बहुधा बन्नातुल्लाह अर्थात् अल्लाह की पुत्रियों के रूप म मानी जाती थी।[२]

---

१ कल्याण– भागवततत्वाक वर्ष ५५ (१९८१) ले डॉ विद्याधर शर्मा पृ ४८८

२ इस्लाम का उदय और लक्ष्य– लेखक इर्तिजा हुसैन (अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी) प्रथम सस्करण १९९०ई

शक्ति सगम तत्र (जिसका प्रचलन मुख्य रूप से नेपाल में है) मे विश्व मे स्थित शक्तिपीठो में से एक मक्का मे बताया गया है।

दस महाविद्याएँ

निगम जिसे विराट् विद्या कहते है, आगम उसे ही महाविद्या कहते है। दक्षिण और वाम दोना मार्गो वाले दसो महाविद्याओ की उपासना करते है। ये है– महाकाली उग्रतारा, षोड़शी, भुवनेश्वरी, छिन्नमस्ता, भैरवी, धूमावती, बगलामुखी, मातङ्गी और कमला। दसों शक्तिमान क्रमश महाकाल, अक्षोभ्य पुरुष, पञ्चवक्त्ररुद्र, त्र्यम्बक, कबन्ध, दक्षिणामूर्ति (शून्य), एकवक्त्र रुद्र, मतङ्ग और सदाशिव विष्णु है। धूमावती विधवा कहलाती है। पुरुष-स्थान शून्य है। शाक्त-प्रमोद मे इन दसों महाविद्याओ के अलग-अलग तत्र है जिनमे इनकी कथाएँ, ध्यान और उपासना विधि है। षोड़शी का दूसरा नाम 'त्रिपुर सुन्दरी' है।

प्रकारान्तर से ऋषियो ने इसी सृष्टिविद्या को तीन भागो मे बाटा है। वही तीन महाशक्तियाँ, महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती है। इनमे भी क्रमश प्रलय, पालन और सृष्टि के काम होते है। एक ही अज पुरुष की अजा नाम से प्रसिद्ध महाशक्ति तीन रूपों मे परिणत होकर सृष्टि पालन और प्रलय की अधिष्ठात्री बन रही है। श्वेताश्वतरोपनिषत् (४-५) की इन पक्तियो मे—

अजामेका लोहितशुक्लकृष्णा बह्वी प्रजा सृजमाना सरूपा ।
अजाह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येना भुक्तभोगामजोऽन्य ॥

उसी अजाशक्ति के तीनो रूपों की चर्चा है।

महाभागवत मे ऐसा कथानक आया है कि दक्ष प्रजापति ने जब यज्ञ किया तो उसमे शिव को नहीं बुलाया। सती ने शिव से यज्ञ मे जाने की अनुमति मागी, शिव ने बिना निमत्रण नही जाने का सती को परामर्श दिया किन्तु सती अपने निश्चय पर अटल रही तथा कहा मे यज्ञ में अवश्य जाऊगी वहा या तो देवेश्वर शिव के लिए यज्ञ भाग प्राप्त करूगी या फिर यज्ञ को ही नष्ट कर दूगी। सती के क्रोध करने पर उसके नेत्र लाल हो गये अधर फडकने लगे, उसका शरीर कृष्णवर्ण का हो गया। उसने काली का रूप धारण कर लिया। क्रोध से शरीर भयानक व उग्र दिखने लगा, शरीर से प्रचण्ड तेज निकल रहा था, केशराशि अस्त-व्यस्त बिखरी-सी थी। उनकी चार भुजाओ

से वे ऐसी प्रतीत हो रही थीं मानो पराक्रम की वर्षा हो रही हो। वे मुण्डमाला धारण किये हुए थी तथा जिह्वा बाहर निकली हुई थी, शीश पर अर्धचन्द्र शोभायमान था, वे विकट हुकार भर रही थी। सती का यह रूप देख स्वय शिव भाग चले। भागते हुए शिव को दसा दिशाओं म रोकने के लिए देवी ने अपनी अगभूता दस देवियो को प्रगट किया जिनके नाम– काली, तारा, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगलामुखी, कमला, त्रिपुर-भैरवी, भुवनेश्वरी, त्रिपुर-सुन्दरी और मातगी है।

शिवजी को सती के योगाग्नि मे जलने की जब सूचना मिली तो वे तत्काल यज्ञस्थल पर गये तथा सती का शव लेकर दसों दिशाओं में घूमने लगे। शिवजी का यह रूप एव मती के शव को रुद्र के कधे पर देखकर विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र से सती के अग काट दिये। सती के अग एव आभूषण जहा-जहा गिरे वे शक्तिपीठ बन गये जो निम्न प्रकार है[१]—

स्थान	अग तथा अगभूषण	शक्ति	भैरव
१ हिंगुला	ब्रह्मरध्र	कोट्टवीशा	भीमलोचन
२ सकराय	तीन चक्षु	महिषमर्दिनी	क्रोधीश
३ सुगन्धा	नासिका	सुनन्दा	त्र्यम्बक
४ काश्मीर	कण्ठदेश	महामाया	त्रिसन्ध्येश्वर
५ ज्वालामुखी	महाजिह्वा	सिद्धिदा	उन्मत्त भैरव
६ जलन्धर	स्तन	त्रिपुरमालिनी	भीषण
७ वैद्यनाथ	हृदय	जयदुर्गा	वैद्यनाथ
८ नेपाल	जानु	महामाया	कपाली
९ मानस	दक्षिणहस्त	दाक्षायणी	अमर
१० उत्कल विरजाक्षेत्र	नाभिदेश	विमला	जगन्नाथ
११ गण्डकी	गण्डस्थल	गण्डकी	चक्रपाणि
१२ बहुला	वाम बाहु	बहुलादेवी	भीरुक
१३ उज्जयिनी	कूर्पर	मगलचण्डिका	कपिलाम्बर

१ कल्याण– शक्ति अक वर्ष ९ (१९३४) पृ ६४४ ४७

१४ त्रिपुरा	दक्षिणपाद	त्रिपुरसुन्दरी	त्रिपुरेश
१५ चहल	दक्षिणबाहु	भवानी	चन्द्रशेखर
१६ त्रिस्रोता	वामपाद	भ्रामरी	भैरवेश्वर
१७ कामगिरि	योनिदेश	कामाख्या	उमानन्द
१८ प्रयाग	हस्ताङ्गुलि	ललिता	भव
१९ जयन्ती	वाम जङ्घा	जयन्ती	क्रमदीश्वर
२० युगाद्या	दक्षिणाङ्गुष्ठ	भूतधात्री	क्षीरखण्डक
२१ कालीपीठ	दक्षिणापादाङ्गुलि	कालिका	नकुलीश
२२ किरीट	किरीट	विमला	सवर्त्त
२३ वाराणसी	कर्णकुण्डल	विशालाक्षी मणिकर्णी	कालभैरव
२४ कन्याश्रम	पृष्ठ	सर्वाणी	निमिष
२५ कुरक्षेत्र	गुल्फ	सावित्री	स्थाणु
२६ मणिबन्ध	दो मणिबन्ध	गायत्री	सर्वानन्द
२७ श्रीशैल	ग्रीवा	महालक्ष्मी	शम्बरानन्द
२८ काञ्ची	अस्थि	देवगर्भा	रुरु
२९ कालमाधव	नितम्ब	काली	असिताङ्ग
३० शोणदेश	नितम्बक	नमदा	भद्रसेन
३१ रामगिरि	अन्य स्तन	शिवानी	चण्डभैरव
३२ वृन्दावन	केशपाश	उमा	भूतेश
३३ शुचि	ऊर्ध्वदन्त	नारायणी	सहार
३४ पञ्चसागर	अधोदन्त	वाराही	महारुद्र
३५ करतोयातट	तल्प	अपर्णा	वामनभैरव
३६ श्रीपर्वत	दक्षिण गुल्फ	श्रीसुन्दरी	सुन्दरानन्दभैरव
३७ विभाप	वाम गुल्फ	कपालिनी	सर्वानन्द
३८ प्रभास	उदर	चन्द्रभागा	वक्रतुण्ड
३९ भैरवपर्वत	ऊर्ध्व ओष्ठ	अवन्ती	लम्बकर्ण
४० जनस्थल	दोनों चिबुक	भ्रामरी	विकृताक्ष
४१ सर्वशैल	वाम गण्ड	राकिनी	वत्सनाभ

४२ गोदावरीतीर	गण्ड	विश्वेशी	दण्डपाणि
४३ रत्नावली	दक्षिण स्कन्ध	कुमारी	शिव
४४ मिथिला	वाम स्कन्ध	उमा	महोदर
४५ नलहाटी	नला	कालिकादेवी	योगेश
४६ कर्णाट	कर्ण	जयदुर्गा	अभीरु
४७ वक्रेश्वर	मन	महिषमर्दिनी	वक्रनाथ
४८ यशार	पाणिपद्म	यशोरेश्वरी	चण्ड
४९ अट्टहास	ओष्ठ	फुल्लरा	विश्वेश
५० नन्दिपुर	कण्ठहार	नन्दिनी	नन्दिकेश्वर
५१ लङ्का	नूपुर	इन्द्राक्षी	राक्षसेश्वर
५२ विराट	पादाङ्गुलि	अम्बिका	अमृत
५३ मगध	दक्षिणजघा	सर्वानन्दकरी	व्योमकेश

किसी-किसी ग्रन्थ मे शपोक्त दो पीठो का उल्लेख नही है। इक्यावन पीठ ही अनेक पुस्तको म गृहीत हुए है।

देवीभागवत म एक सौ आठ पीठस्थानो का उल्लेख देखने मे आता है। तन्त्रचूडामणि म स्थान, अङ्ग, भैरव और शक्ति नामका जैसा विशेषरूप से उल्लेख किया गया है, दवी-भागवत मे वैसा नही हे। इसमे महर्षि वेदव्यास ने जनमेजय क प्रश्नानुसार पीठस्थान और वहा के अधिदेवता का नाम उल्लेख किया है जो इस प्रकार है—

स्थान	देवता	स्थान	देवता
१ वाराणसी	विशालाक्षी	१० हस्तिनापुर	जयन्ती
२ नैमिषारण्य	लिंगधारिणी	११ कान्यकुब्ज	गौरी
३ प्रयाग	ललिता	१२ मलय	रम्भा
४ गन्धमादन	कामुकी	१३ एकाग्र	कीर्तिमती
५ दक्षिणमानस	कुमुदा	१४ विश्व	विश्वेश्वरी
६ उत्तरमानस	विश्वकामा	१५ पुष्कर	पुरुहूता
७ गोमन्त	गोमती	१६ केदार	सन्मार्गदायिनी
८ मन्दर	कामचारिणी	१७ हिमवतपष्ठ	मन्दा
९ चैत्ररथ	मदोत्कटा	१८ गोकर्ण	भद्रकर्णिका

स्थान	देवता	स्थान	देवता
१९ स्थानेश्वर	भवानी	४७ कोटितीर्थ	कोटवी
२० विल्वक	बिल्वपत्रिका	४८ मधुवन	सुगन्धा
२१ श्रीशैल	माधवी	४९ गोदावरी	त्रिसन्ध्या
२२ भद्रेश्वर	भद्रा	५० गङ्गाद्वार	रतिप्रिया
२३ वराहशैल	जया	५१ शिवकुण्ड	शुभानन्दा
२४ कमलालय	कमला	५२ देविकातट	नन्दिनी
२५ रुद्रकोटि	रुद्राणी	५३ द्वारावती	रुक्मिणी
२६ कालञ्जर	काली	५४ वृन्दावन	राधा
२७ शालग्राम	महादेवी	५५ मथुरा	देवकी
२८ शिवलिंग	जलप्रिया	५६ पाताल	परमेश्वरी
२९ महालिंग	कपिला	५७ चित्रकूट	सीता
३० माकोट	मुकुटेश्वरी	५८ विन्ध्य	विन्ध्यवासिनी
३१ मायापुरी	कुमारी	५९ करवीर	महालक्ष्मी
३२ सन्तान	ललिताम्बिका	६० विनायक	उमादेवी
३३ गया	मङ्गला	६१ वैद्यनाथ	आरोग्या
३४ पुरुषोत्तम	विमला	६२ महाकाल	महेश्वरी
३५ सहस्राक्ष	उत्पलाक्षी	६३ उष्णतीर्थ	अभया
३६ हिरण्याक्ष	महोत्पला	६४ विन्ध्यपर्वत	नितम्बा
३७ विपाशा	अमोघाक्षी	६५ माण्डव्य	माण्डवी
३८ पुण्ड्वर्द्धन	पाटला	६६ माहेश्वरीपुर	स्वाहा
३९ सुपार्श्व	नारायणी	६७ छगलण्ड	प्रचण्डा
४० त्रिकुट	रुद्रसुन्दरी	६८ अमरकण्टक	चण्डिका
४१ विपुल	विपुला	६९ सोमेश्वर	वरारोहा
४२ मलयाचल	कल्याणी	७० प्रभास	पुष्करावती
४३ सह्याद्रि	एकवीरा	७१ सरस्वती	देवमाता
४४ हरिश्चन्द्र	चन्द्रिका	७२ तट	पारावारा
४५ रामतीर्थ	रमणी	७३ महालय	महाभागा
४६ यमुना	मृगावती	७४ पयोष्णी	पिङ्गलेश्वरी

७५	कृतशौच	सिंहिका	९२	बदरी	उर्वशी
७६	कार्त्तिक	अतिशाङ्करी	९३	उत्तरकुरु	औषधी
७७	उत्पलावर्त्तक	लीला (लाला)	९४	कुशद्वीप	कुशोदका
७८	शोणसङ्गम	सुभद्रा	९५	हेमकूट	मन्मथा
७९	सिद्धवन	लक्ष्मी	९६	कुमुद	सत्यवादिनी
८०	भरताश्रम	अनङ्गा	९७	अश्वत्थ	वन्दनीया
८१	जालन्धर	विश्वमुखी	९८	कुबेरालय	निधि
८२	किष्किन्धापर्वत	तारा	९९	वेदवदन	गायत्री
८३	देवदारुवन	पुष्टि	१००	शिवसन्निधि	पार्वती
८४	काश्मीरमण्डल	मेधा	१०१	देवलोक	इन्द्राणी
८५	हिमाद्रि	भीमादेवी	१०२	ब्रह्ममुख	सरस्वती
८६	विश्वेश्वर	तुष्टि	१०३	सूर्यबिम्ब	प्रभा
८७	शङ्खोद्धार	धरा	१०४	मातृमध्य	वैष्णवी
८८	पिण्डारक	धृति	१०५	सतीमध्य	अरुन्धती
८९	चन्द्रभागा	कला	१०६	स्त्रीमध्य	तिलोत्तमा
९०	अच्छोद	शिवधारिणी	१०७	चित्रमध्य	ब्रह्मकला
९१	वेणा	अमृता	१०८	सर्वप्राणीवर्ग	शक्ति

देवीगीता में देवीपीठों की संख्या ७२ दी गयी है, कुछ अन्य ग्रन्थों में भी पीठों की संख्या भिन्न-भिन्न कर दी गयी है।

नवदुर्गा

शक्ति साधना हेतु भक्त पूर्ण विधि-विधानपूर्वक दुर्गा की पूजा करते है। माता करुणामयी है। पूजा अर्चना के विधि-विधान से अनभिज्ञ श्रद्धालु भक्त भी चैत्र एवं आसोज के नवरात्रों में जब देवी की पूजा करते हैं नवरात्रा का व्रत करते है तथा देवी आराधना के बाद वे नव-स्फूर्ति एवं नवीन ऊर्जा प्राप्त होने का अनुभव करते हैं। आद्याशक्ति भगवती दुर्गा यद्यपि एक ही है तथापि काल-भेद से उनके नौ रूप हुए। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार—

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्॥

पचम स्कन्दमातेति षष्ठ कात्यायनीति च।
सप्तम कालरात्रिश्च महागौरीति चाष्टमम्॥
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता ।

नवरात्रो मे नो दिन तक माता के निम्न रूपों की प्रतिदिन क्रमानुसार पूजा की जाती है—

१ नवदुर्गाओ मे पहली शैलपुत्री है। पर्वतराज हिमालय के यहा जन्म लेने से यह शैलपुत्री कहलाई। वृषभ इनका वाहन है। माता के दाहिने हाथ मे त्रिशूल तथा बाये हाथ मे कमल का फूल सुशोभित है। पूर्व जन्म में यह देवी दक्ष पुत्री सती थी। शैलपुत्री दुर्गा का महत्त्व और शक्तिया अनन्त है। इसके ध्यान का मत्र इस प्रकार है—

वन्दे वाञ्छितलाभाय चन्द्रार्धकृतशेखराम्।
वृषारूढा शूलधरा शैलपुत्री यशस्विनीम्॥

२ दुर्गा माता का दूसरा रूप ब्रह्मचारिणी है। अर्थात् स्वभाव से ही जो ब्रह्म स्वरूप की प्राप्ति मे समर्थ हो। माता का स्वरूप पूर्ण ज्योतिर्मय एव भव्य है। माता के दाहिने हाथ में माला एव बाय हाथ में कमण्डलु रहता है। तपस्या के समय इन्होने पत्ते खाना भी छोड दिया था अत इनका एक नाम 'अपर्णा' भी पड गया। माता का यह स्वरूप भक्तो को अनन्त फल देने वाला है। माता की उपासना से त्याग, वैराग्य, सदाचार, सयम की वद्धि होती है। माता का ध्यान मत्र निम्न प्रकार है—

दधाना करपद्माभ्यामक्षमालाकमण्डलू।
देवि प्रसीदितु मयि, ब्रह्मचारिणीनुत्तमा॥

३ भगवती दुर्गा का तीसरा रूप चन्द्रघण्टा कहा गया है। माता का स्वरूप शान्तिदायक और कल्याणकारी है। यह सद्गति देती है। इनके मस्तिष्क पर घण्टे के आकार का अर्द्धचन्द्र होने से इसे चन्द्रघण्टा कहते हे। माता के शरीर का वर्ण स्वर्ण की तरह चमकीला है। माता की दस भुजाओ में खड्ग एव बाण आदि अस्त्र-शस्त्र है। माता का वाहन सिह है। माता का ध्यान मत्र इस प्रकार है—

पिण्डप्रवरारूढा चण्डकोपास्त्रकैर्युता।
प्रसाद तनुये मध्य चन्द्रघटति विश्रुता॥

४ भगवती का चौथा स्वरूप कूष्माण्डा का है, जो अतुल तेजस्वी है। अपनी मुस्कान से अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्ड की सृष्टि करने के कारण इसे कूष्माण्डा कहते है। माता क अष्टभुजा है जिसमे सात हाथो म कमण्डलु, धनुष, बाण, कमल-पुष्प, अमृतमय कलश, चक्र, गदा तथा एक हाथ म (बाया) जपमाला है। इनका वाहन सिह है। संस्कृत मे कूष्माण्ड कोले को कहते है जिसकी बलि माता को सर्वाधिक प्रिय है। इस कारण भी इसे कुष्माण्डा कहा गया है। माता का ध्यान मत्र इस प्रकार है—

सुरासम्पूर्णकलश रुधिराप्लुतमेव च।
दधाना हस्तपद्माभ्या कुष्माण्डा शुभदास्तु मे॥

५ माता का पाचवा रूप स्कन्दमाता का कहा गया है। ये स्कन्द (कुमार कार्त्तिकेय) की माता होने से स्कन्दमाता कहलाती है। माता की आराधना से भक्त की समस्त इच्छाए पूर्ण होती है। भगवान् स्कन्द बाल रूप मे इनकी गोद मे बेठे रहते है। माता चतुर्भुजी है। दाहिने हाथ से गोद म बैठे भगवान् स्कन्द को पकडे हुए है। दूसरे हाथ म कमल है। बाये हाथ म कमल पुष्प एव दूसरा वरद मुद्रा के रूप म है। माता का वाहन सिह है। माता के ध्यान का मत्र इस प्रकार है—

सिहासनगता नित्य पद्माश्रितकरद्वया।
शुभदास्तु सदा दवी स्कन्दमाता यशस्विनी॥

६ जगदम्बा दुर्गा का छठा रूप कात्यायनी का है। देवताआ की कार्य सिद्धि हेतु आप महर्षि कात्यायन के यहा प्रगट हुई थी अत इनका नाम कात्यायनी पड़ा। यह माता अमित एव विपुल फलदायिनी है। गोपियों ने भगवान् कृष्ण को पति रूप मे पाने के लिए इनकी पूजा यमुना तट पर की थी। अत ये ब्रजमण्डल की अधिष्ठात्री के रूप म प्रतिष्ठित है। माता के आठ भुजाय है तथा सिह की सवारी है। माता के ध्यान का मत्र निम्न प्रकार है—

चन्द्रहासोज्ज्वलकरा शार्दूलवरवाहना।
कात्यायनी शुभ दद्यादेवी दानवघातिनी॥

७ मा का सातवा रूप कालरात्रि का है। इनका स्वरूप गहरे काले रग का है। सिर के बाल बिखरे हुए है। गले म विद्युत की तरह चमकने वाली

माला है। इनके तीन नेत्र है। माता का भयानक रूप होते हुए भी ये भक्तो को शुभ फल देन वाली हे। इसलिए इनका नाम शुभकरी भी है। माता चतुर्मुखी हे। दाहिनी तरफ के ऊपर वाला हाथ वर मुद्रा मे तथा नीचे का हाथ अभय मुद्रा मे हैं। बाये तरफ के ऊपर के हाथ मे लोहे का काटा व नीचे वाले हाथ मे खड्ग है। माता का वाहन गधा है। इनके ध्यान का मत्र निम्न प्रकार है—

एकवेणी जपाकर्णपूरा नग्ना शवस्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्तशरीरिणी।।
वामपादोल्लसल्लोहलताकण्टकभूषण।
वर्धनमूर्धजा कृष्णा कालरात्रिर्भयकरी।।

८ माता का आठवा रूप महागौरी का है। इनके वस्त्र व आभूषण श्वेत है। माता चतुर्भुजी है। दाहिना (ऊपर का) हाथ अभय मुद्रा मे व नीचे के हाथ में त्रिशूल है। ऊपर वाले बाये हाथ मे डमरू व नीचे वाले हाथ वर मुद्रा के रूप मे है। आपका वाहन वृषभ है। इन्होंने शकर भगवान् की प्राप्ति हेतु महान् तप किया था। माता की आयु आठ वर्ष की कन्या के समान है। माता का ध्यान मत्र निम्न प्रकार है—

श्वेते वृषे समारूढा श्वेताम्बरधरा शुचि ।
महागौरी शुभ दद्यान्महादेवप्रमोददा।।

९ माता की नव दिन सिद्धिदात्री माता के रूप मे उपासना की जाती है। यह माता नवनिधि सोलह सिद्धि देने वाली है। भक्त को मोक्ष प्रदायिनी है। इसे सिद्धिदात्री माता कहते है। माता का ध्यान मत्र इस प्रकार है—

सिद्ध-गधर्व-यक्षाद्यैयैर सुरैरमरैरपि।
सेव्यमाना सदा भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी।।

षोड़श मातृकाओं का स्मरण एव कुलदेवी

हमारे यहाँ यह वैदिक परम्परा है कि हम कोई भी मागलिक कार्य करें, उसमें षोडश मातृकाओं का पूजन अनिवार्य है। इन माताओ के स्मरण के बिना कोई भी कार्य पूर्णता से सम्पन्न नहीं होता। इन षोड़श मातृकाओं मे

कुलदेवी भी एक है। अत कुलदेवी की अवधारणा उतनी ही पुरानी है जितनी कर्मकाण्ड की वैदिक परम्परा। बिना कुलदेवी की पूजा-अर्चना एव उसके ध्यान के कोई भी मागलिक कार्य पूर्ण नहीं होता, अत उसकी पूजा अर्चना अनिवार्य है। षोडश मातृकाओ के नाम निम्न प्रकार है—

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातर ॥
धृति पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मन कुलदेवता।
गणेशेनाधिका होता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश॥

गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, माताएँ, लोकमाताएँ, धति, पुष्टि, तुष्टि तथा अपनी कुलदेवता– इन सोलह मातृकाओ का गणपति के साथ मगल-कार्य मे पूजन करना चाहिए।

चौसठ योगिनियाँ

शक्ति के विभिन्न स्वरूपो मे योगिनियाँ भी आती है जिनकी सख्या ६४ है, उनके नाम निम्न प्रकार है— १ दिव्ययोगा, २ महायोगा, ३ सिद्धयोगा, ४ महेश्वरी, ५ पिशाचिनी, ६ डाकिनी, ७ कालरात्रि, ८ निशाचरी, ९ ककाली, १० रोद्रवेताली, ११ हुकारी, १२ भुवनेश्वरी, १३ ऊर्ध्वकेशी, १४ विरूपाक्षी, १५ शुष्काङ्गी, १६ नरभोजिनी, १७ फिटकारी, १८ वीरभद्रा, १९ धूम्राक्षी, २० कलहप्रिया, २१ रक्ताक्षी, २२ घोराक्षी, २३ विश्वरूपा, २४ भयकरी, २५ कामाक्षी, २६ उग्रचामुण्डा, २७ भीषणा, २८ त्रिपुरान्तका, २९ वीरकौमारिका, ३० चण्डी, ३१ वाराही, ३२ मुण्डधारिणी, ३३ भैरवी, ३४ हस्तिनी ३५ क्रोधदुर्मुखी, ३६ प्रेतवाहिनी ३७ खट्वागदीर्घ लम्बोष्ठी, ३८ मालती, ३९ मन्त्रयोगिनी, ४० अस्थिनी, ४१ चक्रिणी, ४२ ग्राहा, ४३ ककाली, ४४ भुवनेश्वरी ४५ कण्टकी ४६ काटकी, ४७ शुभ्रा, ४८ क्रियादूती, ४९ करालिनी, ५० शङ्खिनी, ५१ पद्मिनी, ५२ क्षीरा ५३ असधा ५४ प्रहारिणी, ५५ लक्ष्मी, ५६ कामुकी, ५७ लोला, ५८ काकदृष्टि, ५९ अधोमुखी, ६० धूर्जटी, ६१ मालिनी, ६२ घोरा, ६३ कपाली, ६४ विषभोजिनी। इस प्रकार य चौसठ उत्तम सिद्धि प्रदान करन वाली योगिनिया बतलायी गयी है।

भारत में नारी पूजा

भगवान मनु ने स्त्रियों के सम्बन्ध मे मान, सत्कार आदि साधारण शब्दों का नही, अपितु 'पूजा' शब्द का ही प्रयोग करते हुए कहा है—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।

'जहा स्त्रिया पूजी जाती है, वहा देवता रमते है।' और जहा स्त्रियाँ दुखी रहती है, वहा महालक्ष्मी आदि देवता नही बसते। कई स्थानो मे यहॉ तक भी कहा गया है—

यत्र नार्यो न पूज्यन्ते श्मशान तत्र वै गृहम्।'

जहा स्त्रियाँ नही पूजी जाती वह तो घर नही है, श्मशान है।'

यही नहीं, माता को गुर का स्थान दिया गया है, प्रथम गुरु माता है, उसी की कृपादृष्टि से बालक का कल्याण है– कहा भी गया है—

१ मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव॥
२ मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद॥

इत्यादि मन्त्रा मे माता को ही सबसे पहला स्थान दिया गया है। इसका भी यही कारण है कि माता ही आदिगुरु है और उसकी दया तथा अनुग्रह के ऊपर बच्चों का ऐहिक, पारलौकिक एव पारमार्थिक कल्याण निर्भर करता है।

कुलदेवी

पूजा की लाकप्रियता की दृष्टि से आज हमारे देश म सर्वाधिक मान्यता दुर्गा, काली, लक्ष्मी और सरस्वती– इन चार देवियो की है– वैसे सम्पूर्ण भारतवर्ष मे प्रचलित देवी आराधना के सदर्भ में असख्यक देविया की मान्यता है। देवी दुर्गा, काली, ललिता आदि सहस्रनामो में देवी के कई हजार नाम गिनाये गये है। यद्यपि वहा वे एक ही देवी के नाम समझे जाते है, परन्तु जनसाधारण की मान्यता मे उनमे से अधिकाश पृथक् रूप में देवियॉं है। सभी जातियो मे प्रत्येक कुल की अलग-अलग देवी होती है, जिसे कुलदेवी कहा जाता है। आज भी भारत मे शीतला, सकटा, गौरी, दुर्गा, लक्ष्मी, काली, चण्डी, सरस्वती आदि देवियाँ अलग-अलग नाम स पूजी जाती है। देवी के मदिरो मे आश्विन तथा चैत्र मासों म नवरात्र के दिनो म जिस देवी की पूजा की

जाती है, उसको केवल दुर्गा या मात्र देवी के नाम स ही सर्वसाधारण जानता है। अनेक देवियो की मान्यता के साथ-साथ यह भी मान्यता है कि ये सब एक ही देवी के अनेक रूप है। कुलदेवी दुखियो के दु ख को देखकर द्रवित हो जाती है और उसके दु ख का निवारण करती है।

इन माताओ की शक्तियो को हम नही समझ सकते भले ही हम कितने ही विद्वान् हो, ज्ञानी हों, पण्डित हो। माता की क्षणिक कृपा दृष्टि हमे निहाल कर देती है, शर्त केवल यह है कि भक्त माता को सच्चे हृदय से पुकारे, उसके सामने आत्म-समर्पण कर दे और आर्त्त स्वर से जगदम्बा से प्रार्थना करे– माँ, मै तुम्हारी शरण मे हू, मेरी रक्षा करो, मेरी मनोकामना पूर्ण करो'। फिर देखो माता की अहैतुकी अक्षुण्य कृपा वह भक्त को आशातीत फल प्रदान करती है, उसके सब कष्टों का निवारण करती है।

आदिशक्ति ही पारीकों की कुलदेवी

पारीको के आदि पुरुष ब्रह्मा जी के पुत्र ब्रह्मर्षि वशिष्ठ-शक्ति-पराशर है, अत उनकी कुलदेवियाँ भी शक्ति की आद्य अवतार शक्तियाँ ही है।

पारीकों की कुलदेवियों की सख्या

हमारी कुल-देवियों की सख्या जहा विभिन्न विद्वानो ने अलग-अलग बताई है वहीं एक माता के एक से अधिक नाम भी बताये है। नामो मे भिन्नता का जहाँ तक प्रसग है, ये अपभ्रश रूप से, स्थानीय बोली के आधार पर बदलते गय हो, ऐसा सभव है जैसे– पराभाता को पराख्या, पाड़ोख्या, पराय, पाण्डाखा, पाण्डुक्या एव पाडा माता कहा जाने लगा। चतुर्मुखी को चत्रमुखी या चित्रमुखी तथा सुदर्शना को सुद्रासना आदि।

विभिन्न विद्वानो द्वारा माताओ का जो स्वरूप बताया गया है, उसम भी भिन्नता है, यथा—

१ बूढ़ण माता को जहा स्वतत्र रूप से दर्शाया गया है वहीं अन्य विद्वानों ने बूढ़ण माता के रूप मे अम्बा, ललिता को एक ही माता बताया है।

२ अम्बा माता को जहा स्वतत्र रूप से बताया गया है वहीं अन्य विद्वानों ने अम्बा माता के रूप म बूढण, ललिता को एक ही माता बताया है।

३ ललिता माता को जहाँ स्वतत्र रूप से बताया गया है वही इसे बूढण माता के रूप मे भी बताया गया है।

४ भद्रकाली और कालिका माता को कुछ विद्वानो ने जहाँ अलग-अलग बताया है, वही कुछ विद्वानों ने इसे एक ही माता के रूप म बताया है।

५ लहण माता को जहा स्वतन्त्र रूप से बताया गया हे वही इस माता को नारायणी और नानण माता के रूप में भी कुछ विद्वाना ने बताया है।

६ नानण माता को जहा स्वतत्र रूप से बताया गया है वहीं इसका नाम नारायणी भी बताया है। नानण नारायणी का ही अपभ्रश हो सकता है। नानण व नारायणी के साथ इस रूप मे लहण माता को भी बताया गया है।

७ कुमारिका ओर आदि कुमारिका को जहाँ अलग-अलग माताएँ बताया गया है वहीं इन्हे एक माता के रूप में भी बताया गया है।

८ केवल एक विद्वान् ने दुर्गा को स्वतन्त्र रूप से बताया है तथा इस माता के साथ उन्होंने जीवण (जीण) बताई है तथा जीण माता स्वतत्र रूप से भी बताई है।

इस प्रकार हमारे सामने जो विचारणीय प्रश्न आते है, वह यह है कि–
क्या कालिका और भद्रकाली एक ही माता है या अलग अलग माताएँ है ?
अम्बा, बूढण और ललिता माता एक ही है, या अलग-अलग माताएँ है ?
नारायणी, नानण और लहण एक ही माता है या अलग अलग माताएँ है ?
कुमारिका और आदि कुमारिका एक ही माता है या अलग-अलग माताएँ है ?

पौराणिक आधार पर इनका स्वरूप एव लोकमान्यता के आधार पर इनके सम्बन्ध मे अध्ययन एव अन्वेषण के पश्चात् सक्षेप मे यह कहा जा सकता है कि–
अम्बा-अम्बिका और बूढ़ण वृद्धेश्वरी एक ही माता है।
ललिता माता एक ही है।
नारायणी, नानण और लहन एक ही माता है।
भद्रकाली और कालिका (वरदायिनी) कुलदेवी के रूप मे एक ही माता के रूप मे पूजनीया है।
कुमारी और आदि कुमारिका कुलदेवी के रूप मे एक ही माता के रूप मे पूजनीया है।

जिस प्रकार कुल देवियों के नामों के सम्बन्ध म विद्वानों ने भिन्न मत प्रतिपादित किये है, वहीं एक ही अवटक की अलग-अलग मातायें भी बताई गई है। जिसका विवरण सम्बन्धित अवटक की जो माता है उसमें दिया गया है। यहाँ पुनरावृत्ति करना आवश्यक नहीं है।

आस्पदानुसार पारीकों की कुलदेवियाँ

पारीका के नौ आस्पद है तथा १०३ अवटक या शाखाएँ है जो इस प्रकार है—

१ जोशी	इनकी ३७ शाखाएँ या अवटक है।
२ तिवाडी	इनकी २७ शाखाएँ या अवटक है।
३ उपाध्याय	इनकी १३ शाखाएँ या अवटक है।
४ मिश्र (बोहरा)	इनकी ९ शाखाएँ या अवटक है।
५ व्यास	इनकी ७ शाखाएँ या अवटक है।
६ पाण्डेय	इनकी ४ शाखाएँ या अवटक है।
७ पुरोहित	इनकी ४ शाखाएँ या अवटक है।
८ कौशिक भट्ट	इनकी १ शाखा या अवटक है।
९ द्विवेदी	इनकी १ शाखा या अवटक है।

विभिन्न गोत्रों की माताएँ

माता	गोत्र	आस्पद
१ परा पराख्या पाडाखा पाडाय पाडला पाड़ा पाण्डुख्या	१ गोलवाल	व्यास
	२ मडतवाल	तिवाडी
	३ आजाया	व्यास
	४ ठकुरा (ठुकरो)	जोशी
	५ घुघाट (घुघाटक)	तिवाड़ी
	६ अगरोटा	तिवाडी
	७ अहारा	व्यास
	८ बुलबुला	जोशी
	९ खटोड़ (खग्वड़)	व्यास

२ उनरारी जीग	१ पुनसाणा	जाशी
	२ दुईगल (दुवीगल)	उपाध्याय
	३ जुराट (जुराट)	तिवाड़ी
	४ आलसरा	जाशी
	५ हसाना (हसाण्या)	जाशी
	६ लाड़रगा	जाशी
	७ कामला (कमला)	जाशी
	८ जुसाट (जुसाग)	उपाध्याय
	९ भभारधा (भभारघा)	जाशी
	१० भरड़ादा	उपाध्याय
	११ सुरगा	तिवाड़ी
	१२ शांडिल्य (साडल) (सांडिल)	उपाध्याय
	१३ सुरेड़ा	पुरोहित
	१४ भाकला (वाकला)	जाशी
	१५ जाड़ादा	उपाध्याय
	१६ दुजारधा	जाशी
३ सूचीकरनरी सूचाय	१ नगलाड़ा (नगलाण्या)	बाहरा
	२ कसवाणा (किसवान्या)	तिवाड़ी
	३ बामणा	जाशी
	४ वामण्या (वामणियाँ)	व्यास
	५ गलवा	जाशी
	६ गागड़ा	उपाध्याय
	७ पाईवाल	तिवाड़ी
	८ गणहड़ा	जोशी
	९ पण्डिता (पिण्डताणा)	जाशी
	१० भुरभुरा	जोशी
	११ भण्डारी	बाहरा
	१२ सनोगी	तिवाड़ी

४ यक्षिणी जाखण	१ कोथल्या (काथलिया)	पाण्डय
	२ पाम	पाण्डेय
	३ हौडीला (हुण्डीला)	तिवाडी
	४ तामड़ा (तावणिया)	बाहरा
	५ पचाली	तिवाड़ी
	६ सतमुण्डा (सतमुडा)	तिवाड़ी
	७ अग्निहोत्री (अगन्योता)	तिवाडी
	८ कौशिक भट्ट	कौशिक
	९ खटवड/मुण्डक्या	व्यास
५ क्षमजा खींवज	१ पुण्यपालक (पुनपालेसरा)	जाशी
	२ भोंडा (भोण्ड्या) (भोट)	बाहरा
	३ कठात्या	द्विवेदी
	४ कापड़ादा	जोशी
	५ रत्नपुरा	तिवाडी
	६ अलून्या	पाण्डेय
	७ मुद्गल	बोहरा
६ कुञ्जला कुज्जल	१ दुजारा (दुजरद्या) (डौजारद्या)	जोशी
	२ सकराणा (सकराणिया)	जाशी
	३ मूनड़ा	पुरोहित
	४ डागी	पुरोहित
	५ लापस्या	जाशी
	६ बुड़ाणा	जाशी
७ समरेश्वरी समराय सकराय शाकम्भरी	१ आडीटा	तिवाडी
	२ रजलाणा (रजलाणिया)	जाशी
	३ साती	उपाध्याय
	४ दहगात	बोहरा
	५ सुमनत्या	बाहरा
	६ लाछणाता	जोशी

८ चामुण्डा	१ हलहला (हलहरया)	तिवाड़ी
	२ जागलवा	जाशी
	३ भ्रामणा	तिवाडी
	४ डाव्रड़ा	जाशी
	५ कायल (काहल) (कहाल)	पाण्डय
९ कालिका भद्रकाली वरदायिनी	१ वरणा	जाशी
	२ विड़जारा (विणजारा)	उपाध्याय
	३ दुरघाट (दुरगाट)	तिवाड़ी
	४ पुरपाट	तिवाडी
	५ पाठक	व्यास
	६ भारगा	तिवाडी
१० चित्रमुखी चतुर्मुखी	१ मलगाठ (मलगाता)	बाहरा
	२ कासूमीवाल	तिवाड़ी
	३ कीलणात्रा	उपाध्याय
११ कुमारिका आदि कुमारिका	१ अजमरा	जाशी
	२ कुलत्या (कुलहता) (कुलहलो)	जाशी
	३ सोतडो*	जाशी
१२ सुरसा सुरसाय	१ जहला	जाशी
	२ जावल्या	उपाध्याय
	३ दुलीचा	उपाध्याय
१३ त्रिपुर-सुदरी तिपराय	१ जेरठा (जोरठा)	तिवाड़ी
	२ पापड (पापट)	तिवाडी
१४ सुदर्शना सुद्रासणा	१ मलबड	जोशी
	२ वागुडया	जाशी
	३ मलवड	तिवाड़ी
१५ बीजला विधुद्रुपा	१ विलसरा (विणसरा)	जाशी
	२ वावर	तिवाड़ी

१६ तारा ताराय	१ पद्माण्या	जोशी
१७ अम्बा अम्बिका बूढण	१ दिखत	जोशी
	२ दवपुरा	तिवाडी
	३ राजड़ा	उपाध्याय
१८ नारायणी नानण लहण	१ ऊसार	पुरोहित
१९ ललिता	१ गारग	बोहरा
२० अश्नोतरी	१ दक्ष (दाख)	उपाध्याय
	२ रहटा	तिवाडी
२१ कसरी	१ शाखा गुगार	जोशी
२२ आदिशक्ति	१ जीणासरा (बीणसटा)	जोशी
२३ करणी	१ सातड़ा*	जोशी

पारीको की कुलदेवियो को एव उनके उपासक अवटको को श्री भवरलालजी पारीक (कल्याणपुरा, थाई,नि सीकर) ने पद्य मे वर्णित किया है जो दृष्टव्य है

जीण, कालिका, चतुर्मुखी अरु, लहण, पाण्डुक्या व सुरसाय।
आदिशक्ति, जाखण, चामुण्डा, नानण करणी अरु समराय॥
अश्नोत्तरी बीजला तारा भद्रकाली अरु अम्बवाय।
खींवज, कुमारिका, सुदर्शना आदि कुमारिका अरु पाडाय॥
सूचकेश्वरी, बूढण व कुजल त्रिपुरा और कसरी नाम।
य ही सब कुल मातायें हैं करो प्रेम से इन्हें प्रणाम॥

कुलदेवी और उपासक

१ कुजल

डिजारया, सरराण्या, बुडाण्या, नाम चाथड्या आता है।
डाँगी और लापस्या की, कुजल देवी माता है॥

२ जाखण (यक्षिणी)

कोथल्या पोम मुण्डम्या अम हुडीलो तावणा पचोली।
सतभुण्डा अगनाती भट्ट सहित माँ जाखण की जय जय बोली॥

३ सूचकेश्वरी (सूच्याय)

पिण्डताण, गोगड़ा, भण्डारी, भुरभुरा बामणा नगलाण्या।
पाईवाल, बामण्या, सजोगी, गलवा, गणहडा, कीवसाण्या॥

इन बारह शाखाओं की, सूचकेश्वरी कुल माता है।
दूसरा एक इस माता का, सूच्याय नाम आता है॥

४ पाडाय (परा)

ओजाया, ठुकरो, गोलवाल, ओहोरा, धुघाट नाम भी आता है।
अगरोटा, बुलबुला सातो की, पाडाय देवी कुल माता है॥

५ जीण

दुहीवाल, आलसरा, लाडणवा, पुलसाण्या बुराट भरड़ोदा।
शांडिल्य, सुचगा, भम्बोरचा, कमला, कुसटा अरु जाड़ोदा॥

बाकला, डसाण्या, दुजारा, सौलहवा, सेरडा कहलाता है।
इन सब ही शाखाओ की, जीण देवी कुल माता है॥

६ आदिशक्ति (आद सगत) ७ अम्बा (अम्बवाय)

आदि शक्ति का एक उपासक बीणसता नाम ही आता है।
इसी तरह से दिक्खत की, अम्बाजी कुल माता है॥

८ खींवज (क्षेमजा)

मुद्‌गल भाडा, पुनपालेसुरा, कठोत्या रतनपुरा भी आया है।
कापडोदा, अलूणा की कुल माता का, खीवज नाम बताया है॥

९ तारा (ताराय) १० आदि कुमारिका

पदमाण्या की कुलदेवी का, तारा नाम बताया है।
नाम अजमरा की माता का, आदि कुमारिका आया है॥

११ समरेश्वरी (समराय)

दरगोत, सुमत्या, लाछण्वा, रजलाण्या, आडीटा सोती।
समरेश्वरी इन शाखाआ की, पूजनीय कुलमाता होती॥

१२ चामुण्डा (चावड)

हलहरचा, भ्रमाणा, जागलवा, काहल, डावड़ा आते है।
इन पाँचो की कुलदेवी को, चामुण्डा जी बतलाते है॥

१३ बुढण १४ नानण

देवपुरा और रोजडा की, माता बुढण बतलाते है।
नानण देवी के भक्तो म, मात्र केसोट ही आते है॥

१५ कालिका १६ बींजल

दुरजाट, बीणजारा पुरपाट तीन की, कुल मात कालिका कहलाती।
बैया, बीणसरा, बाबर की, बीजल कुलमाता आती॥

१७ सुदर्शना

बागुण्डया मलवड़ जोशी अरु, मलवड़ त्रिपाठी आत है।
इन तीनो की कुलदेवी का, सुदर्शना नाम बताते है॥

१८ चतुर्मुखी

मलगोत, साथम कीलणवा, कसूबी वाल भी आता है।
चतुर्मुखी इन तीनो की पूजनीय कुलमाता है॥

१९ सुरसा (सुरसाय)

जावला, जहेला दुलीचा, तीन नाम ये आते है।
इन तीनो की कुल माता का, सुरसा नाम बताते है॥

२० त्रिपुरा २१ भद्रकाली

जेरटा, पापट इन दोना की, कुलदेवी त्रिपुरा कहलाती।
भारगो, पाठक, वग्गा की, भद्रकाली कुल माँ आती॥

२२ अश्नातरी २३ लहण

रहटा और दाख की माता, अश्नोतरी कहलाती है।
गारग की कुलदवी तो, लहण मातृका आती है।

२४ करणी २५ कुमारिका

एक सोतडो की कुलदेवी, करणी मा कहलाती है।
और कुलहता की कुलमाता, माँ कुमारिका आती है॥

२६ पाण्डुक्या

एक खटोड व्यास के सग, मेडतवाल भी आते है।
पाण्डुक्या इन दोनो की, कुलदेवी सभी बताते है॥

२७ केसरी

भगार नाम की शाखा की जो पूजनीय कुल माता है।
उस पूज्या मात भवानी का, नाम केसरी माता है॥

कतिपय अवटको के प्रसग मे एक ही अवटक की भिन्न-भिन्न मातायें बताई गई है। जिनमे से कतिपय का विवरण निम्न प्रकार है–

१ अगरोटा की कुलदेवी पराख्या है किन्तु कही-कही इनकी कुलमाता चित्रमुखी बताई गई है।

२ भारगो (भार्गव) की कुलदेवी जाखण या यक्षिणी है किन्तु कहीं-कही इनकी कुलमाता कालिका बताई गई है।

३ देवपुरा की कुलदेवी अम्बा या बूढाणा है किन्तु कहीं-कहीं इनकी कुल माता वृद्धेश्वरी बताई गई है।

४ गारग की कुलमाता ललिता है किन्तु कही-कही इनकी कुल माता नारायणी लहण बताई गई है।

५ पदमान्या जोशियो की कुलदेवी तारा है, कुछ विद्वान पद्मानिया जोशियो की कुलदेवी त्रिपुर सुन्दरी भी बताते है।

६ रोजडा देवपुरा की कुलदेवी अम्बा बूढण है कहीं-कही ललिता इनकी कुलदेवी बताई गई है।

७ सोतडो अवटक की माता कुमारिका है, कुछ विद्वान सोतडो अवटक की कुलदेवी करणी माता को बताते है।

इस प्रकार अवटका की माताओ के सम्बन्ध में विद्वानो में मतभेद है, किन्तु कुल-परम्परा के अनुसार माता की पूजन उसी रूप म करनी चाहिए, जो बुजुर्गो क अनुसार की जाती रही है।

कुलदेवी का नाम एव मान्यता

हमारी कुलदेविया क नाम जहाँ पौराणिक आधार पर है वही अनेकानेक माताएँ ग्रामो के नाम स जानी जाती है, उदाहरणार्थ सुदर्शना माता-सुदर्शन ग्राम में स्थित है, अत माता के नाम पर गाव का नाम हो गया और कालान्तर

मे माता गॉव के नाम से जानी जाने लगी। इसी प्रकार नॉद गाव में नानण माता का स्थान होने से नादन माता कहलाने लगी। भवाल ग्राम म कालिका एव ब्रह्माणी माता के मदिर है किन्तु आसपास के अचल वाले इसे भवाल माता कहते है। भकरी ग्राम में भी कालिका एव ब्रह्माणी माता के मदिर है किन्तु इस माता को भकरी माता के नाम से जाना जाता है। पाण्डोराई क्षेत्र मे पाडोराया माता का मदिर है अत इसी नाम से माता जानी जाने लगी।

शक्ति के मानवीय अशावतार के आधार पर भी कुलदवियों के नाम पड गये, जबकि उनकी उपास्य माताओं का स्वरूप पौराणिक ही है। उदाहरणार्थ जीण माता जनेश्वरी के रूप मे पूजित है और करणी माता- सती के ब्रह्मरन्ध्र के रूप म [जिसका स्थान हिंगलाज (अफगानिस्तान) म है] तथा कुञ्जल माता दुर्गा के रूप मे पूजित थी। अब कुञ्जल माता के रूप मे पूजी जाती है।

कुलदेवी की मान्यता भक्त की आस्था पर भी निर्भर करती रहती है। आराधना का मूल स्रोत आस्था है। प्राय देखा गया है कि किसी अवटक की कुलदेवी जहाँ कही होती है, या तो उन्हे, उनके स्थान की जानकारी नही होती या फिर वह इतनी दूर होती थी कि वहा तक जाना सभव नही रहता, अत पास का कोई शक्ति स्थान जो देवी क रूप मे पूजित होता है, उसका आस्था का केन्द्र बन जाता है और वह स्थान कुलदेवी के रूप मे पूजित हो जाता है। यही नही किसी क्षेत्र विशेष मे जहा देवी ने अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया वहा उस नाम से भी माता पूजी जाने लगी।

पारीको का सम्पर्क राजपूतो से रहा हे। उनके पुरोहित के रूप मे, इनकी उनसे सम्बद्धता रही हे अत इनकी कई कुलदेवियाँ भी राजपूता की कुलदवियो के अनुरूप ही रही है, उदाहरणार्थ समराय या समरेश्वरी (शाकम्भरी, समराय)। यह चौहान राजपूता एव पारीका के कई अवटको की कुलदेवी है।

अत यह कहना पर्याप्त होगा कि यह सब आद्याशक्ति की ही माया है जिसके भिन्न-भिन्न रूप है। यही एक शक्ति सब मे है और सब शक्तियाँ एक में समाहित है।

एक देवी के मदिर भक्तो द्वारा अनेकानेक स्थानों पर निर्मित कर दिये जाते है। किन्तु यदि माता के प्रथम निर्मित, स्थापित उत्पत्ति स्थान की जानकारी हो जावे तो वह स्थान माता का मुख्य स्थान माना जाता है तथा भक्तों द्वारा माता के विग्रह की अन्यत्र स्थापना करने पर वे भी आराध्य स्थान हो जाते है। राव-भाटों की पोथियों के अनुसार पारीकों की कुलदेवियो के निम्न स्थान है जिन्हे तारक चिह्न* से चिह्नित किया गया है, शेष स्थानो का विवरण पारीक मासिक, बेंगलोर से प्रकाशित विवरणिका से उद्धृत किया गया है।

पारीक समाज की कुल देवियों के स्थान [१]

कुल माता	स्थान
१ चतुर्मुखी	खडवा (मध्यप्रदेश)
२ जीण माता*	जीण स्थान, गोरियाँ, सीकर के पास, (राज)
३ सुचाय माता सुच्याय*	ओसीयॉं (जोधपुर के पास) जि जोधपुर (राज)
४ सुरसाय	सुदर्शन माताजी, डीडवाणा (राज)
५ अश्नोत्तरी	किनसरीया (मकराणा के पास)
६ कालिका*	अहमदाबाद, कलकत्ता, चित्तौडगढ
७ बुढण माता	भवाल (मेडता सिटी के पास)
८ समराय*	साभर (मकराणा के पास)
९ आदिकुवारीका	ऋषिकेश (उ प्र)
१० क्षेमजा खीवज*	कठौती (जि नागौर)
११ चामुण्डा*	पलु (सरदारशहर के पास)
१२ पाढाय* (परा) (पाडाय)	डीडवाना जि नागौर (राज)
१३ कुजल*	डेह (नागौर के पास)
१४ अम्बा	अम्बादेवी (चित्तौडगढ)
१५ तारा	गौहाटी (असम)

१ प्रात पारीक महापुरुष ल रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी उमग ■ पारीक मासिक बैंगलोर वर्ष १ अक ३ (१ अक्टू १९९८)

१६ भद्रकाली*	नापासर, टापरड़ा (भक्री के पास) जि नागौर (राज), अहमदाबाद (गुजरात)
१७ सुदर्शना*	सुदर्शन माताजी (डीडवाना जि नागौर) ग्राम सुदर्शन, जयपुर
१८ आदिशक्ति	ऋषिकेश (उ प्र)
१९ बिजल*	कुचाड़िया टाड़ा के माणा के पास, जि नागौर, (चादारूण-जगड़वास के बीच)
२० समेरेश्वरी*	साभर (मकराणा के पास)
२१ करणी	देशनोक (बीकानेर के पास)
२२ केशरी	कश्मीर, रिया शेरसिंह की (बड़ी रीया), (मेड़ता के पास)
२३ जाखण-यक्षिणी*	माडल (भीलवाड़ा के पास), उपस्थान रेन (मेड़ता के पास)
२४ तिपराय (त्रिपुरा)	अमरनाथ के पास (तिपुर सुदरी), बासवाड़ा के पास
२५ नानण/नारायणी/लहण*	नाद (पुष्कर के पास), टाड़ा रायसिंह, जयपुर के पास
२६ लाहण	भवाल (मेड़ता के पास)
२७ पाडाय्या (पड्डय्या)*	पाण्डोराई (मेड़ता सिटी के पास)

जैसाकि पूर्व मे वर्णन किया गया है, विभिन्न विद्वानो ने पारीको की कुलदेविया की अलग-अलग सख्या बताई है किन्तु इन माताओं का स्वरूप क्या है, इसका विवेचन किसी ने भी नहीं किया। लेखक अनेकानेक माताओं के स्थाना पर गया, माताओं के दर्शन किये, अध्ययन अन्वेषण किया, पुजारी एव अन्य लोगा से जानकारी प्राप्त की तथा माताओं के प्रत्यक्ष दर्शन के बाद इस निष्कर्ष पर पहुचा कि हमारी कुलदेवियों का स्वरूप पौराणिक देविया के अनुरूप ही है।

अनेक माताओं की एक-सी कथा

बहुत-सी माताएँ ऐसी है जिनके सम्बध मे एक-से कथानक उपलब्ध है एव घटनाओ मे भी प्राय साम्य है। एक-सी मिलती-जुलती घटनाआ का

कई स्थानो पर होना कोई आश्चर्य की बात नहीं। भारतवर्ष धर्मप्राण देश है। प्रत्येक नर-नारी किसी न किसी रूप मे देवी-देवताओ को मानता है, उनकी पूजा करता है। अतीत मे हमारे महापुरुषो द्वारा स्थापित-आराधित हजारो देवी-देवताओ के विग्रह है जिनकी शक्ति अनन्त है। अत एक-सी घटनाये, घटना, समान से कथानक होना कोई आश्चर्य नही। यहॉ कुछ देवियो की समानता लिए घटनाओ का उल्लेख पाठको की जिज्ञासा शाति हेतु किया जा रहा है जिनके कथानक प्राय एक-से हैं तथा घटनाओं का समय भी लगभग एक-सा है, ये माताएँ है–

१ कुञ्जल माता– डेह (नागौर)

२ आवरा माता– ग्राम आसावरा (चित्तौडगढ)

कुञ्जल देवी (ग्राम डेह-नागौर) के सम्बन्ध मे ऐसा कथानक है कि उनको ब्याहने के लिए दो बाराते आई थी और दोनो बारातों ने यह निश्चय किया कि जिसमें भुजबल होगा, वही कुञ्जल को ब्याह कर ले जायेगा। देवी ने भूमि माता से प्रार्थना की कि, मेरे कारण खून-खराबा न हो, कुञ्जल देवी की प्रार्थना पर धरती फटी और कुञ्जल देवी उसमे समा गई (विस्तृत कथानक कुञ्जल माता के चरित में पढे) यह घटना सम्वत् १०८९ के लगभग की है। इसी प्रकार की घटना आवरा माता के सम्बन्ध में है। इस माता का स्थान ग्राम आसावरा (चित्तौडगढ) है तथा माता को ब्याहने हेतु एक साथ सात बाराते आई थी। नर-सहार को बचाने हेतु माता (केसर क्वर जो माता का वास्तविक नाम था) अपने माता-पिता से आज्ञा लेकर अपनी कुछ सहेलियो व दासियो के साथ निकटस्थ पहाडी उपवन मे गइ (जहा अब माता का मदिर है) तथा पृथ्वी माता का ध्यान कर तीन तालियाँ बजाइ। ताली बजाते ही भूमि फट गई और 'केशर कवर' जमीन मे अन्तर्धान हो गई। यह घटना सम्वत् ११९६ की बताई जाती है।

इसी पकार डाकुओ का माता के मदिर में सरक्षण लेना, माता द्वारा उन्हे अभयदान देना, माता का पेड से पगट होना, गाय का नित्य प्रति एक स्थान विशेष पर अपने थना स दूध टपकाना एव वहा से माता का प्रगट होना, एक निश्चित अवधि तक घोडे पर बैठ कर दौडाना और उस अवधि में जितनी भूमि वह तय कर ल उसमे कच्ची चादी की खान हो जाना जैसे अनेकानेक

मे रोडी माता पूजते है। घूरा पूजते समय प्रथम पुण्य पथ्वी माता को ही समर्पित किया जाता है। धरती हमारी मॉं है, राडी चाहे जितनी भी उपेक्षित हा, कूड़ा-करकट की ढेरी हो उपेक्षित हा, फिर भी वह मानव मात्र के लिए कल्याणकारिणी है। हमारे धन्य-धान्य की श्रीवृद्धि करती है– उससे निर्मित खाद, अन्नोत्पादन मे वद्धि करता है, अत उसे देवीस्वरूप मानकर ही विवाह के समय भले ही लडकी का विवाह हो अथवा लडके का काकण-डारे बाधने के दिन, साकडी विनायक के दिन राडी का पूजन कर रोड़ी माता को विवाह में आने हेतु निमंत्रित किया जाता है। पूजन म अलग-अलग स्थानो पर पूजन सामग्री भिन्न-भिन्न हो सकती हे किन्तु रोली मोली, मूग, चावल, पताशे, बाटी, घूघरी, तेल आदि से रोडी के बीच मे कील गाडकर रोड़ी का पूजन करते है तथा विवाहोपरान्त वर-वधू को जोड़े सहित राडी माता को पूजने हेतु ले जाया जाता है तथा इस अवसर पर जो मागलिक गीत गाये जाते है उनमे सुख-समृद्धि, वश वृद्धि आदि हेतु माता स प्रार्थना की जाती है तथा उपरोक्त सामग्री से ही रोडी माता की पूजन की जाती है तथा रोडी क मध्य में रोपी गई कील को घर लाकर गणेशजी के स्थान पर रख दिया जाता है। इसके पीछे यही उद्देश्य होता है कि कील जहा मर्यादा एव अनुशासन का प्रतीक है वही यह नजर निवारण का भी प्रतीक है।

नदियों का पूजन गगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा नदियाँ माता के रूप म मानी जाती है। जल के अभाव मे मानव जीवन की कल्पना भी नही की जा सकती। लोक मानस म ये सभी दु खों एव कष्टा के निवारण करने वाली है– यथा

ए गगा मैया करदे सब दु ख दूर

यही नहीं बाझ स्त्री माता स पुत्र प्राप्ति हेतु प्रार्थना करती है–

राजे गङ्गा किनार एक तिरिया जु ठाड़ी अरज करै।
गगा एक लहर हमें देउ तौ जामे डूबी जायें रे।।
राजे लौटि उपलटि घर जाउ ललन तिहारे हॉय।
एक पुत्र तो दे गगा माता।'

यही नही मृत्यु क समय गगा जल अस्थि विसर्जन का भी विधान है।

पथवारी माता यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हो। यात्री की सुरक्षा एव कल्याण की मनोकामना हेतु पथवारी माता की पूजन की जाती है।

गाज माता सावन-भादवे के महीने में बादल गरजते है इन बादलों की गजना सुनकर गृहिणियाँ गाज परमेश्वरी का व्रत करती है। गाज के डोरे (सात कच्चे सूतों से गाज बाधी जाती है)। गाज खोलते समय इसकी कहानी सुनी जाती है कि जिस प्रकार गाज की मान्यता करने से बिजली गिरने से राजा बच गया। उसी प्रकार गाज माता हमारी भी रक्षा करे।

मेघासिन मेघा की रानी की पूजा की जाती है कि हे! माता आवश्यकतानुसार वर्षा कर जिससे धन-धान्य पूर्ण हो एव पशुधन की वृद्धि हो।

तुलसी माता के रूप म तुलसी प्रत्येक हिन्दू परिवार मे न केवल पूजी जाती है अपितु अधिकाश घरो म उसका पौधा भी होता है। सायकाल दीप दान के बाद उसकी आरती की जाता है।

नमो नमो तुलसी महारानी, नमो नमो।
हरि की पटरानी नमो नमो॥

कार्तिक माह में तुलसी का विवाह भी करते है जो पुण्य का दायक माना जाता है।

सजा मैय्या— सध्या समय माता को दीप दान कर श्रद्धापूर्वक उसकी पूजन की जाती है।

गोमाता— गाय के हर अग म किसी न किसी देवता का वास है। मानव मात्र की यह पालनहार है, बालक के जन्म पर जच्चा के मकान के बाहर सातिये, इसी के गोबर से लगाय जाते है। गोवर्धन पूजा के समय गोवर्धन का चित्र भी इसी के गोबर से बनाया जाता है। बगला चौथ, आघ द्वादशी, बछबारस (वत्सद्वादशी) आदि त्यौहारो पर एव व्रत पर गाय बछडे की पूजा होती है।

नाग माता— परिवार की रक्षार्थ नाग माता की पूजा की जाती है। गृहणिया द्वारा कही सुनी जाने वाली कहानियो म नाग माता की कृपा से सपदश से मरे ६ पुत्र पुन जीवित हो जाते है।

तिथि मातृका

लाक जीवन म यो तो अनेकानेक तिथिया ऐसी है, जिनकी उपासना देवी-देवताओं से जुडी हुई हे किन्तु कुछ विशेष तिथियॉ हे जो लोक माताआ के रूप म मान्य है, उनमे से कतिपय के नाम इस प्रकार है— अक्षण तृतीया, गगादशमी, श्रावणी तीज, चान छठ (भादवा माह), वछबारस, करवा चोथ, चौथ माता, गणगौर (चैत्र मास), दसामाता व छठ माता (पुत्र प्रसव के छठे दिन पूजी जाती हे) आदि। इन सब तिथियो को स्त्रियॉ व्रत रखती है तथा अपने सुहाग, घर म सुख-समृद्धि हतु कथा कहती-सुनती है।

रोग निवारक मातृका

लोक देवियाँ मानव मात्र का कल्याण करती है। इनकी पूजा अर्चना सभी समाज वाले बिना किसी भेदभाव के करते है। रोग निवाग्ण के लिए माताआ म शीतला माता चेचक निवारण के लिए, मावलिया जिह महामाया और महामाई भी कहते है, निर्विघ्न प्रसव, बच्चा की नजर तथा बच्चा के सूखे रोग निवारण हेतु पूजी जाती है। दुश्मन द्वारा मूठ चलाने पर भदाना माता (कोटा के पास ८-७ कि मी दूर) की मान्यता एव उसके द्वार पर भोपे द्वारा मूठ का निदान, हिचकी रोग निवारण हेतु सनवाड माता (फतहनगर), लकवा रोग निवारण हेतु चित्तौड जिले की आवरी माता तथा छीक रोग निवारण हेतु जयपुर म स्थित छीक माता का मदिर आदि रोग निवारक देविया के मदिरों के रूप म जगमान्य है।

मन शक्ति मातृका

इसम आशा मैया की पूजन की जाती है जो (वैशाख मास) मे होती है। इसम जा कथानक है उसका साराश यह है कि आशा और विश्वास के आधार पर जीवन सुखमय रूप से जीया जा सकता है।

नाग मातृका

नाग पचमी एव गूगा नवमी को नाग मातृका के पूजन हतु स्त्रियाँ नाग देवता का पूजन करती हैं तथा नाग देवता को शीतल दूध पिलाती है एव प्रतीक स्वरूप घर की दीवार पर नाग देवता का चित्र चित्रित कर उसकी पूजा करती है।

सौभाग्य मातृका

अपने अखण्ड सौभाग्य के लिए गणगौर की पूजा की जाती है।

रक्षा मातृका

इन माताओ मे चामड माता, पथवारी माता, ककाली माता, बराई माता, कैला माता, चौसठ यागिनिनी आदि प्रमुख है। पथवारी माता पथ की रक्षिका है इसके सम्बन्ध म कहा जाता है—

पथवारी मेरी पथ की रानी भूलेने राह बताइयैं।
भूले ने राह वसेरे ने वासौ मन चीतो फल पाइये।
पथवारी चौं न पूजे सुहागिन जौ साहिब घर पाइये।

सस्कार मातृका

विवाह के अवसर पर घर की बहिन-बेटिया माँय (षोडश-मातृका) की स्थापना करती है।

सती मातृका

राजस्थान का ऐसा कोई ही स्थान होगा जहा सती की मान्यता न हो। किसी परिवार म सती होने पर वह उस परिवार, उस ग्राम व आसपास के क्षेत्र म पूजी जाती है, उस परिवार की कुल देवी हो जाती है। राजस्थान म सती के अनकानेक मदिर है। दिवराला मे सती होने के बाद सती का सती के रूप मे महिमा-मण्डन विधि द्वारा निषिद्ध कर दिया गया।

प्रेम मातृका

आसोज कार्त्तिक माह मे सज्या (साझी) की पूजन की जाती है। पित पक्ष (कनागत) के बाद कुवारी कन्याए प्रतिदिन सायकाल घर मे बाहर दीवार पर गोबर और फूलो की सज्या बनाकर उसकी आरती-पूजन करती है। यह कार्यक्रम १६ दिन तक चलता है।

धर्म प्रधान देश भारत म जहा वैदिक-पौराणिक शक्तियो की उपासना शास्त्रोक्त विधि से भक्त करते है, वही लोक मानस की आस्था केन्द्र लोक देवियो की पूजा-आराधना भावुक भक्त स्थानीय परम्पराओ एव लोकिक

आचार-विचार के परिप्रेक्ष्य म अभीष्ट फल की प्राप्ति हेतु करते हे। लोक देविया की मान्यता अनादि काल से जन-मन मे समाई हुई है, फिर भी बदलती सास्कृतिक मान्यताए इनके प्रति जन-जन की श्रद्धा पर कोई विपरीत प्रभाव नही डाल सकी है।

हमारी जीवन पद्धति ही ऐसी है जहा यह माना ही नही जाता अपितु वास्तविकता है कि हम देवी-देवताओ का आह्वान कर तो वे कार्यक्रमानुसार अभीष्ट फल प्राप्ति का वर द- प्रगति पर अग्रसर हाने का मार्गदर्शन करावे।

पौराणिक देवियो के जीवन चरित में हम देखते है कि वे अपने-अपने देवो की शक्तियो के रूप मे प्रगट होती हे, उनके आयुध एव वाहन भी अपने देवों के अनुरूप ही होते है, उनकी पूजा अर्चना का विधान, निर्धारित है किन्तु जनसाधारण के हृदय म इसी श्रद्धा के केन्द्र लोकमाताएँ या लोकदेविया, औपचारिक शास्त्रीय ब धना से बहुत दूर है। जिस क्षेत्र म ये प्रगट होती हे उसी के अनुरूप इनका भोग लगाया जाता है, य बिना किसी भेदभाव के जाति, वर्ग आदि के भेद रहित होकर जन-जन का मगल करती है और यही कारण है कि क्षेत्र-विशेष का निवासी, प्रवासी होने के बाद भी इनकी मान्यता यथावत् रखता है अत ये देवियाँ स्थानीय न होकर सम्पूर्ण देश की मान्य देविया हा जाती है।

मानवीय रूप म किसी परिवार विशेष मे जन्म लेकर अपनी अलौकिक देवीशक्ति के रूप मे जहा वे शक्ति की अशावतार होती है वही अपने अलौकिक जनकल्याणकारी परचा से वे जन-जन की बिना किसी भेदभाव के आस्था केन्द्र बन जाती हे। उदाहरणार्थ जीण माता कुज्जल माता, भवरी माता, करणी माता आदि। मानवीय रूप मे देवी का अशावतार हाने के कारण मानवीय स्वभाव का अश इनमे रहता ही है, और यही कारण है कि भूल होने पर तत्काल नाराज होकर भक्त को अपनी नाराजगी का एहसास तत्काल करा देती है भक्त द्वारा अनुनय-विनय करने पर तथा अपनी भूल स्वीकार कर, माफी मागने पर माता तत्काल प्रसन्न भी हो जाती है।

लेखक माता के दर्शन करने गया ता यह पाया कि माताएँ बस्ती से दूर जगल में निवास करती है, माताआ के देवरे, पेड के नीचे भी है उनके लिए आरण (जगल) रक्षित है, वहा के जगल म लकड़ी काटना तो दूर,

कोई टहनी भी नहीं तोडता, अत उस क्षेत्र का वातावरण प्रदूषण रहित रहता है, शुद्ध जल, स्वच्छ वायु का सेवन माता के दरबार मे कुछ दिन रहने पर ही भक्त को रोग मुक्त कर देता है। इनके ओरण को यथावत् रखने पर आज पर्यावरण की जो समस्या हमारे सामने दिन-प्रतिदिन भयावह होती जा रही है, उसका किसी अश तक निस्तारण हो सकता है।

यो तो हमारे देश में हर प्रान्त मे लोक देवियो की मान्यता अनन्त है, किन्तु राजस्थान मे इन लोक देविया के प्रति शहरी क्षेत्र से लेकर सुदूर ग्रामीण क्षेत्र तक अबाध आस्था है। इन देवियो का हमारी सामाजिक व्यवस्था, लोक सस्कृति, सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पडा है। इन माताओ का अद्भुत एव अनूठा ससार हे ये एक ओर जहा देवी शक्ति का अशावतार है वही बिना किसी औपचारिकता के सिदूर चर्चित पत्थर, अनगढ मूर्ति, मिट्टी की मूर्ति, वृक्ष आदि के रूप म पूजी जाती है तथा स्थानीय खानपान, वेषभूषा, बनाव श्रगार से ही सतुष्ट हो जाती है।

राजस्थान की कतिपय लोकदेवियाँ

जयपुर क्षेत्र

१ शिला देवी	आमेर
२ शीतला देवी	चाकसू
३ चौथ माता	चौथ का बरवाडा
४ ज्वाला माता	जोबनेर
५ कैला देवी	करौली
६ कल्याणपुर माता	करौली
७ छींक माता	जयपुर
८ शाकम्भरी	साभर
९ महामाई	रेनवाल
१० खारडी माता	करौली

जैसलमेर क्षेत्र

१ आवड माता	जैसलमेर
२ मालण माता	जानरा
३ घटियाल देवी	घटियाला
४ तनेटिया	तणोट
५ तमडराय	जैसलमेर
६ देगराय	राजला
७ जोगमाया	पालजी की डरी
८ काला डूगरराय	कणोद
९ स्वागिया	गजरूप
१० हिगलाज	लोद्रवा
११ साहणी देवी	सिरवा गाव
१२ नभ डूगर राय	थालिया
१३ भादरियाराय	थालिया गाव

जोधपुर क्षेत्र

१ आदू माता	बिलाडा
२ सती बालाजी	बिलाडा
३ सुच्चियाय	आसिया
४ आसिया	आसिया

५ पूनागर अम्बाजी	पाली	१६ भवर माता	छाटी सादडी
६ चामुण्डा माता	साजत सिटी	१७ सीता माता	बडी सादडी
७ मूडा दवी	भीनमाल	१८ लालबाई फूलबाई	चित्तौड
८ लग्नियाल भवानी	फलौदी	१९ मरमी माता	रश्मी
९ बरवासण माता	मडता मिटी	२० झातळा माता	पाण्डाली
१० इदर बाई	खुइड (नागौर)	२१ इडाणी माता	बम्बोरा
११ ऊटा माता	जाधपुर	२२ चूणीमाता	डबाक
१२ दधिमाता	जाधपुर	२३ नारसिगी माता	कूण
१३ पाडवराय माता	मडता राड	२४ बडली माता	आकोला
१४ दधिमतिमाता	गाठ मागलाद (जायल)	२५ कालका माता	चित्तौड
		२६ जागणिया माता	भीलवाडा
१५ शाकम्भरी	साभर	२७ अम्बा माता	बासवाडा
१६ भवाल माता	भवाल (मडता राड)	२८ कालका माता	बासवाडा
		२९ साम माता	लहारिया
उदयपुर क्षेत्र		३० त्रिपुरा सुदरी	तलवाड़ा
१ अम्बा माता	उदयपुर	३१ आसावरी माता	आसपुर
२ बदला माता	उदयपुर	३२ बीजण माता	आम्पुरा
३ नाराणी माता	उदयपुर	३३ अधर माता	आबू पर्वत
४ नीमच माता	उदयपुर	३४ सरस्वती माता	पिडवाडा
५ सतापी माता	उदयपुर	३५ मातर माता	सिराही
६ अन्नपूर्णा दवी	उदयपुर	३६ आरसण अम्बाजी	बामणवाडा
७ चामुण्डा माता	गागुन्दा	३७ नागणची माता	नेगडिया
८ घवर माता	राजसमन्द	३८ जगत माता	दातमर जगत नान्द्वारा गाव उदयपुर
९ इया माता	गामडी गाव जयसमद		
१० हिचकी माता	सनवाड	३९ साण माता	खोडण
११ ऊठाला माता	वल्लभ नगर	४० पादरी माता	धरनाला
१२ वरकण माता	भीण्डर	४१ जला माता	समीजा (उदयपुर)
१३ दुल्ला माता	कानाड	४२ खडा देवी	भीला का बेडला
१४ आवरी माता	निकुभ चित्तौड	४३ हमर माता	रातीरता
१५ एवरा माता	डूगला	४४ खडा खूट माता	महाराज की खड़ी

४५	धूणी माता	महाराज की खेडी
४६	पाण्डु माता	बिछावेडा (उदयपुर)
४७	बरया देवी	ढीम्ली
४८	धारखुण माता	समलिया पाडिया
४९	ढाबश्वरी माता	बसड़ा
५०	खडी माता	बसडा
५१	भेड माता	डाजा
५२	तरताई माता	उमराई (बासवाडा)
५३	मोहरा माता	नूर गाव
५४	बाडिया माता	रायपुर
५५	आमली माता	मदेसर
५६	गढ गवला माता	पाराली
५७	फूला माता	झरनी
५८	रुछवाई माता	उपली आडण
५९	बसन्ती माता	कनर
६०	कलवा माता	कलवा
६१	आमज माता	कुभलगढ
६२	बकराणी	आमसर (आसींन्द)
६३	विराट माता	बदनार
६४	धनाप माता	धनाप
६५	घाटा राणी	जहाजपुर
६६	कालिका माता (छापरवाला दवता)	बनड़ा
६७	बकराणी की छोटी बहिन	हमीरगढ
६८	रूपण माता	गागुन्दा तहसील

हाड़ौती क्षेत्र

१	बीजासण माता	सुमरगज मडी इन्द्रगढ
२	डाढ दवी	लाडपुरा
३	चामुण्डा	डाबरा (बूदी)
४	करणी माता	बूदी
५	चमावली माता	चमावली
६	ब्रह्माणी	सारसन
७	बसन्ती	कोटा
८	शिव भवानी	कोटा
९	लाल बाई	कोटा
१०	काली कंकाली	कोटा
११	सतापी माता	कैथून
१२	दूध्या खेडी माता	कनवास
१३	नाना देई माता	कोटा
१४	अम्बा माता	कोटा
१५	चौथ माता	बरवाडा
१६	भदाण माता	कोटा

बीकानेर-शेखावाटी क्षेत्र

१	करणी माता	देशनोक
२	नागणीची दवी	बीकानेर
३	कालिकाजी	कालू
४	मनसा दवी	चूरू
५	काली दवी	चूरू
६	भद्रकाली माता	हनुमानगढ
७	शिला माता	हनुमानगढ
८	सकराय माता	सकराय
९	रय माता	गागियासर
१०	जीण माता	सीकर
११	राणी सती माता	झुन्झुनू
१२	मनसा माता	झुन्झुनू
१३	परमेश्वरी माता	कालायत
१४	सुसाणी माता	मारखाण

माताओं के दर्शनार्थ यात्रा

माताओं का पौराणिक इतिहास लिखने के पश्चात् आद्या शक्ति की यह प्रेरणा हुई कि माताओं के जो स्थान बताये गये है उनका दर्शन किया जावे तथा उनके सम्बन्ध मे यह जानकारी प्राप्त की जावे कि माता के मंदिर निर्माण की क्या पृष्ठभूमि है? इसका निर्माण कब एवं किसने कराया? इसका पुरातात्त्विक महत्त्व क्या है? क्या माता के मंदिर में कोई शिलालेख है, माता की मूर्ति किस स्वरूप में है उसके हाथों में कौन-कौनसे आयुध है, माता की सवारी क्या है? माता का मूल नाम क्या है? वर्तमान नाम किस आधार पर हुआ तथा उसके चमत्कारों का वर्णन, माता किन-किन की कुलदेवी है माता के पुजारी किस परम्परा के है, पुजारी के योगक्षेम की क्या व्यवस्था है और यात्रियों के विश्राम हेतु मंदिर परिसर में क्या व्यवस्था है?

जगदम्बा की यह कृपा ही रही कि समय-समय पर लेखक माताओं के दर्शन करने गया। लेखक के साथ कई बार उसकी धर्मपत्नी सुशीला एवं पौत्र रोहित, अनेकानेक बार उसके पुत्र चि. नरेन्द्र एवं खगेन्द्र गये। पौत्र शोभित एवं मोहित तो प्रायः लेखक के साथ सभी माताओं के दर्शनार्थ गये, उनकी जिज्ञासा ने अनेकानेक नये तथ्य, मंदिर के पुजारी एवं स्थानीय लोगों से वार्तालाप में उद्घाटित किये। निम्न माताओं के लेखक ने समय-समय पर अनेकानेक बार दर्शन किये।

सकराय माता (उदयपुरवाटी-झुन्झुनू) जाखण (यक्षिणी) माता माण्डल एवं रैन जीण माता (गोरियाँ जि. सीकर), सुच्चियाय माता (ओसियाँ-जोधपुर), सुदर्शना माता सुरजल माता (सुद्रासना-कायमसर), परा-पराड्या-पाडोखा-पाडाय-पाडला-पाडा माता (डीडवाना-नागोर), पाण्डुक्या माता (मेडता), खीवज-क्षेमजा माता (कठौती-नागौर), कुञ्जल (डह-नागौर), बूढण माता एवं लाहण माता (भवाल, मेडता सिटी के पास), बीजल माता (कुवाडिया खेड़ा की ढाणी-चादारूण-डगाना-नागौर), भद्रकाली (भकरी-नागौर, काजीपुरा-साभर), नादमाता-नानण (नाद-पुष्कर-अजमेर) सुरसाय माता (सुदर्शन-कायमसर-नागौर), समराय-समरेश्वरी (साभर), चामुण्डा (खण्डेला), करणी (देशनोक-बीकानेर) आदि।

माताओं के दर्शनार्थ की गई यात्राओं के दौरान एक अलौकिक एवं सुखद अनुभव यह भी रहा कि जहा यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हुई वहीं माता का

स्थान बताने मे लोगो ने रुचि प्रदर्शित की। अनेकानेक स्थानो पर माताओ के मंदिर मुख्य सड़क मार्ग से अलग थे, स्थानीय महानुभावो से माता का स्थान पूछा तथा उनसे यह आग्रह करने पर कि माता का स्थान दुर्गम है, क्या आप हमे बतायेंगे, अनेकानेक स्थानो पर कपालु महानुभाव हमारे साथ हो लिए, जिनमें एक तो मुसलमान बधु था, इस प्रकार माता के दर्शनो मे कोई कठिनाई नही आई।

माँ के श्री-चरणों मे प्रणाम

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।

'पुत्र कुपुत्र भले ही हो सकता है, पर माता कुमाता नही हो सकती।'

माँ करुणामयी है, वात्सल्य से परिपूण, सदैव स्नेहाशीष का वरदहस्त लिए, अबोध, अज्ञानी, असहाय, कर्तव्य पथ से भटके, किंकर्तव्य-विमूढ यह बालक, हे माँ तेरी शरण मे है। मै अज्ञानी, तेरी पूजा-अर्चना कैसे की जाती है, तेरी आराधना केसे हो, मै नही जानता। जानता हू तो केवल यह जानता हू कि मै आपका अबोधपुत्र हूँ ओर आप मुझे सन्मार्ग पर चलने की राह बताने वाली हो, हे देवी माँ, तुम्हे बारम्बार प्रणाम।

मेरे जैसा मूढ-अज्ञानी तेरी क्या स्तुति कर सकता हे, तेरी अपरम्पार गाथा को शब्दो मे क्या पिरो सकता है, यह तेरी कृपा, आशीर्वाद ही है कि तेरी प्रेरणा हुई, टूटे-फूटे शब्दो मे यह कथानक लिखा, तेरे कई द्वारो की चौखट पर प्रणाम किया, तेरा आशीर्वाद लिया, जैसा जाना, जेसा बताया, तेरे श्री चरणो मे अर्पित कर दिया। माँ तेरी माया अनन्त है, मै अज्ञानी क्या जानू, किन्तु तेरी दीन-वत्सलता ने मुझ अयोग्य-पुत्र को आशीवाद दिया, यह पुष्प तेरे श्री-चरणो मे भेट कर सका, माँ मेरा प्रणाम स्वीकार करो।

आज तेरे बालक भटक रहे है। भौतिकवाद के इस वातावरण मे वे अपने को, स्वय को भी नही पहचान रहे है। हे जगज्जननी, हे माता, तू अपने भटके पुत्रो को सही राह दिखा। अपने पुत्रो को काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ईर्ष्या आदि षड्रिपुओ से बचा, वे इन दुर्गुणो से दूर रहें, आधि-व्याधि, मानसिक तनाव से दूर रहे, व स्वस्थ रहे, सुखी रहे, धन-धान्यपूर्ण हो, ऐसा वरद् हस्त अपने पुत्रों पर रख, तुझसे यही प्रार्थना हे माँ, तेरे श्रीचरणो मे, मेरी यही कामना है।

आपस मे सभी प्रेम से रहें, वैमनस्य की दीवारे ढह जाव, आपके श्री चरणो मे सदेव ध्यान रहे, यही कामना है तुम्हारी कृपा दृष्टि सदा बनी रह, तेरी अद्भुत कृपा निरतर बनी रहे यही तेरे श्रीचरणों मे मेरी प्रार्थना है।

माँ इस कथानक मे जो कुछ हे वह तेरी कपा का फल है, इसमे जो कुछ कमी हे वह मेरी है, उसके लिए मुझे क्षमा करना।

तेर श्रीचरणो म सदा मेरा ध्यान रहे तू मुझे कभी भी सही रास्ते से भटकने न दे, यही तेर श्री चरणों म इस अबोध बालक की प्रार्थना है।

माताओं का आख्यान लिखते समय अनेकानक कठिनाइयाँ भी आई– बहुत सक्षिप्त में, इतना ही लिखना पर्याप्त है कि आद्याशक्ति जगत्‌जननी ने उस कठिनाई का स्वय निराकरण किया-मार्गदर्शन दिया-स्वप्न के माध्यम से। ऐसी कृपालु माता क श्री चरणों में शत्-शत् प्रणाम।

आभार

पारीक जाति का इतिहास' पारीक महापुरुष' पुस्तका के लखन के पश्चात् स्वजातीय बन्धु कुलदेविया के स्थान एव स्वरूप के सम्बन्ध म जानकारी प्राप्त करने हेतु निरन्तर सम्पर्क करने लगे; जबकि कुलदविया के सम्बध म तथ्यात्मक कोई जानकारी उपलब्ध नही थी। चूंकि पारीक समाज के सम्बध मे उपरोक्त दो ग्रन्थ मेरे द्वारा लिखे जा चुके थे, अत स्वजातीय बधुओं का यह मानना स्वाभाविक ही था कि मेरे पास कुलदविया के सम्बध मे भी यथेष्ठ जानकारी हे जबकि मर पास पर्याप्त जानकारी नही थी, तथापि यह उत्कण्ठा निरन्तर बनी रही कि हमारी कुलदेविया के सम्बन्ध म समाज को जानकारी कराई जावे। समस्या यह रही कि कुलदविया क जो प्रचलित नाम है, उनम अधिकाश नाम पौराणिक देविया क अनुसार नही हे जबकि सभी माताय पौराणिक है। यह मातेश्वरी की कृपा ही रही कि एक दिन जब मै बहुरा साहब गोपालनारायणजी क पास चचा कर रहा था उन्होने अनायास ही कहा भायाजी आपणी उत्पत्ति ब्रह्मा पुत्र ब्रह्मर्षि वशिष्ठजी सै बतावै छै, तो आपणी कुलदवी भी इतरी ही पुराणी होणी चायजे।' और यह था सूत्र कुलदेविया की तथ्यपरक खोज का। इसी सूत्र के आधार पर म आगे बढा। इस प्रकार कुलदविया की जानकारी

प्राप्त करने मे मेरी प्रेरणा के मुख्य स्रोत रहे, परम आदरणीय बहुरा साहब। माताओं का आशीर्वाद रहा– माताओ के स्थानो पर जाकर दर्शन किये और पौराणिक कथानको एव माताओ के दर्शन के समय प्राप्त जानकारी के आधार पर माताओ का कथानक लिखा।

बहुरा साहब ने पाण्डुलिपि को तो आद्योपान्त पढा ही, साथ ही कपापूर्वक पुस्तक पर विद्वतापूर्ण भूमिका लिखकर मुझे स्नेहिल आशीवाद भी दिया। उन्हे मेरा शत्-शत् नमन।

माननीय ब्रह्मोहनजी जावलिया, उदयपुर ने मुझे शुभाशीष देकर उत्साहित किया, बहुमूल्य सुझाव दिये, उनका मै हृदय से आभारी हूं।

मै उन सभी विद्वान लेखको का ऋणी हूँ, जिनके लेखो के अश इस पुस्तक मे साभार उद्धृत किये गये। गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित 'कल्याण' का हृदय स आभार व्यक्त करता हूँ, जहा से मैंने माताआ के सम्बन्ध मे पौराणिक कथानक एव अन्य सामग्री साभार ली है।

मै सरस्वतीस्वरूपा मेरी मातुश्री श्रीमती नारायणीदेवी एव धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला का भी आभारी हूँ जिन्होन मुझ माताआ क सम्बन्ध म लोकाचार-विषयक जानकारी कराई। पुत्रवधु श्रीमती इन्दु, श्रीमती मधुलिका, श्रीमती ज्योत्सना एव पुत्री श्रीमती विजेयता, सुपुत्र चि अनिल व कु सा चि कृष्णकान्तजी का सहयोग भी सराहनीय रहा। इस लेखन काय के दौरान वकालत के काय से यदि मुझे मेरे सुपुत्र चि नरेन्द्र एव खगेन्द्र मुक्त नही करते तो यह लेखन-कार्य सम्पन्न नही हो पाता, इसक लिए वे भी प्रशसा एव आशीर्वाद के पात्र है। लेखन के समय सुपौत्री कु नेहा, प्रियका, राधिका, पोत्र रोहित, दोहिते ऋषि व विनय का भी सहयोग उल्लेखनीय है जिन्हे समयाभाव के कारण अनेकानेक बार मेरे सानिध्य एव स्नेह से वचित रहना पडा। यहा सुपोत्र चि शोभित एव मोहित का सहयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय हे जो माताआ के दर्शनार्थ जब भी मै गया, मेरे साथ ही रहे तथा उनकी जिज्ञासाओ से कइ अनछुए प्रश्नो का उत्तर प्राप्त करने म सहायता मिली।

श्री कचनसिह चौधरी एव रामलालजी चौधरी एव चि विनाद कुमार पारीक का भी मै आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होने मुझे समय-समय पर उत्साहित

किया। एक्सीलेन्स कम्प्यूटर्स' के श्री वीरेन्द्र पारीक का भी म आभारी हूँ, जिन्हाने इस पुस्तक म सग्रहीत सामग्री को यथाशीघ्र कम्प्यूटरीकत रूप प्रदान किया। प्रिन्टर्स' का भी मै आभारी हूँ, जिन्हाने यथाशीघ्र पुस्तक को मुद्रित किया।

अन्त म चि नवनीतजी पारीक का भी आभार व्यक्त करना अपना धर्म समझता हूँ, जिन्हाने पुस्तक के प्रथम पृष्ठ का नयनाभिराम चित्र बनाकर मुझे उपलब्ध कराया।

मै अल्पज्ञानी हूँ, प्रस्तुत विषय पर मेरा तनिक भी अधिकार नही। सम्बधित ग्रन्था को यथासभव टटोल, तथा माताआ के दर्शन कर जैसा मने पढा, देखा और सुना, सुविज्ञ श्रद्धालु भक्तो की सेवा में यह कृति रूप मे प्रस्तुत है। पुस्तक मे जो कुछ है, वह आद्याशक्ति भगवती माता का ही प्रसाद हे, यह प्रसाद समाज को सादर समर्पित है।

चैत्र शुक्ला अष्ठमी स २०५७ — रघुनाथ प्रसाद तिवाडी 'उमङ्ग'
११ अप्रैल सन् २००० एफ-३७ ए, धीया मार्ग
बनीपार्क, जयपुर

अम्बा : अम्बिका : बूढण :* बृद्धेश्वरी माता

'अम्बा' शब्द माता का वाचक है। वे देवी सबके द्वारा पूजित और वंदित है तथा तीनों लोको की माता है, इसलिए अम्बिका कहलाई।[1]

'बृद्धेश्वरी' मा अम्बिका एव बूढण का विशेषण है, जिसके अनुसार यह माता ऋद्धि-सिद्ध मे बढोतरी करती है।

अम्बा माता भय और सशय का नाश करने वाली, भक्तो के सभी मनोरथ पूर्ण करने वाली है। श्रीमाता अम्बिका ही वह शक्ति है, जो मनुष्यो की प्रार्थना सुनकर इच्छाए पूरी करती है।[2]

माता अम्बिका का प्राकट्य

ब्रह्माजी द्वारा नारद को अम्बिका देवी के प्रगट होने का आख्यान[3] सुनाया जिसके अनुसार—

ब्रह्माजी ने कहा– ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत् के उपकार में लगे रहते हो। शिवतत्त्व का स्वरूप बडा ही उत्कृष्ट और अद्भुत है। जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अन्धकार ही अन्धकार था। न सूर्य दिखाई देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहा ओर नक्षत्रा का भी पता नही था। न दिन होता था न रात, अग्नि, पृथ्वी, वायु और जल की भी सत्ता नहीं थी। प्रधान तत्त्व (अव्याकृत प्रकृति) से रहित सूना आकाशमात्र शेप था, दूसरे किसी तेज की उपलब्धि नही होती थी। अदृष्ट आदि का भी

---

* स्कन्दपुराण म अम्बा और वृद्धा का एक कथानक आया है जिसके अनुसार य दानों बहिन थीं। प्रतापी नरेश चमत्कार न उनके लिए कैलाश शिखर क समान ऊचा मदिर बनवाया। तबस लकर उस महान् अभ्युदयशाली क्षेत्र में व दानों अम्बा वृद्धा क नाम स प्रसिद्ध हुईं। (प ८६६)

१ कल्याण– सक्षिप्त ब्रह्मवैवर्त पुराणाक– वर्ष ३७ (१९६३) पृ २३४-३५

२ पश्चिमी भारत की यात्रा ल कर्नल जम्स टॉड, अनु गापाल नारायण बहुरा, पृ ५४१

३ सक्षिप्त शिवपुराण गीताप्रस गारखपुर पृ ८६

अस्तित्व नहीं था। शब्द और स्पर्श भी साथ छोड़ चुके थे। गन्ध और रूप की भी अभिव्यक्ति नहीं होती थी। रस का भी अभाव हो गया था। दिशाओं का भी भान नहीं होता था। इस प्रकार सब ओर निरन्तर सूचीभेद्य घोर अन्धकार फैला हुआ था। उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुति मे जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था। जब 'यह', 'वह', 'ऐसा', 'जो' इत्यादि रूप से निर्दिष्ट होने वाला भावाभावात्मक जगत् नही था, जिसे योगीजन अपने हृदयाकाश के भीतर निरन्तर देखते है। वह सत्तत्त्व मन का विषय नहीं है। वाणी की भी वहा तक कभी पहुच नहीं होती। वह नाम तथा रूप-रंग से भी शून्य है। वह न स्थूल है न कृश, न ह्रस्व है न दीर्घ तथा न लघु है न गुरु। उसमें न कभी वृद्धि होती है, न ह्रास। श्रुति भी उसके विषय में चकित भाव से 'है' इतना ही कहती है, अर्थात् उसकी सत्तामात्र का ही निरूपण कर पाती है, उसका कोई विशेष विवरण देने में असमर्थ हो जाती है। वह सत्य, ज्ञानस्वरूप, अनन्त, परमानन्दमय, परम ज्योति स्वरूप अप्रमेय, आधाररहित, निर्विकार, निराकार निर्गुण योगगम्य, सर्वव्यापी सबका एकमात्र कारण, निर्विकल्प, निरारम्भ, मायाशून्य, उपद्रवरहित अद्वितीय, अनादि अनन्त, सकोच-विकास से शून्य तथा चिन्मय है।

जिस परब्रह्म के विषय में ज्ञान और अज्ञान से पूर्ण उक्तियो द्वारा इस प्रकार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किये जाते है, उसने कुछ काल के बाद (सृष्टि का समय आने पर) द्वितीय की इच्छा प्रकट की— उसके भीतर एक से अनेक होने का सकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्मा ने अपनी लीला-शक्ति से अपने लिए मूर्ति (आकार) की कल्पना की। वह मूर्ति सम्पूर्ण ऐश्वर्य-गुणों से सम्पन्न, सर्वज्ञानमयी, शुभस्वरूपा, सर्वव्यापिनी, सर्वरूपा, सर्वदर्शिनी, सर्वकारिणी, सबकी एकमात्र वन्दनीया सर्वाद्या, सब कुछ देने वाली और सम्पूर्ण सस्कृतियों का केन्द्र थी। उस शुद्धरूपिणी ईश्वर-मूर्ति की कल्पना करके वह अद्वितीय, अनादि, अनन्त, सर्वप्रकाशक, चिन्मय, सर्वव्यापी और अविनाशी परब्रह्म अन्तर्हित हो गया। जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसी की मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव है। अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उन्हीं को ईश्वर कहते है। उस समय एकाकी रहकर स्वेच्छानुसार विहार करने वाले उन सदाशिव ने अपने विग्रह से स्वय ही एक स्वरूपभूता शक्ति की

सृष्टि की, जो उनके अपने श्रीअग से कभी अलग होने वाली नहीं थी। उस पराशक्ति को प्रधान प्रकृति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्व की जननी तथा विकार रहित बताया गया है। वह शक्ति अम्बिका कही गयी है। उसी को प्रकृति, सर्वेश्वरी, त्रिदेवजननी, नित्या और मूलकारण भी कहते है। सदाशिव द्वारा प्रकट की गई उस शक्ति की आठ भुजाए हे। उस शुभलक्षणा देवी के मुख की शाभा विचित्र है। वह अकेली ही अपने मुखमण्डल में सदा एक सहस्र चन्द्रमाओ की काति धारण करती है। नाना प्रकार के आभूषण उसके श्रीअगो की शोभा बढाते है। वह देवी नाना प्रकार की गतियो से सम्पन्न है और अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र धारण करती है। उसके खुले हुए नेत्र खिले हुए कमल के समान जान पड़ते है। वह अचिन्त्य तेज से जगमगाती है। वह सबकी योनि है और सदा उद्यमशील रहती है। एकाकिनी होने पर भी वह माया सयोगवशात् अनेक हो जाती है।

अम्बा-वृद्धा (बूढ़ण)– पौराणिक आख्यान [१]

अम्बा-वृद्धा दो बहिने है। स्कन्द पुराण के नागर खण्ड में ऐसा कथानक आया है कि पुराने समय म हाटकश्वर क्षेत्र मे महाराज चमत्कार एक धर्मप्राण राजा हुए है उनके द्वारा श्रद्धापूर्वक वहा चमत्कारी देवी की स्थापना की गइ थी। कौमारव्रत धारण करने वाली उन्ही देवी ने लाखो मायारूप धारण करने वाले महिपासुर का वध किया था। महात्मा राजा चमत्कार ने जब चमत्कारपुर का निर्माण किया उस समय नगर की तथा उस नगर में निवास करने वाले समस्त ब्राह्मणों की रक्षा के लिए भक्तिभावित चित्त से चमत्कारी देवी को स्थापित किया था।

स्वामि कार्तिकेय ने तारकासुर का वध करके अपनी शक्ति को उसी चमत्कार नामक श्रेष्ठ नगर म स्थापित किया, जिससे रक्त-शृग पर्वत अत्यन्त दृढ हो गया। उसके बाद उन्होंने प्रसन्न होकर अम्बा वृद्धा, आम्रा, माहित्था और चमत्कारी– इन चार दवियो से कहा– 'आप सब मिलकर इस श्रेष्ठ पर्वत को सुरक्षित बनाये रखे, जिससे यह प्रलयकाल मे भी अपने स्थान से विचलित न हो। यह उत्तम नगर सदा मेरे नाम से प्रसिद्ध हो ओर यहा के

१ कल्याण– सक्षिप्त स्कन्दपुराणाङ्क– वर्ष २५ (१९५१) पृ ८६३ ८६७

सब ब्राह्मण सदा आप चारों देवियो को पूजा देगे।' स्वामी कार्त्तिकेयजी की इस बात से प्रसन्न होकर उन देवियो ने 'बहुत अच्छा' कहकर अपने त्रिशूल का अग्रभाग लगाकर उस पर्वत को सब ओर से सुदृढ कर दिया।

अम्बा वृद्धा के द्वारा चमत्कारपुर नगर की रक्षा का वर्णन ऊपर आया है। अम्बा वृद्धा देवी जिस भगवती की पूजा करती थी उस कौमार्यव्रत धारण करने वाली भगवती आद्याशक्ति की आराधना में वे सदैव सलग्न रहकर उसी की ज्योति म लीन हो गई।

अत अम्बा वृद्धा महाराजा चमत्कार की पुत्रिया आदिशक्ति अम्बा में भक्तिभाव में विलीन होने के कारण उन्ही अम्बा माता के रूप म पूजित हो गई।

जगात म माता अम्बा देवी का मदिर

उदयपुर से दक्षिण-पूर्व म (डूगरपुर की सीमा से मिले हुए मेवाड के छप्पन जिले का जगत गाव) स्थित जगात मे अम्बा माता का अति प्राचीन मदिर अवस्थित है। इस माता को अम्बा देवी कहते है। यह स्थान पुरातत्त्व की दृष्टि से एक अनूठा स्थान है तथा दसवी सदी क प्रारम्भ का है। मदिर की दीवारो पर भी माता की मूर्तिया है तथा दक्षिण दिशा की देखती चामुण्डिका माता की मूर्ति है। द्वार क पास सप्तमातृकाए है जो कि मुख्य मदिर से पूर्व की ओर लगभग पचास गज की दूरी पर है। जगत का अम्बा दवी का मदिर मेवाड के गुहिल शासको द्वारा पूजित रहा है तथा उन्होंने समय समय पर माता के भेंट चढ़ाई है।

महाराजा सामन्तसिहदेव द्वारा माता क मदिर में स्वर्ण कलश फाल्गुन सुदी ७ सम्वत् १२२८ (११७२ई) मे भट करन का शिलालेख है। एक अन्य शिलालेख सम्वत् १२७७ (१२२०ई), सिहदेव के समय का है। सम्वत् १३०६ (१२४९ई) के एक और शिलालेख स ज्ञात होता है कि जयसिहदेव द्वारा माता क मदिर में स्वर्ण-दण्ड चढ़ाया गया था।

विराट— यहा सती के दाय पाव की अगुलिया गिरी थी। यहा सती को अम्बिका तथा शिव का अमृत' की सना दी गई है। जयपुर स उत्तर की ओर लगभग ६४ कि मी दूर बैराठ ग्राम म माता का यह शक्तिपीठ स्थित है।

आमेर की अम्बा माता[1]—

आमेर के नामकरण के सम्बन्ध मे अनेकानेक मत है, उनमे से एक मत यह भी है कि अम्बा माता के नाम से ही इसका नाम आमेर पड़ा हो, जो आगे चलकर अम्बापुर से आम्बेर बन गया हो। आमेर के मध्य म स्थित अम्बा के पति अम्बिकेश्वर महादेव का मदिर है। आमेर मे कछवाहो के पहले मीणो का आधिपत्य था, व माता के अम्बा स्वरूप की पूजा करते थे, जिसे वे 'घाटा राणी' भी कहते थे। 'इस बात की पुष्टि किसी सीमा तक दसवी शताब्दी के एक मूर्ति फलक से भी होती है जो किसी प्राचीन द्वार का टुकडा है और जिसे शीतला माता की मूर्ति मानकर पूजा जाता है। सभवत यही शीतला माता अम्बा माता थी। जिसके पीछे आमेर को अम्बावती कहा गया।' आमेर के स्थानीय लोग अम्बा माता का मदिर पूछने पर शीतला माता का मदिर ही बताते है।

देश मे अम्बा माता के अनेकानेक स्थानो पर मदिर है, जिनमे से कुछ का वृत्तान्त यहा दिया जा रहा है—

१ द्वादश ज्योतिर्लिंग मल्लिकार्जुन मदिर से पश्चिम में लगभग दो मील दूरी पर सती के देह का ग्रीवा भाग जहाँ गिरा वहाँ भ्रमराम्बा देवी का मदिर है। यह ५१ शक्तिपीठो म से एक है। अम्बाजी की मूर्ति भव्य है। आसपास प्राचीन मठादि के अवशेष है।[2]

२ दिघवारा (सारन)– स्टेशन से लगभग ५ कि मी पश्चिमी गगा तट पर अम्बाजी का भव्य मदिर है। चैत्र और आश्विन के नवरात्रो मे यहा मेला भरता है तथा दूर-दूर के यात्री जात-जडूले उतारने आते है।

३ अम्बाजी का एक मदिर आनर्त (गुजरात) मे है।

४ गुजरात के आरासुरी स्थान पर अम्बाजी का मदिर है। यहा मूर्ति नहीं अपितु देवीजी का यत्र है जिस पर कपडे पहनाये गये है। भक्त देवीजी की प्रार्थना कर अपनी मनोकामना की प्राप्ति करते है। इस सम्बन्ध म माताश्री का विस्तृत विवरण निम्न प्रकार है—[3]

---

१ राजस्थान पत्रिका, नगर परिक्रमा दिनाक ११ ५ ८९

२ कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) स १ पृ ३३१ ३३२

३ कल्याण– शक्ति अक वर्ष ९ (१९३४) पृ ६४७

आरासुरी अम्बिकाजी

पुराणों में लिखा है कि अपने पिता दक्ष के यज्ञ में शिवजी को न बुलाने तथा उनका स्थान भी निर्धारित न करने और पिता द्वारा पुत्री का अपमान करने पर सती ने अपने को अपमानित महसूस किया तथा योगाग्नि में जल गई। आशुतोष भगवान को जब इसकी जानकारी हुई तो उनका स्वरूप प्रलयकारी हो गया और वे सती का शव लेकर विचरण करने लगे। भगवान् विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र से सती के अंगो को काटना प्रारम्भ किया। श्री विष्णु भगवान् के चक्र से कट कटकर देवी की देह के पृथक्-पृथक् अवयव भूतल पर स्थान-स्थान पर गिरे और गिरते ही वे पाषाणमय हो गये। भूतल के ये स्थान महातीर्थ और मुक्तिक्षेत्र है। ये सिद्धपीठ कहलाते है और देवताओं के लिए भी दुर्लभ प्रदेश है। अर्बुदारण्य प्रदेश के आरासुर (आरासन) नाम के रमणीय पर्वत शिखर पर श्रीअम्बिकाजी का भुवनमोहन स्थान विद्यमान है। यहा सती के हृदय का एक भाग गिरा था। अतएव उस अंग की पूजा अब भी होती है।

दिल्ली से अहमदाबाद को जाने वाली बी बी सी आई रेल्वे लाइन पर आबूरोड एक स्टेशन है। वहासे आरासुर तक करीब चौदह मील का रास्ता है। यह रास्ता बड़ ही सुन्दर घने जंगलो में होकर जाता है। रास्ते मे नाना प्रकार के पुष्पो की सुगन्ध और छोट-बडे झरनो के सुन्दर दृश्य मन को ऐसा मुग्ध कर देते है कि पैदल चलने वाले यात्री को मार्ग के कष्ट का कुछ भी अनुभव नही होता। शिखर पर पहुचते ही यात्री वहा के अलौकिक दृश्य को देखकर भावोन्मत्त हो जाते है। मार्ग मे गगनचुम्बी पर्वतश्रेणी, लता पत्र, पुष्प-विचित्रा, वनभूमि, छोटे-बड़े झरनों का वक्र प्रवाह, श्वापदो से भरा हुआ गहन कानन, शस्य-श्यामल कृषिक्षेत्र, ताल-तमाल-नारिकेल-परिवेष्टित ग्राम, साधु-सन्यासियो के योगाश्रम प्रभृति प्राकृतिक दृश्य यात्रियो के मन को आनन्द से आप्लावित कर देते है। छोटे-छोटे लडके भी श्रीमाताजी की कृपा से पैदल आनन्दपूर्वक खेलते-कूदते चले जाते है। मार्ग मे बालकों की जय अम्बे, जय अम्बे की ध्वनि बहुत ही प्यारी लगती है। आबूरोड स्टेशन से तीन मील की दूरी पर एक तेलिया नामक नदी मिलती है। जिसको तेल लगाना या तेल का बना हुआ पदार्थ खाना होता है, वह यहीं लगा, खा लेता है,

क्योकि इसके आगे तेल का व्यवहार विल्कुल ही नहीं होता। बारह मील की दूरी पर पर्वत की तलहटी मे बसे हुए घर मिलते है, जिसे श्री अम्बिकाजी का नगर कहते है। नगर मे प्रवेश करने पर श्रीहनुमान मंदिर तथा भैरव मंदिर मिलता है।

आरासुर पर्वत के सफेद होने के कारण श्री अम्बिकाजी 'धोळा गढवाली' माता के नाम से भी पुकारी जाती है। भगवतीजी का मंदिर सगमरमर पत्थर से बना हुआ है और बहुत ही प्राचीन है। मंदिर के चारा ओर धनी पुरुषो ने अपनी-अपनी कामनासिद्धि के उपलक्ष्य में लाखो रुपये व्यय करके धर्मशालाए बनवा दी है। धर्मशालाओ मे उनके मालिको की ओर से यात्रियो के लिए पलग, बिछौना, बरतन वगैरह सब प्रकार की सुविधा रहती है।

गुजरात प्रान्तभर के बच्चों का मुण्डन सस्कार प्राय यहा ही होता है। कहते ह कि श्रीकृष्णभगवान् का मुण्डन सस्कार भी यही हुआ था। गुजरात मे कदाचित् ही कोई ग्राम होगा जहाँ इस पीठ के उपासक न हो। उपासको में केवल हिन्दू ही नही, बल्कि पारसी, जैन और मुसलमान आदि भी है। इस स्थान का इतना बडा माहात्म्य है कि प्रतिवर्ष लाखा यात्री दूर-दूर से श्रीअम्बा माता के दर्शन के लिए आते है, सहस्रा मनुष्यो की कामनाए माताजी की कृपा से पूरी हो जाती हे। पुत्रहीनो को पुत्र की प्राप्ति होती है, धनहीनो को धन की, रोगियों को स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। मनौती करने वाले जब मनोकामना पूरी होती है, तो वह जब तक श्रीमाताजी का दर्शन नहीं कर लेता, तब तक कोई नियम ले लेता है और प्राण-पण से उसका पालन करता है।

मंदिर में जिनका पूजन होता है, वे महादेवजी की पत्नी, हिमाचल और मैनाजी की पुत्री दुर्गादेवी है। इनको 'भवानी' अर्थात् काम करने की शक्ति या अम्बा' यानी जगत् की माता भी कहते है, यह मंदिर बहुत प्राचीन है। आगन मे जो चौके जडे हुए है, वे इतने घिस गये है कि उन्हे देखकर सहज ही मालूम हो जाता है कि मंदिर कितना पुराना है और कितने लोग माताजी के दर्शन करने आते है।

माताजी का दर्शन सवेरे ८ बजे से लेकर १२ बजे तक होता है। भोजन का थाल रखने के बाद बन्द हो जाता है और फिर शाम को सूर्यास्त के समय

बडे ठाठ के साथ आरती होती है। उस समय बहुत भीड हाती है। मदिर में बशुमार छत्र और सभामण्डप में बहुत से घण्टे लटक्ते हुए दिखाई देते है, जिन्हें श्रद्धालु यात्रिया ने लगवाया हे। आरती के समय दर्शनार्थी इन सब घण्टा को बजाते हुए ध्यानमग्न हो जाते है।

माताजी को तीनो समय तीन पहर की पोशाक पहनायी जाती है। इससे वे सवेरे बाला, दोपहर को युवती और शाम को वृद्धा के रूप म दिखाई देती है। इसी से कहा गया है—

जैसे दिल से देख लो, देखो वैसा रूप।
ब्रह्मरूप से देखकर देखो ब्रह्मस्वरूप॥

वास्तव में माताजी की कोई आकृति नही है, केवल एक बीसायन्त्र है, जो शृगार की विभिन्नताओं के कारण ऐसा दिखाई देता है।

जब तक यात्री माताजी के दरबार मे रहते है, तब तक खाने, जलाने और सिर म लगाने के काम म तेल की जगह घी का ही व्यवहार किया जाता है। पति पत्नी साथ आने पर भी यहा जब तक रहते है, ब्रह्मचर्य का पालन करत है।

माताजी के मदिर के पास एक विशाल चौक है, इसे चाचर कहते है। इस चाचर में रात को एक बहुत बडा तवा घी से भरकर जलाया जाता है, इसे भी चाचर कहते है।

रजस्वला स्त्री और सूतक लगे हुए लोग माताजी के चाचर मे नही जा सकते। ऐसे लोगो के रहने के लिए अलग धर्मशालाए बनी है। यदि कोई रजस्वला स्त्री चाचर मे चली जाती है तो रात के समय जलते हुए घी मे धडाका होने लगता है और उसमे से ज्वाला और धुआ निकलने लगता है, जब रजस्वला स्त्री वहा से चली जाती हे तब ये उपद्रव शात हो जाते है। इसी प्रकार दिन के समय माताजी के मदिर पर लगे हुए तीनो त्रिशूल डोलने लगते है।

माताजी को थाल रखने वाले को कोठारी से पहले ही आज्ञापत्र ले लेना पड़ता है। आज्ञापत्र मिल जाने पर पुजारी एक चादी का बरतन दे देता

है और उसी में रखकर भोग की सामग्री एक निश्चित समय पर ली जाती है। भोग लगने के समय ब्राह्मण लोग शोला (एक प्रकार का पवित्र वस्त्र) पहनकर माताजी का पादपूजन कर सकते है, और पास जाकर दर्शन कर सकते है, क्योंकि उस समय भीड नहीं रहती। यात्री एक, तीन, पाच या सात दिन लगातार रह सकते है। सवेरे आठ बजे की आरती के बाद आबूरोड की ओर वापस जाते है, जिनको जल्दी होती है वे पिछली रात को ही निकल जाते है।

माताजी के चाचर में हिन्दू के सिवा अन्य जाति का कोई आदमी नही जा सकता। कुछ समय पूर्व एक यूरोपियन सज्जन आये थे। कहते है कि रोके जाने पर भी उन्होने माताजी की परीक्षा के लिए चाचर पर जाना चाहा। वे सीढ़ियो पर चढ़ ही रहे थे कि अकस्मात् ऐसे गिरे मानो किसी ने उठाकर नीचे फेक दिया हो। उनको बडा आश्चर्य हुआ। तब्से ऐसे अन्यधर्मी सज्जनो के दूर से दर्शन की सुविधा के लिए सामने चाचर से दूर एक ऊची बैठक बना दी गई है, वहा से ये लोग दर्शन कर सकते है।

साधारणत श्रीअम्बाजी के यहा प्रत्येक पूर्णिमा को मेला लगता है, परन्तु भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और चैत्र की पूर्णिमा को विशेष रूप से भारी मेला लगता है।

माताजी के गढ के भीतर ही एक गहरी बावडी है, उसी से पीने का पानी लिया जाता है। इसे लोग 'कलोधर वाव' कहते है। अब धर्मशालाओ मे भी कुए बन गये है।

मंदिर के पृष्ठभाग की ओर थोडी दूर पर पवित्र मधुर जल का एक मानसरोवर है। मानसरोवर के दक्षिण पार्श्व मे स्थित श्रीअजाई माता है। अजाई माता श्रीजगदम्बा अम्बिका जी की बहिन कहलाती है।

यहा से एक कोस पर एक छोटी-सी पहाडी पर 'गब्बर' (गह्वर) नाम का स्थान है। वहा जाने के लिए भी नाके पर टैक्स देकर रसीद लनी पडती है। उसका चढाव मुश्किल होने के कारण यह कहावत प्रसिद्ध हो गई है कि—

'जो जाय गब्बर वह हो जब्बर।'

गब्बर पर जाने का मार्ग बहुत ही कठिन है परन्तु श्रद्धाबल से बहुत छोटे-छोटे बच्चे भी उस पर चढ जाते है।

उपर्युक्त गब्बर शिखर के विषय मे एक कथा प्रसिद्ध है। कहते है पुरातन काल मे एक ग्वाल की गायो में माताजी की गाय भी अज्ञात रूप से जगल म चरने जाती थी। बहुत दिनों तक चराई नही मिलने के कारण एक दिन सायकाल को वह ग्वाला उस गाय के पीछे-पीछे उसके मालिक के घर चला। वह गाय के साथ एक सुन्दर मदिर के पास आ पहुचा। मदिर म एक दिव्य रमणी सुन्दर वस्त्र पहने झूले पर झूल रही थी। ग्वाले के चराई मागने पर उसने कुछ जौ उसके कम्बल मे डाल दिये। ग्वाला असतुष्ट होकर जौ बाहर फक्कर चलता बना। घर पहुचने पर उसने सारा वृत्तान्त अपनी स्त्री से कहा। स्त्री बुद्धिमती थी ग्वाले की बात सुनकर वह चकित हो गई। उसने कम्बल का वह कोना दिखलाने के लिए कहा जिसम जौ डाला गया था। उसे देखते ही उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, क्योकि कम्बल म जो आठ-दस जौ के दाने बच रहे थे वह सोने के थे। पीछे ग्वाले ने बहुतेरा ढूढा, न तो उसे वह मदिर ही मिला और न ही दिव्य रमणी ही दिखाई पडी। बेचारा पछताकर रह गया।

'गब्बर' पर चढ़ने के रास्ते पर एक मील के बाद एक गुफा आती है। उसे माई का द्वार कहते है। सुनते है कि इसी द्वार से भगवती के मदिर मे जाना होता था। पर्वत के भीतर देवी का एक मदिर है, उसमे देवी का झूला है, सुनते है भक्तो को कभी-कभी आज भी देवी के झूले की ध्वनि सुन पड़ती है। द्वार तो सत्ययुग में ही बद हो गया था ऐसी जनश्रुति है।

'गब्बर' के शिखर पर तीन स्थान है। एक माता के खेलने की जगह। यहा पत्थर पर पैर की छोटी-छोटी अगुलियो के चिह्न दीख पडते है। दूसरा स्थान पारस पीपला है, और तीसरा श्रीकृष्ण भगवान् का ज्वारा है, इसी स्थान पर यशोदा जी ने श्रीकृष्ण जी का मुण्डन करवाया था।

श्री अम्बा माताजी के चमत्कार की अनेक कथाए प्रसिद्ध है। स १९८७ विक्रमी के भाद्रपद की पूर्णिमा की यात्रा मे आते समय सीनोर ग्राम के पट्टीदार का एक तीन-चार वर्ष का लड़का रात के समय राह स्टेशन के आगे चलती गाड़ी से गिर गया। जजीर खींचकर गाडी खड़ी कराकर रात्रि म खोजने से उसका कुछ भी पता नहीं लगा। प्रात काल वह लडका रेल्वे लाइन स कुछ दूरी पर रोता हुआ पाया गया। अपनी माता को देखकर उसने रोते हुए कहा

कि रात भर तो तू मेरे पास बैठी रही, अभी कहा चली गई थी ? लड़के की बात सुनकर सबको मालूम हो गया कि श्रीमाताजी ने ही उसकी रक्षा की थी। इस प्रकार के चमत्कार यहा आये दिन होते ही रहते है।

ऐतिहासिक दृष्टि से भी इस पीठ का महत्त्व कुछ कम नहीं है। प्रात स्मरणीय वीरवर मेवाड़ाधिपति महाराणा प्रताप, जब अपनी टेक पर अड़े अकबर से युद्ध करते वन-वन भ्रमण करते रहते थे, उस समय की बात है। उन्होने अपनी रानी ईडर नरेश की कन्या से एक निश्चित तिथि को ईडर म मिलने का वादा कर लिया था। अकबर को इसकी खबर लग गयी थी, और उसने ईडर पर उनको पकडने के लिए घेरा भी डलवा दिया था। महाराणा अनेक बाधाओ के कारण निश्चित तिथि की सध्या तक अपना वादा पूरा नही कर सके। इसस वह बडे चिंतित हुए। उधर बादशाह के द्वारा ईडर पर घेरा डालने की बात भी उन्हे मालूम हो गई थी। महाराणा धर्मसकट मे थे। घोर अधियारी रात्रि थी ओर मूसलाधार वृष्टि हो रही थी, बड़े वडे नदी नाले उमड़ रहे थे। पहाडी मार्ग द्वारा मेवाड से पचास कोस दूर ईडर को उसी रात पहुचना था। महाराणा ने अपने अश्व चेटक को बढाया और अनेक सकटों का सामना करते हुए साभ्रमती (साबरमती) नदी के तीर पर पहुचे। नदी उमड़ी हुई बड़े ही तीव्र वेग से बह रही थी। चेटक नदी म उतरा और सर्प की भाति आगे बढा, परन्तु मझधार में जाते ही एक बहते हुए पेड़ की डाल में उसकी टाग अड गयी और वह डूबने लगा। तब शक्तिपूजक महाराणा ने बडे ही भक्तिभाव से श्रीअम्बा माता का स्मरण किया और कहा कि हे भगवती! यदि मै रानी स मिलकर और बादशाह के घेरे को तोडकर लोटा तो अपनी शक्तिरूपी तलवार तेरी चरणो मे भेट कर दूगा।' बस, क्या था, उसी क्षण जगदम्बा की कृपा से अश्व का पैर छूट गया और रानी से मिलकर बादशाह का घेरा तोडकर जब लोटे तो श्रीअम्बाजी के दर्शन के लिए आये और उन्होंने अपनी तलवार भगवती के चरणा मे अर्पित की। यह तलवार आज भी मातृमदिर मे विद्यमानहै ओर उसकी नित्य पूजा होती है।

कहा जाता है कि राजा भीम की राजधानी कुन्दनपुर यही थी। श्रीरुक्मिणीजी यही अम्बा का दर्शन करने आयी थी और श्रीकृष्ण भगवान् ने रुक्मिणी का हरण भी यही किया था।

कुछ शताब्दियो पहले मदसोर के सेठ अखैरामजी व्यापारी बिसानगर वैश्य का जहाज रात्रि के समय तूफान आने के कारण समुद्र मे डूबने लगा। तब सेठजी ने अम्बाजी को याद किया और अपनी सम्पत्ति का आधा हिस्सा जगदम्बा के दरबार मे अर्पण करने का सकल्प किया। इतना करते ही भगवती ने त्रिशूल द्वारा जहाज को उठाकर तुरन्त किनारे पर लगा दिया और उसी रात को पुजारी को यह वृत्तान्त सूचित कर पोशाक बदल देने की आज्ञा दी। पुजारी ने मदिर खोलकर देखा तो माताजी की पोशाक भीग रही थी और त्रिशूल कुछ टेढा हो रहा था। कपडे निचोडकर आचमन लेने पर जल खारा लगा। आबू के पास खारा पानी कहा से आता ? माताजी के दिये हुए स्वप्न और प्रत्यक्ष की इस घटना की खबर दाता महाराज को दी गई। दाता महाराज वहा आये। इक्कीस दिनो बाद सेठ अखैराम वहा आ पहुच और उन्होंने सम्पत्ति का आधा भाग माता की सेवा मे अर्पण किया। हवन कराकर माताजी को एक हीरा भेट किया जो अभी तक शृगार मे चढता है और उनकी ओर से अखण्ड घृतदीप प्रारम्भ किया गया, जा उनके वशजो द्वारा अब तक जारी है।

श्रीअम्बाजी स करीब तीन मील दूर उदुम्बर वन है, वहा भगवान् कोटीश्वर शकर का मदिर है। यही स सरस्वती नदी निकलती है, जो सिद्धपुर पाटण होते हुए कच्छ के मैदान मे लीन होती है। कोटीश्वर महादेव के मदिर के समीप पहाड से जो झरना निकलता है वह पहले एक कुण्ड मे आता है, इस कोटीश्वरकुण्ड कहते है और फिर यहा से गोमुखद्वारा बाहर निकलता है। कोटीश्वर के पास श्रीमधुसूदन का मदिर है, यही श्रीतण्डी-ऋषि का आश्रम है। यहा दान-पुण्य-हवनादि का बडा माहात्म्य पुराणो मे वर्णित है। पूर्वजन्म के भील ओर भीलनी इसी कोटीश्वर की आराधना से दूसर जन्म में नल और दमयन्ती नाम से उत्पन्न हुए थे। श्रीअम्बाजी से कोटीश्वर जान के लिए मोटर सर्विस है। रास्ते मे विमलशाह के बनवाये हुए जैन मदिर है, जिन्हे कुभारियाजी कहते है। ये मदिर आबू के देलवाडे के जैन मदिरो स करीब पचीस वर्ष पूर्व निर्मित हुए थे। इनमे भारतीय शिल्पकला के उत्तम नमूने देखने म आते है। दश-विदेश से दूर-दूर के यात्री इन्हे देखने के लिए आते है। अभी-अभी इन मदिरो की मरम्मत मे अहमदाबाद क जैनसघ ने तीन लाख रुपये खर्च किये

है। इससे इनकी उत्कृष्टता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। कुभारियाजी के मदिर तथा आबू के देलवाडे के मदिरों के बनवाने मे जो द्रव्य लगा था, वह श्रीअम्बाजी की कृपा से विमलशाह को गह्वर के निकटवर्ती भण्डारा नामक शिखर से मिला था। इसी के उपलक्ष्य मे जैन मदिर कुभारिया में भगवती की मूर्ति पधरायी गयी है।

माताजी श्री अम्बिकाजी से राजधानी दाताभवानगढ १४ मील दूर है। इस रास्ते मे तीन मील पर पत्थर का एक बडा भारी त्रिशूल आता है। इस स्थान पर यात्री एक श्रीफल चढाकर आगे बढते है। यह बहुत ही विकट स्थान है।

श्री अम्बिकाजी से ईडर के गढ की ओर १२ मील तक पैदल जाने पर एक पहाड आता है, इसे चामुण्डा की टेकरी कहते है। यहा एक पाच मील के लगभग बडे विस्तार वाला सरोवर है।

यहा चामुण्डा माता के मदिर मे जाने का द्वार हे। यह मदिर बहुत ही छोटा और पुराना है।

अम्बिकाजी का यह प्रसिद्ध और जाग्रत तीर्थस्थान दाता स्टट की हुकूमत मे है। दातानरेश परमारवश के क्षत्रिय ह। ये शकप्रवतक श्रीमान् विक्रमादित्य, विद्याविलासी महाराज भोज और वीरवर जगदेव परमार के वशधर है तथा श्रीअम्बा भवानी के परम उपासक है। वर्तमान दाता नरेन्द्र श्रीमान् भवानीसिहजी बहादुर अपने पूर्वपुरुषों के सदृश वीर, विद्यानुरागी, अत्यन्त उदार-हृदय तथा श्री जगदम्बा माता के कपा-पात्र परम-भक्त है। यात्रियो के कष्टनिवारणार्थ आप सदा तैयार रहते है। यहा भीलो की विशेष बस्तिया होने पर भी यात्री निर्भय होकर चलते है, आभूषणो से लदी स्त्रिया घने जगल के मार्ग म अकेली यात्रा कर सकती है। रास्ते म ऐसा कडा राज्यप्रबन्ध है कि यदि कोई यात्री रास्ते में कोई वस्तु भूल जाय तो वह उसे उसके डेरे पर ही मिल जायेगी।

यहा यात्रियों की सुविधा के लिए राज्य की ओर से एक डिस्पेंसरी भी खोली गयी है। पोस्टआफिस का भी प्रबन्ध हो गया है। राज्य की ओर से टेलीफान का भी प्रबन्ध है, उसका प्रयोग प्रजा और यात्री दोना के लिए अबाधित कर दिया गया है। ऐसे धर्मप्रिय नरेन्द्र इस धर्मस्थान के प्रबन्धक

है वह सोने मे सुगन्ध है। जगदम्बा इन्हें दीर्घायु तथा धर्मकार्य मे विशेष उत्साह प्रदान करे, यही प्रार्थना है।

बड़ौदा– वडोदा नगर मे मण्डवी के निकट अम्बा माता की सुन्दर प्रभावशालिनी मूर्ति है। कहा जाता है कि सम्राट विक्रमादित्य की इष्टदेवी यही अम्बा माता हरसिद्धि थी।

कुण्डलपुर (वर्धा नदी के किनारे)– यह स्थान अत्यन्त पुराना है। राजा भीष्मक की पुत्री रुक्मणीजी यहा पूजन करने आती थीं तथा यहीं उनका हरण हुआ था। मदिर एक टीले पर है। भगवती की चार फुट ऊची मूर्त्ति है।

अमरावती– नदी के एक तट पर अम्बिकाजी का मदिर है। यहा इस मदिर की बहुत मान्यता है।

कोल्हापुर– नगर मे पुराने राजमहल के पास खजाना घर है उसके पीछे महालक्ष्मी का विशाल मदिर है। इसे लाग अम्बाजी का मदिर भी कहते है। (तीर्थाक-३३२)

मद्रास– साहूकार पेठ मे यह मदिर है। इसे यहा चेनाम्बा का मदिर कहते है। इसे मद्रासपुरी की रक्षिका माना जाता है। तिरुनेल्वेली (तिन्नेवली) यह रेल्वे स्टेशन है। यहा पार्वती जी का प्रधान मदिर है। यहा पार्वती जी को 'कातिमति अम्बा' कहते है। (तीर्थाक-३४०-३८९)

सूरत– यहा सूरत रोड पर अम्बाजी का भव्य मदिर है। देवी की मूर्ति कमलाकर पीठ पर विराजमान है। मूर्ति रथ पर स्थित है, जिसमे दो घोडे और दो सिहो की मूर्तिया बनी है। देवी के दाहिने गणेशजी और शकरजी तथा बाईं ओर बहुचरा देवी की मूति है। (तीर्थाक-४४०)

ज्वालामुखी (पजाब)– ज्वालामुखी रोड स्टेशन से लगभग २० कि मी दूर सिद्धिदा (अम्बिका) का यह शक्तिपीठ है। यहा शक्ति की जिह्वा विष्णुभगवान के चक्र से कटकर गिरी थी। (तीर्थाक-५१८)

अम्बा– अम्बिकाजी का एक मदिर आमागढ (जयपुर की चाहरदीवारी के उत्तर-पूर्व) मे भी है।[१]

---

१ कैटलाग ऑफ हिस्टारिकल डाकूमेन्टस् इन कपडद्वारा ऑफ जयपुर ल गोपाल नारायण बहुरा रत्नमणिसिंह पृ ४६ ४७ टीप २९४

पारीको के निम्न अवटका की यह कुलदेवी है—

देवपुरा तिवाडी*		बूढणा
रोजडा उपाध्याय*		बूढणा
दीक्षित (दिक्खत)	जोशी	अम्बा

---

* कहीं कहीं दत्रपुरा व राजडा की माता ललिता बताई गई है।

● कुछ विद्वान इस माता का ललिता व लाहणा माता क नाम स भी सम्बाधित करत है।

□□□

माँ दुर्गाजी की नवी शक्ति का नाम सिद्धिदात्री भी है—

सिद्धगन्धर्वयक्षाद्यैरसुरैरमरैरपि।
सेव्यमाना सदा भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी॥

'सिद्धो, गन्धर्वो, यक्षो, असुरो और देवो द्वारा भी सदा सेवित होने वाली सिद्धिदायिनी दुर्गा सिद्धि प्रदान करने वाली हो।'

भगवती दुर्गा सभी प्रकार की सिद्धियो को देने वाली है। मार्कण्डेय पुराण[1] म आठ प्रकार की सिद्धियो का वर्णन किया गया है—

१ *अणिमा— सूक्ष्म से भी सूक्ष्म रूप धारण कर लेने के कारण 'अणिमा' कहते है।* २ **लघिमा**— शीघ्र से शीघ्र कोई काम कर लेना 'लघिमा' नामक देवी का गुण है। ३ **महिमा**— सबके लिए पूजनीय हो जाना 'महिमा' कहलाता है। ४ **प्राप्ति**— जब कोई भी वस्तु अप्राप्य न रहे तो वह 'प्राप्ति' नाम सिद्धि है। ५ **प्राकाम्य**— सर्वत्र व्यापक होने से योगी को 'प्राकाम्य' नामक सिद्धि की प्राप्ति मानी जाती है। ६ **ईशित्त्व**— जब वह सब कुछ करने म समर्थ-ईश्वर हो जाता है तो उसकी वह सिद्धि 'ईशित्व' कहलाती है। ७ **वशित्त्व**— *सबको वश म कर लेने से 'वशित्त्व' की सिद्धि होती है। यह योगी का सातवाँ गुण है।* ८ **कामावसायित्त्व**— जिसके द्वारा इच्छा के अनुसार कही भी रहना आदि सब काम हो सके, उसका नाम 'कामावसायित्व' है।

ये ऐश्वर्य के साधनभूत आठ गुण है।

इसी प्रकार ब्रह्मवैवर्तपुराण[2] म उपरोक्त आठ सिद्धियो के अतिरिक्त निम्न सिद्धियाँ और बताई गई है—

१ दूरश्रवण २ परकाया प्रवेश— ३ मनोयायित्व ४ सर्वज्ञत्व ५ अभीष्टसिद्धि ६ अग्निस्तम्भ ७ जलस्तम्भ ८ चिरजीवित्व ९ वायुस्तम्भ १० क्षुत्पिपासानिद्रा स्तम्भन (भूख प्यास तथा नींद का स्तम्भन) ११ वाक्सिद्धि १२ इच्छानुसार मृत प्राणी को बुला लेना १३ सृष्टिकरण १४ प्राणो का आकर्षण।

सिद्धिदात्री भगवती माँ दुर्गा भक्तों और साधको को ये सभी सिद्धियाँ प्रदान करने म समर्थ है।

---

१ कल्याण—संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराणांक वर्ष २१ (१९४७) पृ १३१
२ कल्याण—संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्तपुराणांक वर्ष ३७ (१९६३) पृ ५३३

देवी पुराण के अनुसार भगवान् शिव ने इनकी कृपा से ही इन सिद्धियो को प्राप्त किया था। इनकी अनुकम्पा से ही भगवान् शिव का आधा शरीर देवी का हुआ था। इसी कारण वह लोक मे 'अर्द्धनारीश्वर' नाम से प्रसिद्ध हुए। माँ सिद्धिदात्री चार भुजाओ वाली ह। इनका वाहन सिह है। ये कमल पुष्प पर भी आसीन होती है। इनकी दाहिनी तरफ के नीचे वाले हाथ मे चक्र, ऊपर वाले हाथ मे गदा तथा बायी ओर के नीचे वाले हाथ में शख तथा ऊपर वाले हाथ में कमल पुष्प है। नवरात्र-पूजन मे नवें दिन इनकी उपासना की जाती है। इस दिन शास्त्रीय विधि-विधान और पूर्ण निष्ठा के साथ साधना करने वाले साधक को सभी सिद्धियों की प्राप्ति हो जाती है। सृष्टि में कुछ भी उसके लिए अगम्य नही रह जाता। ब्रह्माण्ड पर पूर्ण विजय प्राप्त करने की सामर्थ्य उसम आ जाती है।

माता की कृपा से इसके भक्त अनन्त दु खरूप ससार से निर्लिप्त रहकर वे सारे सुखो का भोग करते हुए मोक्ष को प्राप्त कर सकते है।

नवदुर्गाओ में माँ सिद्धिदात्री अतिम है। अन्य आठ दुर्गाओ की पूजा-उपासना शास्त्रीय विधि-विधान के अनुमार करते हुए भक्त दुर्गा-पूजा के नवें दिन इनकी उपासना में प्रवृत्त होते है। इन सिद्धिदात्री माँ की उपासना पूण कर लेने के बाद भक्तों और साधका की लौकिक-पारलोकिक सभी प्रकार की कामनाओं की पूर्ति हो जाती है। लेकिन सिद्धिदात्री माँ के कृपापात्र भक्त के भीतर कोई ऐसी कामना शेप वचती ही नही है, जिसे वह पूर्ण करना चाहे। वह सभी सासारिक इच्छाओ, आवश्यकताआ ओर स्पृहाओ से ऊपर उठकर मानसिक रूप से माँ भगवती के दिव्य लोको में विचरण करता हुआ उनके कृपा-रस पीयूप का निरन्तर पान करता हुआ, विपय-भोग शून्य हो जाता है। माँ भगवती का परम सान्निध्य ही उसका सवस्व हो जाता है। इस परम पद को पाने क बाद उसे अन्य किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं रह जाती।[१]

किणसरिया मे माता का मदिर– गौरीशकर हीराचद आझा ने जोधपुर राज्य का इतिहाम प्रथम खण्ड म माता के विपय में निम्नाक्ति वर्णन किया है–

---

१ नवदुर्गा— गीता प्रस, गारखपुर।

किसरिया छोटा-सा गाव परबतसर परगने में है। इसके पास की एक पहाडी पर किसरिया अथवा कैवास माता का मदिर हे, जो प्राचीन है। इसमे वि स १०५६ (ई स ९९९) का एक सस्कृत लेख है, जो चौहान राजा दुर्लभराज और उसके सामत दधीचक (दहिया) वशी चच्च का है। उसमे दुर्लभराज का सिहराज का पुत्र और वाक्पतिराज का पौत्र बतलाया है। इसी तरह दहिया चच्च का वैरिसिह का पुत्र और मेघनाद का पौत्र कहा है। इस मदिर के पास कई स्मारक स्तम्भ भी है, जिनमे से एक दहिया कीर्तिसिह (कीतू) के पुत्र विक्रम का वि स १३०० ज्येष्ठ सुदि १३ (ई स १२४३ ता १ जून) सोमवार का है, जिससे अनुमान होता है कि बुचकले के आसपास का प्रदेश चौहानो के सामत दहिया के अधिकार म था।'

इसी प्रसग मे पुरालेख विद्वान डॉ ब्रजमोहन जावलिया का मत है का मत है कि 'ऐसा प्रतीत होता है कि किसरिया में स्थित कैवास माता पथ्वीराज चोहान के पधान आमात्य केमास दाहिमा की इष्टदेवी रही होगी और इसी कारण उसका कैवास (कैमास) माता नाम पडा होगा। कैमास नागौर का अधिपति था अत नागोर क पारीक ब्राह्मण यदि इसकी पूजा-अचना के लिए आते है ता स्वाभाविक है। कैमास (कैयाय) माता की प्रतिमा के अतिरिक्त एक अन्य प्रतिमा ब्रह्माणी की भी उस मदिर मे प्रतिष्ठापित है। प्रथम मूर्ति को रुद्राणी के नाम स भी जाना जाता है। रुद्राणी का स्वरूप रोद्र होता है क्योंकि यह शत्रुओ का रुलाने वाली, सहार करने वाली देवी है तथा भक्तो की मनोकामना पूर्ण करने वाली है। यही स्थिति अशनायितोदरी (कृशोदरी या बुभूक्षित उदर वाली) देवी के स्वरूप की भी हे। यह विकराल स्वरूप वाली, नतोदर वाली और उभरी हुई पर्शु पक्तियो वाली देवी है। अत रूपसाम्य के कारण इसे ही अशनोदरी (अशनायितोदरी) नाम दिया गया हो, यह सभव है।

अशनायितोदरी (कृशोदरी) का एक मदिर मेवाड म उदयपुर जिले के जगत गाव म है। यह प्रतिमा 'भूखी भडग' के नाम से जानी और पूजी जाती है। वड़ौदा (गुजरात) के राजकीय सग्रहालय म भी कृशोदरी की एक भव्य मूर्ति प्रदशित है।

पारीकों के निम्न अवटको की यह कुलदेवी है—

१	दाख (दक्ष)	उपाध्याय
२	रत्ता	तिवाड़ी

□□□

आदि कुमारिका: कुमारिका माता

हिन्दू धर्मकोष[१] के अनुसार शिवपत्नी पार्वती के अनेक नाम एव गुण शिव के समान ही है। उनका एक नाम 'कुमारी' भी है। तैत्तिरीय आरण्यक (१० १ ७) में उन्हे कन्या कुमारी कहा गया है। स्कन्दपुराण के कुमारी खण्ड में कुमारी का चरित्र और महात्म्य विस्तार से वर्णित है। भारत का दक्षिणान्त अन्तरीप (कुमारी अन्तरीप) उन्ही के नाम से सम्बन्धित है। स्मृतियों में द्वादश वर्षीया कन्या का नाम भी कुमारी कहा गया है–

अष्टवर्षा भवेद् गौरी दशवर्षा च रोहिणी।
सम्प्राप्ते द्वादशे वर्षे कुमारीत्यभिधीयते॥

अर्थात् अष्ट वर्ष की कन्या गौरी ओर दस वर्ष की रोहिणी होती है। बारह वर्ष प्राप्त होने पर वह कुमारी कहलाती है। कुमारी से तात्पर्य है 'कुमारयति आनन्देन क्रीड़ति सा कुमारी।'

'अन्नदाकल्प' आदि आगम ग्रन्थो म कुमारी पूजन के प्रसग में कुमारी अजातपुष्पा (जिसको रजोदर्शन नही हुआ हो) कन्या को कहा गया है। सोलह वर्ष पर्यन्त वह कुमारी रह सकती है। वय भेद से उसके कई नाम बतलाये गये ह

एकवर्षा भवेत् सन्ध्या द्विवर्षा च सरस्वती।
त्रिवर्षा तु त्रिधामूर्तिश्चतुर्वर्षा तु कालिका॥
सुभगा पञ्चवर्षा च षड्वर्षा च उमा भवेत्।
सप्तभिर्मालिनी साक्षादष्टवर्षा च कुब्जिका॥
नवभि कालसङ्कर्षा दशभिश्चापराजिता।
एकादशे तु रुद्राणी द्वादशाब्दे तु भैरवी॥
त्रयोदशे महालक्ष्मी द्विसप्त पीठनायिका।
क्षेत्रज्ञा पञ्चदशभि षोडशे चान्नदा मता॥

---

१ हिन्दू धर्म कोष लेखक राजबलि पाण्डय पृ १९०

एव क्रमण सम्पूज्या यावत् पुष्प न जायते।
पुष्पितापि च सम्पूज्या तत्पुष्पादान कर्मणि॥

भगवती जगदम्बा और शक्ति के विभिन्न रूप है। आदिकाल से ही शक्ति उपासना से प्रेरणा, उत्साह और स्फूर्ति प्राप्त होती रही है। पौराणिक आख्याना मे ब्राह्मी, वैष्णवी रौद्री आदि शक्तिया एव इन शक्तियो की अनन्य शक्तियो का उल्लेख एव कथानक विभिन्न प्रसगो मे आया है।

कुमारिका शक्ति का एक रूप है जिसके सम्बन्ध म पौराणिक ग्रन्थों मे अनेकानेक आख्यान है। शिवपुराण[1] के अनुसार हिमालय को शकर भगवान ने पार्वती को प्रसन्न करने की इच्छा से अपना अन्त पुर बना लिया। कालान्तर मे शुम्भ-निशुम्भ नामक दो दैत्य उत्पन्न हुए जो परस्पर भाई थे। घोर तपस्या कर उन्होने ब्रह्माजी से यह वर प्राप्त कर लिया कि इस जगत् में किसी भी पुरुष मे वे नही मरेग तथा ब्रह्माजी से पार्थना की कि पार्वती देवी के अश से उत्पन्न जो अयोनिजा कन्या उत्पन्न हो, जिसे पुरुष का स्पर्श तथा रति प्राप्त नही हुई हो तथा जो अलघ्य पराक्रम से सम्पन्न हो, उसके प्रति कामभाव से पीडित होने पर हम युद्ध म उसी के हाथो मारे जाये।' उनकी इस प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने तथास्तु' कहकर स्वीकृति दे दी।

ऐसा वर प्राप्त कर इन दैत्यो ने इन्द्रादि समस्त देवताओ को युद्ध में हराकर अनीतिपूर्वक वेदो के स्वाध्याय और यज्ञ आदि से उन्हे रहित कर दिया। इन्द्रादि देवो ने ब्रह्माजी को अपनी कथा सुनाई।

तब ब्रह्मा ने उन दोनो के वध के लिए देवेश्वर शिव से प्रार्थना की— हे प्रभो। आप एकान्त म देवी की निन्दा करके भी जैसे-तैसे उन्हे क्रोध दिलाइये और उनके रूप-रग की निन्दा से उत्पन्न हुई कामभाव से रहित, कुमारीस्वरूपा शक्ति को निशुम्भ और शुम्भ के वध के लिए देवताओ को अर्पित कीजिए।'

ब्रह्माजी के इस तरह प्रार्थना करने पर भगवान् नीललोहित रुद्र एकान्त म पार्वती की निन्दा-सी करते हुए मुस्कुराकर बोले— तुम तो काली हो।' तब सुन्दर वर्ण वाली देवी पार्वती अपने श्याम वर्ण के कारण आक्षेप सुनकर कुपित हो उठीं और पति देव से मुस्कुराकर समाधानरहित वाणी द्वारा बोलीं।

---

१ कल्याण– स० म० शिव पुराण वर्ष ३६ (१९६२) पृ ३८६ ९०

'प्रभो! यदि मेरे इस काले रग पर आपका प्रेम नही है तो इतने दीर्घकाल से अपनी शिक्षा का आप दमन क्यों करते रहे है? कोई स्त्री कितनी ही सर्वाग-सुदरी क्यो न हो, यदि पति का उस पर अनुराग नही हुआ तो अन्य समस्त गुणो के साथ ही उसका जन्म लेना व्यर्थ हो जाता है। स्त्रियो की यह सृष्टि ही पति के भोग का प्रधान अग है। यदि वह उससे वचित हो गयी तो इसका और कहा उपयोग हो सकता है? इसलिए आपने एकान्त मे जिसकी निन्दा की है, उस वर्ण को त्यागकर अब मै दूसरा वर्ण ग्रहण करूगी अथवा स्वय ही मिट जाऊगी।'

ऐसा कहकर देवी पार्वती शय्या से उठकर खडी हो गयी और तपस्या के लिए दृढ निश्चय करके गद्‌गद् कण्ठ से जाने की आज्ञा मागने लगी।

इस प्रकार प्रेम भग होने से भयभीत हो भूतनाथ भगवान् शिव स्वय भवानी को प्रणाम करते हुए बोले– 'प्रिये! मैंने क्रीडा या मनोविनोद के लिए यह बात कही है। मेरे इस अभिप्राय को न जानकर तुम कुपित क्यो हो गयी? यदि तुम पर मेरा प्रेम नही होगा तो और किस पर हो सकता है? तुम इस जगत् की माता हो और मै पिता तथा अधिपति हू। फिर तुम पर मेरा प्रेम न होना कैसे सभव हो सकता है? हम दोनो का वह प्रेम भी क्या कामदेव की प्रेरणा से हुआ है, कदापि नही। क्योकि कामदेव की उत्पत्ति से पहले ही जगत् की उत्पत्ति हुई है। कामदेव की सृष्टि तो मैंने साधारण लोगो की रति के लिए की है। कामदेव मुझे साधारण देवता के समान मानकर मेरा कुछ-कुछ तिरस्कार करने लगा था, अत मैने उसे भस्म कर दिया। हम दोनों का यह लीलाविहार भी जगत् की रक्षा के लिए ही है, अत उसी के लिए आज मैंने तुम्हारे प्रति यह परिहासयुक्त बात कही थी। मेरे इस कथन की सत्यता तुम पर शीघ्र ही प्रकट हो जायेगी।'

देवी ने कहा– 'भगवन्! पति के प्यार से वचित होने पर जो नारी अपने प्राणो का भी परित्याग नही कर देती, वह कुलागना और शुभलक्षणा होने पर भी सत्पुरुषो द्वारा निन्दित ही समझी जाती है। मेरा शरीर गौर वर्ण का नही है, इस बात को लेकर आपको बहुत खेद होता है, अन्यथा क्रीडा या परिहास में भी क्या आपके द्वारा मुझे 'काली कलूटी' कहा जाना सभव हो सकता था। मेरा कालापन आपको प्रिय नही है, इसलिए वह सत्पुरुषो द्वारा

भी निन्दित हैं, अत तपस्या द्वारा इसका त्याग किये बिना अब मै यहा रह ही नही सकती।'

शिव बोले– 'यदि अपनी श्यामता को लेकर तुम्हें इस तरह सताप हो रहा है तो इसके लिए तपस्या करने की क्या आवश्यकता है? तुम मेरी या अपनी इच्छा मात्र से ही दूसरे वर्ण से युक्त हो जाओ।'

दवी ने कहा– 'मै आपसे अपने रग का परिवर्तन नही चाहती। स्वय भी इसे बदलने का सकल्प नही कर सकती। अब तो तपस्या द्वारा ब्रह्माजी की आराधना करके ही मै शीघ्र गौरी हो जाऊगी।'

शिव बाल– 'महादेवि' पूर्वकाल मे मेरी ही कृपा से ब्रह्मा को ब्रह्मपद की प्राप्ति हुई थी। अत तपस्या द्वारा उन्हें बुलाकर तुम क्या करोगी?'

दवी ने कहा, 'इसमें सदेह नही कि ब्रह्मा आदि समस्त देवताओ को आप से ही उत्तम पदा की प्राप्ति हुई है तथापि आपकी आज्ञा पाकर मै तपस्या द्वारा ब्रह्माजी की आराधना करके ही अपना अभीष्ट सिद्ध करना चाहती हूँ। पूर्वकाल मे जब मै सती के नाम से दक्ष की पुत्री हुई थी, तब तपस्या द्वारा ही मैंने आप जगदीश्वर को पति क रूप में प्राप्त किया था। इसी प्रकार आज भी तपस्या द्वारा ब्राह्मण ब्रह्मा को सतुष्ट करके मै गौरी होना चाहती हूँ। ऐसा करने म यहा क्या दोष है? यह बताइये।'

महादेवी के ऐसा कहने पर वामदेव मुस्कराते हुए-से चुप रह गये। देवताओ का कार्य सिद्ध करने की इच्छा से उन्होंने देवी को रोकने के लिए हठ नही किया।

तदन्तर पतिव्रता माता पार्वती पति की परिक्रमा करके उनके वियोग से होने वाले दुख को किसी तरह रोककर हिमालय पर्वत पर चली गयी। उन्हाने पहले सखियो के साथ जिस स्थान पर तप किया था, उस स्थान से उनका प्रेम हो गया था। अत फिर उसी को उन्हनि तपस्या के लिए चुना। तदन्तर माता-पिता के घर जा दर्शन और प्रणाम करके उन्हे सब समाचार बताकर उनकी आज्ञा ले उन्हाने सारे आभूषण उतार दिये और फिर तपोवन में जा स्नान के पश्चात् तपस्वी का परमपावन वेष धारण करके अत्यन्त तीव्र एव परम दुष्कर तपस्या करने का सकल्प किया। वे मन-ही-मन सदा पति क

चरणारविन्दा का चिन्तन करती हुई किसी क्षणिक लिंग में उन्हीं का ध्यान करके पूजन की बाह्य विधि के अनुसार जंगल के फल-फूल आदि उपकरणों द्वारा तीनों समय उनका पूजन करती थीं। 'भगवान शंकर ही ब्रह्मा का रूप धारण करके मेरी तपस्या का फल मुझे देंगे।' ऐसा दृढ़ विश्वास रखकर वे प्रतिदिन तपस्या में लगी रहती थीं। इस तरह तपस्या करते-करते जब बहुत समय बीत गया, तब एक दिन उनके पास कोई बहुत बड़ा व्याघ्र देखा गया। वह दुष्टभाव से वहां आया था। पार्वतीजी के निकट आते ही उस दुरात्मा का शरीर जड़वत् हो गया। वह उनके समीप चित्रलिखित-सा दिखायी देने लगा। दुष्टभाव से पास आये हुए उस व्याघ्र को देखकर भी देवी पार्वती साधारण नारी की भांति स्वभाव से विचलित नहीं हुईं। उस व्याघ्र के सारे अंग अकड़ गये थे। वह भूख से अत्यन्त पीडित हो रहा था और यह सोचकर कि 'यही मेरा भोजन है' निरन्तर देवी की ओर ही देख रहा था। देवी के सामने खड़ा-खड़ा वह उनकी उपासना-सी करने लगा। इधर देवी के हृदय में सदा यही भाव आता था कि यह व्याघ्र मेरा ही उपासक है, दुष्ट वन जन्तुओं से मेरी रक्षा करने वाला है। यह सोचकर वे उस पर कृपा करने लगीं। उन्हीं की कृपा से उसके तीनों प्रकार के मल तत्काल नष्ट हो गये। फिर तो उसकी भूख मिट गयी और उसके अंगों की जड़ता भी दूर हो गयी। साथ ही उसकी जन्मसिद्ध दुष्टता नष्ट हो गयी और उसे निरन्तर तृप्ति बनी रहने लगी। उस समय उत्कृष्ट रूप से अपनी कृतार्थता का अनुभव करके वह तत्काल भक्त हो गया और उस परमेश्वरी की सेवा करने लगा। अब वह अन्य दुष्ट जन्तुओं को खदेड़ता हुआ तपोवन में विचरने लगा। इधर देवी की तपस्या बढ़ी और तीव्र से तीव्रतर होती गई।

देवता शुम्भ आदि दैत्यों के दुराग्रह से दुखी हो ब्रह्माजी की शरण में गये। उन्होंने शत्रुपीड़नजनित अपने दुःख को उनसे निवेदन किया। शुम्भ और निशुम्भ वरदान पाने के घमंड से देवताओं को जैसे-जैसे दुःख देते थे, वह सब सुनकर ब्रह्माजी को उन पर बड़ी दया आई। उन्होंने दैत्य वध के लिए भगवान् शंकर के साथ हुई बातचीत का स्मरण करके देवताओं के साथ देवी के तपोवन का प्रस्थान किया। वहाँ सुरश्रेष्ठ ब्रह्माजी ने उत्तम तप में परिनिष्ठित पार्वती को देखा। वे सम्पूर्ण जगत् की प्रतिष्ठा-सी जान पड़ती थीं। अपने श्रीहरि

के तथा रुद्रदेव के भी जन्मदाता पिता महामहेश्वर की भार्या आर्या जगन्माता गिरिराज नन्दिनी पार्वती जी को ब्रह्माजी ने प्रणाम किया।

देवगणो के साथ ब्रह्माजी को आया दख देवी ने उनके योग्य अर्घ्य दकर स्वागत आदि के द्वारा उनका सत्कार किया। बदले म उनका भी सत्कार और अभिनन्दन करके ब्रह्माजी अनजान की भाति देवी की तपस्या का कारण पूछने लगे।

ब्रह्माजी बाले– देवि! इस तीव्र तपस्या के द्वारा आप यहा किस अभीष्ट मनोरथ की सिद्धि करना चाहती है? तपस्या के सम्पूर्ण फलो की सिद्धि तो आपके ही अधीन है। जो समस्त लोको क स्वामी है, उन्ही परमेश्वर का पति क रूप में पाकर आपने तपस्या का सम्पूर्ण फल प्राप्त कर लिया है अथवा यह सारा ही क्रियाकलाप आपका लीलाविलास है। परन्तु आश्चर्य की बात तो यह है कि आप इतने दिनो से महादवजी के विरह का कष्ट कैसे सह रही है?

देवी ने कहा– ब्रह्मन्! जब सष्टि के आदिकाल म महादेवजी से आपकी उत्पत्ति सुनी जाती है, तब समस्त प्रजाओ मे प्रथम होने के कारण आप मेरे ज्येष्ठ पुत्र हात है। फिर जब प्रजा की वृद्धि के लिए आपके ललाट से भगवान् शिव का प्रादुर्भाव हुआ तब आप मेरे पति के पिता और मेरे श्वसुर होने के कारण गुरुजना की कोटि मे आ जात है और जब मै सोचती हू कि स्वय मेरे पिता गिरिराज हिमालय आपके पुत्र है तब आप मेरे साक्षात् पितामह लगते है। लोक पितामह! इस तरह आप लोकयात्रा क विधाता है। अन्त पुर म पति के साथ जो वत्तान्त घटित हुआ है, उसे मे आपके सामने कैसे कह सकूगी? अत यहॉ बहुत कहने से क्या लाभ। मेरे शरीर में जो यह कालापन है, इसे सात्त्विक विधि से त्यागकर मै गौरवणा हाना चाहती हूँ।'

ब्रह्माजी बाल दवि! इतने ही प्रयोजन के लिए आपने ऐसा कठोर तप क्या किया? क्या इसके लिए आपकी इच्छा मात्र ही पर्याप्त नही थी? अथवा यह आपकी एक लीला ही है। जगन्माता! आपकी लीला भी लोकहित के लिए ही हाती है। अत आप इसके द्वारा मेरे एक अभीष्ट फल की सिद्धि कीजिए। निशुम्भ और शुम्भ नामक दो दैत्य है, उनको मैने वर द रखा है। इससे उनका घमड बहुत बढ गया है और वे देवताओ को सता रहे है। उन दोना को आपके ही हाथ से मारे जाने का वरदान प्राप्त हुआ है। अत अब

विलम्ब करने से कोई लाभ नहीं। आप क्षणभर के लिए सुस्थिर हो जाइये। आपके द्वारा जो शक्ति रची या छोड़ी जाएगी, वही इन दोनों के लिए मृत्यु हो जायेगी।'

ब्रह्माजी के इस प्रकार प्रार्थना करने पर गिरिराजकुमारी देवी पार्वती सहसा अपने काली त्वचा के आवरण को उतारकर गौरवर्णा हो गयीं। त्वचा कोष (काली का त्वचामय आवरण) रूप से त्यागी गई जो उनकी शक्ति थी उसका नाम 'कौशिकी' हुआ। वह काले मेघ के समान कान्तिवाली कृष्णवर्णा कन्या हो गयी। देवी की वह मायामयी शक्ति ही योगनिद्रा और वैष्णवी कहलाती है। उसके आठ बड़ी-बड़ी भुजाएँ थीं। उसने उन हाथों में शंख, चक्र और त्रिशूल आदि आयुध धारण कर रखे थे। उस देवी के तीन रूप हैं– सौम्य, घोर और मिश्र। वह तीन नेत्रों से युक्त थी। उसने मस्तक पर अर्धचन्द्र का मुकुट धारण कर रखा था। उसे पुरुष का स्पर्श तथा रति का योग नहीं प्राप्त था और वह अत्यन्त सुन्दरी थी। देवी ने अपनी इस सनातन शक्ति को ब्रह्मा जी के हाथ में दे दिया। वही दैत्यप्रवर शुम्भ और निशुम्भ का वध करने वाली हुई। उस समय प्रसन्न हुए ब्रह्माजी ने उस पराशक्ति को सवारी के लिए एक प्रबल सिंह प्रदान किया, जो उनके साथ ही आया था। उस देवी के रहने के लिए ब्रह्माजी ने विन्ध्यगिरि पर वास स्थान दिया और वहां नाना प्रकार के उपचारों से उनका पूजन किया। विश्वकर्मा ब्रह्मा के द्वारा सम्मानित हुई वह शक्ति अपनी माता गौरी को और ब्रह्मा जी को क्रमशः प्रणाम करके अपने ही अंगों से उत्पन्न और अपने ही समान शक्तिशालिनी बहुसंख्यक शक्तियों को साथ ले दैत्यराज शुम्भ-निशुम्भ को मारने के लिए उद्यत होकर विन्ध्यपर्वत को चली गई। उसने समरांगण में उन दोनों दैत्यराजों को मार गिराया।

कुमारिका के प्राकट्य के सम्बन्ध में श्री देवी भागवत[१] में भी इसी प्रकार का कथानक आया है कि देवता जब दैत्यों से अत्यन्त संतप्त थे, तब उन्होंने देवी की स्तुति की। देवी ने अपने विग्रह से एक दूसरा रूप प्रगट कर दिया। जब भगवती पार्वती के शरीर से जगदम्बा साकार रूप से प्रगट हुई, तब सम्पूर्ण जगत् उन्हें 'कौशिकी' नाम से पुकारने लगा। पार्वती के शरीर

---

१ कल्याण– संक्षिप्त श्री देवी भागवत अंक वर्ष ३४ (१९६०) पृ २६०

से भगवती कौशिकी के निकल जाने पर शरीर क्षीण हो जाने के कारण पार्वती का रूप काला पड गया। अत वे कालिका' नाम से विख्यात हुई। स्याही के समान काले वर्ण से वे बडी भयकर जान पडती थी। भक्तो के सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण कर देना उनका स्वाभाविक गुण था। वे कालरात्रि नाम से प्रसिद्ध हुई। भगवती जगदम्बा का एक दूसरा मनोहर रूप भी विराजमान था। सम्पूर्ण भूषण शुभ गणो से वह सम्पन्न था। तदन्तर भगवती जगदम्बा हसकर देवताओ से कहने लगी– 'अब तुम लोग निर्भय होकर अपने स्थान पर विराजमान रहो। मै शत्रुओ का सहार कर डालूँगी। तुम्हारा कार्य सम्यक् प्रकार से सम्पन्न करने के लिए मै समरागण म विचरूगी। तुम्हे सुखी बनाने के लिए शुम्भ-निशुम्भ आदि सभी दानवा का म वध कर दूगी। इसी माता ने दैत्या का सहार किया।

नव दुगाओं म दुर्गाजी की आठवी शक्ति महागौरी को कुमारी रूप म माना है। इनकी आयु आठ वर्ष की मानी गई है– अष्टवर्षा भवेद् गारी'।

कुमारिका का एक कथानक कन्याकुमारी क रूप म भी आता है। कल्याण के शक्ति उपासना अक[1] म इसका वर्णन निम्न प्रकार किया गया है।

कन्याकुमारी शक्तिपीठ[2]

कन्याकुमारी एक अन्तरीप है। यह भारत की अतिम दक्षिणी सीमा है। इसके एक ओर बगाल की खाडी, दूसरी आर अरब सागर तथा सन्मुख भारत महासागर है। कन्याकुमारी म सूर्योदय और सूर्यास्त का दृश्य अत्यन्त भव्य होता है। बादल न होने पर समुद्र जल से ऊपर उठते या समुद्र जल से पीछे जाते हुए सूर्यबिम्ब का दर्शन अत्यधिक आकर्षक होता है। इसे देखने के लिए प्रतिदिन प्रात -साय भीड लगी रहती है।

बगाल की खाडी के समुद्र म सावित्री, गायत्री, सरस्वती, कन्या, विनायक आदि तीर्थ है। देवी मदिर के दक्षिण मातृतीर्थ, पितृतीर्थ और भीमातीर्थ है। पश्चिम में थोडी दूर स्थाणु (शिव) तीर्थ है। समुद्र तट के घाट पर स्नान कर ऊपर दाहिनी ओर श्रीगणेश जी का दर्शन करने के बाद कुमारी भगवती का दर्शन किया जाता है। मदिर म द्वितीय प्राकार के भीतर इन्द्रकान्त विनायक है, जिनकी स्थापना देवराज इन्द्र द्वारा की हुइ बतायी गयी है।

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४३५
२ लेखक ने माता के दर्शन दि ३ १ १९९९ को किये। साथ मे शोभित व मोहित थे।

कई द्वारो के भीतर जाने पर कुमारी देवी के दर्शन होते हे। देवी की यह मूर्ति प्रभावोत्पादक तथा भव्य है। देवी के हाथ मे जपमाला हे। विशेष उत्सवो पर देवी का हीरक आदि रत्नो से शृगार किया जाता हे। प्रतिदिन रात्रि म भी देवी का विशेष शृगार दर्शनीय होता है।

पौराणिक आख्यान– महाशक्ति कन्याकुमारी की कथा के विषय में पुराणों मे बताया गया है कि बाणासुर ने घोर तपस्या करके भगवान् शकर को प्रसन्न किया और अमरत्व का वर मॉगा। शकर जी ने कहा– 'कुमारी कन्या के अतिरिक्त तुम सबसे अजेय रहोगे।' शिवजी से वर प्राप्त कर घोर उत्पाती बने बाणासुर ने देवताओ के लिए त्राहि-त्राहि मचा दी। तब भगवान् विष्णु के परामश से एक महायज्ञ का आयोजन किया गया। देवताओं के इस यज्ञ के कुण्ड से चिद् (ज्ञानमय) अग्नि से माता दुर्गा अपने एक अश से कन्यारूप म प्रगट हुई।

देवी ने पति रूप मे भगवान् शकर को पाने के लिए दक्षिण समुद्र के तट पर कठोर तपस्या प्रारम्भ कर दी। तपस्या से प्रसन्न होकर आशुतोष ने उनका पाणिग्रहण करना स्वीकार कर लिया। देवताआ को चिता हो गयी कि कुमारी का शकर से विवाह हो जायेगा तो बाणासुर का वध न हो पायेगा। अतएव उन्होंने नारद जी को पकडा। विवाहार्थ आ रहे भगवान् शकर को 'शुचीन्द्रम्' स्थान पर नारद ने अनेक प्रपचो म इतनी देर तक रोक लिया कि मुर्गा बाग देने लगे और प्रात काल हो गया। विवाह मुहूर्त टल जाने से भगवान् शकर वही 'स्थाणु' (स्थिर) हो गये। अपना अभीष्ट पूण न होने से देवी भी पुन तपस्या मे जुट गयी जा अभी तक कुमारी रूप में यहाँ तपस्या कर रही हे।

देवताओ की माया काम कर गयी ओर बाणासुर को भी अपना अन्त अपने ही हाथो करने की सूझी। अपने दूतो द्वारा तपस्या म लीन देवी के अद्भुत सोन्दय का वृत्तान्त सुनकर वह देवी के निकट आया और विवाह के लिए हठ पकड करके बेठ गया। फलत देवी ओर बाणासुर के बीच घोर युद्ध हुआ। अन्ततोगत्वा देवी के हाथो बाणासुर का वध हो गया और समस्त देवगण आश्वस्त हा गये।

जसा कि उपरोक्त पौराणिक कथानकों मे आया है कुमारिका को कौशिकी भी कहते है तथा विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करने के कारण उसे विन्ध्यवासिनी भी कहते है। माता का यह स्थान उत्तर रेल्वे के मिर्जापुर स्टेशन से ६ कि मी विन्ध्याचल स्टेशन गगा तट के पास बस्ती के मध्य ऊँचे स्थान पर है। मदिर म सिह पर खडी ढाई हाथ की देवी की मूर्ति है। मदिर के पश्चिम में एक आगन है जिसके पश्चिम मे बारह भुजा देवी है, दूसर मण्डप म खपरेश्वर शिव है तथा दक्षिण की ओर महाकाली की मूर्ति है। उत्तर की ओर धर्मध्वजा देवी है। नवरात्रा म यहाँ मेला लगता है। मदिर प्रागण मे सैकडा ब्राह्मण दुर्गा सप्तशती का पाठ करते है। देवी भागवत म उल्लखित १०८ शक्तिपीठो म विन्ध्यवासिनी की गणना है। पुलिस थाने क पास बटुक भैरवजी का मदिर है।

राजस्थान म कुमारी क्षेत्र[१]– कोटा से ४४ मील पर इन्द्रगढ स्टेशन से ६ मील पूर्वोत्तर एक झील है यह प्राचीन कुमारिका क्षेत्र है। यहाँ प्राचीन भग्नावशेष मिलते है। झील के पश्चिम म भगवान् शकर का मदिर है। वहाँ एक कुण्ड शीतल जल का है और एक गर्म जल का है। कार्तिक पूर्णिमा तथा सोमवती अमावस्या को यहा मेला भरता है।

जैसा कि पूर्व मे लिखा गया है– अन्नदाकल्प आदि आगम ग्रन्थों में कुमारी पूजन की विधि दी गयी है। अन्नदाकल्प में दी गयी पूजा विधि निम्नोक्त है—

अथान्यत साधन वक्ष्ये महाचीनक्रमादभवम्।
यनानुष्ठितमात्रण शीघ्र देवी प्रसीदति।।
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्या कुह्वा या रविसक्रमे।
कुमारीपूजन कुयाद्यथा विभवामात्मन ।।
वस्त्रालङ्करणाद्यैश्च भक्ष्यभोज्यै सुविस्तरै ।
पञ्चतत्त्वादिभि सम्यग्देवीबुद्ध्या सुसाधक ।।'

माता की मान्यता समाज के सभी वर्गो म है। पारीको के निम्न अवटकों की यह कुल देवी है—

अजमेरा	जाशी
कुलत्था	जोशी

---

[१] कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) पृ २८३

सोतड़ा*	जोशी

---

* कई स्थानों पर कुमारिका के सातड़ा जोशियों की कुलदेवी होने का उल्लेख है वहीं कुछ स्थानों पर इनकी कुलदेवी करणी माता बताई गई है। करणी माता का प्रादुर्भाव आज से लगभग ६०० वर्ष पूर्व हुआ था जबकि पारीकों का यह अवटंक आदि है जिसकी ज्ञात प्रथम जानकारी संवत् ९०० की है जब पुष्कर में ब्राह्मणों की जनगणना पारीक कुलभूषण सुधन्वाजी ने कराई थी अतः बाद में भगवती स्वरूपा माँ करणी द्वारा सातड़ा अवटंक के पारीकों की मनोकामना पूर्ण करने के कारण उन्होंने करणी माता को भी अपनी कुल देवी के रूप में पूजना प्रारम्भ कर दिया है।

□□□

जसा कि उपरोक्त पौराणिक कथानको मे आया है कुमारिका को कौशिकी भी कहते है तथा विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करने के कारण उसे विन्ध्यवासिनी भी कहते है। माता का यह स्थान उत्तर रेल्वे के मिर्जापुर स्टेशन स ६ कि मी विन्ध्याचल स्टशन गगा तट के पास बस्ती के मध्य ऊँचे स्थान पर है। मदिर मे सिह पर खडी ढाई हाथ की देवी की मूर्ति है। मदिर के पश्चिम मे एक आगन है जिसके पश्चिम म बारह भुजा देवी है, दूसरे मण्डप मे खपरेश्वर शिव ह तथा दक्षिण की ओर महाकाली की मूर्ति है। उत्तर की ओर धर्मध्वजा देवी है। नवरात्रो म यहाँ मेला लगता है। मदिर प्रागण मे सैकड़ो ब्राह्मण दुर्गा सप्तशती का पाठ करते है। देवी भागवत मे उल्लखित १०८ शक्तिपीठो म विन्ध्यवासिनी की गणना है। पुलिस थाने के पास वटुक भैरवजी का मदिर है।

राजस्थान म कुमारी क्षेत्र[१]— कोटा से ४४ मील पर इन्द्रगढ स्टेशन से ६ मील पूर्वोत्तर एक झील है यह प्राचीन कुमारिका क्षेत्र है। यहाँ प्राचीन भग्नावशेष मिलते है। झील के पश्चिम म भगवान् शकर का मदिर है। वहाँ एक कुण्ड शीतल जल का है ओर एक गर्म जल का है। कार्तिक पूर्णिमा तथा सामवती अमावस्या को यहाँ मेला भरता है।

जैसा कि पूर्व म लिखा गया है— अन्नदाकल्प आदि आगम ग्रन्थों म कुमारी पूजन की विधि दी गयी है। अन्नदाकल्प' में दी गयी पूजा विधि निम्नोक्त है—

अथान्यत् साधन वक्ष्ये महाचीनक्रमादभवम्।
येनानुष्ठितमात्रेण शीघ्र देवी प्रसीदति।।
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्या कुह्वा वा रविसक्रमे।
कुमारीपूजन कुर्याद्यथा विभवामात्मन ।।
वस्त्रालङ्करणादयैश्च भक्ष्यैर्भोज्ये सुविस्तरै ।
पञ्चतत्त्वादिभि सम्यग्देवीबुद्धया सुसाधक ।।'

माता की मान्यता समाज के सभी वर्गो म है। पारीक क निम्न अवटका की यह कुल दवी है—

अजमरा	जाशी
कुलत्था	जाशी

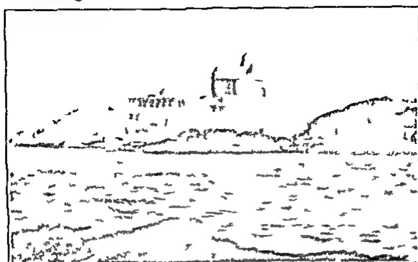
१ कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) पृ २८३

सोतड़ो* जोशी

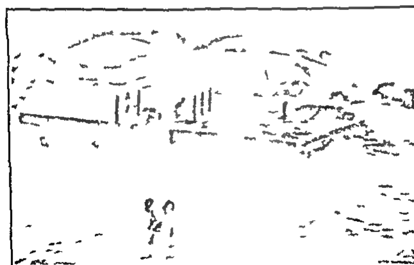
---

* कई स्थानों पर कुमारिका क सातडा जाशियों की कुलदवी हान का उल्लख है वहीं कुछ स्थाना पर इनकी कुलदवी करणी माता बताई गई है। करणी माता का प्रादुर्भाव आज स लगभग ६०० वर्ष पूर्व हुआ था जबकि पारीकों का यह अवटक आदि है जिसकी ज्ञात प्रथम जानकारी सवत् ९०० की है जब पुष्कर म ब्राह्मणों की जनगणना पारीक कुलभूषण सुधन्वाजी न कराई थी अत बाद म भगवती स्वरूपा माँ करणी द्वारा सातड़ा अवटक क पारीकों की मनाकामना पूर्ण करन क कारण उन्हान करणी माता का भी अपनी कुल दवी क रूप म पूजना प्रारम्भ कर लिया हा।

□□□



स्वामी विवेकानन्द मेमोरियल



बाथिग घाट

आदि शक्ति : आद सगत माता

भगवती दुर्गा को ही मुख्य अथवा आदिशक्ति माना जाता है। अन्यान्य शक्तिया उसकी ही विभूति मानी जाती है। देवी की नौ मूर्तिया है, जिन्हें नवदुर्गा कहते है। इनके पृथक्-पृथक् नाम बताये गये है यथा–

प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी है। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को कूष्माण्डा कहते है। पाचवी दुर्गा का नाम स्कन्दमाता है। देवी के छठे रूप को कात्यायनी कहते है। सातवा कालरात्रि ओर आठवा स्वरूप महागौरी के नाम से प्रसिद्ध है। नवी दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए है। जो मनुष्य अग्नि म जल रहा हो, रणभूमि मे शत्रुओ से घिर गया हो, विषम सकट मे फस गया हो तथा इस प्रकार भय से आतुर होकर जो भगवती दुर्गा की शरण मे प्राप्त हुए हो, उनका कभी कोई अमगल नही होता। युद्ध के समय सकट म पडने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नही दिखायी देती। उन्हे शोक, दु ख और भय की प्राप्ति नही होती।[१]

जिन्हाने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया हे, उनका निश्चय ही अभ्युदय हुआ है। देवी की अन्य शक्तियो म चामुण्डा देवी प्रत पर आरूढ होती है। वाराही भैसे पर सवारी करती है। एन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड पर ही आसन जमाती है। माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ होती हे। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान् विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मीदेवी कमल के आसन पर विराजमान हे और हाथों मे कमल धारण किये हुए है। वषभ आरूढ इश्वरी देवी ने श्वत रूप धारण कर रखा है। ब्राह्मी देवी हस पर बैठी हुई हे और सब प्रकार के आभूषणो से विभूषित है। इस प्रकार ये सभी माताए सब प्रकार की योगशक्तियों से सम्पन्न हे। इनके सिवा ओर भी बहुत-सी देविया है, जो अनेक प्रकार क आभूषणो की शोभा से युक्त तथा नाना प्रकार के रत्नो से सुशोभित हे। ये सम्पूर्ण देविया क्रोध में भरी हुई है और

---

१ कल्याण– मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक– वर्ष २१ (१९४७) पृ ५ ६

भक्तों की रक्षा के लिए वाहन पर बैठी दिखाई देती है। शख, चक्र, गदा, शक्ति हल और मुसल, खेटक और तोमर परशु तथा पाश, कुन्त और त्रिशूल एव उत्तम शार्ङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों मे धारण करती है। दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तो को अभयदान देना और देवताओं का कल्याण करना— यही उनके शस्त्र धारण का उद्देश्य है। 'महान् रौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम महान् बल और महान् उत्साहवाली देवी! तुम महान् भय का नाश करने वाली हो। तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है। शत्रुओ का भय बढाने वाली जगदम्बिके! मेरी रक्षा करो।'

श्रीमद्देवी भागवत म वेदो ने भगवती देवी की स्तुति करते हुए कहा है[१]—

देवी आप महामाया हे, जगत् की सृष्टि करना आपका स्वभाव है, आप कल्याणमय विग्रह धारण करने वाली एव त्रिगुणा है। अखिल जगत् आपका शासन मानता हे तथा भगवान् शकर के आप मनोरथ पूर्ण किया करती है। सम्पूर्ण प्राणियो को आश्रय देने के लिए आप पृथ्वीस्वरूपा है, प्राणधारियो के प्राण भी आप ही हैं। धी, श्री, कांति, क्षमा, शाति, श्रद्धा, मेधा, धृति और स्मृति ये सभी आपके ही नाम है। ॐकार म जो अर्ध मात्रा है, वह आपका ही निर्विशेष रूप है। गायत्री म आप प्रणव है। जया विजया धात्री, लज्जा-कीर्ति स्पृहा और दया इन नामो से आप प्रसिद्ध है। पुराणो ने जो घोषणा की है कि ब्रह्मा म जो सर्जन-शक्ति है, विष्णु म जो पालन-शक्ति है तथा शिव म जो सहार-शक्ति है एव सूर्य मे जो प्रकाशन-शक्ति है तथा शेष और कच्छप म जो पृथ्वी को धारण करने की शक्ति है अग्नि मे जलाने की और वायु म जो हिलाने-डुलाने की शक्ति है— यो सब म जो शक्ति विद्यमान है वही आद्याशक्ति है। गौरी, ब्राह्मी, रौद्री, वाराही, वैष्णवी शिवा, वारुणी, कौबेरी, नारसिंही और वासवी सभी इसके रूप है। परमात्मा और आद्याशक्ति दोनो एक रूप, चिन्मयस्वरूप, निर्गुण और निर्मल है। जो शक्ति है वही परमात्मा है और जो परमात्मा है, वही शक्ति है। भगवती देवी ने अवतार लेने का प्रयोजन इस प्रकार बताया है— श्रेष्ठ पुरुषो की रक्षा करना, वेदो

---

१ कल्याण– सक्षिप्त श्रीदेवीभागवत– अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ १२

को सुरक्षित रखना और जो दुष्ट है, उन्हे मारना– ये मेरे कार्य है, जो अनेक अवतार लेकर मेरे द्वारा किये जाते है। प्रत्येक युग मे मै ही उन अवतारो को धारण करती हू।

गीता म भी भगवान श्रीकृष्ण ने ऐसा ही कहा है–

परित्राणाय साधूना विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥
(४/८)

पर ब्रह्मस्वरूपा भगवती देवी के दो स्वरूप है– निर्गुण और सगुण। सगुण के भी दो भेद है– निराकार, साकार। इस आद्या शक्ति से सारे ससार की उत्पत्ति होती है। उपनिषदो मे इस आद्याशक्ति को पराशक्ति के नाम से कहा गया है।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, ब्रह्माजी की कमल द्वारा उत्पत्ति, मधु और कैटभ नामक दो दानवो की विष्णु के कान के मैल से उत्पत्ति, ब्रह्मा का विष्णु दर्शन, योगनिद्रा का भगवान् विष्णु के विग्रह से निकलना, भगवान् विष्णु एव दैत्य मधु-कैटभ का घमासान युद्ध मधु कैटभ का युद्ध म मारा जाना आदि कथानक विस्तार से अनेकानेक ग्रन्थो म दिये गये है। मधु और कैटभ के वध के बाद ब्रह्मा और विष्णु दो ही थे, वहीं रुद्र भी प्रगट हो गये। तीनो को आद्याशक्ति के दर्शन हुए।

देवी आद्याशक्ति अपने स्वरूप का वर्णन करते हुए कहती है– मे और ब्रह्म एक ही है। मुझमे और ब्रह्म में किञ्चिन्मात्र भेद नही है। जो वे है, वही मै हू, और जो म हू, वही वो है, ऋग्वेद क दशम मण्डल के १२५व सूक्त में अदि शक्ति जगदम्बा कहती है— 'मै ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी हूँ, मै ही सारे कर्मो का फल भुगताने वाली और ऐश्वर्य देने वाली हू। मे चेतन एव सर्वज्ञ हू। मै एक होते हुए भी अपनी शक्ति के अनेक नामरूप भासती हू। मै मानवजाति की रक्षा के लिए युद्ध ठानती हू और शत्रु का सहार कर पृथ्वी पर शाति की स्थापना करती हू। मै ही भूलोक और स्वर्ग लोक का विस्तार करती हू। मे जनक की भी जननी हू। जैसे वायु अपने आप चलती है, वैसे ही म भी अपनी इच्छा से समस्त विश्व की स्वय रचना करती हू। मै सर्वथा स्वतत्र हू। मुझ पर किसी का प्रभुत्व नही है। अखिल विश्व मेरी विभूति है।'

त्रिशक्ति–तत्त्व



करणी माता

भक्तो के हितार्थ, दुष्टो का विनाश करने, समाज मे सुख-शाति व धन-धान्य पूर्ण करने हेतु कइ बार माँ भगवती मानवीय रूप मे भी अवतरित होती है। ऐसी ही भगवती माँ के अशावतार के रूप में माँ करणी ने इस भू-धरा पर अवतरित होकर न केवल अपने भक्तो की मनोकामना पूर्ण की अपितु अपने अद्‌भुत चमत्कारो से मानव मात्र को उपकृत किया।

करणी माता मानवीय रूप मे भगवती जगदम्बा का अशावतार थी किन्तु आज भी वे अपने भक्तो की आर्त्त पुकार पर प्रत्यक्ष होकर उनके दु ख-दर्द को हरती है एव उनकी मनोकामना पूर्ण करती है, बस आवश्यकता केवल इस बात की है कि भक्त उन्हे एक बार सच्चे हृदय से याद करे, पुकारे।

करणी माता, आवड़माता जो भगवती का ही अशावतार हे, की भक्त थी, उनकी सेवा करती थी। आवड माता, जो सर्वमान्य लोकदेवी है आदि-शक्ति हिगलाज का अवतार मानी जाती है। सती के मत देह के विभिन्न अग जहाँ-जहाँ गिरे वे शक्तिपीठ हो गये। इसके पूर्व कि हिगलाज शक्तिपीठ एव करणीधाम का वर्णन किया जावे, भगवती सती के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करलें, क्योकि माँ करणी भगवती सती का ही अवतार है।

भगवती सती भगवती सती की कथा जगत् प्रसिद्ध है। पुराणों म इसके चरित का विशद वर्णन है। तन्त्रचूडामणि, कल्याण के शिवाङ्क, शक्ति अक, शिवपुराणाङ्क, गणेशाङ्क, शक्ति उपासना अक, शिवोपासाङ्क तथा सक्षिप्त देवी भागवत अक मे माँ सती का विस्तार से वर्णन किया गया है।

इस कथा का सक्षिप्त कथानक इस प्रकार है कि दक्ष के यहा देवी शिवा (सती) का अवतार हुआ। दक्ष ने अपनी पुत्री का नाम उमा[१] रखा। सती का विवाह भगवान् शिव से हुआ। दक्ष ने एक बार यज्ञ किया जिसमे सभी देवताओ को आमत्रित किया, किन्तु भगवान् शिव को निमत्रण नहीं भेजा।

---

१ सक्षिप्त शिव पुराणाक गीताप्रस, गोरखपुर पृ १३८

● लेखक माता के दर्शनार्थ देशनोक दि १८ १० ९९ को गया। साथ में चि रोहित व धर्मपत्नी सुशीला थे।

उमा को जब इसकी जानकारी हुई तो उसने भगवान् शिव से यज्ञ में चलने की प्रार्थना की। भगवान् शिव ने कहा कि बिना निमत्रण कही भी नहीं जाना चाहिए भले ही वह तुम्हारे पिता का घर ही क्यो न हो। सती के अति आग्रह पर भगवान् आशुतोष न सती को यज्ञ म जाने की अनुमति दे दी। यज्ञ स्थल पर जब सती उमा पहुची तो उसे यह देखकर अत्यन्त क्षोभ हुआ कि सभी देवता अपने स्थान पर आसीन है, किन्तु भगवान् शिव के लिए यज्ञस्थल पर कोई स्थान नही रखा गया है। यही नहीं, उमा का भी वहाँ सत्कार होने के स्थान पर, बिना बुलाय आने पर तिरस्कार-सा ही हुआ। सती इस प्रकार के व्यवहार स अति क्षुब्ध हुई और उसने योगाग्नि म अपने शरीर को भस्म कर दिया।

भगवान् शकर को जब सती के भस्म होने का समाचार ज्ञात हुआ तो उनकी कोपाग्नि ने त्रिलोक मे प्रलय मचा दिया। दक्ष का यज्ञ नष्ट कर दिया। भगवान् शकर सती के विरह म अधीर हो गय तथा यज्ञस्थल पर वीरभद्रादि अनुचरों के साथ जाकर दक्ष का मार डाला और यज्ञ विध्वस्त कर दिया। शिवजी सती की मृत देह को कधे पर रख चारों ओर उद्‌भट भाव मे नाचते हुए घूमन लग। यह देखकर भगवान् विष्णु ने अपन चक्र से सती का अग-प्रत्यग काट डाला। सती की मृत देह के अग-प्रत्यग इक्यावन खडा में विभक्त हो जिस जिस स्थान पर गिरे थे, वहा एक-एक भैरव और एक-एक शक्ति नाना प्रकार की मूर्ति धारण कर अवस्थान करती है, उन्ही सब स्थानो का नाम महापीठ पडा है।[१]

सती का ब्रह्मरध्र हिंगुला स्थान पर गिरा। 'यह स्थान हिंगलाज बलाचिस्तान के लासबेला स्थान म हिंगोस नदी के तट पर कराची से ९० मील उत्तर-पश्चिम (पश्चिम पाकिस्तान) में है। यहा गुफा के अदर ज्योति के दर्शन होते है।'[२] करणी माता को सती का ही अशावतार माना जाता है।

करणी माता के चरित एव चमत्कारा के वर्णन की यो तो अनेकानेक पुस्तके है किन्तु अभी हाल ही में शार्दूलसिह जी कविया द्वारा रचित 'करणी-कथामृत' नामक शोध-ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ है जिसम करणी माता

१ कल्याण शक्ति अक वर्ष ९ (१९३४) पृ ६४४
२ कल्याण तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) पृ ५१५

के जीवन चरित एव उसके चमत्कारों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। कृपालु प्रकाशक महोदय की अनुमति से माता-करणी चरित के कुछ अश एव कथानक-करणी-कथामृत[१] स यथावत् उद्धृत् किये जा रहे है।

आदि शक्तिपीठ हिंगलाज

''सुदूर पश्चिम मे मकरान पर्वतमाला मे बलूचिस्तान के लासबेला क्षेत्र में ज्योतिर्मयी माता आदि शक्ति हिंगलाज की गुफा है। यह उन्नत विशाल गुफा हिंगुलालय के नाम से विख्यात है। हिंगुलालय सबसे बडा आदि शक्ति पीठ है। समस्त भारत मे युगों से हिंगलाज माई की सर्वाधिक मान्यता रही है।

' कहते है कि भगवती सती का वराग यहाँ गिरा था। मातेश्वरी की माग हिंगलू (कुमकुम) से सुशोभित थी, इससे हिंगुलालय कहलाता है। गुफा के बाहर दीवाल पर शक्ति का प्रतीक त्रिशूल अंकित है। अंधेरी गुफा के अंतिम भाग मे माता का सिंदूर-वेष्टित पाषाण-पाट लालवस्त्र से आच्छादित है। पावन गुफा दीपज्योति से आलोकित है।

प्राचीन काल से ही गिरिनामा सन्यासी, नाथ अवधूत, देवीपुत्र चारण और अनेक श्रद्धालु भक्त हिंगुलालय की यात्रा करते आये है। इस पावन यात्रा को माई-स्पर्श करना कहते है। श्रद्धालु यात्री माई के पाट पर लाल चूंदडी चढाते हे। छडीदार पूजा करवाता है। यात्रीगण रात भर माता का भजन-कीर्तन करते रहते है। शीघ्र प्रात शरणकुण्ड मे स्नान कर कटिवस्त्र धारण कर गुफा में पुन प्रवेश करते है। कोटडी का पीर यात्री युगल को पाट के नीचे बनी अँधेरी सँकरी गुफा मे प्रवेश करने की अनुमति देता है। जब दोनो यात्री माता की गर्भ योनि से बाहर आते है तो चागली माई चदेले की घूटी व गुड की डली देती है।[२] माई के स्पर्श कर लेने पर यात्री युगल सहोदर भ्राता बन जाते हे। पीढियो तक इस सम्बन्ध को निभाते है। द्विजन्मा और निष्पाप हो जाते है।

---

१ करणी कथामृत (द्वितीय सस्करण) ले शार्दूलसिंह कविया प्रकाशक डा एम सी खण्डेलवाल एम सी खण्डेलवाल एण्ड सस बी २१० जनता कॉलोनी जयपुर ३०२ ० ४ विस्तृत अध्ययन एव जानकारी के लिए उक्त पुस्तक पढ़ें।

२ हिंगलाज देवी की पूजा चागला खाप के मुसलमान करते हैं जो चारणों से ही मुसलमान बने हुए है तथा अपने को चारण मुसलमान कहते है। हिंगलाज देवी की पूजा करने का अधिकार चागला खाप की ब्रह्मचारिणी कन्या को मिला हुआ है। वह चागली माई कहलाती है। चागली माई साक्षात् शक्ति स्वरूपा ही मानी जाती है। चागली माई अपनी हाथ नई कन्या के सिर पर रखकर नई चागली माई तय करती है। उसे माई की ज्योति जताने का आशीर्वाद देती है। इसी परिवार का मुखिया कोटड़ी का पीर कहलाता है।
– लोक पूज्य देवियां ले ग भवरसिंह साभोर।

चैत्र मास मे प्रति वर्ष कराची के स्वामीनारायण मदिर मे यात्रियो का सघ उठता है, जिसमें अधिकाश सिधी और गुजराती भाग लेते है। पिछली बार राजस्थानी इस पावन यात्रा मे सम्मिलित हुए जिनमे एक यात्री लेखक को अनायास ही मिल गया। अनेक सुखद प्रसग सुनाये।

आद्या शक्ति हिंगलाज के मुख्य एकादश धाम है। कागडा की ज्वालामुखी, असम मे कामाख्या, मदुरा की मीनाक्षी, दक्षिण मे कन्याकुमारी, गुजरात मे अम्बाजी, मालवा की कालिका, वाराणसी की विशालाक्षी, गया की मगला देवी बगाल की सुन्दरी और नेपाल की गुह्येश्वरी। हिंगुलालय सहित इन ग्यारह रूपो मे भगवती हिंगलाज पूजा ग्रहण करती है।

'कहते है भगवती सती के अवयव और आभूषण बावन स्थानो पर बिखर गये थे। यह सब शक्तिपीठ कहलाते है[1] जहाँ भगवती के सग बावन भैरव निवास करते है। हिंगुलालय का भैरव भीमलोचन है। भारत मे हिंगलाज माता के अनेक मदिर है जिनमे जैसलमेर जिले के लुद्रवा ग्राम मे हिंगलाज माता का प्राचीन मदिर है। मदिर भूमिगत हो गया है, जिसमे सीढियाँ उतर कर नीचे जाना होता है। बाडमेर जिले मे सिवाणा तहसील मे छप्पन की पहाडियो मे कोयलिया गुफा मे हिंगलाज माता का प्रसिद्ध मदिर है। रमणीक स्थान है। इस जनपद मे माता की बडी मान्यता है। पुरी सन्यासी माता के पुजारी है।

सीकर जिले मे फतेहपुर के दक्षिण मे राष्ट्रीय राजमार्ग के निकट एक ऊँचे टीले पर महात्मा बुद्ध गिरी की मढी है। चारो ओर आरण है। भव्य भवन है। सीढियाँ चढकर ऊचाई पर विशाल द्वार है। सामने हिंगलाज माता का सुरम्य मदिर है। महात्मा बुद्ध गिरी महान साधक हुए है। उनकी अभिलाषा पूर्ण करने को हिंगलाज माता अपने ज्योतिर्मय दिव्य स्वरूप मे यहाँ आ प्रकट हुई, तब से पूजा आरम्भ है। गिरी सन्यासी माता के पुजारी है। दो सौ वर्ष से अखण्ड दीपक प्रज्वलित है। मदिर मे माता की लाल चूदडी और चूड के दर्शन है। यह अवधारणा चली आ रही है कि मढी की यात्रा हिंगुलालय

---

१ तत्र चूडामणि में बावन शक्तिपीठ का उल्लेख है। इन्हे महापीठ भी कहते हैं। कल्याण के तीर्थांक मे इक्यावन शक्तिपीठ गिनाये है। श्री भागवत मे अष्टोत्तर शत (१०८) दिव्य शक्ति धाम का विवरण मिलता है।

की यात्रा मानी जाती है। चूरू जिले मे बीदासर ग्राम मे नाथो के अखाड़े मे हिंगलाज माता का पुराना मंदिर है। अजमेर जिले म अगइ से पूर्व मे पहाड़ी पर माता का मंदिर है।

'जैसलमर जिले में हिंगलाज माता के अनेक मंदिर है, जिनमे जैसलमर नगर के घड़सीसर तालाब के मध्य एक गोल टापू पर हिंगलाज की साळ है, जिसकी बड़ी मान्यता है। दर्शनार्थी तालाब मे तैर कर माता के मंदिर तक पहुचते है। जैसलमेर के पुष्करणा समाज म माता का बड़ा इष्ट है। हरियाणा की सीमा पर बलेश्वर के पवत पर हिंगलाज माई का पुराना मंदिर है। फालना की पहाड़ी पर माइ का मंदिर है। महाराष्ट्र म गढ हिंगलाज एक तीर्थस्थल है। पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त म अनेक मंदिर है। इधर गुजरात और मालवा मे माइ के मंदिर है। चाहे अन्यत्र माई के मंदिर न हो किन्तु चारण समाज में सर्वत्र आदि-शक्ति हिंगलाज का प्रबल इष्ट रहा है। माता अनेक रूपो मे इस जाति में अवतरित होती रही है।''

हिंगलाज माता का शक्ति के रूप में समय-समय पर अवतार

डॉ श्री सोहनदानजी चारण[1] के अनुसार हिंगुलाज माता ने समय समय पर चारण जाति म अवतार लिया है। जिन शक्ति रूपो म इस माता ने अवतार लिया इसका विवरण निम्न प्रकार है—

' *चारण समाज के लोग शक्ति उपासक है तथा बलूचिस्तान स्थित पौराणिक* विख्यात शक्तिपीठ 'हिंगुलाज' को अपना प्रधान पीठ मानते है। इनम यह मान्यता है कि हिंगुलाज माता समय-समय पर हमारी जाति मे अवतार लेती है। इन शक्ति-अवतारो म आवड़ माता, राजल माता, सैणी माता, करणी माता, बिरवड़ी माता, खोडियार माता, गीगाई माता, चदू माता, देवल माता, मालणदे माता, सोनल माता, हाँसबाई माता आदि के नाम विशेष उल्लेख्य है। इन देवी-अवतारो ने राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, दिल्ली के अनेक राजा-महाराजा और बादशाहों तक को अपने परचे-प्रवाडो (वरदानों) से चमत्कृत एव उपकृत किया है, अन्यायी, प्रजाशोषक नृपतियों को आतंकित कर प्रजा-सेवक राजाओं को सिंहासनारूढ भी बनाया है तथा प्रजाजनो की रक्षा कर मातृत्व की अनूठी पहचान स्थापित

---

१ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४८३

की है। उक्त देवी अवतारो के महत्त्वपूर्ण कृत्यों के प्रमाण मे आज भी यह दोहा प्रचलित है—

'आवड तूठी भाटियाँ, कामेही गौडाह।
श्री बिरवड सिसोदियाँ, करणी राठौडाह।।'

अथात् आवड माता ने भाटी शाखा, कामेही माता ने गौड़ शाखा, बिरवडी माता ने सिसोदिया शाखा तथा करणी माता ने राठौड शाखा के क्षत्रियों की सहायता कर उनके नये-नये राज्य स्थापित करवाये।''

सप्त मातृका[१]

बाडमेर जिले की धारीमना तहसील मे चाळक्नू ग्राम में साहवा शाखा का एक चारण निवास करता था। उसका नाम मामड था। वह शक्ति का परम उपासक था। पुत्रहीन था। पुत्र कामना को लेकर उसने सात बार हिंगुलालय की दुर्गम यात्रा की। उसकी भाव-भक्ति से माई प्रसन्न हो गई। सातवी बार जब उसने हिंगुलालय की गुफा मे प्रवेश किया तो माता न प्रसन्न होकर कहा म्हू आइस। (मै अवतरित हाऊँगी)।

मामड के घर महड़ शाखा की चारण मोहवती की कोख से विक्रम सवत् ८०८ की चैत्र शुक्ला नवमी को आदि शक्ति हिंगलाज माई आईजी के रूप म अवतरित हुई। नया अवतार लेकर माता आवडा मामडाई (माहमाई) के नाम से विख्यात हुई। आवड़जी सात बहिन थी। सातों ही शक्ति का अवतार थी।

आवड़ गुल रूपा अछी, लागी छाछी होल।
गढवी मामडिये घरा साता बैन सताल।

'आवडा, आछी छछी, गहली, हुली, रूपा और लागदे सप्त मातृका है। साता बहिन आजन्म ब्रह्मचारिणी रही। इनमें सबसे छोटी बहिन लागदे जैसलमेर क्षेत्र म खाडरायजी कहलाती है, वही गुजरात मे खोड़ियारजी के नाम से पूजी जाती है। खोड़ियार की सौराष्ट्र-गुजरात मे बड़ी मान्यता है। गाँव-गाँव में खोड़ियार क मदिर है। अहमदाबाद नगर म खोडियार के २८ मदिर है।

---

१ करणी कथामृत ले शार्दूलसिंह कविया पृ १३४

''पश्चिम भारत मे पिछले बारह सौ वर्ष से अनेक नामो से इन साता बहिनो की पूजा-अर्चना चल रही है। कही 'बाया' के नाम से तो कही 'माया' (मावल्या-माताएँ) के नाम से पूजी जा रही है। सातों बहिनो की लोक देवी के रूप म सर्वाधिक मान्यता है। अनेक जातियो मे सातो बहिनें बाया के रूप मे पूजी जाती हे। हिन्दुओ के बहुसख्यक समाज म माया (मावल्या) कुलदेवी के रूप मे प्रतिष्ठित है। नवजात शिशुओं को माया के धोक दिलाते है। जात-जडूला चढाते है। बडे महीनो[१] मे शुक्ल पक्ष म और नवरात्रि में स्थान-स्थान पर माता के मेले भरते है।

''सामान्यत हिन्दू समाज मे सातो बहिनो की बडी मान्यता है। विवाह के समय माया बैठाते है। महिलाएँ माया के बधावे गाती है। बाया, माया, महामाया, मावलिया, चालक-नेचिया, डूगरेचिया और बीजासणिया के नाम पर चादी-सोने की पातडी पहिनते है। महिलाए स्वय पातडी पहनती है और अपने बच्चा को पहनाती है। पातडी पर सातों बहनों का स्वरूप अकित होता है। सामान्य हिन्दू समाज मे युगो से यह लोक-विश्वास चला आ रहा है कि बाया की पातडी रक्षा कवच का काम करती है।

''आवड माता सर्वमान्य लोक देवी है। आदि शक्ति हिगलाज का अवतार है। प्रतिमास शुक्ल पक्ष की सप्तमी को माता की पूजा होती है। घर-घर मे आई मा के नेवज (नेवेद्य) चढाते है। माता के मिश्री का या लापसी का भोग लगता है। आवड़ माता के बावन नाम है और बावन ही धाम हे।

''चाळकनू ग्राम में जन्म ग्रहण करने के कारण चाळराय या चाळकनेची के नाम से यह माता जानी जाती है। चाळकनू गाव मे चाळराय का पुराना मँढ है।

''एक बार अकाल पड़ जाने पर सातो बहिने अपने माता-पिता के साथ गाय चराती हुई सिध प्रान्त की ओर चली गई थी। नानणगढ के आततायी शासक सूमरा पर कुपित होकर उन्होंने उसका राज्य नष्ट कर दिया। उसके पुत्र नूरन का भख (भक्षण) ले गई। मार्ग म अवरोध उत्पन्न करने वाले हाकड़ानद का आचमन कर गई। सपरिवार अपने गोधन को साथ लेकर माड प्रदेश (जैसलमेर

---

१ बड़ महीना मे वैशाख, भादवा व माघ माह आत है।

क्षेत्र) की ओर आ गई। यहा काले डूगर पर निवास करने के कारण काळामँढ की राय, डूगरराय अथवा गिरवरराय के नाम से विख्यात हो गई। यहा सातो बहिनें डूगरेचियॉं कहलाती है। जैसलमेर क्षेत्र में डूगरेचियॉंजी की सर्वाधिक मान्यता हे। अनेक जातिया इन्हे कुल-देवी के रूप मे पूजती है। मीठा भोग चढता है।

''उन दिना माड प्रदेश आततायियो से आतंकित था। ये क्रूरकर्मी धन-जन को क्षति पहुचाते थे ओर गोहत्या करते हुए भी पीछे नही हटते थे। गोरक्षा एव जनकल्याण की भावना से प्रेरित होकर करुणामयी आई मा ने एसे अनेक देत्यो का नाश किया। इन क्रूरकर्मियो का नाश कर माता घण्टियाळीजी सावडामॅढराय और तेमडाराय के नाम से विख्यात हो गई।

बोर टीले पर तणुराव और रानी सारगदे को आई मा परमेश्वरी ने आशीर्वाद दिया। तणुराव के सामत भादरिया की भक्ति से प्रसन्न होकर उसे वरदान दिया कि यहा तेरे नाम से पूजी जाऊगी। जैसलमेर जिले मे ग्राम धोळिया के निकट बोर के ऊचे टीले पर श्रीभादरियाराय का भव्य मदिर है। मदिर मे एक ऊंचे सिहासन (साहग) पर काल पाषाण की सुरम्य प्रतिमा है। आई मा कमल दल पर विराजमान है, बहिन दोना ओर खडी है। मण्डप म सामने लाल कपडे से बधा माता का ढाल रखा हुआ है। जब कभी रात जगाते है, माता के उमावे (प्रशस्ति-गान) गाये जाते है, तब ढोल बजाया जाता है। समवेत स्वर म माता के उमावे सुनकर श्रद्धालु श्रोता भाव-विभोर हो उठते है। मदिर म अखण्ड ज्योति प्रज्वलित है। नियमित पूजा-विधान है।

भादरियाराय का पुराना मदिर टीले के उत्तर म है। यह विशाल नवीन मदिर विक्रम सवत् १८८८ म महारावळ गजसिह ने बनवाया। भादरियाराय का विस्तृत ओरण है। ओरण की चोवीस कोस की परिक्रमा है। मदिर म इस आशय का एक शिलालेख अंकित है।

'मदिर से लगा हुआ भारत का सबसे बड़ा सैनिक अभ्यास स्थल (फाईरिंग रेंज) है। भारतीय सेना में इस मदिर की बड़ी मान्यता है। भारत के विभिन्न भागों से जो सैनिक बल आते है सर्वप्रथम भादरियाराय को नमन कर रेंज में उतरते है।

"तणुराव के आग्रह पर आई माँ परमेश्वरी विक्रम सवत् ८८८ मे तनोट पधारी। जहाँ तन्नोटराय का जाग्रत देवळ है। तन्नोटराय का मढ भारत की पश्चिमी सीमा पर ऊचे टीबा से घिरी हुई समतल भूमि पर स्थित हे। छोटा-सा मदिर है। सप्त-मातृका के पाट के दर्शन ह। अखण्ड दीपक प्रज्वलित हे। भारतीय सनिको की श्रद्धा का केन्द्र-स्थल हे। सीमा सुरक्षा बल (B S F) की ओर से पूजा-व्यवस्था है। १९६५ के भारत-पाक युद्ध मे शत्रु सेना तन्नोट से आगे घण्टियाळी के ऊचे टील तक बढ आई थी। तन्नोट पर वम बरसाये पर एक भी बम नही फटा। वाद म इन वमो को ठडा करके इनके खोला को प्रदर्शनार्थ रख दिया गया है। तन्नोट शत्रु सेना से घिरकर भी सुरक्षित रहा।* लागवाला और तन्नोट क्षेत्र को भगवती ने वचा लिया। अपन पाच सौ सैनिक खोकर पाक सेना भाग खडी हुई। आईमाता की कृपा से भारत की कोई सेनिक क्षति नही हुई। इस युद्ध में भारतीय सैनिको का मनोवल मातेश्वरी के नाम पर ऊँचा बना रहा, जिसकी याद म तन्नोट के प्रवेश द्वार पर सेना का विजय स्तम्भ खडा हे। विजय स्तम्भ पर इस घटना का शिलालेख भी अंकित हे।

तब स ही तन्नोटराय सीमा सुरक्षा बल की कुलदेवी बन गई है। सीमा की हर चौकी पर तन्नोटराय का थान है। लाल ध्वजा फहराती है। सध्या समय सीमा सुरक्षा वल के जवान मिलकर पूजा आरती करते ह। सब माता पर आश्रित है। माता भारतीय सैनिको का मनोबल बढाती रहती ह।

"तणोट से चलकर आइ मा परमेश्वरी गग्गलाँओ पर्वत पर चली आई। विक्रम सवत् ८८८ स ९९९ तक, एक सौ ग्यारह वर्ष तक सातों बहिना ने इस पर्वत पर रहकर तपस्या की। इस पावन स्थल को दूसरा हिंगलाज धाम

---

* यह युद्ध १६ नवम्बर १९६५ का हुआ था। तन्नोट चारो तरफ स घिर चुका था। कर्नल जयसिंह राठौड (थैलासर) बीकानेर क नतृत्व म हमार क्वल तीन सौ सैनिक थ। शत्रु न तीन तरफ स धुआधार हमला कर दिया। हमार जवान निरन्तर लडत रह। दूसर दिन एक जवान म भगवती का भाव आया कि घबराओ मत तुम्हारा बाल भी बाका नहीं हागा। हुआ यही तन्नोटराय की कृपा स भारतीय सना क किसी जवान का काई चाट नहीं आई और शत्रु की फौज हताश हाकर पाच सौ शव छाडकर भाग खडी हुई। आश्चर्य इस बात का है कि मन्दिर क आसपास ३००० बम बरसाय गय मन्दिर क एक खरोंच भी नहीं आई।
— भगवती श्री आवड़जी लखक— ठा मूलसिंह भाटी जैसलमर

बना दिया। यहा गहरी गुफा म तेमडा नाम का कुख्यात दैत्य निवास करता था। लोग भयभीत और आतकित थे। आई परमेश्वरी ने त्रिशूल के एक ही प्रहार म इस मार गिराया। गुफा के द्वार को एक शिला लगाकर बन्द कर दिया। यह तारग शिला कहलाती है। गुफा मे शिला के दर्शन है। गरलाँओ पर्वत की इस ऊची खोह म सप्त मातृकाओ का पुनीत पाट स्थापित है। यहा आकर माता तेमडाराय के नाम से विख्यात हो गई। हिंगुलालय के बाद पश्चिम भारत में तेमडाराय की गुफा ही बड़ा शक्ति पीठ है। दूर-दूर से यात्री तेमडाराय क दर्शन करने आते है। अनेक श्रद्धालु अपने आवास स्थल मे पद-यात्रा करते हुए यहा आते है। माता मेहाई ने दो बार तेमड़ाराय की यात्रा की। लोक विश्वास चला आ रहा है कि तमड़ाराय शीघ्र फलदायिनी है।

नाथ पथ म दीक्षा ग्रहण कर माता ने कानो म मुद्रा धारण कर ली, इससे मुद्राळी कहलाती है। आईनाथ क नाम से विख्यात हे। जैसलमेर में आईनाथ का देवळ है। जाडचा की आशा पूर्ण करने पर माता आशापुरा कहलाई। सिन्ध क्षेत्र म काठियावाड, गुजरात म और राजस्थान मे पोहकरन के निकट आशापूरा क मदिर है। जैसलमेर के निकट गजरूप सागर की पहाडी पर माता सागियाजी का मदिर है। रावतणु के पुत्र विजयराज न बीजणोट नगर बसाया जहा बीजासण माता का मदिर है। सात बहिने बीजासणिया कहलाती है। देवीकोट क पास एक सरोवर के तट पर देगराय का भव्य मदिर है। बारह कोस का ओरण हे। साता बहिना क देवळ है। दगराय की दूर-दूर तक मान्यता है। पास मे ही साबडामढराय का मदिर है।

हाकडानद मे स्नान करत समय सूमरा की कुदृष्टि से बचने के लिए सातों बहिना ने नागिन का रूप धारण कर लिया था जो नागणेचिया कहलाती हे। बीकानेर मे नागणेचिया का प्रसिद्ध मदिर है। सातो बहिन ऊन कातने मे सिद्धहस्त थी। अपने हाथ की कती ऊन की लोवडी ओढती थी। इसी कारण कतियाणीजी कहलाती है। फलौदी म लटियाळ माता का मदिर है। लटियाळ आई मा परमेश्वरी का ही नाम है। आईमा के अनेक नामो से अनेक मदिर है, जिनम बावन धाम प्रसिद्ध है। सुवाप में आवडजी का प्राचीन मंट है। देशनोक म तमडाराय का मदिर हे। खैरथल अलवर मे आवड देवी का प्रसिद्ध मदिर है। हिन्दू एव मेव सब पूजत है। जयपुर जिले म झोडूदा गाव मे डूगरराय का पुराना मदिर हे। इस मदिर की बडी महिमा है।

"जालौर जिले की भीनमाल तहसील में सूधा पवत पर आईनाथ परमेश्वरी का प्राचीन मढ है। माता सूधाराय सूँघामढराय, चामडमाता, आईनाथ के नाम से विख्यात है। देवी देसाणराय ने सूँघाराम की दो बार यात्रा की थी। सूँधाराय का शक्तिपीठ नाथ योगियो का अखाड़ा रहा है। इस शक्ति तीर्थ क पीठाधीश आईजी कहलाते थे। चामड माता चौहान राजपूतो एव रोहडिया शाखा के चारणों की कुल देवी है।

' भगवती आइमाता लोक देवी है। भवगती अवतीण हुई तव से लगाकर अव तक सातो वहिनों की पाट की पूजा प्रचलित है। इन वर्षो मे एक नया प्रचलन चल पडा है। पाट का स्थान दुर्गा की पौराणिक प्रतिमाए लती जा रही है। यह सव अज्ञानवश हो रहा है। तेमडाराय, तन्नोटराय और घण्टियाळीजी म यह सब प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। नवीन प्रतिमाएँ स्थापित कर दी गइ है।

"राजस्थान का शक्तिभक्ति काव्य भगवती श्रीआवडमाता की चिरजाओ, पवाडा, लोकगीतो से परिपूर्ण है। आइ मा परमेश्वरी के उमावे लोक-साहित्य की एक निधि है। जव माता की गत जगाते है तो भगवती के उमावे भाव-भक्ति के साथ पूरी रात गाते रहते है। भादरियाराय भगवती का सवस विशाल मदिर है। डूगरराय सबसे लोकप्रिय धाम है। तन्नोटराय सबसे जाग्रत देवळ है और तेमडाराय महान् शक्तिपीठ है। लोक-मान्यता चली आ रही है कि १९१ वर्ष तक इस धरा को आलोकित कर विक्रम सवत् ९९९ में सातों बहिनें विमान (बाया का पालणा) म बैठ हिंगलाज धाम की ओर सदेह प्रस्थान कर गईं। 'बाया का पालणा' की पूजा परम्परा आज भी प्रचलित है।"

जगदम्बा श्री करणी देवी

कल्याण के शक्ति अक[1] म जगदम्बा श्री करणी देवी का वृत्तान्त दिया गया है जो पठनीय है।

"बीकानेर शहर से लगभग २० मील (३२ किलोमीटर) दक्षिण मे बीकानेर रेल्वे का स्टेशन मे देशनोक है। यहाँ पर स्टेशन के पास ही श्री करणी देवी का प्रसिद्ध मदिर है। श्री करणी देवी कोई पौराणिक देवी नहीं है। यह मनुष्य

---

१ कल्याण शक्ति अक वर्ष ९ (१९३४) पृ ६६५

देह मे अवतरित हुई थीं और इन्होने अपनी देवी शक्तियो का परिचय देकर लोगो के मन मे विश्वास जमा दिया कि यह कोई साधारण जीव नही है, बल्कि साक्षात् महामाया की अवतार है।

"जोधपुर राज्य के अन्तर्गत सुआप नामक एक गाव था। प्राय ६०० वर्ष पूर्व यहा मेहोजी नाम के एक चारण रहते थे। वह अत्यन्त सात्विक वृत्ति वाले तथा भगवती के उपासक थे। उनके लगातार छ पुत्रिया उत्पन्न हुई थी अतएव पति-पत्नी पुत्र के लिए बडे लालायित थे। इस उद्देश्य से मेहोजी माता भगवती से प्रार्थना किया करते थे और प्रतिवर्ष हिंगलाज जाकर दर्शन किया करते थे। कहते है, भगवती ने उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर उन्हे दर्शन दिया और वर मागने को कहा। मेहोजी ने भगवती को प्रणाम कर प्रार्थना की कि मै चाहता हू कि मेरा नाम चले।' श्रीदेवी तथास्तु कहकर अन्तर्धान हो गयी।

उसके बाद उनकी धर्मपत्नी देवलदेवी को गर्भ रहा। इस बार पति-पत्नी को आशा हुई कि श्रीदेवी की कृपा से अवश्य ही पुत्र रत्न प्राप्त होगा, उन्होने एक ज्योतिषी से गणना भी कराई और उन्होने भी आश्वासन दिया कि इस गर्भ से पुत्र उत्पन्न होगा। किन्तु भला माता की इच्छा किसे मालूम थी? वह किस तरह नाम चलाना चाहती थी यह कौन कह सकता था? आश्विन शुक्ल ७ स १४४४ को बालिका ने प्रसूतिगृह मे ही अपनी माता को चतुर्भुजी देवी के रूप मे दर्शन दिये थे।

बालिका के जन्म के समय पर मेहाजी की बहिन भी वही वर्तमान थी। उन्होने बालिका को भूमिष्ठ होते देख, तुरन्त अपने भाई के पास आकर हाथ की अगुली टेढी कर कहा— फिर वही पत्थर आ पडा।' यह सुनकर पिता का दिल उदास हो गया और उधर उनकी बहिन की अगुली जो टेढी हुई थी, वह वैसी ही रह गयी। उस समय लोगो ने समझा, अगुली मे बादी आ गयी है।

बालिका के जन्म के बाद से मेहोजी के दिन बदल गये। उनका घर धन-धान्य और पशुओ से भर गया। सारी चिन्ताए दूर हो गयी। मानो उनके घर साक्षात् लक्ष्मीजी आ विराजी हो। उन्होने नवजात बालिका का नाम रिधुबाई रखा और उनका लालन-पालन वे बडी तत्परता और प्रेम के साथ करने लगे। रिधुबाई का स्वरूप बहुत ही मनोहर श्यामवर्ण था और उनके चेहरे पर एक अपूर्व तेज दिखाई पडता था।

"धीरे-धीरे रिधुबाई छ सात वर्ष की हुई। इसी समय उनकी बुआ पुन ससुराल से लौटकर आयीं और उनके लिए कुछ गहने और कपडे भी लायी। वह अपनी भतीजी को बडे स्नेह की दृष्टि से देखती थी और बराबर उसे नहाने-धुलाने, खिलाने-पिलाने आदि का ख्याल रखती थी। एक दिन वह रिधुबाई को नहलाकर उनके सिर के बाल गूथ रही थीं, उस समय उनकी टेढी अगुली बार-बार बालिका के सिर में लगती थी। उन्होने पूछा— 'बुआ 'मेरे सिर में बार-बार टक्क-टक्क क्या लगता है?' उनकी बुआ ने अपनी अगुली की सारी पुरानी कहानी सुना दी। इस पर उन्होंने अगुली दिखाने को कहा और बुआ के दिखाते ही अगुली को अपने कोमल कर-स्पर्श द्वारा ठीक कर दिया। यह देख उनकी बुआ बडी चकित हुई। किन्तु उन्होंने अपने दात दिखाकर मना किया कि यह बात किसी से कहना नहीं, अन्यथा इन्ही दातो से तुम्हे चबा डालूगी। उनके सिहनी जैसे दात देखकर उनकी बुआ काप गई और उन्होने वचन दिया कि मै किसी से कुछ न कहूगी। कहते है, उसके बाद ही रिधुबाई का नाम करणी' पड गया और वही नाम आज तक प्रसिद्ध है।

"एक दिन देवीजी कुछ भोजन की सामग्री लेकर अपने खेत को जा रही थीं। रास्ते म जैसलमेर के महाराज शखोजी अपनी असख्य सेना के साथ मिले। राजा साहब ने उन्हें देखकर उनसे प्रार्थना की कि 'मै और मेरी सेना क्षुधा से व्याकुल हो रहे है। गाव यहा से दूर है। यदि आप कुछ भोजन दे तो बडी कृपा हो।' यह सुनकर देवीजी ने कहा कि 'सेना सहित आप बैठकर भोजन कर लीजिए।' कहते है, उस थोडी-सी सामग्री म से ही देवीजी ने सेना सहित राजा को भरपेट भोजन करा दिया। यह देखकर राजा अवाक् रह गये। राजा को इस प्रकार आश्चर्यान्वित देखकर देवीजी ने कहा कि 'आश्चर्य की कोई बात नही। सकटकाल मे मेरा स्मरण करना, मै अवश्य तुम्हारी सहायता करूगी।' राज शेखोजी वहा से चलकर युद्धक्षेत्र में पहुचे और दैवात् उस युद्ध में उनकी सेना हार गयी तथा उनके रथ का एक घोडा भी मारा गया। सकटकाल उपस्थित देख राजा को देवी की बात याद आई ओर उन्होंने तुरन्त उनका स्मरण किया। कहते हैं, श्रीदेवीजी तुरन्त सिह के रूप म प्रकट होकर रथ में जुत गयीं और उनकी कृपा से अन्त में शेखो जी की विजय हुई।

"एक बार श्रीकरणी देवी के पिता को सर्प ने डस लिया। तब श्रीदेवी ने उन्हे केवल अपने करकमल से स्पर्श करके अच्छा कर दिया। इस तरह

नाना प्रकार की लीलाए करते हुए उन्होने युवावस्था मे पदार्पण किया। पुत्री को विवाह योग्य देखकर उनके पिताजी ने साठीका (साठीका ग्राम बीकानेर-राज्यान्तर्गत देशनोक से लगभग ३० किलोमीटर पर है) ग्राम मे दीपोजी नामक व्यक्ति को वर स्थिर किया। निश्चित तिथि पर बडे समारोह के साथ उनका शुभ विवाह सम्पन्न हुआ। विवाह के बाद देवीजी ने रह-सम्भाषण मे अपने पतिदेव से कहा कि 'मेरे गर्भ से आपके कोई सतान नही हो सक्ती, अतएव आप मेरी बहिन से दूसरी शादी कर लीजिए।' इतना कहकर उन्होंने दीपोजी को साक्षात् भगवती रूप म दर्शन दिये। तब उनके कथनानुसार दीपोजी ने दूसरा विवाह उनकी बहिन गुलाब से ही कर लिया जिसके गर्भ से चार पुत्र उत्पन्न हुए। य चारा पुत्र देवीजी के ही कहलाते थे और उन्ही के साथ रहते थे। दीपोजी ने आजन्म देवीजी को माता रूप म ही देखा।

ससुराल म भी उन्हाने कई चमत्कार दिखाय। एक दिन उनकी सास ने कहा— 'देखो बहू! यहा खूब सावधानी के साथ रहना। यहा बहुत अधिक बिच्छू होते है।' इस पर देवीजी ने कहा— 'यहा तो दर्शन को भी बिच्छू नही।' कहते है, उस दिन से आज दिन तक वहा एक भी बिच्छू नही देखा गया। उसी दिन देवीजी ने अपनी सास को साक्षात् दर्शन भी दिये। एक समय आप गाय दुह रही थी कि उसी समय मुल्तान के पास अपनी नौका डूबती देख सेठ झगड़साह ने उनका स्मरण किया। तत्क्षण देवीजी ने अपने हाथ फैलाकर नौका को बचा लिया। श्रीदेवीजी ने इस प्रकार अनेका लीलाए करते हुए ससुराल मे प्राय पचास वर्ष बिता दिये।

'एक समय साठीका ग्राम मे लगातार कई वर्षो तक वर्षा न होने के कारण दुर्भिक्ष पड गया। अन्न की कौन कहे, जल मिलना भी दुश्वार था। गौओ का कष्ट देवीजी से नही सहा गया। वह यहा से गौओ को साथ लेकर चल पड़ी। यहा से चलकर वह पहले राठौर राजा कान्हाजी की राजधानी जागलू आयी। वहा कुए की खेलिया जल से भरी थी। देवीजी ने राजकर्मचारियो से गायो को जल पीने देने के लिए प्रार्थना की, किन्तु राजाज्ञा के बिना उन्होंने जल पिलाने से इन्कार कर दिया। फिर राजा से पूछा गया, किन्तु यहा भी सूखा ही उत्तर मिला। इसी बीच यह बात राजा के कनिष्ठ भ्राता रणमलजी के कानो पडी। वह देवीजी का आगमन सुन तुरन्त उनके सामने उपस्थित

हुए और उन्होने प्रणाम कर सेवकोचित आज्ञा की प्रार्थना की। देवीजी ने 'राजन्'! शब्द से सम्बोधित कर गायो को पानी पिलाने को कहा। रणमलजी ने तुरन्त आज्ञा दे दी और सब गायें पानी पीकर तृप्त हो गयी। किन्तु कहते है, गायो के पानी पी लेने पर भी पानी ज्यो-का-त्यों भरा रहा, जरा भी कम न हुआ। यह देख रणमलजी की श्रद्धा बहुत बढ़ गयी और वह उनके साथ हो लिए और देवीजी के बार-बार मना करने पर भी वापस न लोटे।

"यहा से चलकर देवीजी नेडी स्थान पर आयी और जगल म गौओ के लिए घास आदि की सुविधा देखकर वहीं रहने लगीं। जगल के रक्षको को जब यह बात मालूम हुई तो उन्होंने देवीजी को वहा से चले जाने के लिए कहा। किन्तु देवीजी ने उनकी कोई परवाह नहीं की। फिर यह खबर राजा के पास भेजी गई। यह स्थान भी कान्हाजी के ही राज्य म था। उन्होंने पहले दो राजपूत वीरा के द्वारा कहलवाया, किन्तु दवीजी ने कहा कि 'सियारो! जाओ, अपने राजा को भेज दो, तभी मै जाऊगी।' इतना कहते ही उन लोगो का मुह सियार जैसा हो गया। फिर उन्होंने बडी प्रार्थना की, तब देवीजी ने कहा कि 'जाओ, मेरा सदेश राजा को सुना दो, उसके बाद मुह ठीक हो जायेगा।' ऐसा ही हुआ। परन्तु राजा क्रोध स आग बबूला हो गये। उन्हाने सदलबल देवीजी पर आक्रमण कर दिया, परन्तु देवीजी के आगे उनकी एक न चली। अन्त म उन्होने देवीजी को वहा से चले जाने को कहा। देवीजी ने कहा, 'मेरी यह छोटी-सी पेटी गाड़ी पर रखवा दो, मे चली जाऊगी।' राजा ने बडी चेष्टा की, अपने सब आदमी तथा अन्त मे हाथी तक को लगाया किन्तु यह बक्स जरा भी टस से मस नही हुआ। तब राजा ने कहा कि 'यदि वास्तव मे तुममे शक्ति हो ता बताओ मेरी मृत्यु कब हागी।' देवी ने कहा 'एक वर्ष म।' किन्तु राजा ने कहा कि यह समय बडा लम्बा है, और पहले बताओ। देवीजी ने धीरे-धीरे समय घटाकर एक घडी तक कह दिया, किन्तु राजा उतावले हो रहे थे, वह और भी जल्दी करने का हठ करने लगे। बस, देवीजी ने एक लकीर खेंचकर उसे पार करने को कहा और ज्यो ही उनके घोड़े ने पैर उठाया, देवीजी ने सिहरूप मे राजा और घोडा दोनो का अत कर दिया। इस खबर को सुनकर राजमाता और रानी रोती-बिलखती यहा आयी और राजा को जिन्दा करने की प्रार्थना करने लगी। उनके करुण क्रन्दन के

किया। वह छत्र अब भी मंदिर में मौजूद है और बड़ी पूजा के समय निकाला जाता है। इस सम्बन्ध का शिलालेख भी मंदिर में रखा हुआ है।

'स्व महाराज सूरतसिंह ने देवीजी के मंदिर का कोट बनवाया था। स्व महाराज डूंगरसिंहजी ने देवीजी के मंदिर में (जिसमे मूर्ति स्थापित है) सोने के किवाड़ लगवाये थे और एक बड़ा-सा छत्र बनवा दिया था। महाराज श्रीमान् सर गंगासिंहजी बहादुर ने मकराने के पत्थर का चौक, लाल पत्थर की दीवालें बनवायी और सोने-के पूजा के पात्र प्रदान किये। मंदिर का प्रवेश द्वार सेठ श्रीचांदमलजी ढड्ढा सी आई ई ने बनवाया। या तो समूचा मंदिर कारीगरी की दृष्टि से देखने योग्य है, परन्तु इसके प्रवेशद्वार की शोभा निराली है। संगमरमर पत्थर पर नाना प्रकार के बेलबूट, फलफूल, महराब, पशु-पक्षियों के और देवी-देवताओं के चित्र इतने सुन्दर और सजीव बने है कि देखने वाले आश्चर्य सागर मे डूब जाते है। कहते है, इस दरवाजे को बनाने मे एक लाख से ऊपर खर्च पडा है। भारतीय शिल्प कला का यह एक बहुत ही उत्तम नमूना समझा जाता है।

'प्रवेश द्वार से भीतर सहन में घुसने पर सामने योगमाया के दर्शन होते है। जिस ताखे में यह प्रतिमा स्थापित है, कहते है, उसे माताजी ने स्वयं अपने हाथों बनाया था। प्राय धनी लोग देवीजी को छत्र चढ़ाया करते है, जिससे यहाँ छत्रों की भरमार है। श्रीदेवीजी की मूर्ति सोने के सिंहासन पर विराजमान है।

माताजी के मंदिर में काबे (चूहे) बहुत है, जो सर्वत्र मंदिर भर में स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करते है। इनकी अधिकता के मारे दर्शनार्थियों को बहुत बच-बच कर मंदिर में चलना पड़ता है जिससे वे दबकर मर न जाय। कहते है, देवीजी के वंशज चारण लोग ही मरने पर काबा हुआ करते है और फिर काबे से चारण होते है। यमराज पर क्रोधित होने के कारण ही उन्होंने अपने वंशजों के लिए ऐसा प्रबंध किया था। यही कारण है कि लोग इन्हें भी आदर की दृष्टि से देखते है और श्रद्धानुसार दूध, मिठाई आदि खिलाया करते है। इन चूहों के कारण लोग इन्हें 'चूहों वाली माता' भी कहते है। इन चूहों के बीच कभी-कभी सफेद चूहे के रूप में घूमती देवीजी भी भक्तों को दर्शन दिया करती है। सबसे विचित्र बात तो यह है कि इतने चूहे होने पर भी यहां कभी

प्लेग का प्रकोप नहीं होता। इस स्थान मे चील को भी पवित्र माना जाता है ओर मंदिर की ध्वजा पर उसका बैठना शुभ माना जाता है।

"देवीजी का एक स्थायी कोष है जिसकी कुजी और हिसाब की बहिया बन्ना सुथार के परिवार के जिम्मे रहती है। यह परिवार उसी समय दशनोक मे आकर बस गया था और तभी से यहीं है। यह कोष दो आसवाल एक सुथार, एक किलेदार और चार चारणो की उपस्थिति में खोला जाता है। इस कोष से पुजारी आदि चारणा को कुछ वेतन नही मिलता, केवल शादी-विवाह या श्राद्ध आदि विशेष अवसरों पर सहायता दी जाती है। कोष से मदिर के प्रबन्ध के लिए जो नौकर-चाकर है, उन्हे तनख्वाह दी जाती है या मदिर के सम्बन्ध मे दूसरे खर्च होते है। देवीजी पर जो कुछ चढोत्ती आती है, वह उनके पूजा करने वाले चारणों का (जो उन्ही के वशज होते है) बाट दी जाती है।

"यात्रियों की सुविधा के लिए स्टेशन के पास ही बीकानेर के सुप्रसिद्ध मोहता-परिवार ने एक बडी धमशाला बनवा दी है। देशनोक के तेमडे जी के मदिर मे माताजी की वह छोटी-सी पूजा की पेटी भी रक्खी है, जिसे कान्होजी ने उठाने का प्रयत्न किया था।

"देशनोक से एक मील पश्चिम में नेंडी स्थान है। यहा भी एक मदिर है और उसके अदर एक गहरी गुफा है। यहा पर भी एक भक्त सेठ ने एक धर्मशाला बनवा दी है। इसी धर्मशाला मे श्रीकरणी जी के अनन्य भक्त आत्मस्वरूप जी महाराज रहते थ। आपको माताजी के अनेक दृष्टात मिल है। आप कही दूसरी जगह नही गय केवल माता श्री करणजी की उपासना म ही जीवन व्यतीत किया है। आप अपनी भक्ति, त्याग, गभीरता आदि सद्गुणों के लिए प्रसिद्ध है।

श्री करणीधाम देशनोक

श्री करणी-कथामत[१] मे करणी धाम देशनोक का सजीव वृत्तान्त दिया गया है, जो निम्न प्रकार है—

मन देसाणों रै मगा, हगामगा घण हाय।
जग माहीं अैडी जगा, दगा न देखी दोय॥

---

१ श्री करणी कथामृत (द्वितीय सस्करण) ले शार्दूलसिह कविया पृ ११२ १२१

'बीकानेर से ३२ किलोमीटर दक्षिण मे देशनोक बसा हुआ है। यह स्थान बस मार्ग और रेल्वे लाइन से जुडा हुआ है। बीकानेर और नागौर के बीच देशनोक रेल्वे स्टेशन है। बीकानेर से दक्षिण दिशा म जाने वाली सभी बस देशनोक होकर जाती हे। बस सीधी देशनोक के श्रीकरणी मदिर के सामने आकर रुकती है। देशनोक आने-जाने मे पूरी सुविधा है।

दशनोक का सबस बडा आकर्षण श्रीकरणी मँढ दशनोक है। श्रद्धालु यात्री दूर-दूर से चलकर श्रीकरणी माता के दर्शन करने इस मँढ की ओर खिचे चले आते है। हर समय यात्रियो का मेला लगा रहता है। राजस्थान के बाहर गुजरात, मध्यप्रदेश ओर हरियाणा तक माता की मान्यता है। आश्विन नवरात्रि के अवसर पर सैकड़ा यात्री पदयात्रा करते हुए दशनोक पहुचते है। बीकानेर, चूरू, हनुमानगढ श्रीगगानगर और नागोर जिलो से तो इतने अधिक पदयात्री आते है, जिनकी कोई गिनती ही नही। मातेश्वरी की अपार महिमा है, न जाने कहा कहा से लाग दशन करने चले आ रहे है। पुण्य धाम देशनोक भारत का नूतन शक्तिपीठ बन गया है।

देशनोक के द्वार पर ही जोगमाया देवी देसाणराय का विशाल भव्य मदिर हे। उन्नत सिहद्वार है। द्वार के भीतर प्रशस्त प्रागण है। आगे मध्य द्वार है। अदर सगमरमर का चौक हे। तीसरा अतराल द्वार है और सामने निजमढ जिसके द्वार पर स्वर्णजडित कपाट है। निज मँढ अखण्ड दीपशिखा स आलोकित रहता है। निज मदिर क ठीक मध्य म श्री करणी माता की मनारम सिन्दूर चचित प्रतिमा है। मुखारविन्द पर सौम्य भाव हे, ओठों पर किचित् मुस्कान, कमलदल की भाति अर्द्ध-विकसित उभर हुए निर्मल नेत्र है, शीश पर स्वण मुकुट है काना में बड़-बड़े कुण्डल है माता ने कचुकी धारण कर रखी है, आढ़न का धीणी लावड़ी है और पहिनने का धाबळा। कमर म धाबळे का लाडणा बधा हुआ है जा करधनी सा लगता है। माता क सोम्य मुखारविन्द से करुणा झर रही है। माता शक्ति स्वरूपा है। दाहिने हाथ म त्रिशूल और वाम कर म कालू पीथड़ का नरमुण्ड है, जिसकी माता ने चोटी पकड़ रखी है। माता के हाथा में चूड़िया है और पैरा में आभूषण। गलहार और मोतियों की माला से माता सुशाभित है। मनाहारी रूप है जो दखते ही बनता है। श्रद्धालु यात्री माता का निहारता हुआ अघाता ही नही। यह काई पाषाणी

प्रतिमा नही है। पूर्ण जाग्रत ओर चिन्मय स्वरूप है। अपने सेवकों की सहायता मे तत्पर खड़ी है।

"मातेश्वरी द्वारा स्वनिर्मित भारी पाषाण खण्डों से बना गोल मँढ है। काबे इधर-उधर किलाल कर रहे है। माता की प्रतिमा के दोनो ओर भैरव खडे है। दाहिनी ओर कालाजी है। सुकुमार रूप है। भगवती और भैरव युगल के दाहिनी ओर एक पाषाण शिला पर माता मेहाई की पाच बडी बहिनो की मूर्तिया है* और वाम भाग मे जूनी जोगण आवड माता का पाट स्थापित है, जिसमे साता बहिने खडी है। विक्रम सवत् १५९५ मे चैत सुदी चौदस को जैसलमेर के महान शिल्पी बन्ना सुथार द्वारा निर्मित इस दिव्य प्रतिमा की मँढ मे स्थापना हुइ। इसी उपलक्ष्य मे प्रति मास चौदस को मदिर में विशेष पूजा होती है। शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को रात को नौ बजे भोग आरती होती है। लापसी का प्रसाद चढता है। केवल देशनोक के श्रीकरणी मदिर मे ही नहीं चादणी चौदस को जोगमाया से जुडे हुए हिन्दू समाज मे घर-घर म पूजा होती है। नेवज बनता है। प्रतिमास चादणी चौदस के दिन बडी सख्या मे दूर-दूर से चलकर भक्तगण देवी देसाणराय के दर्शनार्थ उपस्थित होते है। हर मास चौदस को मेला मड जाता है। यह सब जोगमाया की कृपा हे।

' आप चादणी चोदस को आओ चाहे किसी दिन आओ यहा देसाणधाम म तो नित उठ वही आनन्द लुटता रहता है। प्रात शीघ्र ही मगला आरती हाती है। इससे कोई आधा घटे पूर्व मदिर म नगारे बजना आरम्भ हो जाता है। यात्री नहा-धोकर आरती से पूर्व मदिर में आ उपस्थित होते है। मगला की जोत-आरती का दृश्य बडा सुहावना लगता है। निज मदिर म जोत जगमगाने लगती है। मगला की जोत का पुण्यदर्शन माना जाता है। देशनोक निवासी नर-नारी मगला के दर्शन करने आते है। आरती के समय ढोल बजता है। बाजदार ढोल बजाता है। नोबत-नगारे और झाझ-झालर की सुमधुर ध्वनि सवेग से गूजने लगती है। हृदय म आनन्द की वेला उतर आती हे। मगला का अपना ही महत्त्व है। मगला की जोत निज मदिर से उत्तर मे आवड माता के मँढ मे जाती है वहा जोत आरती होती है। तत्पश्चात् जोत सतीजी के

---

* जनश्रुति और लाक मान्यता की इस प्रतिमा स सपुष्टि हाती है। यह अपन आप म एक अकाट्य प्रमाण है कि बाला रिधूबाई क पाच बहिन थीं।

देवरे म आती है। लाखणजी की छोटी पुत्री मानू और उसकी सहेली सती हो गई थी। यह उन्ही का देवरा है। देशनोक क कोतवाल दशरथ मेघवाल की बड़े प्रागण मे इसी जोत से पूजा होती है। तत्पश्चात् दक्षिण म स्थापित प्रतिमाआ की पूजा होती है। इस आरती के तुरन्त बाद में माताजी की कलेवा-आरती होती है।

मगला आरती के बाद सूर्योदय तक नगारे बजते रहते है। इसी प्रकार मध्याह्न काल म नगारे बजते है। सध्या आरती से पूर्व बजते है और अर्द्ध-रात्रि को बजते है। ढोल केवल जोत आरती के समय बजता है। सध्या आरती को भी इसी प्रकार आनन्द लुटता है। मदिर पर माइक से मातेश्वरी का चिरजा-गान चलता रहता है। सारे दिन वातावरण मातृमय बना रहता है।

मातेश्वरी की अनूठी मर्यादाए है। माता के वशज ही माता के पुजारी है। बारी-बारी से एक-एक मास पूजा करते हे। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को बारी बदलती है। बारीदार एक मास तक मदिर म रहता है। परिवार की महिला उसे भाजन करा जाती है और सध्या को अपने घर चली जाती है। पुजारी मदिर में ही रहता है। मदिर म ही सोता है। कितनी ही अनिवार्यता क्या न हो मदिर छाडकर नही जाता।

दशनोक की जाई अथवा देशनोक म आई माता मेहाई को दादीसा, दादीमा, दादीजी, माजीसा कहकर सम्बोधित करती है। पूरी नगरी एक बड़ परिवार की भाति रह रही है। सब जोगमाया से जुडे हुए है। परस्पर 'जय माताजी की' कहकर अभिवादन करते है। माता की नगरी म जब कोई नया बालक जन्म लेता है तो जापे से उठन के बाद जननी स्वय नवजात शिशु को लेकर सर्वप्रथम श्रीमदिर म उपस्थित होती है। शिशु को मातेश्वरी के सम्मुख लिटाती है। श्रीफल भट करती है। माजीसा के पाय लगती है। सभी जातिया की महिलाए देवी दसाणराय क मँढ म आती है, अपने साथ बाजरी की पाटली लाती है, काबा को बाजरी डालती है और कबूतरा को दाना चुगाती है। देशनोक नगरी में बीठू परिवार की महिला चाहे बूढ़ी-बड़ी ही क्या न हो जैसे ही मदिर में प्रवेश करती है थाड़ा घूघट सारती है। प्रतिमा के सम्मुख मुह खोल कर खड़ी नही होती, दादीसा जा सामने विराजमान है। नीची झुककर अपनी साड़ी क अचल म 'पाय लागू' करती है। यह सब हिन्दू सस्कृति का उज्ज्वल पक्ष है। शिष्टाचार और शालीनता का परिचायक है।

"मर्यादानुसार देशनोक के श्रीमँढ मे पर्दा रखना मना है। यदि श्वसुर पुजारी है और पुत्रवधु दर्शनार्थ उपस्थित होती है तो श्वसुर के हाथ से सिन्दूर बिन्दी ले लेती है। भगवती की कृपा से देशनोक के चारण समाज मे आरम्भ से ही पर्दाप्रथा नही रही। माता मेहाई ने पर्दाप्रथा को कभी प्रश्रय नही दिया। यही कारण रहा होगा कि उस सामन्त युग मे यात्री महिला जैसे ही देशनोक के ओरण मे प्रवेश करती है, अपना पर्दा उतारकर एक ओर रख देती।

"देशनोक के श्रीमदिर म सूवा-सूतक (अशोच) नही लगता। मदिर मे पचाङ्ग का हस्तक्षेप नही चलता। तिथि उदयात मानी जाती है। यदि चादणी चोदस दो है तो दूसरी चोदस को मनायेगे। सूर्यग्रहण आ गया तो भी पूजा बन्द नही होगी। जोत-आरती यथावत् चलेगी। पुजारी के लिए स्पष्ट परम्परा चलती आ रही हे, उसका पालन करना होगा। स्नान करके ही निज मदिर मे प्रवेश करगा। पुजारी जोत-पूजा में तनिक भी प्रमाद नही दिखायेगा। शुद्ध सात्त्विक जीवन जीयेगा। मदिरापान नही करेगा। सुरगा साफा बाधकर जोत-पूजा मे लगा रहेगा।

देशनोक के श्रीकरणी मदिर मे माता के मीठा नेवज चढता हे। जो नेवज मँढ के रसोवडे मे तैयार होगा माता के उस का भोग लगेगा। चादणी चौदस को लापसी का भोग लगता है ओर आखा तीज को खीचडे का। उस दिन सवा मण खीचडा बनता है, जिसका सब प्रसाद लेते हे। जोत-आरती के समय माता के भोग के थाल पर काबे टूट पडते है। माता कितनी करुणामयी है काबे स्वच्छन्द मदिर मे विचरण करते रहते है। सुरक्षा के लिए मदिर के ऊपर जाल लगा हुआ है। सबसे बडी बात यह है कि काबे मुख्य द्वार से बाहर नही जाते। लोगो के मुख से सुना है कि 'काबा कार लोपे नहीं।'

माता की स्थापित की हुई मर्यादाए केवल मदिर तक ही सीमित नही है। माता की नगरी और माता के रक्षित वन (ओरण) की अपनी मर्यादाए है। पावन धरा देशनोक माता की आदर्श नगरी है। प्रेमी भक्तों की कामना है कि यह नगरी सदा आदर्श ही बनी रहे। यह नगरी पवित्र है इसका ओरण परम पवित्र है। इसी भावना से प्रेरित होकर हर वर्ष कार्तिक सुदी चोदस का आरण की परिक्रमा आरम्भ होती है। सैकडो श्रद्धालु परिक्रमा मे सम्मिलित होते हे। यहा श्रीमँढ मे नियमित जोत-पूजा के अतिरिक्त आये दिन रातीजगा

(रात्रि-जागरण) लगते रहते है। माता के रात्रि-जागरण में घत का दीपक जलता है। नाइ की मशाल जलती है। बडी धूमधाम रहती है। रात मे जब चिरजाए आरम्भ होती है, एक समा बध जाता है। माता की महर बरसने लगती है। यह सब तो आडे दिन के आयोजन हे। नवरात्रि की तो महिमा ही न्यारी हे। आश्विन नवरात्रि म क्या धूम पडती है, समूचा देश ही देशनोक की ओर उमड पडता है। आश्विन सप्तमी को श्री करणी-जयन्ती के अवसर पर शोभा यात्रा निकलती है जो तेमडाराय के मँढ तक जाती है। देशनोक नर-नारिया से उफनने लगता है।

देशनोक का मँढ माता मेहाई का अपने हाथ का थिरपा हुआ है। इस मँढ के मध्य भाग में देवी देसाणराय की प्रतिमा स्थापित हे। बीकानेर के राजा सूरसिह (विक्रम स १६७१ से १६८८) ने देशनोक मँढ मे प्रथम निर्माण कार्य कराया। गोल मँढ के चारों ओर चोकोर मण्डप बना। परिक्रमा ओर मँढ क सामन अन्तराल मण्डप बना जिसके तीनो ओर तीन दरवाजे है जिन पर चादी के क्विाड चढे हुए हे। क्विाडा पर देवी देवताओ क चित्र अकित है।

दूसरा निर्माण कार्य इससे अनुमानत दो सो वर्ष पश्चात् महाराजा सूरतसिह के समय में हुआ, विक्रम सवत् १८८२ म। चारो ओर चार बुर्जो वाला ऊँचा प्राचीर और विशाल सिहद्वार बनकर तैयार हुआ। तीसरी बार का निर्माण महाराजा गगासिह ने करवाया। मध्य द्वार व मध्य भाग का समस्त सगमरमर का निर्माण उन्ही के समय का है। राजा ने पुत्रोत्सव (जडूला) के अवसर पर सन् १९०६ म भीतरी प्रागण म सगमरमर के चोके जडाये, परिक्रमा सुधराई। मध्यद्वार की छत पर सुनहरा चित्राकन कराया जो बड़ा मनोरम है।

बाहर का विस्तृत चौक पहले कच्चा था। फिर लाल पत्थर के चौके लगाय गये, जिन्हें हटाकर अब सुन्दर टाइल्स लगा दिये गये है। सिहद्वार के मध्य भाग में काठ के पुराने क्विाड है। उनके आग जस्ते के चमकदार विशाल मगल-कपाट चढ़े हुए है।

'श्रीमद् दशनाक म उत्तर की ओर भगवती आवड़ माता का मदिर है। पाट क दशन है। पाट का शीर्ष भाग वृत्ताकार ओर कलापूण है। पाट पर सातों बहिनो का स्वरूप है। सगमरमर का छोटा-सा मनोहर मदिर है। मुख्यद्वार के अन्त प्रकोष्ठ क पार्श्वभाग म मातश्वरी के ग्वाल दशरथ मेघवाल

का देवरा है, इस देवरे के पास मे ही दो बड़े कडाव रखे हुए है, जिनको सावण-भादवा के नाम से पुकारते है। इन कड़ावो मे माता का नेवज बनता है। इन कडाहो मे नब्बे मन लापसी का दलिया, चालीस मन गुड और नौ मन घी का नेवज एक बार मे बन जाता है। प्रसाद पूरी नगरी म वितरित किया जाता है। सावण-भादवा के पास ही होमशाला है, जहा दुर्गाष्टमी को हवन होता है।

"श्री मदिर से लौटते समय मुख्य द्वार के बाहर की ओर सजाये सगमरमर के शिल्प वैभव का देखना न भूले। यह सगमरमर का कलात्मक सिहद्वार सेठ चादमल ढड्ढा ने बनवाया जिसका महान् शिल्पी था हीरा सुथार। काबो की मनोरम पक्तिया, केवडे के पत्ता म लिपटी सर्पाकतिया, पूगी बजाते सपेरे, वनस्पति और जीव-जन्तुओ का कुशल सजीव अकन सब अद्भुत और आकर्षक लगता है। हीरा सुथार ने जिस मनोयोग के साथ तन्मय होकर इस कलाकृति को तैयार किया वह सब मातेश्वरी की कृपा का प्रतिफल है। इसकी एक सुन्दर अन्तर्कथा है जिसे बहुत वर्ष पूर्व सुनने का सोभाग्य प्राप्त हुआ।

'कथामत' का लेखक युवावस्था मे (जब वह २१ वर्ष का था) देशनोक घूमने चला आया। वह सेवापुरा से पैदल चलकर जयपुर आया। जयपुर से ट्रेन पकडी और सुबह देशनोक आ उतरा। उसने अपने जीवन मे चीलो स्टेशन पर सर्वप्रथम राष्ट्र ध्वज के दर्शन किये। इस कारण तिथि याद रह गई। १५ अगस्त, १९४७ का शुभ दिन था। देशनोक के रेल्वे स्टेशन पर भी वही तिरगा लहरा रहा था। कुछ देर तो वह ध्वज की ओर निहारता रहा, फिर श्रीमँढ की राह ली। मदिर म उसे दो ही चीजो ने आकर्षित किया। एक तो थे चुहल मचाते कावे और दूसरा था मदिर का मुख्य द्वार। इस कलाकृति को देखकर तो मन मोहित हो चला। अपराह्न वह नेहडी जी के यहा घूमता हुआ पहुचा। नेहडीजी के मदिर की परछाया में दो वयोवद्ध चारण बैठे बातें कर रहे थे। पूछने पर उनम स एक ने श्रीमँढ के मुख्य द्वार की शिल्प कथा कह सुनाई।

वद्ध सज्जन ने बताया कि उसने उस शिल्पी को देखा था। सगमरमर के बीच बैठा वह काम मे लगा रहता। वर्षो तक काम चलता रहा। सेठ कही बाहर रहता था। वहा से जब देश आया तो शिल्पी से पूछा– 'हीरा, अब किताक दिन ओर लागसी।'

'सेठा धीरज राखो।'

दूसरी बार जब सेठ आया तो वही प्रश्न था और वही उत्तर।

तीसरी बार सेठ उतावला (व्यग्र) हो उठा और पूछा, हीरा काम पूरो कद हुसी।'

हीरा ने उत्तर दिया, 'जोगमाया ही जाणै। सेठा थारी म्हारी ऊमर मे तो काम पूरा व्है नही।'

'जणा मने दूसरी जगा सू कारीगर ल्याणा पडसी।'

आ आप जाणो।' हीरा अपनी छीणी हथौडी लेकर घर चला गया। आगरे से नये शिल्पी आये। हीरा ने प्रस्तावित निर्माण कार्य का कही कागज पर चित्राकन तो किया नही था। श्रीमदिर के एक ओर तराशे हुए पाषाण खण्डो के तीन दरवाजे बन रहे थे। कुछ समझ मे आया नही। नये शिल्पी कुछ नही कर पाये।

सेठ हार खाकर फिर हीरा को बुलाने गया। हीरा ने साफ उत्तर दे दिया कि भगवती ने दाल रोटी दे रखी है। अब मुझ से काम होगा नही।

सेठ धमसकट मे पड गया। वह बीकानेर महाराजा गगासिह से मिला। सारी बात कह सुनाई। राजा ने अपने किसी बडे सामन्त को हीरा को बुलाने भेजा। उसे भी वही उत्तर मिला। अन्त मे महाराजा गगासिह एक दिन स्वय घोडे पर चढकर हीरा की गुवाडी मे पहुच गये। राजा को आया देख हीरा हाथ जोडकर खडा हो गया। राजा ने उसके कुशल समाचार पूछे। मदिर का प्रसग चलाया। हीरा ने उत्तर दिया— जोगमाया री दया है। आपरा राज में सब सुख चैन है। आप पधार आया तो चाल्या सरसी।'

वही छीणी हथौडी फिर चलने लगी। सिहद्वार के शीर्ष भाग तक काम पूरा कर दिया। गवाक्ष का अलकरण अधूरा ही रह गया। हीरा नहीं रहा जो कुछ वह कर गया वही अद्वितीय है।

'श्रीमँढ देशनोक के सामने पूर्व दिशा मे श्रीकरणी सभागार है। भव्य भवन है। ८२×३६ फीट का विशाल मडप है। सगमरमर का सुन्दर फर्श है। यात्रियो के लिए सभागार का आकर्षण भवन की दीवालो पर बने रगीन चित्र है। माता मेहाई के जीवन प्रसगो से जुडे २२ भित्ति-चित्र है। षट्शती जयन्ती पर श्रीकरणी मदिर निजी विन्यास की ओर से इस सभागार का निर्माण हुआ। प्रात से साय तक सभागार दर्शको के लिए खुला रहता है।

"देशनोक मे यात्रियो के ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाए, विश्राम-स्थल और अतिथिगृह है। श्रीमंढ के सामने श्रीकरणी विश्राम-स्थल है जिसके मुख्य भवन मे १३ कमरे और पीछे की ओर २२ कमरे है। कमरो के सामने लम्बे बरामदे मे ५० आलमारिया हे। इसी विश्राम स्थल से लगे दक्षिण मे दस पृथक् विश्राम कक्ष है, जिनकी चाबी विश्राम-स्थल के व्यवस्थापक के पास रहती है। विश्राम स्थल (धर्मशाला) के कमरो का नाममात्र का किराया है। जल और प्रकाश की सुविधा है। श्रीमॅढ देशनोक के सामने प्रशस्त प्रागण है। तोरण द्वार है। श्रीमँढ और विश्राम स्थल के दक्षिण भाग मे यात्री विश्रान्ति गृह है। बीच म बडा हॉल है, पास मे प्याऊ है, पार्श्व भाग मे सुविधा कक्ष है। श्रीमँढ के चारों ओर सडक बनी है।

"जब विश्राम स्थल और धर्मशालाए नही थीं, देशनोक धाम के यात्री श्रीमँढ मे ही ठहरा करते थे। वह सुविधा आज भी उपलब्ध है। कोई यात्री चाहे तो मदिर म ठहर सकता है। नीचे बरामदे है। ऊपर चार बडे कमरे है। सब यात्रियों के लिए है। मदिर के उत्तर मे मोहता धर्मशाला है। पास मे ही राजस्थान पर्यटन विकास निगम द्वारा निर्मित श्रीकरणी-यात्री निवास है। भगवती की कृपा से इन दिनो श्रीकरणी-यात्री निवास की व्यवस्था श्री करणी मदिर निजी प्रन्यास के हाथ मे आ गई है।

"नवरात्रि के दिनो मे आवास की विशेष व्यवस्था रहती है। यात्रियो की सुविधा के लिए लोग निजी गेस्ट हाउस खाली कर देते है। पूरी नगरी यात्रियो की सुख-सुविधा का ध्यान रखती है। देशनोक धाम की यह अपनी विशेपता है।

"श्रीकरणी धर्मशाला (विश्राम स्थल) के उत्तर मे 'श्री करणी भोजनालय' का भवन है। पुरुषों ओर महिलाओ के बैठने के लिए अलग-अलग कमरे है। इस भोजनालय मे एक कर्मचारी बारह मास रहता हे। कोई गरीब यात्री आ जाये तो भोजन करा देता है। सदावर्त व्यवस्था चलती हे।

"भोजनालय में नवरात्रि पर्व पर विशेप व्यवस्था रहती है। सुबह नो वजे से रात को दस बजे तक कोई भी आओ और भोजन पाओ। यहा राव शेखा को जिमान वाली बाला रिधुबाई का भण्डार चलता है। भूरा भसली की कडाही नौ दिन तक चलती ही रहती है। मॉता के यात्री जीमते रहते है।

' इस भोजनालय मे सौ व्यक्ति एक साथ बैठ कर भोजन कर सक्ते है। पुरुषा और महिलाओं के बैठने की व्यवस्था अलग-अलग है। सेवादार तत्पर खडे रहते है। माता के यात्रियों को बडे स्नेह और सत्कार के साथ जिमाते है। लम्बा कुरता पहिने और ऊची चोटी बाधे सेवाभावी महिलाए आगन्तुक महिला यात्रिया की सार-सभाल रखती है। कोई बरतन साफ करने मे लगी है तो कोई परोसने मे। सभी सेवा का लाभ लूटने मे लगे रहते है। सेवादल पर भगवती 'माजीसा' की कृपा बरसती है। माता मेहाई की अपार लीला है।

ये सब सेवादार एक ही सूत्र में बध हुए है। एक ही गाव परिवार से चल कर आते है। समस्त भोजन सामग्री अपने साथ लेकर आते है। नौ दिन तक जिमाते है और चले जाते हैं।

श्री करणी विश्रामस्थल के सामने से जो सडक जा रही है, यही पास मे ही मातेश्वरी का करणीसर कुवा है। शानदार कुवा है। विशाल टैंक है। कितनी ही मोटर चलाओ इस कुए म कभी पानी नहीं टूटता। यह 'सुवाप री सगत' का प्रत्यक्ष परचा हे। चार फीट पानी का भराव बना रहेगा।

' देशनोक म माता की पुरातन मंढी पर निर्मित आई मा तेमडाराय का मदिर है। यह मदिर सुनारों के बास मे बस्ती के बीच म है। मदिर म तेमडाराय की मनोरम प्रतिमा है। चौकोर पाट पर साता बहिने उत्कीर्ण है। किसी कुशल शिल्पी की कृति है। माता के मुखारविन्द बड मनोहारी है। शीश पर मुकुट और काना म कुण्डल। सिदूर चर्चित प्रतिमा बडी ही सुहावनी लगती है। इसी पाट के पृष्ठभाग पर श्रीकरणी किनियाणी द्वारा पूजित वह पुरातन करण्ड (पूजा-मजूषा) स्थापित हे। यह मातश्वरी का दर्शनीय करड है। यही करण्ड काना चाडावत के लिए सुमेर बन गया था। इस करण्ड की अपार महिमा है। यह करण्ड माता का पुनीत प्रतीक है। इस मदिर म नित्य नियमित जात-पूजा होती है। माता क सबस छाट पुत्र लाखणजी के वशज मदिर की पूजा करत है।

'देशनोक की स्थापना से पूर्व अम्बा अरण्यवासिनी जागळू के बीड म रहती थीं। वह पावन स्थल 'नेहडीजी' के नाम से प्रसिद्ध है। श्रीमंढ स नेहडी जी तक सडक बनी हुई है। नेहडीजी श्रीमंढ से थोडी दूर पश्चिम म है। बीच मे आरण आता है। नेहडीजी की महिमा न्यारी है। यह पावन

वन दूसरा व्रजधाम है। अम्बा अरण्यवासिनी ने नेहडीजी मे रहकर इस वृन्दावन मे नौ वर्ष तक गाये चराई हे। गौसेवा मानवता का प्रतीक है। हिन्दू सस्कृति का यह एक उज्ज्वल आयाम है।

"जिसने जीवन भर गोसेवा की वह हमारा आराध्य बन गया। जिसने गायो के लिए अपने प्राण दे दिये, वह हमारा देवता बन गया। गोभक्त जाम्भाजी और गोरक्षक पाबू राठौड इसी कारण लोक पूज्य है। गोकुल के गोपाल की तो बात ही निराली है।

'नेहड़ीजी' उस खेजडी का नाम है, जहा बैठकर माता मेहाई विलोवणा (दधि-मथन) किया करती थी। जागळू आगमन पर विक्रम सवत् १४६७ मे किसी शुभ वेला में मातेश्वरी ने दही के छींटे देकर नेहडी के रूप मे खेजड़ी की एक गीली लकडी रोपी थी। वही हरी डाली नेहडीजी बन गई जो हरी-भरी लहरा रही है। शताब्दिया स इस खेजडी की पूजा हो रही है।

"इस खेजड़ी के नीचे विक्रम सवत् १९९९ के आश्विन मास मे माता मेहाई की प्रतिमा स्थापित कर दी गई। प्रतिमा के अधोभाग मे इस आशय का शिलालेख अकित है। छोटा-सा सुरम्य देवरा बना दिया। भीतर चार तिबारे खुल रहे है। इन सबके ऊपर नेहडीजी की पवित्र खेजडी फेली हुई है।

"इन्ही वर्षो मे बहुत कुछ बन गया है। सामने प्रागण म सगमरमर लग गया। दोनो ओर दो विश्राम स्थल वन गये। प्रागण मे एक पीपल का पेड लग रहा है। माता का देवरा, देवरे के सामने का कमरा, बगल का रसोवडा और चारो ओर का परकोटा बीकानेर के महाराजा गगासिह ने बनवा दिया था। मदिर के पिछले भाग मे एक गुफा है, जहा आत्मस्वरूप बाबा का धूणा है। बाबा ने चालीस वर्ष तक यहा रहकर तपस्या की। कहते है माता मेहाई की प्रेरणा से ही बाबा सागरिया से चलकर यहा आया। मदिर से थोडी दूर पश्चिम में भोम्याजी की खेजडी है, खेजडी के सामने थान है। नेहडीजी के मदिर की ओर से सध्या को बाबा के धूणे पर और भोम्याजी के थान पर दीपक जलात है।*

---

* भाजासर (सीकर) निवासी चारण चालकदान न नहड़ीजी क निकट आरण म आत्मोत्सर्ग कर दवपद पाया। उन्हीं का खजडी क सामन थान है जा भाम्याजी का थान कहलाता है।

'नेहडीजी के मदिर मे बाहर के प्रागण मे प्रवेश करते ही मातेश्वरी अम्बा अरण्यवासिनी के दर्शन होते है। जाग्रत प्रतिमा है। माता का बाला स्वरूप है। बाये हाथ मे त्रिशूल है। मुख-मण्डल पर अद्भुत सौम्य भाव है। प्रतिमा का शृगार होता है। श्रीमँढ की भाति जोत-आरती होती है। प्रसाद वितरित होता है। जो बारीदार (पुजारी) देशनोक के श्रीमँढ मे पूजा करता है, वही परिवार नेहडीजी की पूजा करता है। दोनो मदिर एक ही माने जाते है। प्रतिमा की जोत-आरती के साथ ही नेहडीजी की खेजडी की जोत-आरती होती है।

खेजडी नेहड़ीजी माता का जीता जागता स्मृति-चिह्न है। नेहडीजी प्रेमी भक्तो का कल्पतरु है। नेहडीजी के कोमल पत्ते, अकटक टहनिया और वक्राकृत लहराते हुए छोटे-मोटे डाले कितने सुहावने लगते है। नेहडीजी की सबसे बडी महिमा यह है कि यह पावन-स्थल शताब्दियो से एक पुनीत साधना स्थल रहा है। यहा आते ही मन एक उच्च भाव भूमि पर विचरण करने लगता है। घण्टे दो घण्टे बैठकर देखे, करणी करणामयी यहा आनन्द वर्षण करती रहती है।''

करणी माताजी के आने वाले भक्तो को मातुश्री के दर्शनो के अतिरिक्त निम्न वस्तुए भी देखनी चाहिए—

१ श्री करणी माता द्वारा निर्मित गुफा,
२ काबा का जुलूस,
३ मुख्य द्वार की आकर्षक कलापूर्ण कारीगरी,
४ मुख्य स्थान नेहडीजी,
५ श्री करणी माता की पूजा की पेवटी।

श्री करणी माता के अन्य स्थानों पर देवालय

श्री करणी माताजी के देश मे पूजित एव स्थापित देवालयो, लोकदेवी एव शाक्त मत के सम्बन्ध मे श्री करणी-कथामृत[1] मे विस्तृत जानकारी दी गई है जिसके अनुसार—

---

१ श्री करणी कथामृत— ल शार्दूलसिह कविया, पृ १३९ १४२

"पश्चिम भारत म शताब्दियो से जूनी जोगण आई माता की पूजा-अर्चना चल रही है। सात सौ वर्ष बाद पश्चिम राजस्थान में फलौदी के निकट ग्राम सुवाप मे मेहा चारण के घर आवडा मामडाई बाला रिधुबाई के रूप म कृपा कर फिर अवतरित हुई, जिनके पावन प्रसगो से हम सब अवगत है।

"माता मेहाई के चार मुख्य धाम है— सुवाप, साठीका, देशनोक और परमधाम रिणमँढ गडियाला। इन चारो धामों के अतिरिक्त गाव-गाव के करणी माता के थान, मँढ या मदिर है। अधिकाश स्थानों पर शक्ति का प्रतीक त्रिशूल अकित है। जाल खेजड़ी अथवा नीम पर लाल ध्वजा फहरा रही है। कही-कही माता की प्रतिमा स्थापित है। अनेक स्थानो पर नित्य जोत-आरती होती है।

राजस्थान से बाहर मालवा, गुजरात, उत्तरप्रदेश और हरियाणा म अनेक स्थानो पर करणी माता के मदिर है। यमुना तट पर श्रीकरणी माता मदिर, मथुरा, श्रीकरणी मदिर गोविन्दपुरी हरियाणा, श्रीकरणी मदिर नागवाडा, भोपाल प्रसिद्ध मदिर है। नरसिहगढ (मध्य प्रदेश) म माता का विशाल मदिर है। जोरहाट (असम) म करणी माता का मदिर है।

"राजस्थान मे करणी माता के अनेक प्रसिद्ध मदिर है, जिनमे नियमित रूप से जोत-आरती होती है। अनेक गावो मे इन पिछले वर्षो मे नित्य जात-आरती आरम्भ हो गई हे। ऐसे गावो की सख्या बढती जा रही है। कुछ उल्लेखनीय मदिरों के नाम—

श्री करणी मदिर करणीघाट पुष्कर (अजमेर)
श्री करणीधाम छोटडिया (चूरू)
श्री करणी मदिर मथाणिया (जाधपुर)
श्री करणी मदिर कीतासर (चूरू)
श्री करणी मदिर बाला किला (अलवर)
श्री करणी मँढ खुडद (नागोर)
श्री करणीकोट दाता (सीकर)
श्री करणीजी का मदिर चारण छात्रावास (जोधपुर)
श्री करणी धाम छावसरी (झुन्झुनू)
श्री करणी मदिर चद्पुरा (जयपुर)
श्री करणी मदिर नान्ता (कोटा)

'चारणा के हर गाव म करणी माता का मदिर मिलेगा। इनम कुछ मदिर तो बहुत ही भव्य और व्यवस्थित है। इनमे से अनेक गावा मे जोत-आरती होती है। शेष म धूप-दीप करते है। कुछ गावा म मदिर म माइक व्यवस्था भी है जहा प्रात साय माता का चिरजागान होता रहता है। गाव के शात वातावरण म चिरजागान सुहावना लगता है। चिरजागान और नाम सकीर्तन से गाव के वातावरण मे सात्विकता आ जाती है।

'राठौड राजपूत करणी माता को अपनी कुल देवी मानते है। घर-घर में करणी माता की पूजा होती है। पुष्करणा समाज मे करणी माता का बड़ा इष्ट है। अपने घरो में माता की पूजा करते है। विश्नोई समाज और सोनिया मे माताजी की बडी मान्यता है। पश्चिम राजस्थान के सभी जिलो में अधिकाश हिन्दू समाज म करणी माता की बडी मान्यता है। भारत मे लाखो परिवार करणी माता से जुड़े हुए है। आई मा परमेश्वरी की पातडी की भाति करणी माता की चादी, सोन की मूरत गले मे धारण करते है। नोहर-भादरा की ओर देखने म आया, महिलाए करणी माता की मूरत का सोने का काठला (कठहार) पहनती है। पश्चिम भारत म आइ मा डूगरराय और श्री करणी मेहाई की पूजा का प्रचलन है। शुक्ल पक्ष की सप्तमी को डूगरराय और चादणी चौदस को करणी माता के प्रसाद चढाने की परम्परा शताब्दियो से चल रही है। उस दिन घर-घर म नवज (नैवेद्य) बनता है। माता को पूजते है। नवरात्रि का पावन पर्व मातृ-उपासना का सर्वमान्य समय माना जाता रहा है। सम्पूर्ण भारत में समस्त हिन्दू समाज नवरात्रि के दिना मे किसी न किसी रूप मे माता को मनाता है।

लोक देवी

लोक देवी के रूप म आवड़ माता और करणी माता की सर्वाधिक मान्यता है। गुजरात की सर्वप्रिय लोकदेवी खाड़ियारजी है। खोड़ियार के बाद बैचरामाता की गुजरात में बड़ी मान्यता है। आबू के पास आरापुर श्वेत पर्वत पर अम्बाजी का मदिर है जो धोळागढ़ की राय कहलाती है। लोकदेवी के रूप म अम्बाजी की बड़ी मान्यता है। दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है। अम्बाजी चसखड़ा चारण की बहिन थी और खिवड़ी जी चसखड़ा चारण की पुत्री, इसी स खिवड़ा चसखड़ाइ कहलाती है। लाकदेवी खिवड़ी अन्नपूणा

के रूप म विख्यात है। बिरवड़जी के अनेक मँढ़ है। जोधपुर जिले मे बिराई गाव मे नदी के किनारे माल्हण माता का थान है। माल्हण माता की कृपा से बिराई मे जलाभाव नहीं है। लोकदेवी के रूप मे राजलबाई के अनेक मँढ है। जिनमे रोहिट के पास गढ़वाड़ा का मँढ और लाडणू के पास समना का मँढ़ प्रसिद्ध है। बडी लोक-मान्यता है। समना मे एक वृद्ध मोतीसर माता का पुजारी है। बड़ी भाव-भक्ति से पूजा करता है। स्वरचित चिरजाए सुनाता है।

' नागौर जिले मे इन्दोखा गाव मे लोक देवी गीगायजी का प्रसिद्ध थान है। चारा ओर ओरण है। माता की बडी मान्यता है। माता के प्रसिद्ध पवाड़े है। नावद मे गीगाय माता ने अपने बछड़ों को नाहर बना दिया था, जिन्हे देख कर मुसलमान आक्रान्ता सिर पर पैर रखकर भाग गये। इसी प्रकार लोक-देवियों के अनेक नाम है। अनेक धाम है। बहुसख्यक हिन्दू समाज इन लोक पूज्य देवियो से जुडा हुआ है। लोग भाव-भक्ति से माता की जात देते है, पूजा-अर्चना होती है, मेले भरते है, माता के नाम पर सुवासिनी जिमाते हैं, रात जगाते है, सामाजिक समारोह अथवा पारिवारिक उत्सव मे माता की चिरजाए गाते है, माता को मनाते है। महिलाए सामूहिक रूप से माता की चिरजाए गाती है, जब माता की चिरजाए गा चुकेगी तो अन्त मे भैरव गायेंगी। भैरव माता का पार्षद हे, अग्रगामी है। चारण समाज की महिलाए भैरव को बीरा (भाई) कहकर सम्बोधित करती है। कहते हे जब चिरजागान होता है भैरव एक पैर पर खडा होकर तन्मयता के साथ माता का गुणगान सुनता है। भैरव को विश्राम देने के लिए अन्त म भैरव गाया जाता है। शाक्त परिवारा मे मातेश्वरी और भैरव परिवार के सम्माननीय सदस्य माने जाते है। ऐसे परिवार माई से कृपा-भाव की कामना करते है। काई छोटा-मोटा काम हो तो भैरव से निवेदन कर देते है। भैरव कारज सुधार जाता है।

शाक्त मत

"सम्पूर्ण चराचर जगत शक्ति से ओत-प्रोत है। शक्ति अनन्त है, सर्वत्र है ओर सबमे व्याप्त है। आदि-शक्ति ज्योतिर्मयी है और स्वभाव से आनन्दमयी। तेज, बल, ऐश्वर्य, विभूति शक्ति के गुणधर्म है। सृष्टि मे जो विविधता दृष्टिगोचर हो रही है, यह सब जगदम्बा का लीला विलास है। इस विविधता के प्रच्छन्न में जो शाश्वत साम्य है, वह परमशक्ति है।

'मानव आदिकाल से ही शक्ति का पुजारी रहा है। शाक्त धम अन्ध-श्रद्धा पर टिका हुआ नही है। यह जीवन का शाश्वत सत्य है। पूर्ण वैज्ञानिक और व्यावहारिक है। सभी मत मतान्तर शक्ति का लोहा मानते है। सभी धर्मो मे किसी न किसी रूप मे शक्ति की उपासना चल रही है। मानव शक्ति के बिना शून्य है। जब मानव पर कष्ट आता है तो वह अपने इष्टदेव को पुकारता है। जब देवताओ पर सकट आता है तो वे परित्राण पाने के लिए शक्ति का स्मरण करते है। स्तव गान करते है।

शास्त्रा में 'शाक्ता एव द्विजा सर्वे' कहा गया हे। इसके पीछे एक गूढ रहस्य हे। जो मानव सासारिकता से ऊपर उठना चाहता है, जो धार्मिक भावना से अनुप्राणित है, उसे इसी जीवन मे एक नई दृष्टि मिल जाती है। ऐसे सभी लोग किसी न किसी रूप म शक्ति क उपासक है। व शाक्त-भावना को जीवन मे मान्यता देते है। पल भर के लिए भी शक्ति क प्रकाश से विमुख नही होना चाहते।

करणी माता का मदिर देशनोक मे तो है ही साथ ही सुवाप वह पवित्र स्थान है जहा माता ने रिघू बाई के रूप में जन्म लिया तथा अपना बाल्यकाल व्यतीत किया। ग्राम साठीका जहा माता लीलारूप म विवाहिता होकर गई एक पवित्र धाम है जहा मातुश्री करणीजी ने सदेह लीला समाप्त कर देह त्याग किया तथा भवगती की ज्योति मे ज्योतिर्लीन हो गई।"

पारीका के एक अवटक सोतडो (जोशी) की कुल देवी करणी माता बताई गई है।*

---

* करणी माता का प्रादुर्भाव आज स लगभग ६० वर्ष पूर्व हुआ था जबकि पारीका का यह अवटक अनादि है जिसकी ज्ञात प्रथम जानकारी सवत् ९०० की है जब पुष्कर म ब्राह्मणों की जनगणना पारीक कुल भूषण सुधन्वाजी न कराई थी अत बाद म भगवती स्वरूपा मा करणी द्वारा सोतडा अवटक क पारीकों की मनाकामना पूर्ण करन क कारण उन्होंन करणी माता का अपनी कुल दवी क रूप में पूजना प्रारम्भ कर दिया हा यह सभव है।
* कुछ विद्वान सातड़ा अवटक की कुल दवी जहा करणी माता का बतात हैं, वहीं कुछ विद्वान सातड़ा अवटक की कुल दवी कुमारिका का बतलात है।

□□□

काली: भद्रकाली: कालिका. वरदायिनी माता

काली, भद्रकाली एव कालिका भगवती के ही स्वरूप है, इनम भेद नही है तथापि हिन्दू धर्मकोष[1] म माता के तीनो स्वरूपो की जो व्याख्या की गई है वह निम्न प्रकार है—

कालिका

काले (कृष्ण) वर्णवाली। यह चण्डिका का ही एक रूप है, इसके नामकरण तथा स्वरूप का वर्णन कालिका पुराण (उत्तरतन्त्र, अ ६०) म निम्न प्रकार से किया गया है– 'इन्द्र के साथ सभी देवतागण हिमालय म गगावतरण के पास महामाया को प्रसन्न करने लगे। उनके द्वारा स्तुति किये जाने पर देवी ने मातङ्गवनिता की मूर्ति धारण करके देवताओ से पूछा 'तुम अमरों द्वारा किस भाविनी की स्तुति की जा रही है? किस प्रयोजन के लिए तुम लोग मातङ्ग-आश्रम मे आये हो? ऐसा बोलती हुई मातङ्गी के शरीर स एक देवी का रूप प्रगट हुआ। उसने कहा, देवगण मेरी स्तुति कर रहे है। शुम्भ और निशुम्भ नामक दो असुर सभी देवताओ को पीडित कर रहे हे। इसलिए उनके वध के लिए समस्त देवताओ द्वारा मेरी स्तुति हो रही है।' मातङ्गी की काया से उसके निकल जाने पर वह घोर काजल-सदृश कृष्णा (काली) हो गई। वही कालिका कहलायी, जो हिमालय के आश्रय में रहने लगी। उसी को ऋषि लोग उग्रतारा कहते है। क्योंकि वह उग्र भय से भक्तों का सदा त्राण करती है।'

काली

शाक्तो में शक्ति के आठ मातृका रूपा के अतिरिक्त काली की चर्चा का भी निर्देश है। प्राचीन काल में शक्ति की, कोई विशेष नाम न लेकर, देवी या भवानी के नाम से पूजा होती थी। भवानी से शीतला का भी बोध होता था। धीरे-धीरे विकास होने पर किसी न किसी कार्य का सम्बन्ध किसी

---

१ हिन्दू धर्मकाष ल डॉ राजबलि पाण्डय पृ १८१, १८२ ४६८

विशेष देवता या देवी से स्थापित होने लगा। काली की पूजा भी इसी विकासक्रम मे प्रारम्भ हुई। त्रिपुरा एव चटगाव के निवासी काला बकरा, चावल, केला तथा दूसरे फल काली को अर्पण करते है। वहाँ काली की प्रतिमा नही होती, केवल मिट्टी का एक गोल मुण्डाकार पिण्ड बनाकर स्थापित किया जाता है।

मंदिर मे काली का प्रतिनिधित्व स्त्री-देवी की पतिमा से किया जाता है, जिसकी चार भुजाओं में, एक म खड्ग, दूसरी मे दानव का शिर, तीसरी वरद मुद्रा मे एव चतुर्थ अभय मुद्रा मे फैली हुई रहती है। कानो मे दो मृतका के कुण्डल, गले मे मुण्डमाला, जिह्वा ठुड्डी तक बाहर लटकी हुई, कटि में अनेक दानव करो की करधनी लटकती हुई तथा मुक्त केश एडी तक लटकते हुए होते है। यह युद्ध मे हराये गये दानव का रक्तपान करती हुई दिखाई जाती है। वह एक पैर अपने पति शिव की छाती पर तथा दूसरा जघा पर रखकर खड़ी होती है।

आजकल काली को कबूतर, बकरा, भैसों की बलि दी जाती है। पूजा खड्ग की अर्चना से प्रारम्भ होती है। बहुत से स्थानो मे काली अब वैष्णवी हो गई है। (दे कालिका पुराण)।

भद्रकाली

काली क सौम्य या वत्सल रूप को 'राटया' या भद्रकाली कहते है, जो प्रत्यक बगाली गाव की रक्षिका होती है। महामारी आरम्भ होने पर इसके सम्मुख प्रार्थना व यज्ञ किये जाते है। काली को उदार रूप म सभी जीवों की माता, अन्न देने वाली, मनुष्यों व जन्तुओ में उत्पादन शक्ति उत्पन्न करने वाली मानते है। इसकी पूजा फल-फूल, दुग्ध, पथ्वी से उत्पन्न होने वाले पदार्थो से ही की जाती है। इसकी पूजा मे पशु बलि निषिद्ध है।

काली

लगभग इसी स मिलती-जुलती कथा 'दुर्गा सप्तशती' म भी है। शुम्भ-निशुम्भ क उपद्रव स व्यथित देवताओ ने हिमालय पर देवी-सूक्त से देवी को बार-बार जब प्रणाम निवेदित किया, तब गौरी देह से कौशिकी का प्राकट्य हुआ और उसके अलग होते ही अम्बा पार्वती का स्वरूप कृष्ण-वर्ण हो गया, वे ही काली नाम से विख्यात हुई।[१]

---

१ कल्याण– दवताक वर्ष ६४ (१९९०) पृ २०१

तस्या विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत् सापि पार्वती।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया॥
दुर्गा सप्तशती ५/८८

आदि-दैत्य मधु और कैटभ के कुलो मे उत्पन्न शुम्भ-निशुम्भ नाम के दो दैत्यो ने उग्र तपस्या कर ब्रह्माजी से अजेय होने का वर प्राप्त किया। तीनो लोको पर उन्होने आक्रमण किया। सारे देवता निर्वासित किये गये। ब्रह्मा, विष्णु, शिव सहित इन्द्रादि देवो ने जाह्नवी तीर पर 'नमो देव्यै' इस स्त्रोत्र से त्रिपुराम्बा की स्तुति की। त्रिपुराम्बा ने प्रसन्न होकर गौरी को भेजा। गौरी ने देवों का वृत्तान्त सुनकर काली रूप धारण किया और शुम्भ-निशुम्भ द्वारा प्रेषित चण्ड-मुण्ड नामक दैत्यो का वध किया।[१]

भद्रकाली

भद्र शुद्धात्मविज्ञान भद्रलोकानुरूप मङ्गल च वा कलयति जनयतीति भद्रकाली।

इस निर्वचन के अनुसार भद्रकाली शब्द का अर्थ है, 'शुद्धात्मविज्ञानदात्री शक्ति।[२]

स्थान

(१) काली मा के स्थान भारतवर्ष म अनेकानेक है तथा भक्तलोग अपनी अपनी आस्थानुसार वहा जाकर भगवती की पूजा, आराधना करते है, जात-जडूले उतारते है। राजस्थान म भी भगवती काली के मदिर कई स्थाना पर है जिनमे बीकानेर जिलान्तर्गत नापासर एव अजमेर जिलान्तर्गत पुष्कर विशेष उल्लेखनीय है। अमरनाथ पाठक के अनुसार– 'तीर्थगुरु पुष्करराज मे, पुष्कर के उत्तर की ओर (मारवाड मोटर बस स्टैड के पास) पहाडी पर भगवती के इक्यावन शक्तिपीठो मे से एक प्रमुख शक्तिपीठ है। यहा भगवती सती की कलाई का मणिबध गिरा था। यहा मणीबधो की पूजा होती है। यहा पर माताजी

१ कल्याण– शक्ति अक वर्ष ९(१९३४) पृ ११९ कल्याण सक्षिप्त श्रीदेवीभागवताक वर्ष ३४(१९६०), पृ ६९५ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१(१९८७) पृ २५१

२ कल्याण शक्तिअक, वर्ष ९ (१९३४) पृ ४९४

की एक भव्य मूर्ति है जिसे यहा के लोग कालिका माता के नाम से पूजते है।''[1]

(२) *राजस्थान के ऐतिहासिक दुर्ग चित्तोड म भी भगवती कालिका* का एक भव्य प्राचीन मदिर है। मदिर म अखण्ड ज्योति जलती रहती है। मदिर मे स्तम्भो पर अगणित मूर्तिया एव बेल-बूट बने हुए है। 'इसका निर्माण मोरीवश के शासक मोरी ने कराया था, यहा ९वी शती का एक शिलालेख भी है।[2]

भवाल का कालका माता का मदिर

कालका माता का एक विशाल एव प्राचीन मदिर नागौर जिलान्तर्गत मेडता तहसील के ग्राम भवाल मे भी है, जहा कालका देवी की मूर्ति के साथ ही ब्रह्माणी माता की भी मूर्ति है। दोना मूर्तिया तीन-तीन फुट की है। काली माता को ढाई प्याल मदिरा के भोग के रूप में अर्पित किये जाते है, जो केवल चादी के प्याले म ही माता स्वीकार करती है। (मदिर निर्माण एव चमत्कारों के सम्बन्ध मे चतुर्मुखी माता ब्रह्माणी के शीर्षक के अन्तर्गत देखे।)

इस स्थान का वर्णन जोधपुर राज्य के इतिहास[3] म निम्न प्रकार किया गया है—

भवाल, यह स्थान मेडता से १२ मील दक्षिण म है। गाव के बाहर महाकाली का मदिर है। यह पहले पचायतन[4] मदिर था, पर अब चारो कोनो पर के देवालय नष्ट हो गये है। मदिर के द्वार पर विष्णु की मूर्ति बनी है, जिसकी दाहिनी ओर ब्रह्मा ओर बाई ओर शिव है। ऊपर नवग्रह बने है। भीतर बीस हाथो वाली महाकाली की मूर्ति है, जिसकी बाई ओर ब्रह्माणी है। दोनो मूर्तिया नवीन प्रतीत होती है। बाहर के तीन ताकों म से एक में

---

१ तीर्थगुरू पुष्करराज अमरनाथ पाठक प ११
२ भारत क दुर्ग ल दीनानाथ दूब पृ ४५
३ जाधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड ल गौरीशकर हीराचन्द आझा पृ ३५ ३६
४ पचायतन मन्दिर म पाच मन्दिर हात है– मुख्य मन्दिर मध्य म और शष चारा कानों पर। विष्णु क पचायतन मन्दिर क मध्य का मुख्य विशाल मन्दिर विष्णु का हाता है और मन्दिर की परिक्रमा क चारों कानों म ईशान काण म शिव आग्नय म गणपति नैर्ऋत्य म सूर्य और वायव्य काण म दवी क छाट छाट मन्दिर हात है।

महिपासुरमर्दिनी, दूसरे म गणेश और पश्चिम के तीसरे ताक मे एक छ हाथो वाली मूर्ति है, जिसमे सूर्य, शिव एव ब्रह्मा का मिश्रण पाया जाता है, क्योकि ऊपर के दो हाथो म नाल सहित कमल (नीचे के दाहिनी ओर के दोनो हाथ टूटे है) और शेष मे से एक मे पाश तथा दूसरे मे चक्र हे। सभा मण्डप म स्तम्भ सोलकिया के समय के बने है। मदिर के सामने दो देवालय है, जो सुरक्षित दशा मे है। इसमे वि स १९७० (चैत्रादि ११७१) ज्येष्ठ बदी १० (ई स १११४ ता २ मई) का एक लेख है, जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि यह मदिर १२वी शताब्दी के बाद का निर्मित नहीं है। वि स १३८० माघ बदी ११ (ई स १३२३ ता २४ दिसम्बर) के लेख स प्रतीत होता है कि उस समय इसका जीर्णोद्धार हुआ होगा।

भकरी का भद्रकाली माता का मदिर

यह स्थान पारीको की कुलदेवी के रूप मे प्रमुख रूप से माना जाता है। भद्रकाली माता का स्थान ग्राम तापडवाडा मे है। अजमेर से भकरी ६० कि मी की दूरी पर है। मेडता से अजमेर सडक मार्ग पर भकरी ४० कि मी है। भकरी से तापडवाडा दक्षिण में ३ कि मी है जहा माता विराजती हे। भकरी के किले म शीतला माता का मदिर है।

माता के मदिर मे चैत्र के नवरात्रों म ९ दिन तक अखण्ड ज्योति जलती है तथा ९ दिन तक रामायण का अखण्ड पाठ होता है। इस अवसर पर हवन भी होता है। ये सारे कार्यक्रम जनसहयोग से सम्पादित होते है। स्थानीय लोग श्रद्धानुसार अपना योगदान देते है।

अभी हाल ही मे स्थानीय लोगो के जनसहयोग से माता के मदिर के आगे (निज मदिर के आगे के दो अति पुराने छोटे छोटे सभा मण्डपो के आगे) एक विशाल सभा मण्डप का निर्माण कराया गया है तथा इसके बायी ओर एक बडा बरामदा (सवत् २०५५) दिनाक १ ९ ९८ को बनाया गया है। बरामदा हाल के बाद में निर्मित हुआ है। बरामदे का निर्माण 'तिवाडी नदरामजी के सुपुत्र सूरजमलजी पारीक, तापडवाडा ने कराया है।

---

१ दिनाक २३ ६ १९९९ का लखक न माता क दर्शन किय। साथ म चि शाभित व माहित भी थ।

मदिर के वर्तमान पुजारी गत ३-४ पीढियों से मदिर म माता की सवा कर रह हे।

मदिर के बाहर विजय स्तम्भ पर तीन ओर शिलालेख उत्कीर्ण है।

मदिर ग्राम तापडवाडा के उत्तर की ओर गाव के बाहर है। मदिर के चारा आर बाउण्ड्री बनी हुई है।

माता का गर्भगृह एव उसके आगे के दो छोटे सभामण्डप अति प्राचीन है।

माता के सामने भैरूजी विराजमान है।

माता के आगे निमित दो छोटे सभामण्डपों म दूसरे सभा मण्डप मे शीतला माता की मूर्ति है। शीतला माता के पास ही चौसठ योगिनियो की मूर्तियाँ विराजमान है।

भद्रकाली माता को कालिका के रूप मे मानते है। मूर्ति अष्टभुजायुक्त है। मूर्ति के बाई ओर दो जोगनिया माताओं की मूर्तिया है जो मदिर के समय की ही प्राचीन मूर्तिया हे।

माता की कोई सवारी नही है।

कुछ चमत्कारिक कथानक

(१) सवत् १९७२ म प्लेग हुआ था। श्री हरिरामजी गोदारा जो माता के भक्त है तथा भकरी से माता का स्थान बताने हेतु हमारे साथ मदिर मे आय थे[१] ने बताया कि उनके पिता गगारामजी के अनुसार माता ने प्रत्यक्ष बोलकर गाव वालो को कहा कि दो बकरो की बलि दी जावे, गाव में महामारी नही फैलेगी। माता के आदेशानुसार माता के दो बकरो की बलि चढाई गई गाव मे महामारी नही फैली और गाव मे महामारी से कोई मौत भी नही हुई।'

(२) महामारी के समय सवत् १९७२ में ही, गाव वाले बताते है, लोगो ने सात माताओ को मदिर में देखा, जिनके हाथो मे खप्पर थे तथा वे सातों माताए मदिर से निकल कर उत्तर की ओर चली गई।

माता का रग काला है इसलिए माता को भद्रकाली कहत है।

---

१ दिनाक २३ ६ १९९९ का लखक माता क दर्शन एव अध्ययन हतु गया था।

भोग

माता के वर्तमान मे नारियल, सीरा, पुड़ी, लापसी, चूरमा आदि का मीठा भोग ही लगता है। सामिष भोग नही लगता।

यह माता पारीकों के अलावा– ब्राह्मणो, जाटों, राजपूतों, माहेश्वरियों आदि के कई अवटको की कुल देवी है तथा गाव वालों के अतिरिक्त आसपास एव दूरस्थ प्रदेशों से सभी जाति वाले माता के यहा आते है, जात-जडूले उतारते है।

वर्तमान पुजारीजी से तीन पीढ़ी पूर्व पुजारी श्री सीतापुरीजी हुए है। सीतापुरीजी को माता प्रत्यक्ष दर्शन देती थी। ऐसा बताते है– प्रात एव सायकाल जब वे माता के दर्शन करन एव सेवा पूजा करने आते तो माता की पोशाक से भरभूटे एव कांटे चुन-चुनकर निकालते थे।

एक बार की घटना है। नवरात्रि में रामायण का अखण्ड पाठ हो रहा था। रामायण का पाठ पण्डित हरसुखजी कर रहे थे। रात्रि म उन्हे माता ने प्रत्यक्ष दर्शन दिये। उन्हे माता ने विराट रूप म दर्शन दिये थे। वे माता के विराट रूप को देखकर डर गये, पसीने-पसीने हो गये तथा बेरे पर जाकर स्नान किया।

माता के भोग और अर्चन हेतु २०-२२ बीघा जमीन अर्पित है। जमीन मे कुआ भी है।

मदिर की परिधि मे दो समाधिया है। ये समाधिया लगभग पाच सौ वर्ष पुरानी बताई जाती है। जो वर्तमान में जीण-शीर्ण अवस्था में है। इनमे से एक समाधि पर ठाकुर जालमसिहजी के समय का चरणाकित सगमरमर पत्थर है, जो समाधि के एक कोने पर रखा हुआ है जिस पर सावण बुदी ६ सवत् २०१२ उत्कीर्ण है।

मदिर के हाल में प्रवेश करते समय बाईं ओर सीढियों के पास खण्डित मूर्तिया है जिन्हे दीवार मे चुन दिया गया है ताकि वे सुरक्षित रहे। नवीन सभा-मण्डप के निर्माण के पहले ये मूर्तिया पुराने सभा मण्डप के पास रखी हुई थी।

काजीपुर की भद्रकाली[१]

भद्रकाली माता का एक स्थान जिसे स्थानीय लोग काली माता भी कहते है जयपुर से ८० कि मी , नागौर से १३० कि मी व साभर से उत्तर पूर्व म ६ कि मी की दूरी पर काजीपुर नामक ग्राम मे है। मिट्टी के भूरे टीले पर सिंदूर चर्चित पाषाण रूप म माता विराजती है जिसका शृगार माली पन्ना से किया जाता है। मूल मदिर अति प्राचीन था, किन्तु मदिर का वर्तमान स्वरूप वि स २००२ की वैशाख शुक्ला सप्तमी तदनुसार सन् १९४६ मे बरुशीरामजी बरना जोशी द्वारा निर्मित कराया गया। यह मदिर लगभग एक बीघा जमीन पर अवस्थित है। भूभाग के मध्य मे १० × ८ फुट के कमरे मे माताजी का विग्रह है तथा इसके आगे ८× १० फुट का बरामदा है।

माता के मदिर मे तीन मूर्तिया विराजमान है। भद्रकाली माता की मूर्ति मध्य म तथा उसके दाई ओर महालक्ष्मी एव बाई ओर भगवती महासरस्वती की प्रतिमा शोभायमान है। भद्रकाली माता का आयुध तलवार है। माता के दाहिनी ओर भैरवजी का स्थान है।

बरना जोशी दूर-दूर से आकर माता के यहा जात-जडूले उतारते है, मनोती मानते है माता भक्तो की मनोकामना पूर्ण करती है। विगत सात वर्षो से यहाँ आसोज के नवरात्रा की स्थापना होती है।

ग्राम काजीपुर के निवासियो का कहना है कि जब जब भी गाव वालों पर कोई विपत्ति आती, माता स्वय किसी न किसी रूप मे ग्रामवासियों को सचेत कर देती थी।

मदिर निमाण के बाद सवत् २००२ म सीकर के मक्खनलालजी गौड़ माता की पूजा अचना के लिए आए। वतमान म उनके पुत्र श्यामलालजी माता की पूजा-अचना करते है। जिसका व्यय भार स्थानीय ग्रामवासी एव बरना जोशी उठाते है।

यात्रियों की सुविधा एव रात्रि विश्राम हेतु हाल ही में स्व विट्ठल स्वरूपजी जोशी (बरणा) ने मदिर परिसर म एक धर्मशाला का निर्माण कर सन् १९९८ में माता को अर्पित की है। धमशाला में दो हाल, दो छोटे कमरे एव ६२ पट्टियो का बरामदा है।

---

१ माता के सम्बन्ध म यह जानकारी श्री नवनीतजी पारीक (बरणा जोशी) ने दी है।

कुरुक्षेत्र की भद्रकाली *

कुरुक्षेत्र अनेक तीर्थो एव मदिरो की समागम स्थली के रूप मे धर्म-क्षेत्र के रूप म विश्वविख्यात है। यहा पर भगवान एव शक्ति ने समय-समय पर अपनी लीलाओ को दर्शाकर भक्तो के कल्याणार्थ कुरुक्षेत्र को पावन देवभूमि का गौरव प्रदान किया है।

कुरुक्षेत्र मे करीव तीन सौ साठ मदिर, सात वन (काम्यक, आदिला, शारा, फलका, सूर्य, मधु, शीत), सात नदिया (सरस्वती, वैतरणी, आपगा, मधुखवा, कौशिकी, दृषद्वती, हिरण्यवती) और चार पावन कूपो (चन्द्रकूप, विष्णुकूप, रुद्रकूप, देवीकूप) का वर्णन मिलता है। यहाँ स्थित श्री देवीकूप (भद्रकाली) का महत्त्व सर्वविदित ह।

झासी मार्ग पर प्रसिद्ध स्थाण्वीश्वर महादेव मदिर से थोडी दूर पर स्थित माता भद्रकाली का मदिर इक्यावन शक्तिपीठो मे शोभायमान है। इस मदिर के समीप ही महाराजा फरीदकोट की समाधि है जहा नवरात्रा तथा दशहरे मे भारी मेला लगता ह। इस दिन माता भद्रकाली पर मिट्टी तथा लकडी के घोडे विशेष रूप से चढाये जाते है।

कुरुक्षेत्र के इस स्थान पर सती के पैर की एडी गिरी थी।

भद्रकाली मदिर कुरक्षेत्र हरियाणा का एकमात्र सिद्ध शक्तिपीठ है, जहा पर महाभारत युद्ध से पहले पाडवो ने विजय की कामना से मा काली का पूजन किया था तथा अर्जुन ने मा की स्तुति 'श्री दुर्गास्तोत्र' के रूप मे की। मा काली शक्ति अधिष्ठात्री दवी है तथा उनकी कपा के बिना कोई काम सम्पन्न नही हो सकता। महाभारत के युद्ध मे विजय पाने के बाद पाडवो ने भगवान् श्रीकृष्ण के साथ मा भद्रकाली को भेट स्वरूप घोडा समर्पित किया। तभी से अनेक अवसरो पर मनोकामना पूर्ति हेतु देवी पर मिट्टी अथवा लकडी के घोडे चढाये जाते हैं। मा भद्रकाली यदुवशियो की भी कुल देवी मानी जाती है। कहा जाता है कि श्रीकृष्ण एव बलराम का मुडन सस्कार भी इसी शक्तिपीठ मे हुआ था।

काली माता का एक मदिर ग्राम पल्लू, जिला चूरू मे भी है जिसका विवरण चतुमुखी माता के वर्णन मे देखे।

---

* दैनिक राष्ट्रदूत दि २० ९ १९९८

काली भद्रकाली कालिका-वरदायिनी माता के अन्य कतिपय मंदिर

माता के या तो अनेकानेक स्थानो पर मंदिर है तथापि उनम से कतिपय के नाम निम्न प्रकार है जिनका उल्लेख कल्याण म किया गया है–

तीर्थांक १३८	१ विंध्याचल रेल्वे स्टेशन के पास
तीर्थांक १३९	२ काली खोह-विंध्याचल से तीन कि मी यहा से एक-डेढ कि मी दूर काली देवी का दूसरा मंदिर।
तीर्थांक १३९, १७२	३ तारापुर-रामपुर हाट स्टेशन-हावड़ा से १२९ मील हावडा-क्यूल लाइन पर।
तीर्थांक १७९	४ कलकत्ता मे दो प्रसिद्ध मंदिर– आदि काली व काली मंदिर।
तीर्थांक २०८	५ मर सेनी (सवडा तहसील-दतिया) से लगभग ६ कि मी दूर इसे रतनगढ की माता भी कहते है।
तीर्थांक २१६	६ उज्जेन मे माता के भद्रकाली व महाकाली- दो मंदिर
तीर्थांक २३१	७ ओंकारेश्वर
तीर्थांक २४६	८ नासिक-भद्रकाली
तीर्थांक २७९	९ आमेर (महल में) (जयपुर)
तीर्थांक २८०	१० त्रिवेणी (शाहपुरा जयपुर)
तीर्थांक ३३८	११ वारगल-मध्य रेल्वे की बाडी-बेजवाडा लाइन पर काजीपेट से १० कि मी दूर भद्रकाली मंदिर।
तीर्थांक ३६५	१२ कावेरी नदी पर कुम्भकोणम नगर-महामाया मंदिर मे महाकाली की मूर्ति है।
तीर्थांक ४०१	१३ भोरोल-देवराज स्टेशन, पालनपुर काण्डला लाइन पर देशराज स्टेशन से थराद, थराद से भारोल
तीर्थांक ४०३	१४ हाटकेश्वर (बडनगर) (अहमदाबाद से महसाना), मेहसाना स वड़नगर रेल्वे स्टेशन, रतलाम इन्दौर लाइन पर पड़ने वाले बडनगर से यह भिन्न है।
तीर्थांक ४२२	१५ गिरनार-महाकाली शिखर पर गुफा म।
तीर्थांक ५१४	१६ कालञ्जर पर्वत पर, काली-१० शक्ति स्थानो मे से एक।
तीर्थांक ५१८	नलहाटी-हावडा-क्यूल लाइन के नलहारी स्टेशन से ३ कि मी दूर। यहा सती की उदरनली गिरी थी।

तीर्थांक ५२७ १८, मालवा (उज्जैन)– कालिका।
शक्ति उपासना १९ दिल्ली से शिमला जाने वाली रेल्वे लाइन पर कालक
अक ४१३ जक्शन- यहा भगवती कालका का प्रसिद्ध मदिर है।

जैसाकि प्रारम्भ मे बताया गया है काली, कालिका, भद्रकाली माता भगवती के ही स्वरूप है, इनमे भेद नही है तथापि पारीको के अवटको मे काली माता के कालिका एव भद्रकाली स्वरूप की ही मान्यता है। अनेकानेक विद्वान् जहा कालिका एव भद्रकाली को निम्न ६ अवटको की कुलदेवी के रूप म दर्शित करते है वही कुछ विद्वान् माता के कालिका व भद्रकाली के अलग अलग स्वरूप को निम्न अवटको की माता के रूप मे दर्शित करते है—

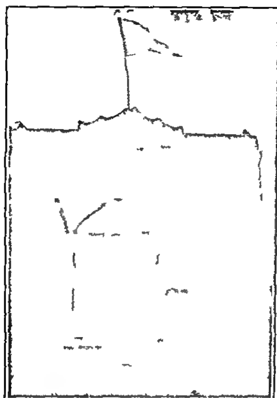
भद्रकाली

१	वरणा	जोशी
२	पाठक	व्यास
६	भार्गव	तिवाडी

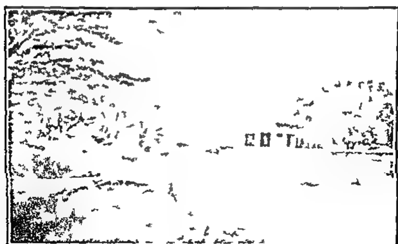
कालिका

२	बिडजारा विणजारा	उपाध्याय
३	दुरघाट दुरगाट धुरघाट	तिवाडी
४	पुरपाट	तिवाडी

□□□



भद्रकाली – त्योद काजीपुरा (सामर)



भद्रकाली – भज्री माता

कुञ्जल माता

पारीकों के ६ अवटकों की कुलदेवी कुञ्जल या कुञ्जला माता के मानवीय रूप का प्राकट्य[१] माघ सुदी १३ वि स १०८९[२] में नागौर जिले की जायल तहसील के वर्तमान ग्राम डेह म हुआ था। वह शक्ति उपासक थी। आद्या शक्ति दुर्गा की वे भक्त थी। ये सस्कार उन्हे अपने परिवार द्वारा, नवरात्रो मे देवी पूजा के समय ही मिल गये थे। यही कारण था कि वह शिव मदिर म नियमित रूप से जाकर भगवान् शिव एव आद्या शक्ति भगवती पार्वती का पूजन करती थी। वह शक्ति का अशावतार थी। शक्ति में ही विलीन हो गई। अत माँ दुर्गा उनकी आराध्या होने से मा दुर्गा की पूजा अर्चना कुञ्जल माता के रूप में भी होने लगी एव उन्हे कुलदेवी के रूप मे माना जाने लगा।

दुर्गा माता

यह आद्या शक्ति है। यह पराशक्ति है। 'दुर्गा' का अर्थ है 'जो दुर्गति का नाश करे' क्योकि यही पराशक्ति पराम्बा दुर्गा– ब्रह्मा, विष्णु एव महेश की शक्ति है। यह विश्वमोहिनी है, ये ही अधिदैविक रूप में पाश, अकुश, धनुष और बाण भी धारण करती है। ये ही महा विद्या है। जो इन्हे जानता है वह शोक और सासारिक दु ख (जन्म-मृत्यु) को पार कर जाता है। दुर्गा देवी एक ओर अनुग्रह विधायिनी है तो दूसरी ओर दुष्टनिग्रहकारिणी। वे शरणापन्न जीव पर विशेष रूप स सदा दयार्द्र रहती है। जब जब लोक मे दानवी

---

१ पारीकों की कुलदेवियों क दर्शनार्थ एव परिचय प्राप्ति हतु लखक जब नागौर जिल म गया ता दिनाक २२ ६ १९९९ का श्री सत्यनारायणजी पारीक (खातडिया) ग्राम माकाला जिला नागौर न बताया कि, एसा भी सुना जाता है कि माता धरती में मिली थी धरती (भूमि) म ही समा गई।

२ सुश्री प्रज्ञा पारीक निशा क अनुसार कुञ्जलदेवी का प्राकट्य वैशाख सुदी १०७६ का सकराण्या जाशी क यहा हुआ तथा शादी हतु बारात पौष सुदी १३ सवत् १०८९ का आई। सदर्भ– पारीक गौरव वर्ष १ अक २ पृ ४२

बाधा (अव्यवस्था) उपस्थित हो जाती है तथा अनीति, अनाचार, दुराचार फैल जाता है, तब तब वे अचिन्त्य चैतन्य शक्ति (सच्चिदानन्दात्मिका) अवतार लेकर नाम-रूप की उपाधि धारण कर लोक-शत्रुओं का (समाज विरोधी तत्त्वों का) नाश करती है। दुर्गा सप्तशती मे कहा है—

इत्थ यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदावतीर्याह करिष्याम्यरि-सक्षयम्॥
(११/५४-५५)

वस्तुत विश्व व्यवस्थिति भगवती का मुख्य प्रयोजन होता है। जब विश्व व्यवस्था बिगडने लगती है, समाज उच्छृङ्खल होने लगता है, तब वह शक्ति किसी नाम रूप का अवष्टम्भ लेकर प्रादुर्भूत होती है और निग्रहानुग्रह के प्रयोगो से लोक-धर्म (सामाजिक व्यवस्था) की सस्थापना करती है। यह शक्ति ज्योति सर्वातिशायिनी है, इससे बढकर और कुछ नहीं है। अथर्वशीर्ष' अथवा दुर्गोपनिषद् की श्रुति कहती है कि वह शक्ति 'दुर्गा' है।[१]

यस्या परतर नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता।

दुर्गा देवी की आठ भुजाय हे जिनम क्रमश गदा, खडग्, त्रिशूल, बाण, धनुष, कमल, खेट (ढाल) और मुद्गर आयुध है। मस्तक पर मुकुट व चन्द्रमा का चिह्न, तीन नेत्र व लाल वस्त्र धारण किये है तथा सिह के कधे पर सवार हो शूल से महिषासुर का वध कर रही है, ऐसा स्वरूप है माता दुर्गा का।

दुर्गा सप्तशती मे माता के १०८ नाम गिनाय गये हे।

आद्याशक्ति भगवती दुर्गा ने जब महिषासुर की सेना, उसके सेनापतियो एव महिषासुर का वध कर दिया तब इन्द्रादि देवताओ ने देवी की अनेकानेक प्रकार से स्तुति की तथा निवेदन किया— हम जब जब आपका स्मरण कर तब तब आप दर्शन देकर हम लोगों के महान् सकट दूर कर दिया करे।

सस्मृता सस्मृता त्व नो हिसेथा परमापद
यश्च मर्त्य स्तवेरेभिस्तवा स्तोप्यत्यमलानने॥३६॥
मार्कण्डेय पुराण ४/३६

---

१ कल्याण— शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४९६

हिन्दू धर्मकोष के अनुसार– 'दुर्गा की मूर्ति का अकन शक्ति के प्रतीक के रूप में हुआ है। वे अत्यन्त सुन्दरी (त्रिपुर-सुन्दरी) है, परन्तु महती शक्तिशालिनी के रूप मे दिखाइ जाती है। उनकी आठ, दस, बारह अथवा अठारह भुजाए होती है जिनमें अस्त्र-शस्त्र धारण किये जाते है। उनका वाहन सिंह है, जो स्वय शक्ति का प्रतीक है। वे अपनी शक्ति (एक शस्त्र का नाम) से महिषासुर (तमोगुण के प्रतीक) का वध करती है।'[१]

दुर्गा के पहले मदिरा एव मास का भोग लगता था किन्तु अब धीरे-धीरे शाक्तपूजा पद्धति पर वैष्णव धर्म का प्रभाव पडने पर दुर्गा बहुत अश मे अब वैष्णवी हो चुकी है।

भगवती दुर्गा की पूजा नवदुर्गा के रूप में चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से वैक्रमीय सवत्सर के प्रारम्भ और आश्विन शुक्ला प्रतिपदा से उसी सवत्सर के मध्यवर्ष मे होती है। इस समय क्रमश बसत एव शरद् ऋतु होती है। भक्त अशुभ के नाश एव शुभ की प्राप्ति के लिए भगवती पराशक्ति नवगौरी और नवदुर्गाओ की पूजन नवरात्रो म कर मनवाछित फल प्राप्त करते है।

नवरात्रों में जिन नवदुर्गाओं की पूजा की जाती है उन माताओं के नाम निम्न है—

प्रथमें शैलपुत्रीति द्वितीय ब्रह्मचारिणी।
तृतीय चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम।
पचम स्कन्दमातेति, षष्ठ कात्यायनीति च।
सप्तम कालरात्रिश्च महागौरीति चाष्टमम्।
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता।

कुञ्जल देवी का कथानक

जैसाकि प्रारम्भ म बताया गया है कुञ्जला देवी का प्राकट्य

---

१ हिन्दू धर्मकोष डॉ राजबलि पाण्डेय पृ ३२३

ग्राम डेह[१] मे हुआ था। आपके पिताजी का नाम मोहन लाल जी पुरोहित था।[२] प्रारम्भ से ही वह भक्तिभाव में लीन रहती थी। कहते है उसके जन्म के बाद परिवार उत्तरोत्तर समृद्धि की ओर बढने लगा तथा कुछ अलौकिक चमत्कार भी हुए। बालिका साक्षात् देवी स्वरूपा थी। माता-पिता लाड-प्यार से बालिका को 'कुञ्जला' कहते थे। बाल सुलभ स्वभाव के अनुसार जहाँ सम वय के अन्य बालक-बालिकाएं खेलते-कूदते वही देवी कुञ्जला धीर-गम्भीर रहती तथा हरदम मातेश्वरी के भाव मे ही दत्त-चित्त रहती थी जो उसके घर के वातावरण मे जन्म से ही विरासत मे मिली थी।

देवी कुञ्जला के मुखमण्डल पर सदा अलौकिक छटा छाई रहती थी। भगवत् भक्ति मे निरन्तर लीन रहने के कारण उसके भक्ति भाव से माता-पिता चिंतित रहने लगे। तत्समय प्रचलित सामाजिक मान्यताओ के आधार पर देवी कुञ्जला का विवाह बाल्यकाल मे होना निश्चित हुआ।

कुञ्जल देवी नियमित रूप से शिव मंदिर जाती थी।[३]

कुञ्जल-नामकरण

माता-पिता ने देवी का नाम कुञ्जल क्यों रखा? इसकी जानकारी तो नही हो सकी किन्तु संभव है पृथ्वी से स्वयं प्रगट होने वाली कुञ्जला देवी

---

१ कुञ्जल देवी का प्राकट्य पारीकों के सकराण्या जोशी परिवार मे होना मानते है। (पारीक गौरव वर्ष १ अंक २ कुल देवी कुञ्जल माता ले सुश्री प्रज्ञा पारीक दिनश। जबकि अन्य के अनुसार इनका प्राकट्य खातडिया परिवार मे भी बताया गया है।

२ श्री सत्यनारायणजी पारीक मंत्री श्री पारीक कुलदेवी कुञ्जल माताजी।

३ श्री महेश जी पारीक खातड़िया (ग्राम किकरालिया जिला सीकर राज.) ने लेखक को जब वह पारीकों की कुलदेवियों के दर्शन एवं अध्ययन के लिए गया था तब दिनांक २२ ६ १९९९ को, बताया कि कुञ्जल माता का वर्तमान मे जहाँ मन्दिर है उसके पास पहले शिव मंदिर था ऐसा उन्होंने अपने बुजुर्गों से सुना है। (स्मरण रहे कि श्री महेशजी इतिहास प्रसिद्ध भक्तमति कर्मेती बाई के पिता परशुराम जी के वंशजों मे से है) उनके बुजुर्गों के अनुसार कुञ्जला देवी वहा शिवजी के जल चढाने नियमित रूप से जाती थी तथा अपनी आराध्या माँ भगवती आद्याशक्ति की तन्मय होकर पूजा अर्चना किया करती थी।

के नाम पर ही इसका नाम कुज्जला रखा गया हो। 'कुजा' शब्द का अर्थ पृथ्वी से उत्पन्न होना होता है। हिन्दू धर्म कोष[१] में 'देवी' का अर्थ देते हुए बताया गया है कि अपने उत्पत्ति स्थानो से भी देवी के नाम मिले हे यथा कुजा (पृथ्वी से उत्पन्न) तथा 'ल' शब्द भी देवी एव पथ्वी का सूचक है।[२]

आज से लगभग ४५० वर्ष पहले भक्तमति कर्मेती बाई के पिता परशुराम जी को भी दुर्गा माता ने अपने मूल स्वरूप अष्टभुजा सहित सिह पर सवार होकर दर्शन दिये थे।[३] जिसका विवरण निम्न प्रकार है––

परसराम जी की उम्र काफी हो गई थी (शायद ४०-५० साल के लगभग) उस समय तक उनके कोई सतान नही हुई थी, इस दु ख से दु खी होकर वे अपनी कुलदेवी 'कुजल माता' की यात्रा सतान की इच्छा से करने को कटिबद्ध हुए और स्त्री सहित जायल नगरी' (मारवाड) के लिए रवाना हुए। उन्होने यहा तक प्रतिज्ञा कर ली थी कि या तो माता सतान का वर दे देगी नही तो इस शरीर को माताजी के बलि चढा देगे। चलते-चलते रास्ते मे जायल नगरी से इस तरफ कुछ रात रहे परसराम जी हाथ-मुह धोने को निकले। वे माताजी का गहरा ध्यान लगाये हुए थे। प्रात काल की कुछ लालिमा पूर्व दिशा मे झलकने लग गइ थी। आकाश म तारा का प्रकाश हो रहा था, शीतल मद पवन बह रही थी। ऐसे सुदर समय म सामने से एक दीप्तिमान स्त्री का उन्हे आभास हुआ। दर्शन से चित्त प्रसन्न हुआ। उस प्रकाशमान मूर्त्ति ने पूछा, 'तू कहा जाता है' परसराम जी ने अपने मनोरथ को बडे आर्त्त स्वर से कहा कि मै अभागा हू, मेरे सतान नहीं होती सो अब कुलदेवीजी को अपनी बलि देने जा रहा हू। उनकी मर्जी होगी तो मुझे सभागा कर देगी नहीं तो जीकर क्या करना है? इतना सुनकर उस देवी ने वरदान दिया कि जा तेरे चार पुत्र होगे' यह सुनकर वे प्रसन्न हुए ओर अपनी स्त्री का, घर-गहस्थी का विचार करके बडी नम्रता से कहा कि इतना वरदान हुआ तो एक कन्या भी होनी चाहिए और वह आप जैसी हो।

---

१ हिन्दू धर्म कोष ल राजबलि पाण्डय पृ ३३१

२ उपरात्त पृ ५६३

३ पारीक महापुरुष– ल रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी उमग, पृ ६१

देवी ने कहा कि यह भी इच्छा पूरी होगी। इस पर परसराम जी ने पूछा कि आप कौन हो और मुझ पर इतनी कृपा कैसे की तो देवी ने कहा 'जिसकी यात्रा करने और जिसको तू अपनी काया बलि चढ़ाने जाता है वह मै ही हू। परसरामजी ने पूछा कि यह मै कैसे जानू? इस पर माताजी ने सिंहवाहिनी अष्टभुजा होकर झाकी दी और कहा कि अब तो विश्वास हो गया? दर्शन करते ही और इतना सुनते ही परसराम जी ने गद्गद् होकर देवी की स्तुति करते हुए साष्टाग दडवत की और कहा कि आज मै धन्य हू और मेरा जीवन कृतार्थ हुआ। इस पर देवीजी ने आज्ञा दी कि तुझे साक्षात् दर्शन मिल चुके है अब घर लोट जा तेरी कामना पूर्ण हो जायेगी।' यह कह देवी जी अन्तर्धान हो गई। परसराम जी ने शीघ्र ही लौटकर यह वृत्तात अपनी स्त्री से कहा ओर नित्य कर्म से छुट्टी पाकर अपने घर लौटे। इस वरदान के प्रताप से उनके चार पुत्र और एक कन्या, पाच सतान हुई। यही कन्या कर्मेती बाई थी।

नरसहार होने से बचाना एव देवी ज्योति में विलीन होना

कहते है कुञ्जल देवी ने जब किशोरावस्था १२-१३ वर्ष की आयु मे प्रवेश किया तब उनके हृदय मे भक्ति-भाव उत्तरोत्तर प्रबल होने लगा तथा उनकी तेजस्विता, गुण, सौदर्य एव विदुषिता की चर्चा चारो ओर फैलने लगी। लडकी सयानी हो गई है, इसके पीले हाथ कर दिये जाव। यह विचार कर कुञ्जल देवी की सगाई दो स्थानो पर हो गई (सगाई करने के सम्बन्ध मे अलग-अलग किंवदन्तियाँ प्रचलित है। कुछ विद्वानो के अनुसार उनकी सगाई एक स्थान पर गाँव के पण्डित ने जैसा कि उस समय प्रचलित था तथा दूसरे स्थान पर मामा ने तय कर दी।) अन्य कुछ व्यक्तियो का ऐसा मानना है कि पिता ने सम्बन्ध श्रीगगानगर तय कर दिया, वही दूसरी ओर नाई बाडमेर तय करके आ गया। उन दोनो की आपस मे बातचीत नही हो सकी।[१] वास्तविकता कुछ भी हो, यह सत्य है कि शादी के निश्चित दिन के एक दिन पूर्व दो बाराते शादी के लिए आ गई। अब देवी कुञ्जला के पिता के समक्ष धर्मसकट आ खडा हुआ। लडकी के माता-पिता, परिवार एव ग्रामवासी चितित हुए। दोनो बाराते यह तय कर चुकी थी कि जिसमे भुजबल होगा वह लडकी को ले जावेगा। बाई कुञ्जल निश्चित थी। देवी माँ सब ठीक करेगी, खून-खराबा

---

१ पारीक गौरव वर्ष १ अक २ पृ ४२

नही होगा। शादी के दिन अनिष्ट की आशका लिए पूरा ग्राम भयग्रस्त था। कुञ्जला के माता-पिता धार्मिक प्रवृत्ति के होने क कारण इष्ट देवी दुर्गा के समक्ष बैठकर प्रार्थना करने लगे, इसक अतिरिक्त उनके पास अन्य कोई विकल्प भी नहीं था। कुञ्जल देवी ने सहज भाव से माता-पिता से कहा, 'आप क्यो चिंता करते है, देवी लीला अनन्त है, वह सब ठीक करेगी, आप व्यर्थ मे ही शोक-सताप न करे। यदि आपकी अनुमति हो तो मे भी शिव मदिर मे जाकर आद्या शक्ति माँ भगवती की पूजा करूँ।' माता-पिता ने सजल नेत्रा से अपनी लाडली को निहारा और स्वीकृति दे दी। अलौकिक छटा बिखेरती देवी कुञ्जला शिव मदिर की ओर चली। कुञ्जल के भाई का अपनी बहिन के प्रति प्रगाढ स्नेह था। वह भी बहिन के पीछे-पीछे गया। गाँव के काँकड स्थित (सीमा क्षेत्र) शिव मदिर था, कुञ्जला देवी ने तन्मय होकर देवी की स्तुति की तथा आर्त्त स्वर में देवी माँ से प्रार्थना की कि 'हे मातेश्वरी! मुझे लेकर अकारण ही रक्तपात होने वाला है, हे माँ! तू मुझे अपने म समा ले, हे 'कु' (पृथ्वी)! अब विलम्ब न कर।' भयकर विस्फोट के साथ उसी समय धरती फटी, हवा के वेग से पेड हिलने लगे, ऐसा प्रतीत हुआ मानो भयकर प्रलय होगा। कुञ्जला देवी शनै शनै माँ पृथ्वी म विलीन होने लगी। पृथ्वी उसे अपने अक म लने लगी। पास ही खडा भाई हतप्रभ था और देख रहा था यह अलौकिक दृश्य। जब लाडली बहिन पूर्ण रूप से धरती माता के आँचल मे समाने लगी तो वह उसे निकालने को दौड़ा, लेकिन तब तक विलम्ब हा चुका था, उसके हाथ आया हवा मे लहलहाता देवी के अगवस्त्र चुनडी का एक परला। बहिन ने भाई को कहा 'भैया शोक मत करो। हमेशा ईश्वराराधना-देवी भक्ति करते रहना।' कुञ्जल क बिना भाई गाव म लौटा। साथ था बहिन का स्मृति स्वरूप चुनडी का पल्ला। सारी घटना सुनकर गाँव एव बाराती माता के समाधि-स्थल पर गये। भूमि को नमन किया।* माता की चूनडी को वही विराजमान कर उसकी पूजा-अर्चना की। कालान्तर में वह चूनडी का पल्ला ही मदिर म पूजा जाने लगा।

---

* ठीक इसी प्रकार का वृत्तान्त एव घटनाक्रम आवरा माता (ग्राम आसावरा प स भन्सर जिला चित्तौडगढ का है। आवरा माता क विवाह का समय कार्तिक सुनी १? सम्वत ?११६ बताया गया है। फर्क है ता कवल इतना कि कुञ्जल की ग बारात आईं थीं और आवरा माता की सात बारात।

वर्तमान मदिर निर्माण

चूकि यह घटना आज से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व की है। कुछ समय पूर्व तक माता की केवल गुमटी ही थी। माता का पल्ला समय पाकर नष्ट हो गया अत सिंदूर चर्चित एक तिकोनी देवली जा स्वत ही चबूतरे पर निकल आई बताई, पल्ले के प्रतीकस्वरूप गुमटी म पूजी जाती थी, जो आज भी मदिर मे बताई जाती है। कालान्तर मे अनेकानेक भक्ता ने प्रयत्न किया कि माता का सुदर मदिर निर्मित कराया जावे, किन्तु माता ने किसी को भी मदिर निर्माण की अनुमति नही दी। जिन भक्ता ने मदिर निर्माण का प्रयत्न किया उनके प्रयत्न एक या दूसरे कारण से असफल होते गये। ऐसा भी सुना गया है कि जब भी कोई भक्त मदिर निर्माण की कल्पना करता तो माता उसे स्वप्न मे ऐसा करने से मना करती और उसकी आज्ञा क विपरीत यदि कोई निर्माण कार्य प्रारम्भ करता तो उसम विघ्न उत्पन्न हो जाता।

वर्तमान मदिर निर्माण की भी एक चमत्कारिक घटना है। खातडिया पुरोहित भवरलाल जी, निवासी लाम्बिया जिला पाली को एक दिन मातेश्वरी ने स्वप्न मे दर्शन दिये तथा आदेश दिया कि मदिर निर्माण कराओ। भवरलाल जी तत्समय अस्वस्थ थे, आपने माता से विनती की, हे मातेश्वरी! न तो मेरा स्वास्थ्य ही ठीक है ओर न ही मेरी ऐसी स्थिति हे कि आपका मदिर आपके स्वरूप के अनुरूप निर्मित कराऊ। मातेश्वरी ने कहा सब ठीक हो जायेगा। माता की असीम अनुकम्पा से जहाँ, भवरलाल जी अतिशीघ्र स्वस्थ हो गये, वहाँ मदिर निर्माण की उपयुक्त व्यवस्था भी हो गइ और माघ शुक्ला १३ सोमवार सवत् २०३४ तदनुसार दिनाक २० फरवरी १९७८ को मदिर का निर्माण होकर देवी की प्राण-प्रतिष्ठा समारोहपूर्वक सम्पन्न हो गई। अब प्रतिवर्ष मातेश्वरी के यहाँ माघ शुक्ला १२ को जागरण एव अगले दिन त्रयोदशी को मेले का आयोजन किया जाता है जिसमे न केवल आसपास क भक्तगण अपितु दूरस्थ प्रदेशा के भक्तगण एव पारीक बधु आकर माता की पूजा अर्चना करते है।

कुजला माता का मदिर ग्राम डेह मे मुख्य मार्ग पर एक ऊचे टील पर निर्मित ह। ग्राम डेह नागोर से लगभग २१ कि मी दूर नागौर-लाडनू-सुजानगढ मार्ग पर स्थित है। मदिर के नीचे ३६ ५ (साढे छत्तीस) बीघा ओरण की

जमीन है। मंदिर की व्यवस्था हेतु फरवरी १९८८ में आयोजित मेले के अवसर पर 'श्री पारीक कुल देवी कुञ्जल माताजी मंदिर विकास ट्रस्ट' की स्थापना की गई है।

मातेश्वरी की वर्तमान मूर्ति एक हाथ में अमृत कलश लिए है तथा दूसरे हाथ से आशीर्वाद दे रही है।

भोग

माताजी के मीठा निरामिष भोग लगता है जिसमें सीरा, लापसी, चूरमा आदि शामिल है।

मातेश्वरी के अन्य स्थानीय नाम

माता को फँवरी माता एवं बुहारी माता भी कहते है। विवाह के समय (फेरों में) पहनने वाली साडी को फँवरी कहते है। माता ने भूमि समाधि लेते समय विवाह के कपड़े धारण कर रखे थे और माता के भाई ने माता के भूमि समाधि लेते समय साडी का पल्ला पकडा जो उसके हाथ में रहा और फिर उसी की पूजा होने लगी, अतः इस आधार पर इसे फँवरी माता कहते है। माता के बुहारी चढाने से मुस (मस्से) मिट जाते है अतः इसे बुहारी माता भी कहते है।

आद्याशक्ति दुर्गा के कतिपय मंदिर

आद्याशक्ति जगदम्बा माता के मंदिर देश के प्रायः सभी स्थानो पर है जहाँ भक्तजन देवी का स्तुति गान कर मनवांछित फल प्राप्त करते है। कतिपय मंदिरों की सूची इस प्रकार है—

१ गढ मुक्तेश्वर
२ कर्णवास (अनूप शहर, उ प्र)। यहां माता को कल्याणी देवी कहते है।
३ कुसुम्बी (उन्नाव)
४ काशी– कालरात्रि दुर्गा, सिद्धिजा दुर्गा व दुर्गाजी
५ हीरापुरा (जि छतरपुर, म प्र) आवर माता दुर्गाजी
६ उज्जैन
७ देवझरी कुण्ड– टेमरनी, वाया खरगौन (खण्डवा)

८ पूना (पूना से ६ कि मी पहाडी पर)।
९ बनहाडी वाया ढाकोडा (नारनोल)
१० ज्ञानवापी-लोहार्गल (सीकर राज)
११ केशवरायपाटन (बूदी)
१२ कोशी (शाता दुर्गा- केवल्यपुर-गोवा)
१३ विजयवाडा (कनक दुर्गा)
१४ रामेश्वरम्।

मातेश्वरी कुञ्जला की मान्यता प्राय सभी जाति के लोगों म है। व माता के यहाँ जात-जडूले उतारने आते है तथा अपनी कुलदेवी के रूप में इसे पूजते है।

पारीका के निम्न अवटको की भी यह कुलदेवी है—

१ दुजारया दुजारा डिजारया	जोशी
२ सक्राणा सस्राणिया	जोशी
३ लापस्या	जोशी
४ बुढाणा बुढाण्या	जोशी
५ काथडा खातडिया खतारिया	पुरोहित
६ डागी	पुरोहित

□□□

गायत्री सहस्रनाम मे भी 'केसरी' का सिहरूपिणी के रूप में नाम आया है—

> कसरी केशवनुता कदम्वकुसुमप्रिया।
> कालिन्दी कालिका काञ्ची कलशोद्भवसस्तुता ॥३३

१५० केसरी-सिहरूपिणी, १५१ केशवनुता-भगवान् श्री कृष्ण भी जिन्हें प्रणाम करते है, वे १५२ कदम्वकुसुमप्रिया कदम्ब के फूल से परम प्रसन्न होने वाली, १५३ कालिन्दी कि कालिन्द-कन्या यमुना-रूपा, श्री कृष्ण की पटरानीरूपा, १५४ कालिका- काली नाम से विख्यात, १५५ काञ्ची- काञ्ची नामक क्षेत्र मे जिनकी अधिक पूजा होती है, वे १५६ कलशोद्भवसस्तुता-कलशोद्भव अगस्त्यजी ने जिनकी स्तुति की।

श्रीहरि ने समय-समय पर दुष्टो का नाश करने हेतु अवतार लिये है। हिरण्यकश्यपु ने घार तपस्या कर भगवान से यह वर प्राप्त कर लिया कि उसे देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष, नाग, राक्षस न मार सके। तपस्वी ऋषि भी क्रोध म आकर उसे शाप न दे। किसी अस्त्र या शस्त्र वृक्ष या पर्वत से अथवा सूखी या गीली वस्तु से, ऊपर या नीचे कही भी उसकी मृत्यु न हो। यही नही, उसने यह भी वरदान मागा कि 'न मै दिन में मरू न रात्रि मे, न भीतर न बाहर।' प्रभु से ऐसा वरदान प्राप्त कर वह निरकुश हो गया। भगवान् के भक्तो पर अनेकानेक अत्याचार करने लगा, यहा तक कि अपने पुत्र प्रभु-भक्त प्रहलाद को मारने के लिए भी उसने अनेकानेक प्रयत्न किये और अतत उसको दिये वर की रक्षा करते हुए श्रीहरि नृसिह के रूप मे खबे म से प्रकट हुए। श्री हरि का उस समय जो स्वरूप था वह आधा शरीर मनुष्य का और आधा सिह का था। शरीर मेघ के समान था तथा शब्द-गर्जना मेघ के ही समान थी उनका ओज और वेग भी मेघ के ही सदृश थे। श्री हरि के एक हाथ मे सुदर्शन-चक्र दूसरे मे शख तथा दो हाथो मे सिह के समान नुकीले नाखून थे। सूर्यास्त के समय जब न रात थी न दिन था, उसके महल की देहली पर भगवान् ने अपनी जाघो पर उसे पटक कर अपने नुकीले नाखूनो से उसका पेट चीर कर यमलोक पहुचा दिया। नृसिह भगवान् की शक्ति ही नारसिही शक्ति है तथा नृसिह भगवान के अनुरूप ही चक्र, शख एव नुकीले नाखून उनके आयुध है।

मार्कण्डेय पुराण[1] म रक्तबीज-वध के कथानक मे आया है कि चड और मुड नामक दैत्यो के मारे जाने तथा बहुत-सी सेना का सहार हो जाने पर दैत्यो के राजा प्रतापी शुम्भ के मन मे बडा क्रोध हुआ और उसने दैत्यो की सम्पूण सेना को युद्ध के लिए कूच करने की आज्ञा दी। सहस्रो बड़ी-बडी सेनाओ के साथ युद्ध के लिए वह चल पडा। उसकी अत्यत भयानक सेना आती देख चण्डिका ने अपने धनुष की टकार से पृथ्वी और आकाश के बीच का भाग गुजा दिया। तदन्तर देवी के सिह ने बडे जोर-जोर से दहाड़ना आरम्भ किया, फिर अम्बिका ने घण्टे के शब्द से उस ध्वनि को और भी बढा दिया। धनुष की टकार, सिह की दहाड और घण्टे की ध्वनि से सम्पूर्ण दिशाए गूज उठी। उस भयकर शब्द से काली ने अपने विकराल मुख को और भी बढा लिया तथा इस प्रकार वे विजयिनी हुई। उस तुमुल-नाद को सुनकर दैत्यों की सेनाओं ने चारो ओर से आकर चण्डिका देवी, सिह तथा काली देवी को क्रोधपूर्वक घेर लिया। इसी बीच्च मे असुरो के विनाश तथा देवताओ के अभ्युदय के लिए ब्रह्मा, शिव, कार्तिकेय, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवो की शक्तिया, जा अत्यन्त पराक्रमी और बल से सम्पन्न थी, उनके शरीर से निकलकर उन्ही के रूप म चण्डिका देवी के पास मुड गयी। जिस देवता का जैसा रूप, जैसी वेश-भूषा और जैसा वाहन है, ठीक वैसे ही साधनो से सम्पन्न हो उसकी शक्ति असुरो से युद्ध करने के लिए आई। जिन मे ब्रह्माजी, महादेवजी, कार्तिकेय विष्णु, वाराह, इन्द्र शक्ति के साथ-साथ नारसिही शक्ति भी आई––

नारसिही नृसिहस्य बिभ्रति सदृश वपु ।
प्राप्ता तत्र जटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसहति ॥२०॥

अर्थात् नारसिही-शक्ति भी नसिह के समान शरीर धारण करके वहा आई। उसकी गदन के बालों के झटके से आकाश के तारे बिखर पड़ते थे। भयकर युद्ध हुआ। दैत्य ने घमण्ड मे भरकर पहले ही देवी पर बाण, शक्ति और ऋष्टि आदि अस्त्रो की वृष्टि की। तब देवी ने खेल-खेल मे ही धनुष की टकार की और उससे छोड हुए बड़े-बड़े बाणो द्वारा दैत्यो के चलाये हुए बाण, शूल, शक्ति और फरसों को काट डाला। फिर काली उसके आगे

---

१ कल्याण– मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक, वर्ष २१ (१९४७) पृ २१६ श्री दुर्गा सप्तसती पृ १३४

आकर शत्रुओं को शूल के प्रहार से विदीर्ण करने लगी और खट्वांग से उनका कचूमर निकालती हुई रणभूमि में विचरने लगी। सभी शक्तियों ने दैत्यों का अपने-अपने आयुधों से संहार करना आरम्भ कर दिया। नारसिंही भी दैत्यों का संहार करने लगी।

नखैर्विदारिताश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान्।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्ण-दिगम्बरा ॥३७॥

अर्थात्- नारसिंही भी दूसरे-दूसरे महादैत्यों को अपने नखों से विदीर्ण करके खाती और सिंहनाद से सभी दिशाओं एवं आकाश को गुंजाती हुई युद्ध-क्षेत्र में विचरने लगी।

इस प्रकार क्रोध से भरे हुए मातृ-गणों को नाना प्रकार के उपायों से बड़े-बड़े असुरों का मर्दन करते देख दैत्य सैनिक भाग खड़े हुए। उन्हें भागता देख महादैत्य रक्तबीज युद्ध करने को आया। उसके रक्त की बूंद पृथ्वी पर पड़ते ही उसी के समान शक्तिशाली एक दूसरा महादैत्य पृथ्वी पर पैदा हो जाता। सभी शक्तियों ने अपने-अपने आयुधों से रक्तबीज पर आक्रमण किया किंतु उसके रक्त की बूंदों से असंख्य दैत्य उत्पन्न हो गये तब देवी चण्डिका ने काली से शीघ्रता पूर्वक कहा- चामुण्डे। तुम अपना मुख और फैलाओ तथा मेरे शस्त्रपात से गिरने वाले रक्तबिंदुओं और उनसे उत्पन्न होने वाले महादैत्यों को तुम अपने इस उतावले मुख से खा जाओ। काली को इस प्रकार कह कर चण्डिका ने शूल से रक्तबीज को मारा और काली ने अपने मुख में उसका रक्त ले लिया। भयंकर युद्ध के दौरान काली रक्तबीज को वज्र बाण, खड्ग तथा ऋष्टि आदि आयुधों से मार डाला।

दैत्य संहार में नारसिंही-शक्ति के रूप में माँ केसरी ने मानव हितार्थ देव-रक्षार्थ दैत्यों का संहार किया।

मार्कण्डेय पुराण[1] में आया है कि शुम्भवध के बाद देवताओं ने देवी की स्तुति की तथा देवी के विभिन्न स्वरूपों का गुणगान करते हुए उन्हें नमस्कार किया। इसी क्रम में उन्होंने देवी की जिसने नारसिंही रूप में प्रकट होकर दैत्यों का संहार किया था निम्न प्रकार स्तुति की—

---

१ कल्याण मार्कण्डेय ब्रह्मपुराणांक वर्ष २१ (१९४७) पृ २२८ २९

नृसिंहरूपणोग्रेण हन्तु दैत्यान् कृतोद्यम।
त्रैलोक्यत्राणसहित नारायणि नमोऽस्तुते॥१८॥

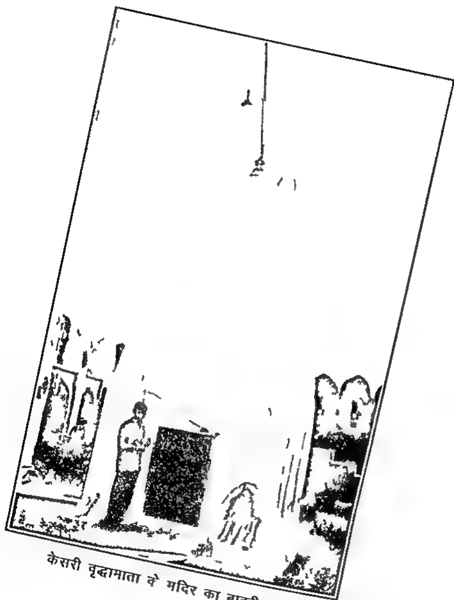
अथात् भयङ्कर नृहसिंह रूप से दैत्यों का वध करने वाली तथा त्रिभुवन की रक्षा में सलग्न रहने वाली नारायणी, तुम्हं नमस्कार।

माता क स्थान

बैंगलोर स प्रकाशित पत्र 'पारीक' मे माता का स्थान नागौर जिले मे मेड़ता के पास रिया शेरसिह (बड़ी रिया) ग्राम म बताया है। यहा के बुजुर्ग पारीक बन्धु पूसालालजी कथा-व्यास (पारीक) से जानकारी करने पर उन्होंने बताया कि, ग्राम रीया के किले में माता कालिका देवी के रूप म विराजमान है, जिसे स्थानीय लोग बिरदा माता के नाम से मानत है। (शब्द 'बिरदा', वरदा, वरदायिनी, जो माता का विशेषण है, का अपभ्रश है)। माता की चार भुजाओं म शस्त्र है तथा माता की सवारी सिंह पर है, मंदिर हजारा वर्ष पुराना है तथा नवरात्रा मे भक्तगण माता की पूजा-अर्चना करने तथा जात-जडूले उतारने जाते है।

पारीको की शाखा शृगार (जाशी) अवटक की कुलदेवी केसरी है।

□□□



केसरी वृद्धामाता के मंदिर का बाहरी भाग

खींवज : क्षेमजा माता

आद्या शक्ति भगवती के कल्याणकारी रूप को क्षेमजा कहत है। श्री दुर्गा सप्तशती मे देवी का स्तोत्र 'देव्या कवचम्' म मार्कण्डेय जी ब्रह्माजी से पूछते हे कि हे पितामह! इस ससार मे मनुष्यो की सब प्रकार से रक्षा करने वाला कोई साधन बताये। उनके ऐसा पूछने पर ब्रह्माजी कहते है—

अस्ति गुह्यतम विप्र सर्व-भूतोपकारम्।
देव्यास्तु कवच पुण्य तच्छृणुष्व महामुने।।
प्रथम शैलपुत्री च द्वितीय ब्रह्मचारिणी।
तृतीय चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्।।
पञ्चम स्कन्दमातेति षष्ठ कात्यायनीति च।
सप्तम कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्।।
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना।।

ऐसा साधन तो एक देवी का कवच ही है, जो गोपनीय से भी परम गोपनीय, पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियो का उपकार करने वाला है। महामुने, उसे श्रवण करो। देवी की नौ मूर्तियाँ है, जिन्हें 'नवदुर्गा' कहते है। उनके पथक्-पृथक् नाम बताय जाते है। प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी हे। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को कूष्माण्डा कहते है। पाँचवी दुर्गा का नाम स्कन्दमाता है। देवी के छठे रूप को कात्यायनी कहते है। सातवॉ कालरात्रि और आठवाँ स्वरूप महागौरी के नाम से प्रसिद्ध है। नवीं दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए है।

ब्रह्माजी आगे कहते है– 'जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि मे शत्रुओं से घिर गया हो, विपम सकट में फस गया हो तथा इस प्रकार भय से आतुर होकर जो भगवती दुर्गा की शरण म प्राप्त हुए हो, उनका कभी

कोई अमगल नही होता। युद्ध के समय सकट म पडने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नही दिखाई देती। उ ह शोक, दु ख और भय की प्राप्ति नही होती। जि होने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। देवश्वरी ! जो तुम्हारा चि तन करते है, उनकी तुम नि सदेह रक्षा करती हो।[१]

उक्त देवी स्तोत्र म आद्या शक्ति की विभिन्न शक्तिया का वर्णन करते हुए बताया गया हे कि य दैवी शक्तियाँ अपने अपने वाहनो पर आरूढ होकर मनुष्य की किस प्रकार हर क्षत्र मे रक्षा करती है। इसी प्रसग मे क्षेमकरी माता का सदर्भ आया है जिसमे माता से प्रार्थना की गई है—

पन्थान सुपथा रक्षन्मार्गं क्षेमकरी तथा।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वत स्थिता।।४१।।

अर्थात् मेरे पथ की सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकरी देवी रक्षा करे। राजा क दरबार म महालक्ष्मी रक्षा कर तथा सब ओर व्याप्त रहन वाली विजया देवी सम्पूण भयो से मेरी रक्षा करे।

क्षेमकरी माता का ही नाम शनै -शने लोक भाषा मे क्षेमजा और फिर खीवज हो गया।

मार्कण्डेय पुराण म माता का वर्णन 'पथ की सुपथा' तथा 'मार्ग की रक्षा' हेतु आया है। यह सकेत मानव के सम्पूर्ण जीवन मार्ग म रक्षा एव कल्याण क सदर्भ म आया है। हम आद्याशक्ति के आश्रय क बिना नहीं रह सकते। जीवन के कदम-कदम पर वह हमारी रक्षा करती है। वह हमे सन्मार्ग पर ले जाती है।

वही आद्या शक्ति क्षमकरी माता नवदुर्गाओ में स एक हे। नवदुर्गाओ में सप्तम कालरात्रि' है जा अपने भक्तो को सब प्रकार के कष्टा से मुक्त करती है। अत शुभ करने से इस माता का नाम 'शुभकरी' भी है। यह माता विद्युत् सदृश है। माता के स्वरूप का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है।[२]

---

१ श्री दुर्गासप्तशती गीता प्रस गारखपुर पृ २० २१ कल्याण मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ ८

२ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४९१ नवदुर्गा– गीता प्रस गारखपुर।

एकवेणी जपाकर्णपूरा नग्ना खरास्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्त शरीरिणी॥
वामपादोल्लसल्लोहलताकण्टक भूषणा।
वर्धनमूर्धध्वजा कृष्णा कालरात्रिर्भयङ्करी॥

सातवी दुर्गा शक्ति का नाम 'कालरात्रि' है। इसके शरीर का रंग अंधकार की तरह गहरा काला है। इनके सिर के केश बिखरे हुए है। इनके गले मे विद्युत्-सदृश चमकीली माला है। इनके तीन नेत्र है जो ब्रह्माण्ड की तरह गोल है। इन तीनो नेत्रो से विद्युत की ज्योति चमकती रहती है। नासिका से श्वास-प्रश्वास छोड़ने पर हजारो अग्नि की ज्वालाएँ निकलती रहती है। ये गदहे की सवारी करती है। ऊपर उठे हुए दाहिने हाथ मे चमकती तलवार है। उसके नीचे वाले हाथ में वरमुद्रा है, जिससे भक्तो को अभीष्ट वर देती है। बाये हाथ मे जलती हुई मशाल है और उसके नीचे वाले बायें हाथ मे अभय मुद्रा है, जिससे अपने सेवको को अभयदान करती है तथा अपने भक्तो को सब प्रकार के कष्टो से मुक्त करती है। माता सदैव शुभ फल ही देने वाली है। अतएव शुभ करने से इसका एक नाम शुभकरी भी है।

माता कालरात्रि दुष्टो का विनाश करने वाली है। दानव, दैत्य, राक्षस, भूत, प्रेत आदि इनके स्मरण मात्र से ही भयभीत होकर भाग जाते है। ये ग्रहबाधाओ को भी दूर करने वाली है। इनके उपासकों को अग्नि-भय, जल-भय, जन्तुभय, शत्रु भय, रात्रि-भय आदि कभी नही होते। इनकी कृपा से वह सर्वथा भयमुक्त हो जाता है।

यह माता शुभकरी देवी है। इसकी उपासना से होने वाले शुभ कार्यों की गणना नहीं की जा सकती। माता का निरन्तर स्मरण और चिंतन भक्ति शुभकारी है। (शुभ अर्थात् क्षेम का उत्पन्न करने वाली होने के कारण इसको क्षेमजा भी कहते है)।

माता का स्थान

क्षेमजा (खींवज) माता का मंदिर ग्राम कठौती मे है। कठौती डीडवाना से पश्चिम मे ३३ कि मी तथा नागौर से पूर्व में ६३ कि मी दूर है।

माता का मंदिर एक टीले पर अवस्थित है। ऐसा माना जाता है कि प्राचीन समय मे यहाँ मंदिर था जो कालान्तर में भूमिगत हो गया। वर्तमान

मदिर मे माता की मूर्ति खम्भे (स्तम्भ) के रूप मे ९२५ वर्ष पूर्व प्रगट हुई ऐसा माना जाता है। माता का विग्रह खम्भे पर ही उत्कीण है। यहाँ का इतिहास यह बताता है कि कठौती माता का यह मदिर ९२५ वर्ष पूर्व निर्मित हुआ तथा मदिर का निर्माण टीला बाबा नामक जाट ने कराया था, ऐसा मदिर के पुजारी जी एव अन्य भक्तो न बताया।[१]

मदिर म स्तम्भ पर उत्कीर्ण माता की मूर्ति चतुर्भुजी है। माता के दाहिने हाथो मे त्रिशूल एव खड्ग है तथा बाये हाथो मे कमल एव मुगदर है। मूर्ति के पीछे पचमुखी सर्प का छत्र है तथा त्रिशूल है (माता की मूर्ति के पीछे सर्प होने से इस माता का स्वरूप 'मनसा माता' के रूप म भी है। विस्तृत विवरण सुरसा माता के चरित्र म दखे)। माता की सवारी सिह पर है। पास म ही भेरव का स्थान है।

माताजी की मान्यता सभी जाति वालो की है।

माता के वर्तमान मदिर का निर्माण सन् १९८२-८३ म माताजी क भक्तो द्वारा कराया गया था। वर्तमान म नवरात्रा मे यहा यज्ञ, अनुष्ठान एव गायत्री जप हो रहे है।

४००-४५० वर्ष पूर्व कठोती ग्राम मे माता के एक अनन्य भक्त एक जोशी जी (पारीक) हुए थ। उन्हे माता का इष्ट था। एक बार उनकी यह प्रबल इच्छा हुई कि माता उन्हे प्रत्यक्ष दर्शन दे। मनवाछित इच्छा की प्राप्ति हेतु उन्होंने इस निमित्त अनुष्ठान किया। अनुष्ठान पूर्ण होन पर भी इनको माता के प्रत्यक्ष दर्शन नही हुए किन्तु जोशी निराश नही हुए, वे दृढ निश्चयी थे, पुन माता के दर्शनार्थ अनुष्ठान किया माता भक्त पर प्रसन्न हुई और देवी ने उन्हे चतुर्भुज रूप मे सिह की सवारी पर प्रगट होकर दर्शन दिये।

पुराने समय की बात है। माता के मदिर के किवाड साने के थे। एक बार चोर मदिर म चोरी करने आये। माता क चमत्कार से चोरो को रास्ता नही मिला। देवी ने चारो चोरा के सिर धड स अलग कर दिये तथा उनके सिर माता के गुम्बज पर चुनवा दिये गये। माता के गुम्बज मे चारा ओर उन चोरो के सिरो के प्रतीक आज भी मदिर के गुम्बज पर लगे हुए है।

बहुत पहले माताजी की दो सत सेवा करते थे। उनम से एक का नाम सत रामजी था जिन्होंने जीवित समाधि ली थी। उनकी समाधि माता के मदिर

१ माता क दर्शनार्थ लखक एव रि शाभित एव माहित दिनाक २२ ६ १९९९ गय।

के पीछे तालाब पर बताई गई। दूसरे भक्त मानगिरी बाबा थे उन्होने भी जीवित समाधि ली थी। उनकी समाधि का चबूतरा मदिर प्रागण मे है। व माता की भक्ति एक गुफा मे करते थे, जो आज भी तहखाने के रूप मे मदिर प्रागण में अवस्थित है।

ऐसी मान्यता है कि माताजी के मदिर के पीछे स्थित तालाब का पानी यदि गदा हो जाये या पानी मे कीडे पड़ जाव तो माताजी एव बाबा के धोक (प्रणाम) देकर जाने पर तालाब का गदा पानी स्वत ही स्वच्छ हो जाता है।

ऐसी भी मान्यता है कि यदि वर्षा न हो तो गाव के चारों ओर दूध की धार से लकीर बनाते हुए परिक्रमा करने पर दैवी कृपा से बारिश हो जाती है।

अभी सन् १९९७ से माता के मदिर म विधि विधानपूर्वक दुर्गा सप्तशती के पाठ, गायत्री के जप व यज्ञ आसोज के नवरात्रों म नियमित रूप से होने लगे है। यह कार्य सूयप्रकाश जी जोशी (कापड़ोदा) (जो वर्तमान मे कर्नाटक मे रहते हे) की प्ररणा से आरम्भ हुआ है, वे स्वय नवरात्रा म माताजी के यहाँ आते है। सयोगवश दिनाक २२ ६ ९९ को जब लेखक माता के दर्शनार्थ कठौती गया था तो सूर्यप्रकाशजी भी कर्नाटक से एक शादी मे भाग लेने हेतु कठौती आये थे। उन्होंने स्वय जानकारी दी कि माता ने उन्हे कर्नाटक (१९९७) आसोज के नवरात्रों के लगभग १५ दिन पूर्व आदश दिया कि (ऐसा उन्हे आभास हुआ) माताजी के पास जाओ, वे तुम्हारी कुलदवी है। तब स मै यहाँ आ रहा हूँ तथा कठौती के पारीकों के साथ एव अनेक अन्य लोगों के सहयोग से दुर्गाशप्तशती एव गायत्री के जप एव विधिविधान से आसोज के नवरात्रा म यज्ञ सम्पन्न कराने मे सहभागी होता हूँ।

अभी हाल की एक घटना इस प्रकार बताई गई है— कोटा के रिछपाल जी के परिवार मे उनके चचेरे भाई को माताजी ने स्वप्न मे दर्शन दिये तथा स्वप्न म ही मदिर भी दिखाई दिया। उनका एक भाई रेनवाल म रहता है, उन्हें भी स्वप्न मे माता ने दर्शन दिये एव मदिर दिखाइ दिया। दोना को एक ही साथ माता एव मदिर के स्वप्न म दर्शन हुए (यह परिवार कापड़ोदा जोशी है) दोनो भाई स्वप्न की सत्यता हेतु कठौती आये तथा माता क विग्रह एव मदिर का ठीक वैसा ही पाया जैसा उन्हाने स्वप्न मे देखा था। वे दोना माताजी

का दर्शन करके चले गये। उनमे से एक भाई के लडका नहीं था, उन्होने माता जी से प्रार्थना की। माँ की कृपा से उसके लडका हो गया। अभी १९९८ मे पूरा परिवार (लगभग १४० व्यक्ति) माता के यहाँ श्रद्धा सुमन समर्पित करने एव माता की अक्षुण्ण कृपा दृष्टि बनी रहे, ऐसा आशीर्वाद लेने आया। माता के यहाँ पहले कोइ पुजारी नही था। बस्ती में स्थित रघुनाथ जी के मंदिर का पुजारी ही सुबह-शाम माताजी के यहाँ धूप-दीप कर जाता था। बाद म किसनाराम जी एव उनके बाद वर्तमान मे रामप्रसाद जी पुजारी को माता की सेवा पूजा करने हेतु नियुक्त किया जो अभी भी बडी श्रद्धापूर्वक माता की सेवा पूजा करते है। पूजा सामग्री की व्यवस्था माताजी के भक्तो द्वारा ही की जाती है।

भक्तो के ठहरने हेतु यहाँ कोई स्थान नही है।

माता के मदिर के जीर्णोद्धार की योजना उनके भक्तो मे विचाराधीन है जिसकी अनुमानित लागत ८ लाख रुपया आकी गई है। जिसमे मदिर के परकोटा शिखर का जीर्णोद्धार, यात्रियो के ठहरने का स्थान एव पानी की टकी का निर्माण आदि सम्मिलित है।

माताजी का चित्र, माता की मूर्ति के ऊपर जो त्रिशूल है, उस सहित ही लिया जाये, अन्यथा या तो फोटो नही आती या फिर वह जल जाती है ऐसा कई व्यक्तियो के साथ हुआ है। ऐसा स्थानीय लोगो व पुजारी श्री रामप्रसाद जी स्वामी ने बताया।

क्षेमकारी देवी का एक मदिर[१] इन्द्रगढ (कोटा-बूदी) स्टेशन से ५ मील दूरी पर भी है। आवागमन के साधन सुलभ है। यहा देवी का विशाल मदिर है। नवरात्रो म यहाँ मेला लगता है।

माता का एक मदिर क्षेमकरी (क्षेमार्या)[२] नाम से बसन्तपुर क पास एक पहाडी पर है। यहाँ के लोग इस माता को खीमेलमाता' भी कहते है। इस मदिर का निर्माण सत्यदेव नामक व्यक्ति ने वि स ६८२ (ई स ६२५)

---

१ कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) पृ २८३

२ सिरोही राज्य का इतिहास ले डॉ गौरीशकर हीराचन्द ओझा पृ २८ २९

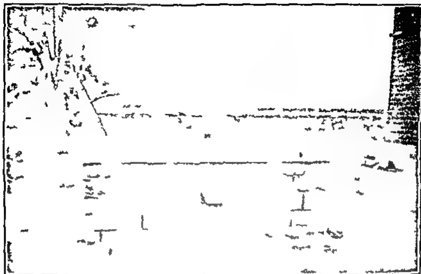
मे कराया था। इस मदिर का जीर्णोद्धार कई बार हुआ है। मदिर के सम्बन्ध में इसका एक लेख पत्थरा के ढेर में मिला है जिससे पाया जाता है कि 'यह मदिर बना उस समय यह प्रदेश वर्मलात राजा के अधिकार मे था।

ओसियां (जोधपुर) मे भी सच्चियाय माता के मदिर म अन्य माताओं के मदिरा के साथ-साथ क्षेमकारी माता का भी मदिर है।

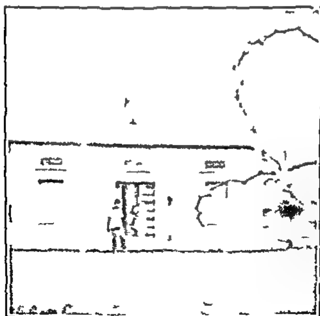
पारीकों के निम्न अवटका की यह कुल देवी है—

पुनपालेसुरा	जोशी
कापडोदा	जोशी
कठोत्या	द्विवेदी
रतनपुरा	तिवाडी
अलूणों	पाण्डया
मुद्‌गल	मिश्र (बोहरा)
भाडा	मिश्र (बोहरा)

□□□



खीवज/क्षेमजा माता कठौति जि नागौर
माता के मदिर म भक्त द्वारा ली जीवित समाधि स्थल (मानगिरी बाबा)



खीवज/क्षेमजा माता कठौती जि नागौर
(माता के मन्दिर का बाहरी दृश्य)

चामुण्डा माता

शिव पत्नी रुद्राणी के अनेक नाम है, यथा देवी, उमा, गौरी, पार्वती, दुर्गा, भवानी, काली, कपालिनी एव चामुण्डा। दूसरे देवो की देवियो (पत्नियो) के विपरीत इन्हें धार्मिक आचारो में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इनको पति के समान स्थान शिव के युगल (अद्वैत) रूप अर्द्धनारीश्वर म प्राप्त होता है, जिसमें दक्षिण भाग शिव का एव वाम देवी का है। दवी के अनेक नामा एव गुणों (दयालु, भयानक, क्रूर एव अदम्य) से यह प्रतीत होता है कि शिव के समान ये भी अनेक दैवी शक्तियो के सयोग स बनी है।[1]

चामुण्डा का स्वरूप

चामुण्डा के ध्यान मे उसके स्वरूप का दर्शन निम्नाकित रूप मे किया जाता है—

काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिन ।
विचित्रखटवाङ्गधरा नरमाला विभूषणा।
द्वीपिचर्मपरिधाना शुष्कमासाति भैरवा।
अतिविस्तारवदना त्रिकालल्लनभीषणा।
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा।।
चामुण्डा प्रेतगा कृष्णा विकृता चाहिभूषणा।
द्रष्टाली क्षीणदेहा च गर्त्ताक्षी कामरूपिणी।।
दिग्बाहु क्षाम-कुक्षिश्च मुसल चक्रचामरे।
अकुश विभ्रती खड्ग दक्षिणे चाथ वामके।।
खेट पाश धनुदण्ड कुठार चापि बिभ्राती।।

विकृत आकार वाली चामुण्डा के शरीर का रग काला है। वे नागो को आभूषण रूप मे धारण करती है। उनकी दाढ विशाल है, देह दुबली-पतली है और आखे धसी हुई है। वे स्वेच्छानुसार रूप धारण करने वाली है। उनकी

१ हिन्दू धर्मकोश ल डॉ राजबलि पाण्डेय पृ २६३

दस भुजाये है और कुक्षी क्षीण है। वे प्रेत पर सवार होती है। वे दाहिने हाथों मे मूसल, चक्र, चामर, अकुश और खड्ग तथा बाये हाथों मे ढाल, पाश, धनुष, दण्ड और कुठार धारण करती है।[1]

कालिकापुराण मे चामुण्डा का तान्त्रिक स्वरूप निम्नोक्त है—

नीलोत्पलदलश्यामा चतुर्बाहु समन्विता।
खट्वाङ्ग चन्द्रहासञ्च बिभ्रति दक्षिणे करे॥
वामे चर्मकपालञ्च ऊर्ध्वाधोभावत पुन ।
दधति मुण्डमालाञ्च व्याघ्रचर्मधराम्बरा॥
कृशाङ्गी दीर्घदंष्ट्रा च अतिदीर्घातिभीषणा।
लोलजिह्वा निम्नरक्तनयना नादभैरवी॥
कबन्धवाहना पीनविस्तारश्रवणानना।
एषा ताराह्वयादेवी चामुण्डेति च कथ्यते॥

वाहन चामुण्डा माता का वाहन– यह प्रेतासीन है।

चण्ड-मुण्ड का वध

चण्ड-मुण्ड के वध क सम्बन्ध मे मार्कण्डेय पुराण, मत्स्य पुराण, देवी भागवत, श्री दुर्गासप्तशती आदि अनेकानेक ग्रन्थों में चण्ड-मुण्ड वध का विस्तृत वर्णन किया गया है, जो इस प्रकार है—

शुम्भ निशुम्भ की आज्ञा स जब चण्ड-मुण्ड नामक राक्षस देवी से युद्ध करने आये तो भगवती को भयकर क्रोध आया जिससे उसका मुह काला हो गया माथे की भौहे तन गईं। तब भयानक मुखवाली काली देवी तलवार तथा पाश लेकर प्रगट हुई। इसी काली द्वारा चण्ड-मुण्ड राक्षस का वध करन के कारण नाम चामुण्डा हुआ। देवी भागवत[2] में इसका कथानक निम्न प्रकार है—

महाबली चण्ड और मुण्ड बड़े शूरवीर थे। शुम्भ की उपर्युक्त आज्ञा पाकर वे विशाल सेना को साथ लिये उसी क्षण समराङ्गण म जा धमके। देवताओं का हित-साधन करने वाली भगवती जगदम्बा वहा विराजमान थी। उन्हें आता देखकर महान् पराक्रमी चण्ड और मुण्ड शांतिपूर्वक उनसे कहने लगे— देवी!

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३८
२ कल्याण– सक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ २६७

तुम क्या देवताओं की शक्ति कुण्ठित करने वाले शुम्भ और इन्द्रविजयी उग्र स्वभाव वाले निशुम्भ को नही जानती ? सुन्दरी, तुम इस समय अकेली हो। केवल सिह तुम्हारी सवारी का काम दे रहा है। दुर्बुद्धे इस स्थिति में भी तुम सब प्रकार की सेनाओं से सम्पन्न शुम्भ को जीतने की इच्छा कर रही हो ? क्या कोई भी स्त्री अथवा पुरुष तुम्हे उत्तम परामर्श देने वाला नही मिला ? देवता तो तुम्हारा ही विनाश करने के लिए तुम्हे प्रेरित कर रहे है। तन्वङ्गी तुम्हें अपने और शत्रु पक्ष के बल के विषय मे विचार करके ही कार्य करना चाहिए। अठारह भुजाएं होने के कारण जो तुम अभिमान करती हो, वह बिल्कुल व्यर्थ है। शुम्भ युद्ध मे बडे कुशल है। उन्होने देवताओ को परास्त कर रखा है। भला, उनके सामने इन व्यर्थ की बहुत-सी भुजाओं से अथवा श्रमदायी आयुधो से तुम्हारा कौन-सा प्रयोजन सिद्ध हो सकता है ? इस अवसर पर ऐरावत की सूड काट डालने वाले हाथियो का विदीर्ण करने मे कुशल तथा देवताओं को हरा देने वाले महाराज शुम्भ का मनोरथ पूर्ण करना ही तुम्हारा परम कर्त्तव्य है। कान्ते, तुम व्यर्थ गर्व करती हो। हमारे प्रिय वचन का अनुमोदन करो। विशाललोचने ! यही करने मे तुम्हारा हित है। यही कार्य तुम्हारे लिए सुखदायी एव दुःख का नाश करने वाला है। शास्त्र के रहस्य को भलीभांति जानने वाले बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि दुःखदायी कार्यों को दूर से ही त्याग दे और सुखप्रद कार्यों का सेवन करे। कोयल के समान मीठे वचन बोलने वाली देवी ! तुम बडी विदुषी हो। शुम्भ के महान् बल पर दृष्टिपात तो करो। देवताओं का समाज इनके द्वारा कुचल डाला गया है— इसी से इनका प्रशसनीय प्रभुत्व प्रत्यक्ष है। प्रत्यक्ष प्रमाण छोडकर अनुमान का आश्रय लेना बिल्कुल व्यर्थ है। सदेहास्पद कार्य मे विद्वान् पुरुष प्रवृत्त नहीं होते। दैत्यराज शुम्भ को सग्राम मे कोई भी जीत नही सकता। वे देवताओ के घोर शत्रु है। इसीलिए स्वय न आकर देवतागण उनके समक्ष तुम्हे प्रेरित कर रहे है। ये देवता मीठे वचन बोलते है। तुम इनके वाग्जाल मे फस गई हो। इनकी शिक्षा के रग-रग मे स्वार्थ भरा है। इससे तुम्हें महान् क्लेश भोगना पडेगा। स्वार्थवश मित्रता करने वालो को छोडकर धार्मिक मित्र का ही अवलम्बन करना चाहिए। देवता अत्यन्त स्वार्थी है। मैंने तुमसे यह बिल्कुल सच्ची बात कही है। इस समय महाराज शुम्भ के हाथ में विजयश्री है। वे अखिल भूमण्डल के स्वामी है। देवताओं पर भी इनका अधिकार है। ये बड़े सुन्दर, सुयोग्य, शूरवीर और रसशास्त्र

के विशेषज्ञ है। तुम इनकी सेवा में उपस्थित हो जाओ। महाराज शुम्भ की आज्ञा से सम्पूर्ण लोको की सम्पत्ति भोगने का सुअवसर सहज ही तुम्हें प्राप्त होगा। तुम भलीभाति विचार करके इन सुयोग्य स्वामी को पति बनाने का लाभ हाथ से मत जाने दो।'

इस प्रकार चण्ड अपना अभिप्राय व्यक्त कर गया। उसकी बात सुनकर भगवती जगदम्बा मेघ की भाति गम्भीर वाणी में गरज उठी और बोली— अरे धूर्त, तू यहा से हट जा। क्यो कपटपूर्ण व्यर्थ की बात बक रहा है? विष्णु और शकर आदि को छोडकर मै दानव शुम्भ को क्यो पति बनाऊ? मै किसी को भी पति बनाना नही चाहती और न किसी पति से मेरा कोई काम ही हे। अरे, सुन,– सम्पूण जगत् मेरा ही शासन मानता हे। मैंने असख्य शुम्भ-निशुम्भ देखें है। इससे पूर्व सेकडो दैत्या और दानवों को मै मृत्यु के धाट उतार चुकी हू। प्रत्यक युग मे देवताओ और दानवो के बहुतेरे समाज मेरे सामने ही काल के गाल में चले गये, अब भी जा रहे है और आगे भी जायगे। इस समय दैत्यवश का सहार करने वाला काल यहाँ उपस्थित है। अपने वश की रक्षा करने के लिये तू जो प्रयत्न कर रहा है, यह बिल्कुल व्यर्थ है। महामते! तू वीर धर्म की रक्षा के लिये युद्ध करने मे तत्पर हो जा। भावी मृत्यु को कोई हटा नही सक्ता। अतएव महात्मा पुरुषो को चाहिये कि यश की रक्षा मे प्रमाद न करें। शुम्भ और निशुम्भ बडे दुष्ट है। उनसे तेरा क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? तू उत्तम वीर-धर्म का आश्रय लेकर स्वर्ग जाने की चेष्टा कर। शुम्भ-निशुम्भ तथा अन्य भी जो तेंरे बन्धु-बान्धव है, वे अभी थोडे समय के पश्चात् तेरे अनुगामी बनेंगे। मै अब क्रमश सम्पूर्ण दैत्या का सहार कर डालूगी। मूर्ख! विषाद मत कर। युद्ध करना ही तेरे लिये समुचित है। मेरे हाथ से तेरा वध हो जाने के पश्चात् तेरा भाई भी काल के मुख में जाने वाला है। तदनन्तर शुम्भ-निशुम्भ और मदोन्मत्त रक्तबीज भी प्राणों से हाथ धो बैठगे। अन्य भी जितन दानव है, मै उन सबका समराङ्गण म वध करूगी। इसके बाद अपने स्थान पर चली जाऊगी। तू रह अथवा शीघ्र भाग जा। रहता है, तो तुरन्त अस्त्र हाथ म लेकर मेरे साथ लड़ने के लिय तैयार हो जा। क्यों व्यर्थ की वार्ते बक रहा है? ऐसी वाते तो कायर जनों का ही प्रिय हाती है।'

देवी के यो उत्तेजित करने पर चण्ड और मुण्ड के क्रोध की सीमा न रही। बल के अभिमान मे चूर रहने वाले उन दानवों ने तुरत धनुष टकारना आरम्भ कर दिया। दवी ने भी शख बजाया, जिसकी तुमुल ध्वनि से दसो दिशाएँ गूज उठी। महाबली सिह भी क्रोध मे भरकर गरज उठा। उस गर्जन से इन्द्र आदि देवताओं, मुनियो, यक्षो, गन्धर्वों, सिद्धो, साध्यो और किन्नरों के हृदय मे प्रसन्नता छा गयी। तदनन्तर देवी का चण्ड और मुण्ड के साथ परस्पर युद्ध आरम्भ हो गया। कायरो को भयभीत करने वाले उस युद्ध म गदा, तलवार और बाण आदि विविध आयुध चलने लगे। देवी अपने चमचमाते हुए बाणो से चण्ड के तीरो को काटने लगीं। साथ ही उन्होंने सर्पो की तुलना करने वाले बाण चलाने आरम्भ कर दिये। उस समय देवी के बाणो से आकाश इस प्रकार छा गया, मानो वर्षा होने के बाद कृषका के लिए कष्टप्रद फतिगे चारों ओर फैल गये हों।

अब मुण्ड भी सैनिको को साथ लेकर युद्धभूमि म फट पडा। उसकी आकृति बडी भयकर थी। उसने रोष मे भरकर बाण चलाने आरम्भ कर दिये। महान् बाणजाल देखकर देवी के मन मे क्रोध उत्पन्न हो गया। रोष के कारण उनके मुख की आकृति ऐसी हो गयी, मानों काली घटा हो। उनके केले के फल के समान विशाल नेत्र थे। टेढी भौहे थीं। यो वे काली-वेष में विराजने लगीं। उन्होने बाघ का चर्म पहन रखा था। वे हाथी के चर्म की चादर से सुशोभित थी। उनका वक्ष स्थल नरमुण्ड की माला से अलकृत था। उदर ऐसा था मानों बिना जल की बावली हो। खट्वाग तलवार और पाश धारण करने वाली काली इतनी डारावनी जान पडती थी, मानो दूसरी कालरात्रि का प्रादुर्भाव हो गया हो। उनका विशाल मुख था। उनके द्वारा वे असुर काल के ग्रास बनने लगे। क्रोध मे भरकर काली पराक्रमी असुरों को हाथ मे पकडतीं और उन्हे मुख में डालकर दाँता से चूर-चूर कर देतीं। वे घण्टा और सवारों सहित हाथियो को पकड़कर मुख में डाल लेती थी। साथ ही अट्टहास करने लगती थी। ऐसे ही सारथी सहित घोड़ो और रथों को भी मुख में डालकर वे दॉतो से चबाने लगी। अब चण्ड और मुण्ड अपनी सेना का यो सहार होते देखकर बाणों की अनवरत वृष्टि से काली को ढकने के प्रयास मे लग गये। चण्ड का चक्र सूर्य के समान तेजस्वी था। उसने तुरत देवी पर वह चक्र चला दिया।

वह बार-बार गरजने लगा। उसे गरजते देखकर काली ने एक बाण चला दिया। अब उस बाण के प्रभाव से चण्ड का चक्र, जो सूर्य के समान तेजस्वी और सुदर्शन चक्र की तुलना करने वाला था, टूक-टूक होकर गिर पड़ा। साथ ही तीखे तीरों से काली ने चण्ड पर चोट की। देवी के बाणों से अत्यत व्यथित होने के कारण व मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर गया। वह रोष में भर कर काली के ऊपर बाण बरसाने लगा। उसकी बाणवृष्टि बडी ही भयकर थी, परन्तु देवी ने ईपिकास्त्र का प्रयोग करके क्षण भर मे ही सारे बाण काट डाले। फिर अर्द्धचन्द्राकार बाण से मुण्ड पर आघात किया। यद्यपि मुण्ड महान् बलशाली था, फिर भी देवी के इस बाण की चोट को वह सह न सका और तुरन्त ही भूमि पर लेट गया। उस समय दानवी सेना म बडे जोर से हाहाकार मच गया। आकाश मे रहने वाल सम्पूर्ण देवता शात होकर आनद मनाने लगे। कुछ ही देर में मूर्च्छा दूर होने पर चण्ड ने एक विशाल गदा दाहिने हाथ मे उठायी और तुरत उससे देवी पर प्रहार किया। देवी ने चण्ड के गदाघात को रोककर बाण-पाश का प्रयोग किया, जिससे वह दानव बध गया। भाई को बधा देख कवच पहने हुए मुण्ड हाथ में दृढ़ शक्ति लेकर आ गया। उसे देखकर देवी ने उसे भी बाधने की व्यवस्था कर दी। अत वह दूसरा भाई भी बध गया। चण्ड और मुण्ड दोनो दानवो को खरहे की भाति गले मे रस्सी डालकर लिये हुए हास्य-विलास करती हुई काली भगवती जगदम्बा के पास आयी। आकर बोली- प्रिये! इन दोना पशुओ को लो। युद्ध मे बडी कठिनता से परास्त होने वाले इन दाना दानवा को सग्रामरूपी यज्ञ म बलि देने के लिये लायी हू।' भगवती जगदम्बा ने देखा चण्ड और मुण्ड काली के प्रयास से उपस्थित थे। उनकी ऐसी दीन-हीन दशा थी, मानों सियार हो। भगवती ने मधुर वचनो म काली से कहा- रणप्रिये! तुम बडी विदुषी हो। शीघ्र ही दवताओं का कार्य सिद्ध करना तुम्हारा परम कर्तव्य है।'

भगवती जगदम्बा की बात सुनकर काली ने कहा- 'युद्धरूपी यज्ञ बहुत प्रसिद्ध है।

इसमें तलवार खभे का काम देती है। उसी के द्वारा इन का आलम्भन करुगी, ताकि हिंसा का रूप भी सामने न आ सके।' यो कहकर काली ने तलवार से चण्ड और मुण्ड क मस्तक काट डाले। तदनन्तर वे आनन्द म

भरकर उनका रुधिर पीने लगीं। इस प्रकार उन प्रबल दानवो का वध देखकर जगदम्बा प्रसन्नतापूर्वक काली से कहने लगीं- "कालिके! तुमने देवताओ का महान् कार्य सिद्ध किया है। मै तुम्हे उत्तम वर देती हू। चण्ड और मुण्ड का वध करने के कारण अब जगत् मे तुम 'चामुण्डा' नाम से विख्यात होओगी।"

मदिर

माता के मदिर राजस्थान के अनेकानेक स्थानों पर है, जिनकी गिनती किया जाना सभव नही है, तथापि कुछ स्थानो के नाम निम्न प्रकार है, जहाँ माता के भव्य, विशाल एव प्राचीन मदिर है।

अजमेर राजस्थान का हृदयस्थल एव धार्मिक आस्थाओ का केंद्र जो अरावली की सुरम्य पहाडियो से घिरा हुआ है, इन्हीं के मध्य माता चामुण्डा का मदिर अवस्थित है। इतिहास प्रसिद्ध महाराजा पृथ्वीराज चौहान तृतीय के वशधरो की कुल देवी का यह भव्य मदिर वि स १०८३ मे बनाया गया था। ऐसा कथानक है कि महाराज पृथ्वीराज को माता का आशीर्वाद प्राप्त था। एक दन्त-कथा के अनुसार देवी महाराज की भक्ति से इतनी प्रसन्न हुई की एक बार वह एक सुन्दर स्त्री के रूप में पृथ्वीराज चौहान के साथ-साथ चलने लगीं। राजा के यह पूछने पर कि तुम कौन हो? कहाँ जा रही हो, उक्त स्त्री रूपी माता ने कहा "मै तुम्हारे साथ तुम्हारे महलो मे चलूगी"

रात्रि का समय था, माता राजा के पीछे-पीछे चलने लगी। पृथ्वीराज तो आगे निकल गये और वह स्त्री एक स्थान पर रुक गई। आगे जाने पर जब पृथ्वीराज ने पीछे मुडकर देखा तो स्त्री नहीं थी वे पुन पीछे की ओर आये तो क्या देखते है, एक स्थान पर (जहाँ अभी माता का मदिर है) स्त्री पाषाण रूप मे परिवर्तित हो गई और पृथ्वी म समा रही है। महाराजा पृथ्वीराज को यह समझते देर नही लगी कि स्त्री रूप म परामाया कुलदेवी चण्डिका ही उनके साथ चल रही थी। भूमिगत होती मूर्ति से पृथ्वीराज ने प्रार्थना की, माता रुक जाओ, माता का आधा शरीर भक्त की आर्त प्रार्थना पर रुक गया तथा वहाँ पर मदिर का निर्माण कराया। मदिर में देवी का केवल ढाई फुट का मस्तक ही शेष दिखता है। मदिर तक जाने के लिए सवा-सौ डेढ-सौ सीढिया है, निर्मल जल का कुण्ड भी है।

पारीका के राव भाटो की पुस्तकों में पारीकों के आवटको की कुल देवी चामुण्डा का स्थान, जोधपुर किले मे प्रतिस्थापित चामुण्डा माता बताई जाती है। यह देवी राठौडों की भी कुल देवी है। चामुण्डा जी की प्रतिमा राव जोधा ने मडौर के चामुण्ड मदिर से लाकर इस किले में प्रतिष्ठापित कराई थी।"चामुण्डा का मदिर ई स १८५७ (वि स १९१४) में बारूदखाने के फूट जाने से उड़ गया था। इसलिए महाराजा तरतसिह ने इसका पुनर्निमाण कराया।[१]

पलु– राव-भाटो की पोथियों के अनुसार पलु (सरदार शहर) में भी चामुण्डा का मदिर है।

खण्डेला का चामुण्डा मदिर

सीकर जिलान्तर्गत खण्डेला मे पहाडी पर चामुण्डा माता की अति प्राचीन मूर्ति है। ग्राम खण्डेला के पश्चिम मे रसेड़ा तालाब के पास अति प्राचीन खण्डेश्वर महादेव का मदिर है। पहले इसी मदिर म भगवती चामुण्डा की मूर्ति थी। कालान्तर में जब इस स्थान पर शवदाह होने लगे तो एक रोज माता ने पुजारी को स्वप्न म दर्शन देकर कहा, 'मुझे यहा दुर्गन्ध आती है। मेरा स्थान पहाडी पर बनाओ।' पुजारी द्वारा आर्थिक स्थिति ठीक नही होने की बात जब माता को कही गई तो माता ने आदेश दिया कि प्रात एक टोकरी चूने कली की तथा एक झारी पानी की ले जा और मदिर निमाण का कार्य प्रारम्भ कर, मदिर बन जायेगा। पुजानी ने माता के आदेशानुसार ऐसा ही किया। कहत है, भगवती चामुण्डा की शक्ति से उस एक टोकरी चूने से ही देवी का विशाल मदिर बन गया। देवी के नित्य दर्शनार्थ अनेकानक भक्तगण जात है। नवरात्रों म माता के यहा दूर-दूर से भक्तजन जात-जडूले उतारने आते है।

१ बकसर-(जिला उन्नाव उ प्र) यहाँ चण्डिका देवी का एक मदिर है जिसमें देवी की दो मूर्तियाँ है। (तीर्थाक पृ ९१)

२ मथुरा-यहा का चामुण्डा मदिर ५१ शक्ति पीठों म से एक है। ऐसा कुछ लोंगो का मानना है कि यहाँ सती के केश गिरे थे। (तीर्थाक पृ ९७)

३ महोबा(म प्र)-यहाँ अष्टादश भुजा देवी का मदिर है जिन्हें लोग छोटी चण्डिका कहत है। (तीर्थाक प १२५)

---

१ जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड ल गौरीशकर हीराचन्द ओझा पृ २२ २३

४ **मुगेर-** पूर्वी रेल्वे की एक शाखा जमालपुर से मुगेर जाती है, यहाँ से सीताकुण्ड एव सीता कुण्ड से लगभग ८ कि मी दूर गगा तट से लगभग २ कि मी पर चण्डी देवी का एक ही पत्थर से बना हुआ अर्ध-गोलाकार मदिर है। उसमे एक छोटा द्वार है। भीतर दीवार मे चण्डी देवी की मूर्ति बनी है। (तीर्थांक पृ १७१)

५ **करेड़ी**-इस स्थान से लगभग १५-२० कि मी की दूरी पर एक और उज्जैन की कालिका देवी और दूसरी ओर देवास की भगवती है। देवास की भगवती, उज्जैन की कालिका तथा करेडी भी इन अष्टभुज दर्शन की यात्रा 'त्रिकोण-यात्रा' कही जाती है। क्रमश ये कौशिकी, कात्यायनी और चण्डिका का स्वरूप मानी जाती है। (तीर्थाक पृ २१७)

६ **सातमात्रा**-कुबेर भडारी से लगभग पाच कि मी दूर यह स्थान नर्मदा के दक्षिण तट पर है। ओकारेश्वर से सभी यात्री प्राय यहाँ नौका से आते है, यहाँ सप्तमातृकाओ के मदिर है, जिनमें चामुण्डा मदिर भी है।

७ **देवास**-देवास के पास एक पहाडी पर चामुण्डा देवी का मदिर है। पास ही एक पर्वतीय गुफा मे भी देवी की विशाल मूर्ति है। (तीर्थाक, प २४२)

८ **भद्रावती (भाँदक)**- वर्धा काजीपेट लीन पर लगभग ९० कि मी दूर भादक स्टेशन है। यह मदिर भग्नावस्था मे है। देवी की प्रतिमा तथा अन्य अनेक मूर्तिया हे, किन्तु खण्डित है। (तीर्थांक पृ २७६)

९ **सिरसी**- बगलोर-पूना लाइन के हबेरी या हुबली स्टेशन पर उतर कर बस से यहा जाना पडता है। हबेरी से यह स्थान लगभग ८०-९० कि मी दूरी पर है। इसे श्रीक्षेत्र कहा जाता है। यहा चामुण्डा देवी का मदिर है, जो सिद्धपीठ माना जाता है। फाल्गुन शुक्ला सप्तमी को यहा महोत्सव होता है। बडा मेला लगता है। धर्मशाला भी है। (तीर्थाक पृ ३१०)

१० **खेड़ब्रह्मा (गुजरात)**- यहा से तीन मील दूर चामुण्डा देवी का मदिर है। (तीर्थांक- पृ ४२५)

११ **चाणोद (गुजरात)**- यहा चण्ड-मुण्ड का मारने वाली चण्डिका देवी का मदिर चण्डिकादित्य मदिर के पास है। (तीर्थांक पृ ४३४)

१२ चामुण्डा– पठानकोट से पपरोला जाने वाली छोटी रेल्वे लाइन पर चमुण्डा स्टेशन मला मे बना है। यहा से लगभग ४-५ कि मी पर चामुण्डा देवी का मदिर है। कागडा स भी बस का केवल डेढ घंटे का रास्ता है। (नौ देवियों की अमरकथा)

१३ मेसूर (कर्णाटक) म भी चामुण्डा देवी का मदिर है।

१४ बाणगगा के तट पर भी चामुण्डा देवी का मदिर है।

पारीका के निम्न अवटकों की चामुण्डा कुल देवी है–

१	हलहला (हलहरचा)	तिवाडी
२	भ्रामणा (भ्रमाणा) (भमाणा)	तिवाडी
३	जागलका	जोशी
४	डाबडा	जोशी
५	कायल (कीडल) (कहाल)	पाण्डय

□□□

चतुर्मुखी : चित्रमुखी माता

चतुर्मुखी माता के स्वरूप का वर्णन निम्न प्रकार है[१]-

तत्र ब्राह्मी चतुर्वक्त्रा षड्भुजा हंससंस्थिता।
पिङ्गला-भूषणोपेता मृगचर्मोत्तरीयका॥
वरं सूत्रं स्रुवं धत्ते दक्षबाहुत्रये क्रमात्।
वामे तु पुस्तकं कुण्डीं बिभ्रती चाभयकरम्॥

सप्तमातृकाओं में ब्राह्मी चार मुख और छः भुजाओं से युक्त है। वे हंस पर सवार होती है। उनकी अंग-कांति पीली है। वे आभूषणों से समुल्लसित और मृगचर्म के उत्तरीय से विभूषित रहती है तथा दाहिने भाग के तीनों हाथों में क्रमशः वर-मुद्रा, अक्षसूत्र और स्रुवा तथा बायें भाग के तीनों हाथों में पुस्तक, कुण्डी और अभय-मुद्रा धारण करती है।

असुरों के संहार हेतु देवताओं की शक्तियों का प्राकट्य

असुरों का नाश करने हेतु देवी का रक्तबीज एवं उसके बाद शुम्भ-निशुम्भ से जब युद्ध हुआ तो उस युद्ध में ब्रह्मा आदि समस्त देवताओं की शक्तियाँ भी आ गई, देवी ने शक्तियों के साथ युद्ध कर रक्तबीज एवं उसके बाद शुम्भ-निशुम्भ का वध किया। अन्य शक्तियों के साथ ब्रह्माणी ने भी युद्ध में भाग लिया, युद्ध का कथानक निम्न प्रकार है-[२]

उस युद्ध में ब्रह्मा आदि समस्त देवताओं की शक्तियाँ भी पधार गयी। जिस देवता का जैसा रूप, वाहन और भूषण था, उसी के अनुसार रूप, वाहन और भूषण से सम्पन्न होकर उन शक्तियों का आगमन हुआ था। ब्रह्माजी की शक्ति हंस पर बैठकर आयीं। उनके हाथों में अक्षसूत्र और कमण्डलु विराजमान थे। वहाँ पधारी हुई उस शक्ति को 'ब्रह्माणी' कहते है। भगवान् विष्णु की

---

१ कल्याण शक्ति उपासना अंक, वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३७
२ कल्याण संक्षिप्त देवी भागवत वर्ष ३४(१९६०) पृ २७२ ७५

शक्ति गरुड़ पर चढ़कर आयी। शख, चक्र, गदा और पद्म से उनकी भुजाएँ सुशोभित थी। ठनका दिव्य विग्रह पीताम्बर से शोभा पा रहा था। भगवान् शकर की शक्ति हाथ म त्रिशूल लेकर वृषभपर वैठी हुई पधारीं। उनके ललाट पर अर्द्धचद्र चमक रहा था। सप वलय का काम दे रहा था। कार्तिकियजी की शक्ति कार्तिकियी उन्ही का रूप धारण किये मयूर पर आरूढ हो हाथ में शक्ति लिये दैत्यो से युद्ध करने के लिये वहाँ आयी। इन्द्र की शक्ति ऐन्द्री वज्र हाथ मे लिये गजराज ऐरावत पर आयी। उनका सुन्दर मुख क्रोध से तमतमा रहा था। वाराहरूप धारण करने वाले भगवान् श्री हरि की शक्ति वाराही का वेप बनाकर एक हृष्ट-पुष्ट प्रेत पर बैठी हुई पधारी। भगवान् नृसिह के समान शरीर धारण करके भगवती नारसिही का आगमन हुआ। यमराज की भयकर शक्ति हाथ में दण्ड लिये भैसे पर बैठकर युद्धभूमि मे आयी। उनका मुख-मण्डल मुस्कान से भरा था। इसी प्रकार वरण और कुबेर की शक्तियो ने भी वहाँ आने का कष्ट स्वीकार किया। यो सम्पूर्ण देवता ही अपनी-अपनी शक्तियों के रूप म होकर वहाँ पधारे थे। आयी हुई इन शक्तियो को देखकर देवी के मन मे अपार हर्ष हुआ। देवता भी हर्ष मनाने लगे। दैत्यो के हृदय म आतक छा गया। उन शक्तिया के बीच जगत् का कल्याण करने वाले भगवान् शकर आय और भगवती चण्डिका स कहने लगे, देवताओ का कार्य सिद्ध करने के लिये इन दैत्यो का अभी मार डालो, शुम्भ-निशुम्भ तथा अन्य जितने भी दानव उपस्थित है उन सबको मारकर सारी दानवी सेना तुरत समाप्त कर दी जाय। जगत् म किसी प्रकार का भय न रहे। अपने-अपन तेज से सम्पन्न होकर शक्तिया यहाँ विराजमान हो। देवता लोग यज्ञ म भाग ग्रहण करें। ब्राह्मण यज्ञ मे तत्पर हा जाय। चराचर सम्पूर्ण प्राणिया के सामने सुख का अवसर प्राप्त हो। सारे उपद्रव शात हो जायँ। मेघ समयानुकूल वर्षा करें। खेती फल-फूल से सम्पन्न हो जाय।'

इस प्रकार ससार के शुभचितक भगवान् शकर अपना अभिप्राय व्यक्त कर रहे थे। इतने म ही भगवती चण्डिका के शरीर से एव बडी विचित्र शक्ति प्रकट हुई। उस अत्यन्त भयकर शक्ति के मुख से ऐसे शब्द निकल रहे थे मानों सेकड़ों गीदडियाँ एक साथ वाल रही हों। भयकर रूपवाली उस देवी का मुह मुसकान से भरा था। उसने भगवान् शकर से कहा- 'देवेश्वर! तुम

अभी दानवराज के पास जाओ। कामदेव को भस्म करने वाले शकर! उन देवद्रोही शुम्भ और निशुम्भ को अत्यन्त अभिमान हा गया है। तुम दूत का कार्य सम्पन्न करने के विचार से जाओ और मेरी यह बात उनसे कहा कि 'तुम लोग स्वर्ग छोडकर शीघ्र ही भाग जाओ। देवता स्वग मे आनदपूर्वक निवास करे। इन्द्र को अपना उत्तम आसन प्राप्त हो। देवता स्वर्ग मे रहन और यज्ञ का भाग पाने के अधिकारी बन। तुम्हें यदि जीने की इच्छा हा तो तुरन्त पाताल में, जहाँ अन्य दानव रहते है- चले जाओ और यदि मरना ही अभीष्ट हो तो पूरी शक्ति के साथ लडने के लिये तुरत युद्ध भूमि म आ जाओ। मेरी शिवाएँ- ये योगिनियाँ तुम्हारे कच्चे माँस से तृप्त हों।'

भगवती चण्डी का उपयुक्त वचन सुनकर भगवान् शकर तुरत दानवराज शुम्भ के पास पहुचे। उस समय शुम्भ अपनी सभा मे बैठा था।

शकरजी ने कहा– राजन्! मे त्रिपुराविनाशक महादेव हू। भगवती जगदम्बा का दूत बनकर तुम्हारा हित करन के लिये यहाँ आया हू। देवी ने तुमसे कहलवाया है– 'तुम लोग स्वग और भूमण्डल छोडकर यहाँ से शीघ्र चले जाओ। बलवानो मे श्रेष्ठ जहा रहता है उस पाताल म तुम्हे चले जाना चाहिये और तुम्हे यदि मरना ही अभीष्ट हो तो अभी सामने आ जाओ। तुम सभी को मै सग्राम म मार डालूगी इसम कोइ सदेह नही है।' तुम लोगो का कल्याण करने के विचार से ही श्रीदेवीजी ने यह बात कही ह।

भगवती जगदम्बा का यह वचन अमृत के समान मधुर एव हित से ओतप्रोत था। त्रिशूलधारी भगवान् शकर प्रधान दैत्या को यह वचन सुनाकर लौट आय। देवी ने शकर को दूत बनाकर दैत्यो के पास भेजा था। अतएव वे सम्पूर्ण लोको म 'शिवदूती' के नाम से प्रसिद्धि हुई। शकर के मुख से निकले हुए देवी के इस सदेश को दैत्य सहन नही कर सके। वे युद्ध के लिए तुरन्त निकल पडे। उन्होने कवच पहन रखे थे। उनकी भुजाएँ शस्त्रो से सुसज्जित थी। वे तुरन्त युद्ध-भूमि मे भगवती जगदम्बा के सामने आ पहुच और अपने तीखे तीरो से उन्होने देवी पर चोट करना आरम्भ कर दिया। अब कालिका हाथ मे त्रिशूल, गदा और शक्ति लेकर दानवो को मारती हुई विचरने लगी और दानव उनके ग्रास बनने लगे। भगवती ब्रह्माणी समरागण म पधारी। महान् पराक्रमी दानवों पर वे कमण्डलु का जल फेकती थी, जिससे उनके प्राण प्रयाण

कर जाते थे। 'माहेश्वरी' वृषभ पर बैठी हुई विराजमान थी। उन्होंने अपने वेगशाली त्रिशूल से दानवों को मारकर धराशायी करना आरम्भ कर दिया। 'वैष्णवी' के चक्र और गदा के प्रहार से बहुत-से दानव निष्प्राण हो गये। उनके मस्तक छिन्न-भिन्न हो गये। ऐरावत हाथी की सूंड से भी दानवों को पर्याप्त क्षति पहुंची। 'वाराही' का सर्वांग क्रोध से तमतमा उठा था। उन्होंने अपने थूथुन और दाँढ़ों से सैकड़ों दानवों को मार डाला। 'नारसिंही' अपने तीक्ष्णधार नखों से बड़े-बड़े दैत्यों को फाड़ने के साथ ही उन्हें निगलने भी लगीं। उन्होंने बार-बार अट्टहास करते हुए विचरना आरम्भ कर दिया। 'शिवदूती' के अट्टहास से ही दैत्य धरती पर गिर जाते थे। 'चामुण्डा' और 'कालिका' उन्हें बड़ी उतावली के साथ खाने में जुट जाती थीं। 'कौमारी' का वाहन मोर था। वे समरांगण में विराजमान थीं। देवताओं के कल्याणार्थ वे तीखे बाणों से शत्रुओं को मारने लगीं। भगवती 'वारुणी' समरांगण में पाश लेकर पधारी थीं। उस पाश से बांधकर दैत्यों को पटक देना, उनका सहज कर्म बन गया था। गिरे हुए दैत्य मूर्च्छित हो कर निष्प्राण हो जाते थे।

इस प्रकार मातृगण के प्रयास से दानवों की वह ओजस्विनी विशाल सेना युद्धभूमि में तहस-नहस होकर भाग चली। उस सेनारूपी समुद्र में अब बड़े जोर से रोने और चिल्लाने की आवाज छा गयी। देवता उन देवियों के ऊपर पुष्पों की वर्षा करने लगे। रक्तबीज ने सुना दानवों में भयंकर चीत्कार मचा है और देवता बार-बार जय के नारे लगा रहे हैं। साथ ही देखा, दैत्य भाग भी रहे हैं। अतः अब वह क्रोध से भर गया। वह महान् बली एवं तेजस्वी दैत्य था। देवता गरज रहे थे— यह देखकर वह युद्धभूमि में आ डटा। उसके हाथों में आयुध थे। वह रथ पर बैठा था। उसके धनुष से बड़ी विचित्र ध्वनि निकल रही थी। क्रोध के कारण उसकी आँखें लाल हो रही थीं। वह देवी के सामने आ पहुंचा।

उस दानव के शरीर से जब रक्त की बूंद भूमि पर गिरती थी, तब उस बूंद से तुरंत दानव उत्पन्न हो जाते थे। उनके रूप और पराक्रम में बिल्कुल समानता रहती थी। भगवान् शंकर ने उसे यह बड़ा ही अद्भुत वर दे दिया था कि तुम्हारे रक्त से असंख्य महान् पराक्रमी दानव उत्पन्न हो जायंगे। इस वरदान के अभिमान में भरा हुआ वह दैत्य क्रोधवश देवी को मारने के लिये

युद्ध-भूमि म आ गया। देवी के साथ कालिका भी विद्यमान थी। दैत्य ने देखा, विष्णु की शक्ति वैष्णवी गरुड़ पर विराजमान थी। उनके नेत्र कमल क समान सुन्दर है। दानव ने शक्ति से उन पर प्रहार किया। वेष्णवी देवी ने गदा से उस शक्ति को रोक लिया। साथ ही दैत्यराज रक्तबीज को चक्र से चोट पहुचायी। चक्र से छिद जाने के कारण उसके शरीर से रक्त की धारा बह चली, माना वज्र की चोट से आहत हुए पर्वत के शिखर से गेरू की धारा उमड़ चली हो। उस समय जहाँ-जहाँ भी रक्तबीज के शरीर से निकलकर रक्त की बूदे भूमि पर गिरती थीं, वही-वही रक्तबीज के समान ही हजारो राक्षस उत्पन्न हो जाते थे। ऐन्द्रीने कुपित होकर उस भयकर दैत्य रक्तबीज को वज्र से मारा। उसस भी रक्त की बूदे बह चलीं और उसके रक्त से असख्य रक्तबीज उत्पन्न हो गये। पराक्रम और आकार मे सभी मूल रक्तबीज के समान थे। युद्ध म कभी पीछे न हटने वाले वे दानव आयुध लिए हुए थे। ब्रह्माणी कुपित हाकर ब्रह्मदण्ड स उन्हें मारने लगी। माहेश्वरी ने त्रिशूल से दानवो को विदीर्ण कर दिया। नारसिही के नखा की चोट से उस महाअसुर का शरीर छिद गया। वाराही कुपित होकर अपने यूथुना उस राक्षसाधम को मारने लगी और कौमारीने शक्ति से उसकी छाती म प्रहार किया।

अब रक्तबीज ने भी कुपित होकर अपने पैने बाणों से देविया को मारना आरम्भ कर दिया। वह अलग-अलग सम्पूर्ण देविया का गदा और शक्ति से चोट पहुचाने लगा। तदनन्तर देवियाँ क्रोध मे भरकर अपने बाण-पहार से रक्तबीज पर आघात करने म तत्पर हो गयीं। चण्डिका ने अपने तीखे तीरो स दानव क शस्त्र काट डाले। साथ ही क्रोध मे भरकर वे अन्य अनक बाणो से उसे सब ओर स मारने लगीं। अब रक्तबीज क शरीर से रुधिर की मोटी धार बह चली। उससे उस दानव के समान ही असख्य शूरवीर उत्पन्न हो गये। उम समय रक्त से उत्पन्न हुए रक्तबीजा से पृथ्वी भर-सी गयी। सभी कवच पहने, आयुध लिये हुए अद्भुत युद्ध करने के लिये लालायित थ। अब उन अनगिनत रक्तबीजा न देवी पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया। यह देखकर देवता भयभीत हो उठे। उनके मुखपर उदासी छा गयी। शोक से उनके शरीर दुर्बल होने लगे। सोचने लगे- अब इन असख्य दैत्यों का सहार कैसे होगा? रक्त से उत्पन्न हुए इन दानवा क शरीर वडे विकराल है। ये बड़े शूरवीर है। इस समय यहाँ

केवल चण्डिका है तथा काली और कुछ माताएं भी विराजमान है, किंतु ये लोग इन सम्पूर्ण दानवों को परास्त कर सकें— यह कहना कठिन है। यदि निशुम्भ और बलशाली शुम्भ भी सहसा समरांगण में आ जायेंगे, तब तो महान् अनर्थ हो जाने की सम्भावना है।

इस प्रकार जब देवता भय से घबराकर अत्यन्त चिंतित हो गये, तब भगवती जगदम्बा ने काली से, जिनकी आंखें कमल के समान थी, कहा— 'चामुण्डे' तुम अपना मुख फैलाकर मेरे शस्त्राघात के द्वारा रक्तबीज के शरीर से निकले हुए रुधिर को पीती जाओ। इस कार्य में बहुत शीघ्रता करनी चाहिये। अब तुम दानवों का भक्षण करती हुई इच्छानुसार युद्ध-भूमि में विचरो। मैं पैने बाणों, गदाओं तलवारों और मूसलों से इन दैत्यों को मार डालूंगी। विशाललोचने! तुम ऐसे ढंग से इन दानवों का रुधिर पीती रहो कि अब एक बूंद भी पृथ्वी पर न गिरने पाये। इस प्रकार जब तुम सारा रुधिर पीती जाओगी, तब दूसरे दानव उत्पन्न नहीं हो सकेंगे। यों करने से इन दैत्यों का शीघ्र नाश हो जायेगा। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है। जब मैं इस दैत्य को मारूं तब तुम इसे तुरन्त खा-जाना। शत्रुसंहार रूपी इस कार्य में यत्नशील बनकर अब इसका सम्पूर्ण रुधिर पी जाना ही तुम्हारा परम कर्तव्य है। इस प्रकार दैत्य-वध करके स्वर्ग का राज्य इन्द्र को देने के पश्चात् हम आनंदपूर्वक यहाँ से चल देंगी।

भगवती जगदम्बा के यों कहने पर प्रचण्ड पराक्रम दिखाने वाली देवी चामुण्डा रक्तबीज के शरीर से निकले हुए समस्त रुधिर को पीने के लिये तत्पर हो गयी। जगदम्बा ने तलवार और मुसल से रक्तबीज को मारना आरम्भ किया और भूखी चण्डिका उसके शरीर के कटे हुए अंगों को खाने लगी। फिर तो रक्तबीज भी कुपित होकर चण्डिका पर गदा से प्रहार करने लगा। तब भी चण्डिका उसका रुधिर पान करने से विरत न हुई। उस दैत्य के रुधिर से उत्पन्न हुए अन्य जितने भी महाबली क्रूर रक्तबीज थे, वे सभी गिरते गये और काली उन सबका रुधिर पीती गयी। यों सम्पूर्ण कृत्रिम रक्तबीज तुरत ही चण्डिका के कलेवा बन गये। जो असली रक्तबीज था, वह भी भयानक चोट खाकर गिर पड़ा। तलवार की धार से उसके शरीर के भी टुकड़े-टुकड़े हो गये। रक्तबीज महान् भयंकर दानव था। उसके मर जाने पर युद्धभूमि में दूसरे जितने दैत्य

थे, सब भागकर शुम्भ के पास चले गये। भय से उनका कलेजा काँप रहा था। उनकी देह रुधिर से भीगी हुई थी। उनके अस्त्र पृथ्वीपर गिर गये थे। अचेत जैसे होकर 'हाय, हाय'— पुकारते हुए व्याकुलतापूर्वक वे शुम्भ के प्रति बोले— 'राजन् वे रक्तबीज भी अम्बिका के हाथ युद्ध म काम आगये। उनके शरीर से जो रुधिर निकलता था, उसे चण्डिका पी जाती थी। जो अन्य शूरवीर दानव थे, उन्हे देवी के वाहन सिह ने मार डाला। बहुत-से दैत्य काली के ग्रास बन गये। हम लोग युद्ध का वृत्तान्त बतलाने तथा देवी ने समरागण मे कैसी अत्यत भयानक स्थिति उत्पन्न कर दी हे, यह सूचित करने के लिये आ गय है। महाराज यह देवी दैत्य, दानव, गन्धर्व, असुर, यक्ष, पन्नग, उरग और राक्षस— इन सभी के लिये सर्वथा अजेय है, कोई भी इसे जीत नही सकता। महाराज! इद्राणी प्रभृति अन्य भी बहुत-सी प्रमुख देवियाँ आकर युद्ध मे सम्मिलित हो गयी है। सबके पास वाहन है और सबकी भुजाए विविध आयुधों से सुसज्जित है। उत्तम आयुध धारण करने वाली उन देवियो ने सम्पूर्ण दानवी-सेना को समाप्त कर दिया हे। राजेन्द्र! उन्होने बहुत ही शीघ्र रक्तबीज को धराशायी कर दिया। एक ही देवी दुस्सह थी, फिर इतनी अन्यान्य देवियो का सहयोग मिलने पर तो कहना ही क्या है? उसके वाहन सिह मे भी बडी अनुपम शक्ति है। सग्राम मे वह राक्षसों को मार डालता है। अत आप मन्त्रियों के साथ विचार करके जो उचित हो, वही करने की कृपा कर। हमें तो इसके साथ वैर करना ठीक नही दीखता। सधि करने मे ही सुख की आशा प्रतीत होती है। राजन्! अन्य जितने दैत्य थे, वे सभी सग्राम मे अम्बिका के हाथ मृत्यु के घाट उतर गय। चामुण्ड ने उन दैत्यो का मास तक खा डाला। महाराज! पाताल म चले जाना अथवा अम्बिका के अनुचर बनकर रहना ही ठीक है। अब इसके साथ युद्ध करने मे तो तनिक भी भलाई नही दीखती। यह कोई साधारण स्त्री नही है। देवताओं का काय सिद्ध करन के लिये स्वय माया देवी प्रकट होकर पधारी है।'

भागकर आये हुए दैत्यों का यह सत्य वचन सुनकर ही शुम्भ क्रोध से आठ कपाने लगा। मृत्यु का वरण करने की इच्छा रखन वाले उस दैत्य की बुद्धि काल क प्रभाव से कुण्ठित हो गयी थी। उसने उत्तर दिया।

शुम्भ ने कहा— भय से व्याकुल हुए तुम सब लोग पाताल मे भाग जाओ अथवा उस स्त्री के दास बनना स्वीकार कर लो। मै तो अभी उसे

मारने के प्रयत्न म लगता हू। ये देवियाँ भी मृत्यु के ग्रास बनकर रहेंगी। सग्राम में सम्पूर्ण देवताओ को जीतकर मै निष्कटक राज्य करूगा। एक स्त्री क भय स घबराकर मै पाताल म कैसे चला जाऊ? रक्तबीज आदि प्रमुख दैत्य मर पापद थे। मर कारण व युद्ध में काम आ गये। उन सबको मरवाकर मै अपन प्राण बचाने के लिये पाताल म चला जाऊ और अपनी विशद् कीर्ति का नाश कर दू यह मुख से नही हो सकता। काल की व्यवस्था के अनुसार प्राणिया की मृत्यु बिल्कुल निश्चित है। एसी स्थित म कौन पुरुष अपने दुर्लभ यश का त्याग करेगा? निशुम्भ मै रथ पर बैठकर समरागण म जाऊगा। उस स्त्री को मारकर ही मेरा आना होगा। यदि मार न सका तो लौटना असभव है। वीर! तुम सेना साथ लेकर मर इस कार्य म सहयोग देते रहना। तीखे तीरों स मारकर उस स्त्री को शीघ्र ही मृत्यु के मुख म झाक देना— यही तुम्हारा परम कर्तव्य है।'

निशुम्भ बोला— मै अभी जाता हू। वह दुष्टा काली मेरे हाथ काल का कलवा बन जायगी, फिर बहुत शीघ्र मै उस अम्बिका को लेकर यहाँ आ जाऊगा। राजेन्द्र! आप एक तुच्छ स्त्री के विषय म तनिक भी चिता न करे। कहाँ वह साधारण अबला स्त्री और कहाँ मरी भुजाआ का अमित पराक्रम, जा सारे विश्व को वश मे करने की शक्ति रखता है। भाई साहब, आप इस बड़ी भारी चिता को छाड़कर सर्वोत्तम राज्यसुख भोगें। उस आदर की पात्र मानिनी को मे अवश्य ही आपके पास ला दूगा। राजन् मेरे रहते हुए आप युद्धभूमि म जायें— यह अनुचित है। मै आपका कार्य सिद्ध करने के लिये समरागण म जाकर विजयश्री प्राप्त करने की चष्टा करूगा।

इस प्रकार अपने बड़े भाई शुम्भ से कहकर छोटा भाई निशुम्भ जो अपने बल का पर्याप्त अभिमान रखता था, कवच पहनकर एक विशाल रथ पर जा बैठा। उसने साथ मे सेना ले ली। मगलाचार कराकर वह तुरत युद्धभूमि की ओर चल पडा। उसकी भुजाएँ आयुधो से अलकृत थी। पार्श्वरक्षक विद्यमान थे। सूत और बदीजन उसका यशोगान कर रहे थे। अत मे शुम्भ-निशुम्भ का भी देवी भगवती व उसकी शक्तियो द्वारा वध कर दिया गया।

माता के स्थान

जहा हसवाहिनी ब्रह्माणी देवी स्थित है वह महास्थान अविन्तिपुरी मे बहुत उत्तम स्थान माना गया है। वे भक्तो की आशा पूर्ण करती है तथा जैसे

माता अपने पुत्र का पालन करती है, उसी प्रकार वह भक्तो का पालन करती है। सब प्रकार की सिद्धि देने वाली उन हस वाहिनी देवी का गध, पुष्प और नैवेद्यों द्वारा पूजन करें।[१]

भवाल–यहाँ माता जी की दो मूर्तियाँ है[२]–

(१) कालिका माता, इसे लहण माता भी कहते है

(२) ब्रह्माणी माता बूढ़ण माता

मदिर के पुजारी अम्बरीशपुरी जी है।

माताजी का मदिर पूर्वाभिमुखी है।

कालिका माता– यह माता चार भुजाधारी है। तलवार, त्रिशूल धारिया व खप्पर माता के हाथ में है। इसके भैरव का नाम काल-भैरव है। इसे लाहण लहण माता भी कहते है। (यहाँ की कालिका माता का विस्तृत विवरण कालिका माता के वृतान्त मे दिया गया)

ब्रह्माणी माता- मदिर मे दूसरी माता ब्रह्माणी माता के रूप म है। यह माता भी चार भुजा धारी है। माता के हाथ मे शख, त्रिशूल, अमृत कलश व वरदहस्त है। इनके भैरव का नाम गोरा भैरव है। इसे बूढ़ण माता भी कहते है।

ऐसा बताया गया कि यह मदिर बहुत पुराना है। भवाल ग्राम में स्थित माताओ का प्राकट्य सम्वत् ११११ मे हुआ बताया तथा तत्सबधी शिलालेख मंदिर में बताया गया। इस मदिर का निर्माण वि स ११७० (चैत्रादि११७१) ज्येष्ठबुदी १० (इ स १११४ ता २मई) को हुआ जिसका शिलालेख मदिर म है, जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि यह मदिर १२ वी शताब्दी के बाद का निर्मित नहीं है। वि स १३८० माघ बदी ११(इ स १३२३ ता २४ दिसम्बर) के लेख से प्रतीत होता है कि इस समय इसका जीर्णोद्धार हुआ होगा। पुन मदिरो का जीर्णोद्धार सवत् १७०० में जेठ बदी म कराया गया तत्विषयक शिलालेख मदिर म है।[३]

---

१ १ कल्याण– सक्षिप्त स्कन्दपुराणाक वर्ष २५ (१९५०) पृ ७०३

२ जाधपुर राज्य का इतिहास ल गौरीशकर हीराचन्द आझा पृ ३६

३ लखक दिनाक २२ ६ १९९९ का माता क दर्शनार्थ एव अध्ययन हतु गया।

भवाल मेडता से दक्षिण म २५ कि मी की दूरी पर है। मेड़ता भक्त-शिरोमणी मीराबाई की जन्मस्थली भी है। धर्म और कला के अप्रतिम सौदर्य के अतिरिक्त प्राकृतिक सोदर्य से यहा की छटा निराली है। मदिर की रमणीयता उसके चारों ओर लहलहाते खेतो से द्विगुणित हो जाती है।

यहाँ चैत्र और आसोज के दानो नवरात्रा म मेले भरते है तथा दूर-दूर के यात्री माता के दर्शनार्थ आते है, जात देते है, जडूले उतारते है।

माता का मदिर एक डाकू द्वारा बनाया गया था, एसी किवदती है। इसका कथानक इस प्रकार बताया गया कि एक बार डाकू धाड़ा (डाका) देने जा रहे थे। जाते समय उन्होन माता से प्रार्थना की कि यदि हम सकुशल डाका डालकर आजायग तो डाके मे मिल धन का आधा हिस्सा मदिर-निर्माण मे लगवाएगे। डाकू जब डाका डालकर पुन लौट रहे थे, तो राजा की फौज उन्ह पकड़ने हेतु पीछे लग गई। सयोगवश माता का मदिर पास ही था। डाकुओं ने मदिर मे आकर शरण ले ली। मदिर क पुजारी अजयपालजी ने डाकुआ स कहा 'बैठ जाओ, तुम माता की शरण मे आ गय हो, अब सुरक्षित हो।' देवी की कृपा से डाकुओ का रग-रूप एव स्वरूप बदल गया। सभी डाकू वद्ध दिखन लगे। उन सभी के सफेद दाढ़ी, मूछ हो गई, एसे प्रतीत होता था मानो पेट मे आत नहीं मुह म दाँत नही। यही नही, डाकुओ के घोडों का स्वरूप भी परिवर्तित हो गया। थोडी दर बाद राजा के सैनिक मदिर मे आये जहाँ तक डाकूओं के पैरा के खोज आये थे ओर मदिर म डाकुआ की तलाश करने लग। पुजारी जी द्वारा राजा क सैनिको स पूछन पर कि वे क्या देख रहे हे, राज सैनिकों ने कहा यहाँ डाकू आये है, अजयपाल जी पुजारी ने उपस्थित डाकुओ की ओर इगित कर कहा ये यात्री है इनमे से यदि काई डाकू हो तो उसे ले जाओ। साथ ही उनके घाडो की ओर इशारा कर कहा, यदि इनम कोई घोडा डाकुआ का हो तो उसे पहचान लो। उन्ह वहाँ सभी वृद्ध व्यक्ति भक्त यात्रियों के रूप म दिखे तथा कोई घोडा भी दिखाई नही दिया। डाकुओ एव घाडा का स्वरूप परिवर्तित होने क कारण राजा के सेनिक उन्ह नही पहचान सके ओर लौट गये। राजा के सैनिको के लौटते ही डाकू एव उनके घाडे अपने मूल स्वरूप मे परिवर्तित हो गये।

डाकुआ ने लूट की सम्पूर्ण सम्पत्ति मदिर निमाण म लगा दी।

भवाल ग्राम में हाने के कारण इसका नाम भवाल-माता पड गया जब कि मदिर की दो मूर्तिया कालिका एव ब्रह्माणी के रूप म है।

पारीको के अतिरिक्त यह माता ब्राह्मणो, राजपूतों, जैनिया, जाट मघवाल आदि की भी कुल देवी है। वैसे सभी समाज वाले माता क यहाँ मान्यता लेकर आते है और जात जड़ूले उतारते है।

माताजी क पुजारी प्रारम्भ से ही पुरी गोस्वामी है, ऐसा पुजारी जी द्वारा बताया गया।

माता का मदिर दशनार्थ प्रात ६ वजे से रात्रि के ८ बजे तक खुला रहता है।

माता की सेवा-पूजा एव पुजारी जी का योग-क्षेम चढावे से होता है।

माता के मदिर म शिलालेख है। माता जी क मदिर मे बॉई ओर पश्चिम दिशा म शीतला माता की मूर्ति भी प्रतिष्ठित है।

भोग काली माता के चॉदी के प्याले में ढाई प्याले मदिरा एव बकरे की बलि का भोग लगता है।

ब्रह्माणी माता के मीठा भाग लगता है।

मार्ग माता का मदिर मेडता-जैतारण रोड पर २५ कि मी की दूरी पर स्थित है।

माता के चमत्कारो का एक अन्य कथानक इस प्रकार हे, कि भीनासर के एक सेठ जी थ, जिनका नाम प्रतापमल जी था। एक वार मुगल बादशाह मेडता म मेला देखन आया, भीड म भूलवश सेठ प्रतापमल जी का पैर बादशाह के चित्र क लग गया। अब तो सेठ की खेर नही रही। उस पर जान- लेवा हमला प्रारम्भ हो गया। कष्ट म आदमी अपने इष्ट देव को याद करता है। सेठ ने भी अपनी माता भवाल को याद किया। भक्त की आर्त्त पुकार सुनकर माता ने तत्काल सेठ का आततायियो क चगुल मे इस प्रकार बचाया कि बादशाह क सेनिको का कहीं भी सेठ दिखाई नही दिया।

जस-नगर निवासी दुर्गाराम जी माली का भी, जो जन्माध थे, माता ने नेत्र ज्याति दी। आजीवन वे माता की भक्ति मे लीन रहे।

एक थे रूपाराम जी जाट। गॉव था उनका धनेरा। ५०-५५ की आयु तक कोई सतान नहीं हुई। गाँववालो एव सगे सबधियों के ताने न केवल वही सुनते अपितु उनकी पत्नी को भी स्त्रियाँ बॉझ कहती और कहती 'इस औरत का तो मुह देखन का धम नही।' दोना स्त्री पुरुष माताजी की शरण म गये और माता से प्रार्थना की हे मातेश्वरी! या तो हमें सतान दो या फिर हमे मौत दे। माता ने स्वप्न म रूपाराम जी से कहा 'दुखी मत हो, तेरे सतान होगी' प्रात उन्होने स्वप्न की बात अपनी पत्नी को बताई तथा यह भी निश्चय किया कि सतान होने पर वे माता के श्रीचरणो में अपनी जीभ भेंट करेगे। देवी कृपा से नौ माह पश्चात् उनके लडका हुआ, अपने निश्चय के अनुसार उन्होने कटार से अपनी जीभ मातेश्वरी के अर्पण कर दी। पुन रात्रि को माता ने स्वप्न देकर रूपाराम जी से कहा 'अरे भक्त! यदि तू मेरे भाले से जीभ काटता तो वह कट-कर तत्काल तेरे मुह मे जुड जाती। मै तेरे निश्चय एव उसकी क्रियान्विति से प्रसन्न हू, आज के सातवे रोज तेरी जीभ पुन जुड़ जावेगी' और यह देवी का चमत्कार ही था कि सातवें रोज जब रूपारामजी सो रहे थे। यकायक उनके मुह म जीभ आ गई रूपारामजी भी आजन्म माता की भक्ति म लीन रहे।

माता के चमत्कार का एक उदाहरण और है। ओसवाल जाति का एक व्यक्ति विभाजन के समय पाकिस्तान के पार्वतीपुर ग्राम चला गया। वहाँ उसके परिवार के एक लडके के कोढ स दोनों पाँव गल गये। वे पुन मेडता आये और अपनी कुल देवी की शरण ली, माता ने स्वप्न में कहा बताया कि 'अपनी कुल-देवी को छोडकर जाने का यह परिणाम है,' माता की कृपा से लडके का कोढ शीघ्र ही ठीक हो गया। तबसे यह परिवार मंदिर की देखरेख व पुजारी सहित पूजा-अर्चना करता है।

वेसे तो माता के दर्शनार्थ भक्त लोग प्रतिदिन ही आते है, किंतु चैत्र के नवरात्रो मे एकम् से नवमी तक दूर-दराज के भक्त माता के दर्शनार्थ एव जात जडूले उतारने आते है।

ब्रह्माणी माता-सोरसन

कोटा जिले के अता-बारा मार्ग पर दक्षिण दिशा की ओर लगभग २०-२२ कि मी की दूरी पर सोरसन नामक ग्राम म ब्रह्माणी माता का अत्यन्त प्राचीन

एव चमत्कारी मदिर है। यह मदिर लगभग सात सौ वर्ष पुराना है। मदिर में उपलब्ध दस्तावेजो से ज्ञात होता है कि इस मदिर के वर्तमान स्वरूप का निर्माण मानजी बोहरा नामक भक्त ने सवत् १६२४ से १६४० के मध्य कराया था। मदिर की विशालता इसी से आकी जा सकती है कि उस समय मदिर निर्माण मे ४०,७८७ रु तथा सम्वत् १६४१ मे ६०,८०० र व्यय हुआ। मदिर के चारों ओर परकोटा है।

मदिर मे प्रवेश हेतु तीन विशाल द्वार है, जिनकी कलात्मकता देखने योग्य है। मदिर के गर्भ-गृह एव उसके आगे गुफा मे विशाल चट्टान पर माता की प्रतिमा है। यहाँ माता की पीठ की पूजा की जाती है। भक्तो को केवल माता की पीठ ही दिखाई देती है। माता की पीठ पर शृगार, मुँह की भाति ही किया जाता है। माता की प्रतिमा चमत्कारी है। सिदूर से माता का प्रतिदिन शृगार किया जाता है तथा कनेर की पत्तिया से माता की पीठ तथा मदिर को सजाया जाता है। ब्रह्माणी माता को अत्यन्त सात्विक देवी माना जाता है, यही कारण है कि यहाँ नारियल बधारना (फोडना) भी वर्जित है। मदिर में सवत् १६२४ स ही अखण्ड-ज्योति जल रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व अखण्ड ज्योति की देखभाल हेतु पाँच सैनिक कोटा राज्य की ओर से तैनात थे, किन्तु सन् १९४८ मे इन्हें हटा लिया गया। अब इस कार्य हेतु एक चोकीदार नियुक्त है। मदिर की देखभाल वर्तमान म पचायत करती है तथा माता के जेवर तहसील मे जमा रहते है।

अन्य मूर्तियाँ

मदिर की गुफा के बाहर दोनों ओर आलियो मे अन्नपूर्णा देवी एव विघ्नहरण गणपति की मूर्तिया है। मदिर के चौक में लोक-देवता काला-गोरजी की प्राचीन मूर्तिया स्थापित हे। इन्हे भोग मे दूध चना और भाग अर्पित की जाती है। मदिर परिसर मे गोड ब्राह्मणो की सती-माता का एक चबूतरा है तथा पास ही प्राचीन शिव मदिर। पास ही कुछ ऊँचाई पर एक धूणी है, जिसे सिद्ध स्थान माना जाता है तथा यहाँ सत-महात्मा रहते है। वि स १७५० म निर्मित एक कलात्मक कुण्ड भी यहाँ हे जो प्राचीन स्थापत्य कला की एक अनूठी मिसाल है।

चमत्कार

ऐसी मान्यता है कि माता के दरबार म जाने से ऊपरी रोग एव भूत-प्रेत बाधा से भी माता मुक्ति दिलाती है, यही कारण है कि दूर-दराज इलाको से भी श्रद्धालु वाछित फल पाने हेतु यहाँ आते है।

माता की पीठ पूजने का कारण

माता की पीठ क्यो पूजी जाती है, इस सम्बध मे एक किवदती इस प्रकार है कि मानजी बोहरा, जो धार्मिक एव सात्त्विक प्रकृति के सीधे-सादे व्यक्ति थे, अपने खेत पर कार्य कर, उसकी आय से जितना बन पड़ता परोपकार करते रहते थे। एक दिन जब उनकी साध्वी पत्नी खेत पर मानजी के लिए भोजन लेकर जा रही थी तो रास्ते में ठोकर लगने से वह गिर पडी। वह क्या देखती है कि, लोहे का एक पात्र सोने के पात्र में परिवर्तित हो गया है, वह भागी-भागी अपने पति मानजी के पास गई तथा उन्हे इस चमत्कारी घटना की जानकारी कराई, मानजी तत्काल उस स्थान पर आये जहाँ उन्हें पारस पत्थर मिला। उसी रात माता ने मानजी को दर्शन देकर कहा, इस पारस पत्थर को तुम मेरा ही रूप मानो। जब तक तुम सत् पथ पर चलते हुए परमार्थ के काय करते रहोगे, मैं तुम्हारे घर में रहूगी।' मानजी हमेशा माता के आदेशानुसार जन कल्याण के कार्य करते रहे, किन्तु होनी कुछ ओर थी, एक रोज उनकी पुत्रवधु के मुह से किसी परोपकारी कार्य हेतु मना करने पर मानजी को दर्शन देकर माता ने कहा 'अब मे जा रही हू,' उस समय जाने की मुद्रा म देहली के पास माता की पीठ थी। मानजी ने माता से प्रार्थना की माता, आपकी मुझ पर महती कृपा रही है, मेरी अर्ज सुन। म बद्रीकाश्रम दर्शन करके जब तक न लोटू आप यही विराजे। मानजी तीर्थ यात्रा पर गये किन्तु लौटे नही यह मानकर कि माता उनका घर छोडकर न जावे। दर्शन देते समय मानजी की ओर माता की पीठ थी, अत तब से ही माता की पीठ की पूजन होती है।

व्यवस्था एव परम्परायें

१ माता की पूजा गौड ब्राह्मण [illegible] पूवज खोलरजी पर [illegible] अनन्य कृपा थी।

२ मदिर मे श्री दुर्गासप्तशती का पाठ करने का अधिकार गुजराती ब्राह्मणो को है।

३ मदिर म नगारे बजाने का कार्य मीणा के राव-भाटा का है।

ब्रह्माणी माता का एक मदिर त्रिवेणीधाम (शाहपुरा-जयपुर) मे त्रिवेणी नदी के पास ही पहाडी पर है। मदिर बहुत पुराना है।

माता के कतिपय अन्य स्थान निम्न स्थानो पर भी है—
आकारेश्वर।

ब्रह्माणी माता के निम्न स्थानो का वर्णन पठनीय है—

१ **ब्रह्माणी (भादवा माता)**– भादवा ग्राम (नीमच के पास) मे माता का मदिर है। एक चबूतरे पर माता की सात मूर्तिया है, जिन पर सिन्दूर चर्चित है। पास ही एक बावडी है। ब्रह्माणी के इस मदिर को भादवा ग्राम मे होने से भादवा माता भी कहते है। ऐसी मान्यता है कि शीतला माता का प्रकोप होने पर यदि व्यक्ति बावडी म स्नान कर, माता की पूजा-अर्चना करे, तो वह स्वस्थ हो जाता है। शीतला प्रकोप के अतिरिक्त अन्य रोगो के रोगी भी माता की शरण मे आते है तथा रोग मुक्ति तक यहाँ रहते है। यात्रियो के लिए धर्मशालाएँ है। यहाँ चैत्र-बैशाख माह म मेला लगता है।

२ **पल्लू माताजी का मदिर**– पुराने समय मे चन्द्रवशी राजपूत गजपत नामक राजा राज करता था, जिसकी राजधानी आबू थी। उसके नौ पुत्र थे व बडे पुत्र का नाम कूलर था। वहा एक बार ऋषि मार्कण्डेय पधारे। राजकुमार कूलर ने उनकी बहुत सेवा की और उनके आदेशो का सदा पालन किया। इससे मुनि बडे प्रसन्न हुए ओर सिर पर हाथ रखकर उसे देवी माता के मत्रा का उच्चारण बताया तथा आराधना करने को कहा। कडी तपस्या के कारण मा जगदम्बा ने प्रगट होकर राजकुमार से वर मागने को कहा तो राजकुमार कूलर ने कहा कि 'मा' मुझे अपने पिताजी से अलग एक राज्य चाहिए'। तब जगज्जननी ने प्रसन्न होकर तथास्तु' कहा और राजकुमार का साथ लेकर युद्ध भूमि में लाकर किले की नीव गाड दी और कहा कि जब धन की आवश्यकता हो तो मा के लक्ष्मी रूप का ध्यान करना व युद्ध का काम पडे तो महाकाली का ध्यान लगाना, इस प्रकार स्मरण करने पर मै तुम्हारी सहायता व रक्षा करूगी।

तब देवी के भक्त राजकुमार ने वहा एक दुर्ग बनवाना प्रारम्भ किया जो चौरस था और ८४ बीघा क्षेत्र मे फैला था। उसम चार कुए व एक बावडी थी, जिसके पास मे क्लि से बाहर निकलन के लिए एक सुरग थी। क्लि मे एक सुन्दर महल बनवाया गया, किले के चार दरवाजे थे जिन पर चार प्रहरी रक्षक के तौर पर रहते थे। इनमे पूर्वी द्वार पर सार्दूला नामक वीर तैनात था। किले के मध्य म महाकाली और महालक्ष्मी का मदिर बनवाया जिसम दोनो माताआ की सुन्दर मूर्तिया स्थापित की गई।

कुछ समय बाद राजा कूलर का एक अन्य राजा फूलजी जा फूलडा राज्य का शासक था से युद्ध छिड गया। फूलडा क राजा न कूलरगढ पर सात बार आक्रमण किया पर देवी की कृपा से उसे सदा परास्त ही हाना पडा। अन्त म उस राजा के ज्येष्ठ पुत्र ने जिसे लाखा फुलाणी कहते है और वह सूरतगढ नगर के समीप रगमहल नामक स्थान का राजा था, उसने अपन पिता को मरते समय वचन दिया कि वह कूलरगढ को अवश्य जीतेगा। लाखा ने १२ वर्ष भगवान शिवजी की तपस्या की और विजय का वर प्राप्त करके कूलर पर विजय प्राप्त कर ली। देवी ने शिवभक्त क विरुद्ध सहायता करने से मना कर दिया। युद्ध बडा भयकर हुआ। द्वारपाल शार्दूल ने बडी वीरता दिखाई पर वह भी वीरगति को प्राप्त हा गया। इस दुर्ग के तत्कालीन किसी राजा की महारानी का नाम पल्ल था इसी कारण बाद म नगर भी पल्लू के नाम से विख्यात हा गया। उक्त युद्ध म क्लिा व नगर सब नष्ट हो गया था।

इसके बाद बीकानेर के पास गीगासर नाम क एक चन्द्रवशी राजपूत वश मे बाघजी नामक ठाकुर के भीमाजी नामक पुत्र का जन्म हुआ जो बडा धार्मिक व गौ-सवक था। जब अकाल पडा तो वह अपने पशुआ को चराने प्राचीन कूलर स्थान की आर गया। उसे भी मा दुर्गा का इष्ट था। उस क्षेत्र म जान पर मा ने दर्शन दिय और माता मूर्ति के रूप मे प्रगट हा गई। उस दिन आसोज सुदी अष्टमी, शनिवार विक्रम सवत १३६५ का दिन बतलाते है। भोजाजी ने वहा अपना निवास बना लिया ओर मा ने कहा, कि तुम मदिर बनाआ, जो चढाव का प्रसाद कपडा, जेवर, रुपये-पेसे भेट क रूप म आएग उनस तुम्हारे परिवार का पोषण हागा। अत माता की मूर्ति को स्थापित कर मदिर बनवाया गया। उसी समय द्वारपाल शार्दूला न भी जो दैत्य

योनि में था प्रकट होकर मा के दर्शन किये और विनती की कि उसका भी उद्धार करो तो मा ने उसे भी वर दिया कि उसकी भी वहा पूजा होगी। अत बाहर उसकी भी मूर्ति स्थापित हो गई। भौजा का परिवार वहा आबाद होकर मदिर की पूजा करने लगा और पल्लू कोट की मा का पुन दूर-दूर तक नाम हो गया। कुछ समय बाद वहा एक और मूर्ति प्रगट हो गइ जो सरस्वती की थी। यह आज से ३५० वर्ष पूर्व हुई। अब दोनो मूर्तियों की मदिर के मुख्य स्थान पर स्थापना की हुई है और बाहर एक काली माता की मूर्ति स्थापित हुइ। इस मदिर म लक्ष्मी माता जिसे ब्रह्माणी कहते है, सरस्वती माता जो छोटी ब्रह्माणी कहलाती है, वह एक महाकाली की मूर्ति है।[१]

वर्तमान में मदिर का जीर्णोद्धार होने के बाद यात्रियों की सख्या में वृद्धि हुई है। मा की कृपा स कुछ चमत्कार भी हुए है। किसी नेत्रहीन को नेत्र प्राप्त हुए तो एक भक्त महिला के तीसरी मजिल से गिरने पर भी मा न दृढ भक्ति के कारण उसकी रक्षा की।

पल्लू पूर्व में ग्राम पचायत थी और इसके नीच चार पाच छोटे-छोटे ग्राम थे व पटवार क्षेत्र था, पर हनुमानगढ़ जिला व रावतसर तहसील बनने के साथ ही पल्लू मे उप-तहसील कायम कर दी गई। यात्रियों के ठहरने के लिए कई धर्मशालाए बन गई है व अभी निर्माण काय चल रहा है। पल्लू जाने के लिए हनुमानगढ, रावतसर व सरदारशहर तथा नोहर से पक्की सड़क है तथा बस सेवा और जीपों का नियमित साधन है।

पारीको के निम्न अवटका की यह कुलदेवी है—

१ मलगोत मलगोता	मिश्र (बोहरा, बहुरा)
२ कसूमीवाल	तिवाडी
३ कीलणावा किलणवा	[redacted] उपाध्याय

□□□

१ पल्लू स्थित माताओं का वर्णन श्री रघुनाथरायजी शर्मा (पारीक), सेवानिवृत्त आर ए.एस , ४१, पचवटी, अलवर (राज) द्वारा प्रेषित।

पल्लू (सरदार शहर) स्थित माता के मदिर के मुख्यद्वार का चित्र

जाखण : यक्षिणी माता

सामान्यत यक्षिणी को धन की देवी, लक्ष्मी के रूप में माना जाता है। 'दीपावली का उत्सव पॉच दिन तक मनाया जाता है जिसमे पृथक्-पृथक् कृत्य होते है। यदि इस उत्सव के किसी एक कृत्य पर विशेष बल दिया जाता है तो उसे यक्षरात्रि (वात्सायन कामसूत्र, १/४/४२) की सज्ञाये प्राप्त हो गयी है।'[१] धनाध्यक्ष कुबेर का सेनापति होने के कारण भारतीय रिजर्व बैंक के भवन पर यक्ष एव यक्षिणी की प्रतिमा स्थापित की गयीं है। हिन्दू धर्मकोष[२] के अनुसार 'यक्ष एक अर्ध-देवयोनि है। यक्ष का उल्लेख ऋग्वेद म हुआ है। उसका अर्थ है 'जादू की शक्ति'। अतएव सभवत यक्ष का अर्थ जादू की शक्ति वाला होगा और निस्सदेह उसका अर्थ यक्षिणी है। (यक्ष की शक्ति यक्षिणी है) अथर्ववेद[३] मे भी यक्ष का सदर्भ आया है यथा—

पुण्डरीक नवद्वार त्रिभिर्गुणभिरावृतम्।
तस्मिन् यद् यक्ष मात्मन्वत् तद वै ब्रह्मविदो विदु ॥
(अथर्ववेद १० ८ ४३)

अर्थात् तीनो गुणो (मन, प्राण और वाक् रूप अवयवा) से आवृत, स्तुत्य, जरियावाला, परम धाम रूप यह पुण्डरीक है। इस पुण्डरीक म जो आत्मन्वत् यक्ष (पूजनीय देव) है, ब्रह्मवेत्ता उसी की अनुभूति करते है। सत्व, रज और तम नाम के तीन गुणो से आवत, नौ द्वारो वाला यह पुण्डरीक जन्म, अस्तित्व, वद्धि आदि भावो वाला व्यष्टि देह है, इसमे आत्मन्वत् यक्ष-पत्र आत्मरूप वन्दनीय देव है। ज्ञानीजन उसे ब्रह्म जानते है।

यक्ष की शक्ति यक्षिणी कही गई है। यहाँ यक्षिणी का कुलदेवी के रूप म पूजित होने का प्रसग है। यक्ष के रूप मे आद्याशक्ति भगवती ने देवताओं

---

१ धर्मशास्त्र का इतिहास, चतुर्थ भाग लेखक– महामहोपाध्याय डॉ पाण्डुरग वामन काणे, पृ ७३
२ हिन्दू धर्मकोष, लेखक– डॉ राजबलि पाण्डेय पृ ५२०
३ राजस्थान पत्रिका जयपुर दिनाक ७ जून १९९९ अथर्ववेद दयानद भाष्य, प २२५

का गर्व मर्दन किया उसका वर्णन श्री देवीभागवत[१] में आया है जिसका कथानक इस प्रकार है —

पूर्व समय की बात है, मदाभिमानी दैत्य देवताओं के साथ युद्ध करने लगे। उनका अत्यन्त विस्मयकारक युद्ध सौ वर्षो तक चलता रहा। विविध शस्त्रो का प्रहार तथा अनेक प्रकार की मायाओ का विचित्र प्रयोग किया जा रहा था। उस समय उन देवताओ और दैत्यों का वह युद्ध ऐसा जान पडता था मानो जगत् के लिए प्रलय की घडी आ गयी। उस समय भगवती पराशक्ति की कृपा से देवताओं द्वारा सग्राम मे दानवो की हार हो गयी। वे भूलोक और स्वर्ग लोक छोडकर पाताल मे चले गये। तब देवताओ के मन में अपार हर्ष हुआ। साथ ही वे मोह के कारण विजय मद मे चूर होकर चारों ओर परस्पर अपने पराक्रम का बखान करने लगे।

वे कहने लगे— 'अहो! हमारी विजय क्यो न हो? क्योकि हमारी महिमा सर्वोत्तम जो ठहरी। कहा ये पराक्रमहीन मूर्ख दैत्य और कहाँ सृष्टि, स्थिति और सहार करने वाले हम परम यशस्वी देवता। फिर हमारे सामने इन पामर दैत्यो की कौन-सी बात।' पराशक्ति के प्रभाव को न जानने के कारण उस समय देवताओ मे इस प्रकार का मोह छा गया था। तब उन देवताओं पर अनुग्रह करने के लिए दयामयी भगवती जगदम्बा यक्ष के रूप मे प्रगट हुईं। उनका विग्रह करोडो सूर्यो के समान प्रकाशमान था। उनमे शीतलता इतनी थी मानो करोडों चन्द्रमा हो। करोडो बिजलियो के समान प्रकाशमान उनका श्रीविग्रह हस्त-चरण आदि इन्द्रियो से रहित था। पहले कभी न देखे हुए उस परम सुन्दर तेज को देखकर देवताओं के आश्चर्य की सीमा न रही। वे परस्पर कहने लगे, 'यह क्या है? यह क्या है? यह देवताओ की चेष्टा है या कोई बलवती माया है? यदि देवताओ को आश्चर्य मे डालने वाली माया है तो यह किसके द्वारा रची गई है?' इस प्रकार की कल्पना करके वे सभी देवता उस समय परस्पर अपना उत्तम विचार प्रकट करने लगे। उन्होंने कहा– 'इस यक्ष के पास जाकर पूछना चाहिए कि तुम कौन हो? उसके बलाबल का ज्ञान होने के पश्चात् ही कुछ करना चाहिए।' यो निश्चित विचार करके देवराज इन्द्र ने अग्नि को बुलाया और कहा– 'अग्निदेव! तुम जाओ, क्योंकि तुम्हे

---

१ कल्याण– सक्षिप्त श्रीदेवीभागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ६५५

हम लोगों का गुह कहा गया है, वहा जाकर यह जानने का यत्न करो कि यह यक्ष कौन है?' महप्राक्ष इन्द्र के मुख से अपने पराक्रमगर्भित वचन सुनकर अग्निदेव शीघ्रतापूर्वक वहाँ से उठे और यक्ष के पास पहुँच गये। तब यक्ष ने अग्नि से पूछा– 'अजी, तुम कौन हो और तुममे कौन-सा पराक्रम है, तुम यह सब मुझे बतलाओ?' इस पर अग्नि देव ने कहा– 'मै अग्निदेव हूँ तथा मेरा नाम जातवेद भी है। अखिल विश्व को जला डालने की मुझमें शक्ति है।' अग्नि के यो कहने पर उस परम तेजस्वी यक्ष ने उनके सामने एक तृण रख दिया और कहा— 'यदि विश्व का भस्म कर डालने की शक्ति तुममें है तो इस तृण को जला दो।' तब अग्निदेव ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर उस तृण को भस्म करने का यत्न किया, परन्तु उसे वे जला नही सके, अत लज्जित होकर वे देवताओ के पास लौट गये। उनके पूछने पर अग्नि ने वहाँ का पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया, साथ ही कहा कि 'देवताओं! सर्वेश बनने का यह हम लोगों का अभिमान सर्वथा व्यर्थ है।' इसके बाद इन्द्र ने वायुदेव को बुलाकर उनसे कहा— 'वायो! तुममे यह सारा जगत् ओत-प्रोत है, तुम्हारी चेष्टा से ही ससार सचेष्ट बना हुआ है। तुम प्राण रूप होकर अखिल प्राणियो के शरीर में सम्पूर्ण शक्तियों का सचार करते हो। तुम्हीं जाकर पता लगाओ कि यह यक्ष कौन है? इस परम तेजस्वी यक्ष को जानने के लिए दूसरा कोई भी समर्थ नहीं हो सकता।' इन्द्र की गुण और गौरव से गुम्फित यह बात सुनकर वायु के मन मे अभिमान का पार न रहा। वे तुरन्त ही यक्ष के समीप गये, वायु को देखकर यक्ष ने मधुर वाणी से कहा— 'तुम कौन हो और तुममें कौन-सी शक्ति है? मेरे सामने सब बताने की कृपा करो।' उस यक्ष का वचन सुनकर वायु ने अभिमान के साथ कहा— 'मै मातरिश्वा हूँ। मुझे लोग वायुदेव भी कहते है। सबका सचालन और ग्रहण करने के लिए मुझमे असीम शक्ति है। मेरी चेष्टा से ही समस्त जगत् के सब प्रकार के व्यापार चलते है।'

वायु की उपर्युक्त वाणी सुनकर परम तेजस्वी यक्ष ने उनसे कहा— 'तुम्हारे सामने यह तृण पड़ा हुआ है, इसे अपनी इच्छा के अनुसार चला दो और यदि इसे नहीं चला सकते तो अभिमान त्याग कर लज्जित हो, इन्द्र के पास लौट जाओ।' यक्ष का कथन सुनकर पवनदेव सम्पूर्ण शक्ति से उस तिनके को उडाने में लग गये। परन्तु उडना तो दूर रहा, वे उस तृण को अपने स्थान

से जरा-सा भी हिला नही सके। तब तो वे लज्जित होकर अभिमान का त्याग करके देवताओ के पास लौट गये। वहाँ उन्होंने गर्व को दूर करने वाली सारी बात उनको कह सुनायी और इस प्रकार कहा— 'हम लोग गये। हम लोग यक्ष को जानने मे असमर्थ है। हम लोग व्यर्थ ही अभिमान म भूले हुए है। वह यक्ष बडा ही अलौकिक प्रतीत हो रहा है। इसका तेज असह्य है।' तब सम्पूर्ण देवताओ ने इन्द्र से कहा— 'देवराज! आप हम लोगो के स्वामी है, अत यक्ष के सम्बन्ध में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए आप ही प्रयत्न कीजिए।' यह सुनकर इन्द्र बड़े अभिमान से यक्ष के पास गये। वे उसके पास पहुँचे ही थे कि वह तेजस्वी यक्ष उसी क्षण अन्तर्धान हो गया। अब देवराज इन्द्र के मन म लज्जा की सीमा न रही। यक्ष ने उनसे बात तक नहीं की, इससे इन्द्र बडी ही आत्मग्लानि का अनुभव करने लगे। उन्होंने सोचा, अब मुझे देवताओ के समाज म लौटकर नही जाना चाहिए, क्योकि वहाँ जाने पर मुझे देवताओ के सामने अपनी हीनता प्रकट करनी पडेगी।' इस प्रकार कई विचार करने के पश्चात् देवराज इन्द्र अपना अभिमान त्यागकर वही जिनका ऐसा चरित्र है, उन परम देवताओ के शरणागत हो गये। उसी समय यह आकाशवाणी हुई— सहस्राक्ष! तुम मायाबीज का जप आरम्भ करो, तब सुखी हो सकोगे।' इन्द्र ने परात्पर मायाबीज का जप आरम्भ कर दिया। आख मूँदकर देवी का ध्यान करते हुए वे निराहार रहकर जप करते रहे।

तदनन्तर एक दिन चैत्र मास के शुक्ल पक्ष म नवमी तिथि के अवसर पर मध्याह्नकाल मे उसी स्थल पर सहसा एक महान् तेज प्रगट हो गया। उस तेज पुञ्ज के मध्य म नूतन यौवन से सम्पन्न एक देवी प्रगट हो गयीं। उनकी कान्ति एसी थी मानो जपा-कुसुम हो। प्रात कालीन सूर्य के समान अरुण कान्ति से वह शोभा पा रही थी। द्वितीया के चन्द्रमा उनके मुकुट म विद्यमान थे। वे वर, पाश, अंकुश और अभयमुद्रा धारण किये हुए थी। उनके सभी अंग अत्यन्त मनोहर थे। कोमल लता की भाँति शोभा पाने वाली वे भगवती शिवा थी। भक्तो के लिए वे भगवती जगदम्बा कल्पवृक्ष है। अनेक प्रकार के भूषण उनकी शोभा बढा रहे थे। तीन नेत्र वाली वे देवी अपनी वेणी में चमेली की माला धारण करने के कारण अत्यन्त शोभा पा रही थी। उनकी चारो दिशाओ में वेद मूर्तिमान् होकर उनका यशोगान कर रहे थे। उन्होने अपने दाँतो की

आभा से वहाँ की भूमि को इस प्रकार उज्ज्वल बना दिया था मानो पद्मराग बिछा हो। उनका प्रसन्नमुख करोड़ो कामदेवा क समान सुन्दर था। वे लाल रग के वस्त्र पहने थीं और उनका श्रीविग्रह रक्तचदन स चर्चित था। वे हिमालय पर प्रगट होने वाली 'उमा' नाम से विख्यात कल्याणस्वरूपिणी भगवती जगदम्बा थी। बिना ही कारण करुणामयी वे देवी सम्पूर्ण कारणो की भी कारण है। उनके दर्शन करते ही इन्द्र का अन्त करण प्रेम से गद्गद् हो गया। उनकी आँखो मे प्रेमाश्रु और शरीर मे रोमाच हो आया। भगवती जगदीश्वरी के चरणो मे दण्ड की भाँति पडकर उन्होंने प्रणाम किया। अनेक प्रकार के स्तोत्रों द्वारा भगवती की स्तुति की। इसके बाद भक्तिपूर्ण-विनम्र चित्त स सिर झुकाये हुए उन्होने प्रसन्नतापूर्वक देवी के प्रति कहा——

'परम शोभा पाने वाली देवी! यह यक्ष कौन था और यह क्यो प्रगट हुआ था? यह सब रहस्य बतलाने की कृपा करें।' इन्द्र की बात सुनकर दया की समुद्र वह देवी कहने लगीं— प्रकृति आदि सम्पूण कारणो का भी कारण यह मेरा ही रूप ब्रह्म है। यह माया का अधिष्ठान, सबका साक्षी तथा निरामय है। सम्पूर्ण वेद और तप जिस पद का क्रमश वर्णन करते एव लक्ष्य कराते है तथा जिसकी प्राप्ति की इच्छा से ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है, वही पद सक्षेप मे मे तुम्हे बतलाती हूँ। उसी को 'ॐ' यह एक अक्षर वाला ब्रह्म कहते है। वही 'ह्रीं' रूप भी है। देवेश्वर! ॐ' और ह्रीं' ये दो मेरे मुख्य बीज मत्र है। इन्हीं दो भागा से सम्पन्न होकर मै अखिल जगत् की सष्टि करती हूँ। इसी का एक भाग सच्चिदानन्द ब्रह्म' नाम से विख्यात है और दूसरे भाग को माया प्रकृति' कहते है। वह माया ही पराशक्ति है और अखिल जगत् पर प्रभुत्व रखने वाली वह शक्तिशालिनी देवी मै ही हूँ। चन्द्रमा की चाँदनी की भाँति यह माया प्रकृति अभिन्न रूप से सदा मुझम विराजमान रहती है। सुरोत्तम! यह मेरी माया साम्यावस्थात्मिका है। प्रलय काल म सम्पूर्ण जगत् इसमे लीन हो जाता है और प्राणियों के कर्म परिपाकवश वही अव्यक्तरूपिणी माया पुन व्यक्तरूप धारण कर लेती है। जा अन्तर्मुखी है, उसे 'माया' या 'योगमाया' आदि नामो से व्यवहृत करते है और जो बहिर्मुखी माया है उसे तम (अविद्या) कहते है। तमारूपिणी उम बहिर्मुखी माया से ही इस प्राणि-जगत् की सष्टि होती है। सुरश्रेष्ठ! सष्टि के आदि म वही रजोगुण रूप से विराजती है।

'ब्रह्मा विष्णु और महेश्वर— ये त्रिगुणात्मक कहे गये है। रजोगुण की अधिकता से ब्रह्मा, सत्त्वगुण अधिक होने पर विष्णु और तमोगुण अधिक होने से रुद्र के नाम से प्रसिद्ध होते हे। स्थूल देह वाले ब्रह्मा कहलाते है, सूक्ष्म शरीर वाले को विष्णु कहा गया है और कारण-देहधारी रुद्र कहलाते है और इन तीनो से परे एक चतुर्थ रूप धारण करने वाली मे ही हूँ। जिसे साम्यावस्था कहते हे, वह सर्वान्तर्यामी रूप मेरा ही हे। इसके ऊपर जो परब्रह्म रूप है, वह भी मेरा ही निराकार रूप है। निर्गुण और सगुण मेरे दो प्रकार के रूप कहे जाते है। माया (शक्ति) रहित निर्गुण और माया (शक्ति) युक्त सगुण। वही मे सम्पूर्ण जगत् की सष्टि करके उसके भीतर भली-भाँति प्रविष्ट हो निरन्तर जीवो को कम और शास्त्र के अनुसार प्रेरणा करती रहती हूँ। ब्रह्मा, विष्णु ओर कारणात्मक रुद्र का मेरे द्वारा ही सृष्टि, स्थिति और प्रलय करने के लिए प्ररणा प्राप्त होती है। पवन मेरे भय से प्रवाहित होता है, मेरा भय मानकर सूर्य आकाश मे गमन करता है। उसी प्रकार इन्द्र, अग्नि और यम मुझसे भयभीत रहकर ही अपने-अपने कर्त्तव्य का सम्पादन करते है, क्योकि मे सर्वोत्तमा सर्वशक्तिमती हूँ। मेरी कृपा से ही तुम लोगा को सब प्रकार से विजय प्राप्त हुई है। तुम सभी काठ की पुतली के समान हो और म सबको नचाने वाली हूँ। मे कभी तुम देवताआ की विजय कराती हूँ और कभी दैत्या की। म स्वतत्र हूँ। अपनी इच्छा के अनुसार यह सब करती रहती हूँ, परन्तु उनके प्रारब्ध पर मेरा ध्यान अवश्य रहता है। तुम लोग अभिमानवश मुच सर्वात्मिका माया-शक्ति को भूल गय थे। तुम्हारी बुद्धि अहकार से आवत्त हो गयी थी। दुस्तर माया की तुम पर गहरी छाप पड चुकी थी। अत तुम पर अनुग्रह करने के लिए मेरा ही अनुत्तम तेज सहसा यक्ष रूप म प्रगट हुआ था। वस्तुत वह मेरा ही रूप था। अब इसके बाद तुम लोग सब प्रकार से अपने अभिमान का परित्याग करके सच्चिदानन्द स्वरूपिणी मुझ देवी के ही शरणागत हो जाओ।'

इस प्रकार कहकर मूलप्रकृति एव ईश्वरी नाम से सुप्रसिद्ध भगवती महादेवी देवताओ के द्वारा भक्तिपूर्वक सुपूजित होकर उसी क्षण अन्तर्धान हो गयीं। तदन्तर सम्पूर्ण देवता अपने अभिमान का परित्याग करके भगवती जगदम्बा के सर्वोत्तम चरण-कमला की सब प्रकार स आराधना करन लग। उन सबने नियमपूवक भगवती की नित्य उपासना प्रारम्भ कर दी।

इस प्रकार आद्याशक्ति शिवा,उमा ही कुलदेवी के रूप म यक्षिणी नाम से पूजित है।

पारीको के कुलगुरु रावों की पोथियो मे यक्षिणी अर्थात् जाखण माता के दो स्थान बताये गये हैं—[1]

१ पहला मुख्य स्थान भीलवाड़ा जिलान्तर्गत माण्डल।
२ उपस्थान नागौर जिलान्तर्गत रैन।

माण्डल— यह स्थान जयपुर-भीलवाडा- आसीद-व्यावर सड़क मार्ग पर है। भीलवाड़ा से १४ कि मी दूर माण्डल कस्बे के बाहर पहाड़ी के शिखर पर माता का मदिर है। इस स्थान को मिनारा कहते है।

यक्षिणी माता की यहाँ भव्य मूर्ति है। यह मूर्ति शिव और शक्ति के रूप में है।[2] शिव और शक्ति दोनों एक ही पाषाण में निर्मित दो मूर्तियाँ में है। धड के नीचे का भाग एक है जबकि धड़ के ऊपर दो मुखारबिन्द है एक शिव का व दूसरा शक्ति का। शिव के बाई ओर शक्ति है। यह मदिर छठी शताब्दी से भी पूर्व का बताया गया। इसे तान्त्रिकों का मुख्य स्थान माना जाता था। मदिर की वर्तमान मूर्ति सवत् १६०० के आसपास की है। मदिर के गर्भगृह मे ही तीन खण्डित मूर्तियाँ है।

ऐसा माना जाता है कि महमूद गजनी ने जब सोमनाथ पर हमला किया था तब वह इधर से ही गया था तथा उसने मदिर विध्वस किया था बाद में वगडावतो ने इसका जीर्णोद्धार कराया। माता की मूर्तियो को अलाउद्दीन खिलजी के समय मे खडित किया गया ऐसा माता के भक्त श्री शिवशकर जी श्रोत्रिय (सेवानिवृत निरीक्षक, शिक्षा विभाग एव आनन्दीलाल जी तिवाडी) ने बताया। इसके बाद माता की मूर्तियों को औरगजेब के समय मे तोडा गया। औरगजेब की यात्रा का विवरण करते हुए निकालो मानूची[3] ने लिखा है कि

---

१ लेखक दिनाक ३१ जनवरी १९९९ का अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला तिवाडी, पौत्र चि माहित व राहित क साथ माता क दर्शनार्थ एव अध्ययनार्थ माण्डल गया तथा दिनाक २२ ६ १९९९ का पौत्र चि शाभित व माहित क साथ रैन गया।

२ प श्री कवरलाल पराशर क अनुसार— श्री यक्षणी जगदम्बा व बहिना की जाडी सुन्दर प्रतिमा है। साक्षात दवी है।' अखण्ड राष्ट्र ज्याति पाक्षिक, १६ फरवरी १९८८, पृ ३— इस मदिर म यक्ष और यक्षिणी दानों विग्रह एक ही पाषाण पर खुदे हुए हैं। भीलवाडा दर्शन प्राइम पब्लिकेशन्स भीलवाडा, पृ ८१ ८२

३ स्टारिया डा मोगार अर्थात् मुगल इडिया १६५३ १७०८ भाग दा ल निकाला मानूची अनुवादक व सम्पादक विलियम इरविन की टीप क्र २६२ पृ २२५

१७ जनवरी १६८० को औरंगजेब ने माण्डल से प्रस्थान किया व देवारी मे पडाव किया। टीप क्रमाक २६३ के अनुसार राणा सागर के किनारे तीन मदिर ध्वस्त किय गये। हसन अली खा ने बादशाह को सूचित किया कि उदयपुर शहर व पास के स्थानो पर १७३ मदिरो को ध्वस्त किया गया तथा बादशाह के आदेश से ६३ मदिर चित्तौड मे गिराये गये। सर एच एम इलियट[१] के अनुसार सन् १६७९ म हसन अली खा ने औरंगजेब को सूचित किया कि उदयपुर तथा पास के जिलो के १२२ मदिरो को ध्वस्त किया गया। सभव है इसी शृखला मे इस मदिर की मूर्तियाँ भी खण्डित की गई हा।

माताजी के मदिर के निर्माण के सम्बन्ध मे ऐसा माना जाता है कि माण्डूराव जी ने माण्डल बसाया था। उन्होंने एक तालाब का निमाण कराया था जो ६ कि मी लम्बा व २ ५ कि मी चौडा है। उन्ही के द्वारा माताजी के मदिर का निर्माण भी कराया गया था। इसके अतिरिक्त ३२ खम्भों की एक छतरी का भी निर्माण कगया गया था।

माताजी का मदिर पहाडी की टेकरी के शिखर पर है। पहले मदिर तक जाने का कोई सुगम रास्ता नही था। माता क दर्शनार्थ पहाडी के ऊबड-खाबड़ रास्ते से जाना पडता था। लगभग सो वर्ष पूर्व इसी कस्बे (माण्डल) की निवासिनी हगामी बाई ने जो महाराष्ट्र मे बस गई थी, उन्होंने माता के मदिर तक जाने के लिए सीढिया का निर्माण कराया जिससे भक्तो को मदिर तक जाने में अत्यन्त सुविधा हो गई। मदिर तक जाने के लिए ९२ सीढियाँ है जिनमे से ८२ सीढियाँ पहले व १० सीढियाँ बाद मे बनाई गईं। माता के मदिर से सटा हुआ पहाडी पर मण्डलेश्वर महादेव का प्राचीन मदिर है जहाँ जाने के लिए ३२ सीढियाँ और है। इस स्थान को मिनारा कहते है। ऐसा कहा जाता हे कि मदिर के शिखर पर दीपक जलाकर चित्तौड़गढ क किले को सामरिक सदेश भेजे जाते थे। ऐसा भी माना जाता है कि मिनारा (शिव मदिर) से चित्तौड़गढ किले तक जाने के लिए सुरग भी थी।

मदिर के गर्भगृह म एक खम्बे पर शिलालेख उत्कीर्ण है। इस शिलालेख पर रग पोत दिये जाने से पढा नहीं जाता तथापि शिलालेख में सवत् १६९१ (१६०१) लिखा हुआ प्रतीत होता है और इसी समय महाराणा स युद्ध के समय अकबर के शासनकाल मे नवीन मूर्तिया की स्थापना हुई बताई।

---

१ दी हिस्ट्री ऑफ इडिया भाग सात ल सर एच एम इलियट सम्पादक प्रा जान डाउसन पृ १८८

माता की सेवा पूजा प्रारम्भ से ही फूलेरे माली जाति के व्यक्ति द्वारा की जाती है। मदिर के पुजारी को यहाँ भोपा कहते है। वर्तमान में मदिर के पुजारी मागूजी माली है। उन्होंने बताया कि प्रारम्भ से ही उनके पूर्वज इस मदिर की सेवा करते आये है। इनके पास अपने पूर्वजों का वशवृक्ष नही है तथापि इनका कहना है कि उनके पिता रूपाजी एव दादाजी देवीलाल जी चमत्कारी भोपा थे।

माताजी के योग-क्षेम एव पूजा-अर्चना के लिए कोई कृषि भूमि या अन्य कोई साधन नहीं है।

माताजी के शाकाहारी भोग विशेषत नारियल का भोग लगता है।

मदिर मे गत पच्चीस वर्षों से आसोज के नवरात्रों मे शतचण्डी के पाठ होते है तथा लगभग गत सौ वर्षा से प्रति रविवार को रात्रि जागरण होता है।

मदिर मे नवरात्रो के अवसर पर महाराष्ट्र के लातूर कस्बे से एक पारीक परिवार नियमित रूप से माता के दर्शनार्थ आता है। उनके द्वारा दिये गये अशदान से श्री आनन्दीलाल जी तिवाडी ने जिन्हे वे अशदान देते है/ भेजते है, मदिर परिसर में एक टकी का निर्माण, एक कमरे का जीर्णोद्धार तथा पहाड़ी की तलहटी मे जहाँ सीढियाँ प्रारम्भ होती है, सामान रखने हेतु एक कमरे का निमाण कराया है।

भावी योजना यह है कि मदिर म जो यज्ञकुण्ड स्थान है वह स्थान अब काफी छोटा पडता है, नवरात्रो मे यज्ञ के समय स्थान की कमी से काफी परेशानी होती है अत आर सी सी की छत डलवाकर यज्ञ हेतु पर्याप्त स्थान बनाया जाये।

मदिर परिसर में माण्डल ग्राम को पेयजल उपलब्ध कराने हेतु एक विशाल टकी बनी हुई है।

महाराणा समरसिह को यक्षणी माता का आशीर्वाद[१] माण्डल निवासी प कवरलाल पाराशर ने मीनारे के इतिहास से जुड़ी घटनाओं के बारे में बताया कि ग्यारहवीं शताब्दी म मेवाड़ की राजगद्दी पर चित्तौड़गढ में श्री समरसिहजी रावल थे और दिल्ली के सिहासन पर पृथ्वीराज चौहान

---

१ अखण्ड राष्ट्र ज्योति पाक्षिक १६ फरवरी १९८८ ल प कवरलाल पाराशर, पृ ३
माण्डल भीलवाड़ा दर्शन प्रकाशक– प्राइम पब्लिकेशन्स भीलवाड़ा पृ ८१-८२

(तृतीय) थे जिनकी अपनी राजधानी अजमेर के तारागढ किले मे थी। भारतवर्ष पर बाहरी शक्तिया द्वारा यवनो ने कई बार आक्रमण किये और कई क्षेत्रो पर कब्जा भी कर लिया था। जब विक्रम सम्वत् ११९९ में मोहम्मद गोरी ने फिर आक्रमण किया ओर पजाब में भटिण्डा के पास तराईन के मैदान में युद्ध किया था, उस वक्त चौहान ने मेवाड़ के राणा को भी युद्ध मे सहायता के लिए बुलाया था। जब चित्तोडगढ से राणा ने अपनी सेना लेकर कूच किया तो प्रथम पडाव माडल म इसी पहाडी के पास ही डाला था और रावल समरसिंह ने पहाडी पर यक्षिणी जगदम्बा के दर्शन किये। जगदम्बा के पुजारी सिद्ध पुरुष निर्भयरामजी ने राणा को युद्ध म विजय हासिल करने का आशीर्वाद दिया। तराईन के युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की विजय हुई। गोरी को कैद कर लिया। उस विजय की खुशी म अपनी बहन का विवाह राव समरसिहजी से कर दिया। विजय उत्सव के बाद महाराणा को विदाई म बहुत-सा धन दिया और महाराणा का पद देकर विदा किया।

महाराणा ने अपनी सेना के साथ वापस लौटते वक्त भी आखिरी पडाव माडल मे ही लिया और फिर उसी पहाडी पर अपनी महारानी के साथ जगदम्बा यक्षिणी के दर्शन किये। यक्षिणी माता जिस चबूतरे पर थी उस स्थान को मदिर का रूप दिया और अपनी जीत की खुशी म मदिर के पीछे पहाडी की चोटी पर एक मीनार बनवाई जो आज माडल के मीदारे के नाम से पसिद्ध है।

जिस स्थान पर मीदारे का निर्माण किया उसकी सुरक्षा हेतु पहले एक चबूतरा बनाया, उसके मध्य से कुछ दक्षिण की तरफ यह मीदारा अष्टकोण आकार का पाच खण्ड मे बनवाया जिसकी ऊचाई ६५ फुट है। प्रत्येक खण्ड में हवा और रोशनी हेतु आमने-सामने छोटी-छोटी खिडकिया और गाल मोखे बने हे। मीदारे की कुल चौडाई वर्गाकार में ७२ फुट है। इस पर चढने के लिए भीतर की तरफ सीढिया नहीं है। मीदारे के ठेठ ऊपर गोल गुम्बज के मध्य म रोशनी करने का अच्छा स्थान है।

मुगल काल मे मुगल सम्राट अकबर ने जब चित्तौडगढ पर चढाई की थी तब उसकी सेना का पडाव भी इसी पहाडी के आसपास ही था। यहाँ से सेना युद्ध के लिए हल्दीघाटी तक जाती और वापस विश्राम हेतु यहा आ जाती। उस वक्त इस मीदार के ऊपरी गुम्बद म रोशनी कर दी जाती थी जिससे

दूर-दूर तक यह मालूम हो जाता था कि सेना का पडाव यहा पर है। मींदारे के ऊपर की रोशनी दूर तक चारो तरफ फैलती थी जिससे सेना को अपनी खेमे में अलग से रोशनी नहीं करनी पड़ती थी। अतीत का वही प्रकाश स्तम्भ आज भी शाम होते ही विद्युत प्रकाश से चमक उठता हे।

रैन जि नागौर स्थित जाखण माता (यक्षिणी माता)— नागौर जिलान्तर्गत मेड़ता तहसील मे स्थित रैन एक प्राचीन कस्बा है। यह स्थान उत्तरी रेल्वे का एक स्टेशन है जो मकराना-डेगाना-मेडता रेल्वे लाइन पर है। सडक मार्ग से भी यहाँ आने के सुगम साधन है। मेडता सिटी-डेगाना सडक मार्ग से यहाँ आया जा सकता है।

रैन ग्राम के बाहर तालाब के किनारे जाखण माता (यक्षिणी) का मदिर अवस्थित है। देवी स्वरूपा माता चतुर्भुजी है। माता के दाहिने हाथो मे खड्ग एव मुग्दर है तथा बाये हाथ मे ढाल एव फरसा है। माता की सवारी सिह पर है। मूर्ति खण्डित हे। चेहरे का नाक एव एक भुजा खडित की गई है।

माता के मदिर के पास ही भैरव एव गणेश जी की प्रतिमाय है। भैरव की मूर्ति के पास श्वान प्रतिमा भी है।

माता के मदिर मे एक शिलालेख भी है जो पढने मे नहीं आया, यह मदिर काफी पुराना बताया गया। मदिर के सामने लाखा तालाब है।

छोटे एव जीर्ण-शीर्ण मदिर का जीर्णोद्धार एव नवनिर्माण माता के भक्त एव अग्निहोत्री तिवाडी ओमप्रकाश जी रामावतार जी[१] पुत्र श्री वल्लभ जी पौत्र झूमरलाल जी द्वारा कराया जा रहा है जिनकी यह कुलदेवी है। मदिर के जीर्णोद्धार के अतिरिक्त यात्रियो के ठहरने के लिए दो कमरे, रसोई, परिक्रमा एव शौचालय का निर्माण कार्य, जब लेखक वहाँ गया (२२ ६ १९९९) प्रगति पर था। निर्माण कार्य की देखरेख कर रहे श्रवणकुमार जी पारीक ने बताया कि जीर्णोद्धार एव निर्माण कार्य पर लगभग ढाई लाख रुपये व्यय होने का

---

१ यह परिवार शखवास मूण्डवा जिला नागौर का रहने वाला है तथा वर्तमान में सूरत में कपड़े का व्यापार करते हैं। निर्माण कार्य इनके ननिहाल (रैन निवासी) श्रवण कुमार जी पारीक देख रहे है। रैन में पारीकों का ऐसा कोई परिवार नहीं रहता जिसकी यह कुलदेवी है।

अनुमान है। माता के सम्बन्ध मे एक घटना इस प्रकार बताई गई कि मदिर मे एक बार चोर आये। चोरी के बाद जब वे वापस जाने लगे तो वे तलवार चलाते जा रहे थे, (सभवत उनको किसी ने पीछा किया हो) चोरों के हाथ यथावत ऊपर ही रह गये।

पारीको के निम्न अवटको की यह कुलदेवी है—

१	कोथल्या कोथलिया	पाण्डिया
२	पोम	पाण्डिया
३	हौडिला हुण्डिला	तिवाड़ी
४	पचोली	तिवाडी
५	सतमुण्डा सतमुडा	तिवाडी
६	अग्निहोत्री अगत्योत्या अगनोती	तिवाडी
७	कौशिक भट्ट	व्यास [illegible]
८	मुण्डक्या ([redacted])	व्यास
९	तामडा तानणिया तावणा	बोहरा (मिश्र)

□□□

जीण: जयन्ती माता

स्थिति

सीकर जिला मुख्यालय से लगभग ३५ कि मी दक्षिण-पूर्व कोण म, गोरियाँ (रीगस जक्शन से चौथा रेल्वे स्टेशन) स पश्चिम-दक्षिण दिशा की ओर लगभग १४ कि मी पश्चिम की ओर तथा रेवासा से दक्षिण की ओर १० कि मी दूर तीन ओर से गिरिमालाओ की श्रेणियो के मध्य एक पहाड़ी चोटी के पूर्वीय ढलान के नीचे, अरण्य जिसे स्थानीय भाषा मे ओरण कहते है तथा उसके एक ओर सघन ऊचे-ऊचे वक्ष आच्छादित है, शक्ति स्वरूपा भगवती जीण माता का मदिर अवस्थित है। भगवती शक्तिस्वरूपा जीण माता का यह मदिर जागृत सिद्धपीठ है। जीण माता के पास ही ओरण के पूर्व मे स्यलू सागर नामक खारे पानी (नमक) की झील है।

माता का मदिर, जो जागृत शक्तिपीठ है,आठवी शताब्दी के लगभग बना था। उस समय यहा प्रतिहार सम्राटो का शासन था। मदिर का मुख्य द्वार पूर्वाभिमुखी है तथा माता के निज-मदिर का द्वार पश्चिम की ओर देखता हुआ है। मदिर का सभा-मण्डप चौबीस स्तम्भों पर आधारित है। अनेक बार जीर्णोद्धार के बावजूद सभा-मण्डप अपनी प्रारम्भिक स्थिति मे यथावत् है। सभा-मण्डप के स्तम्भो मे उत्कीर्ण स्तम्भ-लेख,जो विभिन्न विषयो से सम्बन्धित है, मे सवत् १०२९, ११६२, ११९६, १२३०, १३४६, १३८२, १५२०, १६९९ अकित है।

मूर्ति

जीण माता की आदमकद मूर्ति अष्टभुजायुक्त है। मदिर के पुजारीजी ने माता के आयुध खड्ग, भाला, आरती की थाली, माला, चक्र, कृपाण, शूल व नाग बताये जिसके शृगार की महिमा शब्दो में वर्णित नहीं की जा सकती। 'विद्वानो का मानना है कि पूर्वकाल मे इस देवी (मदिर मं प्रतिष्ठापित) का मूल नाम जयन्ती महाचण्डी महिषासुर नाशिनी था। मूर्ति का स्वरूप महिषासुर

का वध करते हुए तथा भगवती का वाहन सिह महिषासुर की पीठ को खा रहा है।''[१] जिसका ही विकृत नाम जीण हो गया।[२] यह स्थान देवी जीण माता, जो जयन्ती देवी नाम से भी जानी जाती है, का माना जाता है।[३]

भोग

माता की मान्यता शाकाहारी एव सामिष दोनो ही प्रकार के भक्तो की है। माता के ढाई प्याले मदिरा का भोग नित्य लगाया जाता है। माता के मेले के समय भक्तो द्वारा मदिरा का भोग एक से अधिक बार भी लगाया जाता है। वर्तमान में बलि देन हेतु बकरे आदि की मदिर म वास्तविक रूप से बलि नही चढाई जाती अपितु केवल रस्म ही अदा की जाती है। शाकाहारी भक्तगण माता के मीठा भोग यथा पूवे-पापड़ी, सीरा, लापसी, चूरमा व नारियल, मखान, पताशे आदि का भोग लगाते है।

शिलालेख

विभिन्न समया मे मदिर के प्रागण मे निर्माण कार्य होते रहने के कारण (मदिर का) मूल स्वरूप लुप्त हो गया, केवल मण्डप एव गर्भगृह मात्र अपने मूल रूप म शेष है।''[४] प झाबरमल्ल शर्मा एव विद्वानो के अनुसार[५] वि स १०२९ का स्तम्भ खमराज का है जिसने अपना मस्तक काट कर देवी को चढा दिया था।

वि स ११६२ का स्तम्भ-लेख महाराजा पृथ्वीराज चोहान (प्रथम) के शासनकाल का है जिसमे मोहिल के पुत्र हठड द्वारा मदिर के जीर्णोद्धार का उल्लेख है।

वि स ११९६ के दो स्तम्भ-लेख परम भट्टारक महाराजाधिराज अर्णोराज के शासनकाल के हे जिनके अनुसार इनके शासनकाल में दो बार मदिर के जीर्णोद्धार कार्य हुए।

---

१ माता का यह वृत्तान्त लखक का जब वह माताजी क दर्शनार्थ एव अध्ययनार्थ दिनाक २३ ३ ९९ का गया तब माता क पुजारी मातादीनजी पाराशर न बताया।

२ मरु भारती अक्टूबर १९५५ पृ ६ सदर्भ–शखावाटी क शिलालख ल सुरजनसिह शखावत पृ ४८

३ राजस्थान जिला गजटियर सीकर सम्पा सावित्री गुप्ता पृ ४७२

४ शखावाटी का इतिहास– ल रतनलाल मि ा पृ ३००

५ शखावाटी क शिलालेख– ल सुरजनसिह शखावत पृ ५०

वि स १२३० का स्तम्भ-लेख भी मदिर के जीर्णोद्धार से सम्बन्धित ही है। यह जीर्णोद्धार परम भट्टारक महाराजाधिराज सोमेश्वर के राज्य मे उदयराज के पुत्र अल्हण द्वारा सभा मण्डप की मरम्मत कराने का है।

उपरोक्त पाचो लेख चोहान राजाओ के शासनकाल के है। इनके अतिरिक्त---

वि स १३४६ का स्तम्भ-लेख चोधरी जेहड के पुत्र राणा आसिदत्त द्वारा मदिर के जीर्णोद्धार का है।

वि स १३८२ का स्तम्भ-लेख चैत्रसुदी ६ सोमवार का है जिसके अनुसार महमदसाही के राज्य मे लोटाणी ठाकुर देपति के पुत्र श्री बीच्छा ने जीण माता के देहर का जीर्णोद्धार कराया।

वि स १५२० का आठवा स्तम्भ-लेख भादवा सुदी २ सोमवार का है। इसके अनुसार माणिक भण्डारी के वशज ईसरदास के पुत्र जेल्हण द्वारा देवी को प्रणाम किये जाने का उल्लेख है। माणिक भण्डारी माथुर कायस्थो की खाँप है।

असाढ सुदी १५ सोमवार सवत् १६९९ का एक लेख है जिसमे जीण माता के मदिर के जीर्णोद्धार का वर्णन है।[१]

मदिर का निर्माण मोहिल के पुत्र हठड ने कराया था। मदिर की छतो, दीवारो एव स्तम्भों पर बौद्ध तान्त्रिको तथा वाममार्गियो की तपस्या और साधना से सम्बन्धित अनेक निर्वसन पाषाण प्रतिमाये बनी हुई है जिससे यह प्रतीत होता है कि सभवत पूर्व मे यह स्थान तात्रिको एव वाममार्गियो का साधना स्थल रहा हो। मदिर की दीवारो पर तात्रिको और वाममार्गियो की मूर्तिया लगी हुई है।[२] आज भी यह तात्रिको का शक्तिपीठ है।

जीण[३] माता का प्राकट्य

जीण माता का प्राकट्य चूरू के पास धाधू ग्राम मे चोहान राजपूतों के यहा हुआ था। जीण के भाइ हर्ष और जीण का समय दसवीं

---

१ खाटू के श्याम बाबा का इतिहास—ले प झाबरमल्ल शर्मा व प श्यामसुदर शर्मा पृ १२१

२ खाटू के श्याम बाबा का इतिहास ले प झाबरमल्ल शर्मा व प श्यामसुन्दर शर्मा, पृ ११९

३ लोक गीत मे जीण का मूल नाम जीवणी दिया है।

शताब्दी विक्रमी का अत और विक्रमी ग्यारहवी शताब्दी का प्रारम्भिक काल माना जाता है। ऐसी किवदन्ती है कि जीण का अपनी भोजाई से तकरार होने पर वह घर छोड़कर चली गई। रास्ते मे भाई मिला तथा उसके काफी समझाने-बुझाने एव अनुनय-विनय करने पर भी वह वापस घर जाने को तैयार नही हुई तथा वर्तमान मदिर स्थल पर जयन्ती महाचडी महिषासुर मर्दिनी दुर्गा की कठोर तपस्या करके स्वय दुर्गा स्वरूप हो गई। भाई हर्ष, बहन के वापस घर न लौटने पर, बहिन के साथ जीण के स्थान से उत्तर की ओर १५ कि मी दूर पहाड पर तपस्या करने लगा तथा हर्षनाथ भैरू के नाम से जगत्प्रसिद्ध हो गया। इस प्रकार दोनो भाई-बहिनों ने अलग-अलग पर्वत शिखरो पर कठोर तपस्या की। उनके कठार तप से यह सम्पूर्ण क्षेत्र दिव्य प्रभाव से आलोकित हो गया। उनक सहज चमत्कारो की एक लम्बी कहानी है। आज भी असख्य नर-नारी उन्हे पूजते है, भक्तों की मनोकामना पूरी होती है। भाई-बहिन की अनूठी, पुनीत प्रेम गाथा भक्तगण बडी तन्मयता से सुनते-सुनाते है माता का आशीर्वाद प्राप्त करते है, मनौती मागते है और वाछित फल पाते है। आज भी माता के अलौकिक चमत्कार देखे जाते है। जनमानस की अगाध श्रद्धा और निष्ठा इस बात का अकाट्य व जीवन्त प्रमाण है कि देवी हर भक्त की मनोकामना पूर्ण करती है।

जीण माता के सम्बन्ध म जनश्रुति के आधार पर जा अन्य आख्यान एव कथानक प्रचलित है उनका सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

जैसाकि पूर्व मे कहा गया है जीण का जन्म चौहान राजपूतो क यहा चूरू के पास धाधू ग्राम म हुआ था। इनके माता-पिता की मृत्यु इनके बालपन म ही हा गई थी। इनके बड़ भाई का नाम हर्ष था। मृत्यु के समय हर्ष ने अपनी माता को यह वचन दिया था कि वह जीण को आजीवन किसी भी प्रकार का कष्ट नही हाने देगा। कालान्तर म हर्ष की शादी हो गई किन्तु जीण क एव उसकी भावज के आत्मिक प्रेम उत्पन्न नहीं हुआ। कुछ का जनश्रुति के आधार पर ऐसा मानना है कि जीण पर उसकी भावज ने चारित्रिक आक्षेप किय[1] जिससे व्यथित होकर वह घर छोड गई। यह भी किवदन्ती है कि वह जीण को ताने देती रहती थी। एक अन्य लाकाक्ति यह है कि ननद

---

[1] राजस्थान जिला गजटियर सीकर सम्पा सावित्री गुप्ता पृ ४५२

(जीण) व भावज में इस बात की शर्त लग गई कि हर्ष का स्नेह एव प्यार उसकी वहिन पर अधिक है या पत्नी पर। शर्त के अनुसार यह तय रहा कि पनघट से पानी भरकर जब दोनो ननद-भोजाई घर मे आवे तथा घर मे जिसका घडा पहले हर्ष उतारे उसके प्रति ही हर्ष का अधिक प्यार माना जावे। एक दिन जब दोनो ननद-भोजाई पनघट से पानी लेकर घर आई तो हर्ष ने सहज भाव से पहले अपनी पत्नी का घडा उसके सिर से उतार दिया, इससे जीण के हृदय में यह बात बैठ गई कि भाई का प्रेम मेरी अपेक्षा अपनी पत्नी पर अधिक है और इसी कारण वह घर छोडकर चली गई। फिर तो भाई के आग्रह, अनुनय-विनय आदि को दरकिनार कर वह जनेश्वरी महाचण्डी महिषासुरमर्दिनी मा दुर्गा की तपस्या में लीन हो गई।

भाई और बहिन का वडा सवेदनशील एव भावात्मक स्नेह होता है, किन्तु कई बार यह सुखद सम्बन्ध अचानक व्यथा का सागर बन जाता है। लोकगीतों में जीण एव हर्ष के जो सवाद हुए थे उनमें जीण के उलाहने एव भाई द्वारा उसे मनाये जाने का प्रयत्न, एक ऐसा जीवन्त दृश्य उपस्थित करता है जिसे सुनने वाले मत्र-मुग्ध एव भाव विभोर हो जाते है।

अन्य पूजा स्थल

माता के मदिर के पास अन्य अनेकानेक पूजा स्थल है जिनमें से कतिपय का विवरण निम्न प्रकार है—

भवरा की रानी माता का मदिर सभामण्डप की पीठ पर पूर्व की ओर भवरा की रानी माता का मदिर पहाड़ के नीचे घाटी में ही है जहा पर जगदेव पँवार का पीतल का सिर और ककाली का चित्र है। माता के दर्शन हेतु मुख्य मदिर से ही पीछे की ओर सीढिया उतर कर जाना पडता है।

एक महात्मा 'माला बाबा', जो पुजारियों का चमत्कारी पूर्वज था, की तप स्थली जो मदिर के पश्चिम की ओर है जिसको महात्मा का 'धूणा' कहते है।

माता के निज मदिर के दक्षिण की ओर चौक म लाकडा भैरव-शिव की मूर्ति स्थापिंत है।

माता के मदिर के दक्षिणी ओर कुण्ड (जलाशय) और नवनिर्मित शिवालय है।

मदिर के दक्षिण की ओर पहाड़ की चोटी पर काजल शिखर मदिर है।

जीण माता के भाई हर्षनाथ भैरव का मदिर उत्तर की ओर लगभग ९ कि मी की दूरी पर पहाडी पर स्थित है।

सीकर, खण्डेला आदि के सामन्तों द्वारा निर्मित भवन भी है।

जगप्रसिद्ध कतिपय चमत्कार

साधारण मानवी के रूप मे जन्म लेकर, आजन्म ब्रह्मचर्य का पालन करके जीण देवी ने दुर्गा का रूप ग्रहण करके देवत्व प्राप्त किया और आज वही जन-जन की आराध्य देवी है।

दिल्ली का बादशाह औरगजेब जब अनेक मदिरों की मूर्तियों को तोडता हुआ जीण माता की ओर आया तो देवी ने मुगल सेना पर जहरीले भवरों (बड़ी मक्खिया) द्वारा आक्रमण करवाया, फलत मुगल सेना अपने प्राण लेकर भागी। बादशाह द्वारा माफी मागी गई एव उसने यह प्रतिज्ञा की कि भविष्य में वह ऐसी गलती नही करेगा तथा श्रद्धास्वरूप सवामन तेल प्रतिमाह भेजने का सकल्प भी किया।[१] पहले यह तेल दिल्ली से आता था बाद में जयपुर से माता के यहा तेल भिजवाने की व्यवस्था की गई। उसने देवी को स्वर्ण-छत्र भी चढाया।[२]

मदिर में दो अखण्ड दीपो की ज्योति है जिनमे एक घी का व दूसरा तेल का है। इस दीपक ज्योति की व्यवस्था दिल्ली के चौहान राजा ने आरम्भ की थी।[३]

'एक किवदन्ती यह प्रचलित है कि औरगजेब को कुष्ठ रोग हो गया था। उसने रोग निरावण हो जाने पर स्वर्ण छत्र चढाना बोला था सो वह छत्र आज भी मदिर में विद्यमान है।'[४]

---

१ *कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४१२ ३*
२ कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) पृ २८१
३ जीण अमृत वचा पृ १
४ श्री जीण पूजन स्तुति भजन इतिहास– भक्त रूड़मल सतसगी पृ ११-१२

पुजारी परम्परा

माता की पूजा पाराशर गोत्र के ब्राह्मण व कुछ हिस्से मे साभरिया खाप के चौहान राजपूत करते है। विशेष भोग राजपूत चढाते है। मंदिर मे भक्तो द्वारा चढ़ाई गई भेंट व आय हिस्सानुसार उक्त पाराशर ब्राह्मण व साभरीया राजपूत लेते है।

मेले

मदिर में दोनों नवरात्रों के समय विशाल मेले भरते है। आसोज सुदी के नवरात्रो मे सप्तमी एव अष्टमी को तथा चैत्र के नवरात्रो म पचमी से नवमी तक विशेष रूप से अधिक सख्या मे यात्री आते हे- मेला भरता है। इस अवधि में देश-विदेश के हजारो भक्त माता के दर्शनार्थ आते है, अपनी मनोकामना सिद्धि की प्रार्थना करते है तथा जात-जड़ूले उतारतें हैं।

आवागमन के साधन

जयपुर-सीकर के मध्य गोरिया रेल्वे स्टेशन से माता के यहा जाते है। जयपुर-सीकर राष्ट्रीय मार्ग से माता के मदिर को गोरिया स्टेशन के पास से पश्चिम-दक्षिण दिशा को माता के मदिर जाने के लिए पक्की डामर की सड़क बनी हुई है। सीकर से जीण माता के मदिर तक दिन मे दो बार नियमित बसें चलती है। चैत्र एव आसोज के नवरात्रो में, राज्य सरकार द्वारा विशेष बसें चलाई जाती है। ये विशेष बसें, जयपुर, रींगस, सीकर, दातारामगढ आदि स्थानों से जीण माता के मदिर तक चलती है।

यात्रियों की सुविधा के साधन

मदिर-परिधि एव आसपास भक्त यात्रियों के ठहरने के लिए तिबारे व धर्मशालाए बनी हुई है। बर्तन, पानी, रोशनी आदि के प्रबन्ध हेतु एक प्रबन्धकारिणी समिति सवत् २००३ से बनी हुई है जो यात्रियो को यह सामान नि शुल्क उपलब्ध कराती है। यात्रियो द्वारा चदा देना उनकी श्रद्धा पर निर्भर है। चढ़ावे की राशि पुजारी लेते है।

मेले के समय यात्रियों के भोजन आदि की व्यवस्था अस्थाई ढाबों द्वारा होती है।

लोकगीतों मे जीणमाता व हर्ष का सवाद

इतिहास के स्रोतो को ढूढने मे लोकगीतो का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पुराने समय म जब किसी महत्त्वपूर्ण घटना को लिपिबद्ध करने के साधन नही हुआ करते थे, तो ऐसी घटनाये, कथा के रूप में जीवन्त रखी जाती थी। लोक-कवि उन्हे अपने शब्दा मे पिरोकर गाते, उनके गीत जन-जन के कण्ठो से स्वर लहरिया बिखेरते और इस प्रकार लोकगीतों के माध्यम से इतिहास सुरक्षित रहता। इसी प्रकार जीण माता के गृह-त्याग की घटना का विवरण किसी अज्ञात लोक-कवि ने अपने सशक्त शब्दों मे आबद्ध किया है जो वह आज भी बड़ी तन्मयता से गाया जाता है।

बहिन और भाई का अविचल स्नेह प्रकृति की देन है, किन्तु जब उस प्रेम म ग्रहण लग जाये तब कितनी पीड़ा होती है। बहिन को, विशेषत उस परिस्थिति म जब उसके मा-बाप न हों और सब कुछ उसका भाई ही हो। अपनी भावज क ताना से दुखी होकर जब जीण अपना घर छोड़ कर जाती है, रास्ते में उसका भाई मिलता है, वह उसे वापस घर चलने को कहता है किन्तु वह नहीं मानती। इस लोकगीत के माध्यम से बहिन-भाई के सवाद में जो तथ्य उभरकर आये है, वे सामाजिक परिप्रेक्ष्य में यदि आज भी हम देखें, ता पारिवारिक शृखला की कड़ी को बिखेरने का मूलस्रोत दिग्दर्शित कराते है। (प्रस्तुत सवाद कुछ सशोधनों के साथ श्री जीण माताजी– लेखक, प्रकाशक, सग्रहकर्त्ता– श्री रूड़मल शर्मा) के सकलन से साभार दिया गया है।

श्री जीण माता व हर्ष का लोक-गीत
जीण-हर्ष सवाद के रूप में[१]

जीण– हरसा वीर म्हारा रे।
घर तो धाधू म जलम्या दो जणा।
हरस बड़ी और छोटी जीण।
जामण रा रे जाया। अपणी माता के रे जलम्या दो जणा॥
हरसा वीर म्हारा रे। माय-बावल रास्या मेरा राम॥

१ हर्ष और जीण का सवाद बहुत दिनों तक आकाशवाणी के जयपुर केन्द्र से प्रसारित हुआ है।

जामण रा रै जाया। जामण रो जायो रै भावज खौसियो॥
हरसा वीर म्हारा रै। म्हारो कोई कुल में साथी नाय॥
जमण रा रै जाया। अम्बर तो पटकी रै धरती साभळी॥
हरसा वीर म्हारै रै। जे म्हारी होती जुग में माय॥
जामण रा रै जाया। अकन कवारी रै नाय विडारती॥
हरसा भाई म्हारा रै। कुण पूछे नैणा हदो नीर॥
म्हारी मा रा रै जाया। कुण रै सिळावे बळतो हीवड़ो॥
हरसा भाई म्हारा रै। कुण फेरे सिर पर म्हारै हाथ॥
जामण रा रै जाया। कुण बुचकार रै मीठा बोळड़ा॥
हरसा भाई म्हारा रै कुण बूझे मा विन मनड़ै री बात॥
ओदरा रा रै साथी। कुण रै सवारै बिखर्‌या केसड़ा॥
हरसा वीर म्हारा रै। जै दिन मरगी म्हारी माय॥
सीर पीहर रो वै दिन ऊठग्यो। हरसा भाई म्हारा रै॥
भर भर आवै दोन्यू नैण। म्हारी मा रा रै जाया॥
छिन छिन आवे रै माय रा भाळणा। हरसा वीर म्हारा रै॥
मन रो बाध्योड़ो धीरज ना बधे। म्हारी मा रा रै जाया॥
उझलै छै समदरियै री पाल। म्हारी मा रा रै जाया॥
गैरी तो गैरी रै झाळा उठरयी। हरसा वीर म्हारा रै॥
जै म्हारो जीतो हुतो बाप, जामण रा रै जाया॥
अकन कुवारी नै कदेयन काढ़तो। हरसा वीर म्हारा रै॥
करतो बो अबड़ा-सबड़ा लाड़, जामण रा रै जाया॥
सार तो करतो छिन छिन धीव री। हरसा वीर म्हारा रै॥
राव गढ़ा रै करतो ब्याव। जामण रा जाया॥
दुलडो तो तिलडी दे रै तो दातडी। हरसा वीर म्हारा रै॥
करला खैचतो, सोर पचास, म्हारी मा रा रै जाया॥

(२) हसती तो घुडला रै देता घूमता, हरसा वीर म्हारा रै।
मा बाबल आवै म्हानै याद, नैणा चौमासो झिरझिर लागर्‌यो।
हरसा भाई म्हारा रै, तै भल रारव्यो म्हारा मान।
जामण रा रै जाया, आछी ओढायी रै सुरगी चूनडी।

हरसा वीर म्हारा रे, रिपिया सू लागे प्यारो ब्याज।
जामण रा रे जाया, बाबल सू प्यारी लागे डीकरी।
हरसा वीर म्हारा रे, मायड़ सू प्यारी लागे सास।
जामण रा रे जाया, बैनड़ सू प्यारी लागी घर री नार।
हरसा वीर म्हारा रे, कै थारे पाती मागती ?
जामण रा रे जाया, कै लेती आधो राज बटाय।
हरसा वीर म्हारा रे, की विध पिड़ारी रै छोटी भाण नै।
जामणा रा रे जाया, कै तो मै लेती धरम री चूनड़ी।
हरसा वीर म्हारा रे, कै तो मै लेती कुटको रे काचली।
जामण रा रे जाया, देतो तो ले लेती धरम की चूनड़ी।
हरसा वीर म्हारा रे, देतो तो लेती कुटको रै काचली।
जामण रा रे जाया, देतो तो लेती पगा री मोचडी।
हरसावीर म्हारा रे, भावजड़ी हूज्यो कधलै री छिबकलो।
म्हारा मा रा रे जाया, अकन कंबारी नै बोल्या रे बोलणा॥

(३) **हरस–** जीण म्हारी बाई अे।
मुड मुड तू पाछी घर नै चाल, जामण री अे जायी।
ऊभो यो हरसो करे अे मनावणा।
काकड़ियै ढलता हरसो नावड्यो॥
आडै फिर दीनी छी अडबार, जामण री अे जायी।
न्होरा तो काढै ऊभो हरसो वीर, जीण म्हारी बाई ऐ।

(४) **जीण–** हरसा वीर म्हारा रे।
म्हारे फरया तू मत ना आव, म्हारी मा रे जाया।
म्हारे आगे मत ना दे अडवार, हरसा वीर म्हारा रे।
था री मनायी जीवण ना मानै, म्हारी मा रा रे जाया।
मनै मनासी बामण बाणिया, हरसा वीर म्हारा रे।
घणी मनासी नानी जात, जामण रा' रे जाया।
बेटी मनासी रे हाडै राव री, हरसा वीर म्हारा रे।
मनै तो मनासी रे राजा राव, जामण रा' रे जाया।
मनै तो मनासी दिल्ली रो बादशाह, हरसा वीर म्हारा रे।

(५) **हरस–** जीण म्हारी बाई अे, उजला रधाद्यू अे तने बूरा भात।
जामण री अे जायी, हरिया ये मूगा री रधाद्यू तूने दाळ।
जीण म्हारी बाई अे, फलका पोवाद्यू अे तने मूण का।
जामण री अे जायी, तीवण तळवाद्यू तीस-बतीस।
जीण म्हारी बाई अे, खीर रधाद्यू अे बाखडै दूध री।

(६) **जीण–** हरसा वीर म्हारा रे।
भावज जीमैली रे थारा बूरा भात, जामण रा रे जाया।
भावज जीमैली मूग केरी दाळ, हरसा वीर म्हारा रे।
घीरत घालजे माय भूरी भैस रो, जामण रा' रे जाया।
तीवण जिमाजे तीस बतीस, म्हारी मा रा' रे जाया।
खीर जिमाजे बाखडै दूध री, हरसा वीर म्हारा रे।

(७) **हरस–** जीण म्हारी बाई अे।
चोकी ढळवाद्यू अे रतन जड़ाव री। म्हारी मा री' अ जायी।
ऊपर लगवाद्यू सुवरण थाल, जीण म्हारी बाई अे।
ऊचो सो घालद्यू तनै बैसणो, म्हारी मा री' अे जायी।
बैन उ भाई जीमण जीमा साथ मे, जीण म्हारी बाई अे।
बिच बिच बदला अे वाल्या गासिया।
म्हारी मा री अै जायी।

(८) **जीण–** हरसा वीर म्हारा रे।
जे ओज्यू जलमग्या एक माय रे, म्हारी मा रे जाया।
जद रे जीमाला भैला बैठ क, हरसा वीर म्हारा रे।
जद रे बदलाला बिच बिच गासिया, म्हारी मा रा रे जाया।

(९) हरस– जीण म्हारी बाई, अे अस्सी अें कल्या रो सिमाद्यू घाघरो।
म्हारी मा, री अै जायी।
अ' र मगवाद्यू थानै दिखणी चीर।
जीण म्हारी बाई अै, मोत्या जड़ाद्यू अे थारी मोचडी।
म्हारी मारी अे जायी, रतन जड़ाद्यू अे थारी राखड़ी।
जीण म्हारी बाई अे, हीरा जडाद्यू थारो हार।

म्हारी मा री अै जायी।
बिछिया घडाद्यू अे बाई तनै बाजणा।

(१०) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
भावज पहेरेली थारो घाघरो, म्हारी मा, रा' रे जाया।
भावज औढेली दिखणी चीर, हरसा, वीर म्हारा रे।
भावज ही पहरैली, मोत्या जड़ी मोजड़ी।
म्हारी मा रा' रे जाया।
भावज रे ही सौवे जडाऊ राखड़ी, हरसा बीर म्हारा रे।
भावज रे आपे नोसर हार, म्हारा जामण रा' रे जाया।
भावज रे राचै रे बिछिया बाजणा हरसा बीर म्हारा रे।

(११) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
अतरी करडाई मत ना धार, जामण री अे जायी।
मान कह्योडी पाछी घरै चाल, जीण म्हारी अे।

(१२) जीण– हरसा भाई म्हारा रे।
आकडा रे लागै भला मतीरा, म्हारी मा रा' रे जाया।
फोगा रे लागे रे चायी काकडी, हरसा बीर म्हारा रे।
खेजडिया रे लागै रे चाया बोर, जामण रा' रे जाया।
झाड्या रे लागै चायी सागरी, हरसा बीर म्हारा रे।
पीपल रे लागे चाये आम, जामण रा' रे जाया।
आम्बा रे लागे चायी पीपली, हरसा बीर म्हारा रे।
फिरज्या कुदरत रा साचल नेम, जामण रा' रे जाया।
जीण आयोडी रे पाछी ना फिरे, हरसा बीर म्हारा रे।
शिखर चढयोडी सूरज मुड मुड़ जाय, जामण रा' रे जाया।
समै भी गयोडी भाई बावड़ै, हरसा वीर म्हारा रे।
समदर सू नदीया पाछी आय, जामण रा' रे जाया।
जमपुर गयोडा रे भवरा मुड चले, हरसा बीर म्हारा रे।
बादल री रे बूदा पाछी घिर घिर जाय, जामण रा' रे जाया।

(१३) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
कद तनै काढी भावज गाळ, म्हारी जामण री जायी।
कद तनै दीन्या भावज ओळमा जीण म्हारी बाई अे।

(१४) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
नित उठ काढै भावज गाळ, जामण रा' रे जाया।
नितकी तो बोले रे अवडा बोलणा, हरसा बीर म्हारा रे।
नणद भोजाई सरवर म्हे गया, जामण रा' रे जाया।
सात सहेल्या म्हारै साथ मे, हरसा बीर म्हारा रे।
सरवर पर बोल्या रे भावज बोलणा, जामण रा' रे जाया।
अवडी तो सबड़ी रै दीनी गाल, हरसा बीर म्हारा रे।
तन मन मे लागी रे म्हारे लाय, जामण रा' रे जाया।
नैणा मै हिवडे री नदिया नीसरी, हरसा बीर म्हारा रै।
करू अे तो लागै कुल रे दाग, जामण रा' रे जाया।
जीवू तो जाळै भाव जीवती, हरसा बीर म्हारा रे।
सोगन मै खायी सरवर पाळ पर, जामण रा' रै जाया।
आड़ो तो लीन्यो रे सूरज देवता, हरसा बीर म्हारा रे।
भावज रो चाड्यौ कळक उतारस्यू, जामण रै जाया।
जाय तो बसू मै बन खड-डूगरा, हरसा बीर म्हारा रे।
हर सू लगास्यू रै वारा लोय, जामण रा' रै जाया।
जीताजी रैस्यू रै जग मै ऊजळी, हरसा बीर म्हारा रै।

(१५) हरस– जीण म्हारी बाई ऐ, नाकै चिणाद्यू अे थारो ओसरो।
म्हारी जामण री जायी, नाकै खिणाद्यू अे सरवर ताल।
जीण म्हारी बाई अे, क्वै ता खिणाद्यू अे मोवन-बावडी।
म्हारी जामण री जायी म्हारी बाई अे।

(१६) जीण– हरसा बीर म्हारा रै।
क्या नै खिणा दै सरवर ताळ, जामण रा' रे जाया।
क्या नै चुणादे न्यारो ओसरो हरसा भाई म्हारा रे।
धायी हू थारी रै मोवन बावडी, जामण रा' रै जाया।

अेके ओदर म ही दोन्यू लोटिया, हरसा भाई म्हारा रे।
अेके मानड रा चूख्यो दूध, म्हारा मा, रा' रे जाया।
अेके पालणियै रे दोन्यू झूलिया हरसा बीर म्हारा रे।
अेके आगणिये दोन्यू खेलिया म्हारा मा रा' रे जाया।
अे के बाटकिये पिये दोन्या दूध, हरसा वीर म्हारा रे।
अे के थालकड़ी मे सागै जीमिया, म्हारा मा रा' रे जाया।
बैन उ भाई री, गाढो नेह हरसा बीर म्हारा रे।
पर घर री आयेडी नेहो तोडियो, जामण रा' रे जाया।

(१७) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
अतरी निसासी अे बैनड ना हुवै, जामण री अे जायी।
हरसो ता चालै थारे साथ, जीण म्हारी बाई अे।
चाल बासेला अे बनखड डूगरा, जामण री अे जायी।

(१८) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
किण रे भरोसे थारो राज, जामण रा रे जाया।
कुण तो रुखवालै रे पिरजा बापडी, हरसा बीर म्हारा रे।

(१९) हरस– जीण म्हारी बाई अे,
राम कै भरोसे म्हारो राज, जामण री अे जायी।
वो ही रुखवालै पिरजा बापडी, जीण म्हारी बाई अे।

(२०) जीण– हरसा बीर म्हारा रे
मुड मुड़ तू पाछो घर नै जाव, जामण रा' रे जाया।
भावज ता बिलखै रे कुल में अेकली, हरसा बीर म्हारा रे।

(२१) हरस– जीण म्हारी बाई अे, भावज थारी जासी अै अपणै बापकै।
जामण री अे जायी, वा' रैसी भावजडया रे बीच।
जीण म्हारी बाइ अे, भाया रै सहारे अै ऊमर काढसी।
जामण री अे जायी, जीण म्हारी बाई अे।

(२२) जीण– हरसा भाई म्हारा रे।
किसी विधि चालै कुल रा नाव, जामण रा रे जाया।
वश वधै ना अपणै बापरो, हरसा बीर म्हारा रे।

(२३) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
अमर हुवैलो यो कुल रो नाव, जामण री' अे जायी।
कीरत तो वधैली थे माय र' बाप री जीण म्हारी बाई अे।

(२४) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
दुनिया काडैली मनै गाळ, जामण रा' रै जाया।
जुग मे बाजूली रै कुळ बिणासणी भाई म्हारा रे।

(२५) हरस– जीण म्हारी बाई अे,
कुटम कबीलो दैलो धोक, जामण री अै जायी।
दुनिया तो आसी अे थारै जातरी, जीण म्हारी बाई अ।
जुग मे बाजाला अे साचा देव, जामण री' अे जायी।
सीस झुकासी अै राजा-बादस्या जीण म्हारी बाई अै।

(२६) जीण– हरसा बीर म्हारा रे, भोत दूखेलो रे घर रो छोड़बो।
जामण रा रे जाया, घणू रे दूखेलो तजबो मोह।
हरसा बीर म्हारा रे, भावज ऊडीकै पाछो तू फिर जाव।
जामण रा रै जाया, हरसा बीर म्हारा रे।

(२७) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
भोत सुखेलो अे घरा रो छोड़बो, म्हारी मा री' अे जायी।
घणू अै सुखेलो तजिबो मोह, जीण म्हारी अै।
हरसा रा वायक पाछा ना फिरै, म्हारी मा' री अै जायी।
चालूला थारै पगल्या रै लार, जीण म्हारी बाई अे।
धूणो तो तापूलो बनखण्ड डूगरा, म्हारी मा री जायी।

(२८) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
भोत दुहेलो रै जुग म जोग, जामण रा' रै जाया।
बैनउ रे वचना सू पाछो तू फिर ना, हरसा बीर म्हारा रे।

(२९) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
पैला तू मैले पाछो भग न पाव, जामण री' अे जायी।
पाछै तो हरमी अ भरसी पावडा, जीण म्हारी बाई अे।

(३०) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
सला रा भर ज्याय गहरा घाव, जामण रा' रे जाया।
बोली रा घावज ना भरै, हरसा बीर म्हारा रे।
फाट्या दूधा रा' रे जावण ना लगै, जामण रा' रे जाया।
फाटयोडा मन मिलबा रा नाय, हरसा भाइ म्हारा रे।
उझल्योडा समदर रे बीरा ना डटै, जामण रा रे जाया।

(३१) हरस– जीण म्हारी बाई अे, मरती तो बेल्या जामण यू क्ह्यो।
म्हारी जामण अै जायी, जीण म्हारी बाई अे।

मृत्यु शैय्या पर माता द्वारा हरस को कहे गये वचन

ओदर ग' रे लाटया।
अटक्यो छे गाडग माही जीव, हरसा लाल म्हाग रे।
जीवण री' रे चित्या कुण करै हरसा म्हारा बाला रे।
कुण तो गूथे लो वाई रा सीस ओदरा रे लोटया।
कुण ता माडली हाथा राचणी, हरमा बेटा म्हाग रे।
किण न कैवैली बाई माय आदरा रा' र लाटया।
किण सू रूसैली रे जीवन रूसणा हरसा बाला म्हारा रे।
कुण ता करैली र जीवण रा मनावणा, हरसा लाल म्हारा रे।
आवेली नितकी वार-तीवार, ओदर ग लोट्या।
खूणा म बड़ बड़ रोवैली जीवणी, हरसा बाला म्हारा रे।
आवला सावणियाँरी तीज, आदरा रे जाया
जुग मै सिजारा र वाइ रा कुण करर हरसा बेटा म्हारा रे।

हरस का माता को वचन

म्हारी रात देई माता अे।
मत ना मेरी अे मत ना कर जीवण केरा सोच।
म्हारी मावड़ अै कुल मै वाई रा अै चिता हू करू।
मत ना म्हारी माता अे, मत ना कर जीवण वाई रा साच।
म्हारी रातादइ माता अे रूसी बाई रा करू मै मनावणा।
गत ना म्हारी माता अे मतना कर जीण वाई ग मोच।
म्हारी माता रातादइ अ तीज सिनारा वाई रा हू करू।

(३४) माता– हरस समरथ मोवी रे।
बाई री सभलावण दीनी सूप, म्हारा समरण मोवी रे।
बाई रे माथे छिया तू राखजे, हरसा म्हारा मोवी रे।
जे तू राखैलो पेटे पाप, ओदर रा' रे लोट्या।
दरगा मै दावण गिरियो तू वैण, हरसा म्हारा मोवी रे।

(३५) हरस– जीण म्हारी बाई अे, हिवडा मै मडारया माय रा कौल।
म्हारी जामणरी अे जायी, सपनै नहीं भूलू अे बाभोलावणा।
जीण म्हारी बाइ अे, मरता तो घिरता बाबल यू कह्यो।
म्हारी जामण अै जायी, जीण म्हारी वाई अे।

पिता द्वारा हरस को जीण की देख-रेख हेतु कहा गया वचन

पिता– म्हारा मोबी रे बेटा, लारै तो छोड़ी रे भोली चिडक्ली।
हरसा बेटा म्हारा रे, हेलो हू देय जीमावता साथ।
म्हारा समरथ बेटा रे, साझ सुवारी लेतो वारणा।
हरसा मोबा म्हारा रे, होवेली साझ-सुवारी नित बारणा।
म्हारा समरथ जाया रे, सिरावण बेला ऊभी कूकसी।
हरसा म्हारा बाला रे, आवैली पर घर केरी घाव।
म्हारा समरथ बेटा रे, भोली लाडी ने रे फोडा घालस

हरस का पिता को आश्वासन

हरस– मत ना म्हारा बाबल ओ, मत ना करो थे बा[illegible]।
म्हारा जलवल जामी ओ मत ना करो थे जीवण केरो सोच।
म्हारा जलबल जामी ओ हाथा हथैल्या में रे राखू चिडकली।
मत ना म्हारा बाबल ओ।
मत ना करो थे बेनड म्हारी रो सोच।
म्हारा जलबल जामी ओ, खावो अर खेलो बाईजी आगणै।
मत ना करो बाबल ओ।
मत ना करो थे बाई जीण रो सोच।
म्हारा जलबल जामीओ, पर घरी आई नैहो राखू पीर मै।

(३८) हरस– जीण म्हारी बाई अे।
मरते बाबल सू करिया कोल, जामण री अे जायी।
जिस विध बादल रा अे बाचाबीसरू, जीण म्हारी बाइ ऐ।
जाऊलो अैक दिन दरगाह माय, म्हारी मा री जायी।
मा बाबल बूझे अै थारी बारता, जीण म्हारी बाई अे।
मुखडो दिखाऊ क्यू कर जाय, म्हारी मा, री जायी अे।
कायी बतास्यू अे, माय रै बाप नै, जीण म्हारी बाई अे।
चिरमी ज्यू छोडू राज र पाट, जामण री अे जायी।
भावज थारी छोडू अे पीहर झूरती जीण म्हारी बाई अे।
जीवतडो विचडू अे तैं सू नाय, जामण री अे जायी।
मौत बिछावो अे ते सू घालसी, जीण म्हारी बाई अे।

(३९) जीण– हरसा बीर म्हारा रे।
हरि री ओ कला सू उतरया दो जणा।
म्हारी मा, रा' रै जाया।
अैक तो हरसा दूजी जीवणी, हरसा बीर म्हारा रै।
हरि रा कला मे रै पाछा जाय मिलै, म्हारी मा, रा' रै जाया।
हरसनाथ भैरू रे, चाल बसाला रै बनखण्ड डूगरा।
हरसा बीर म्हारा रै अेवड तो छैवड धूणी घाल।
म्हारी मा,र' रै जाया लोय तो मिलवा हर री लोय मे।
हरसा बीर म्हारा रे, दरगाह मे माडया रै विधाता आक।
जामण रा' रै जाया, जोग लिख्योडो रै भल भल साभलं।
जीण जुग व्हाली अ, लागे तो आगे भवानी जाय।
जुग तारण अै माता, लारा तो हरसो ऊतावला।
जुग जीवण माता अै, छिन मै तो पुजी अ सिखर र गोरव।
जुग तारण अै माता, धरती रो लीनी रै पानी खींच।
जीण जुग माता अै, दो तो पगा सू अै पूगी बनखडा।
जुग तारण अै, माता टग टग पहाडा भवानी चढ गयी।
कलजुग री भवानी अै बैठी है चोटी उपर जाय।

कलजुग री अै देवी, थरहर तो थरहर डूगर कापिया।
जीण जुण वाली अै, ढाई तो आखर हरस सू य कह्या।
जामण रा' रै जाया, साम तै बैठया लागै पाप।
हरसा बीर म्हाग रे, छैकड़ देय बैठा रै फैरा पीठड़ी।
म्हाग जामण जाया रे, हरसा बीर म्हारा रे।

जीण जयन्ती माता के अन्य मदिर

जयपुर — जयपुर स्थित रामगज बाजार में जीण माता के खुर्रे पर जीण माता का मदिर है।

बल्ला — हबीबगज रेल्वे लाइन (बागलादेश) पर सेराहडी (श्रीहट्ट) स्टेशन है। उससे आगे कम्पनीगज से पूर्व जयतीपुर ग्राम है। यहा जयन्ती देवी का मदिर है। पहले यहा बहुत यात्री जाते थे। (यह विवरण पहले का है, अब मदिर की क्या स्थिति है, कहा नही जा सकता)।

आसाम मे शिलाग से दूर जयन्ती पर्वत पर बाउरभाग ग्राम मे जयन्ती माता का मदिर है। तत्रचूड़ामणि ग्रन्थ के अनुसार यहा माता की बामजघा गिरी थी। यह ५१ शक्तिपीठो मे से एक शक्तिपीठ है।

पारीको के निम्न अवटको की यह कुलदेवी है—

पुलसाण्या पलसाण्या	जोशी
आलमग	जोशी
डसाना (डसाण्या)	जोशी
लडणवा	जोशी
कामला कमला कमला	जोशी
भाकला बाकला बेकला	जोशी
दुजारचा दुजाग दिजारचा	जोशी
बभोरचा भभारचा	जोशी
दुईवाल (दुहीवाल)	उपाध्याय
कुसाट कुसटा कुशलटा	उपाध्याय

भरगोडा भरडोदा	उपाध्याय
शांडिल्य साडल सांडिल साण्डल्या	उपाध्याय
जोडोदा जारोदा	उपाध्याय
बुराट (बराट)	तिवाडी
सुचगा	तिवाडी
सुरेडा	पुरोहित



तारा माता

भगवती तारा परमशक्ति स्वरूपा है। महामाया, सतप्त ससार की रक्षा करने के लिए जब उत्सुक हुई तो उसने काली, तारा आदि दस रूप धारण किये। इन दस विद्याओं के नाम हैं– काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमवती, बगला, मातगी व कमलात्मिका*। भक्त किसी भी स्वरूप की उपासना, भक्ति करे, उसके लिए अपने इष्ट का स्थान सर्वोपरि होता है। आदि शक्ति तो दुर्गा ही है, अन्य शक्तियाँ तो उसकी विभूतियाँ है।

'वह विश्व की जननी है, ससार का मूल है। उसी से विश्व के स्रष्टा ब्रह्मा, शासक विष्णु और नाशक रुद्र का प्रादुर्भाव हुआ है। उसे महामाया कहते है। वेद उस आदि शक्ति बतलाते है—

ब्रह्मतरो जय तारिणि मुक्त, ब्रह्मविष्णुशिव - शाखा - युक्ते।
मोक्षफलम् फलमद्भुतसरस नित्यानन्दमय कुरु कुरु मम॥

'सप्तशती-चण्डीपाठ' मे यह लिखा है कि जब कभी देवता शत्रुओं से पीड़ित होते है वह उनके बीच प्रगट होती है। उसका नाम 'खर्वा' है। क्योंकि वह एक पल मे, केवल दर्शन मात्र से शत्रुओं के गर्व को खर्व कर देती है। प्रलय के समय वह बहुत ही विकराल रूप धारण करती है। उस समय वह काली' रूप मे होती है– अत्यन्त विकराल काला रूप। सिर पर जटाए है, जिसमें भयानक सर्प लिपटे हुए है– इस रूप मे वह महामाया दुर्गा, स्वर्ग, मर्त्य और पाताललोक का सहार करती है, साथ ही साथ भक्तों की विपदा को भी भस्म कर देती है।'

इसके महत्व का दिग्दर्शन कराते हुए तन्त्र-ग्रन्थों मे कहा है कि बिना ध्यान जप, पूजा, बलि, अभ्यास, भूतशुद्धि, देहदु ख, क्लेश के उठाये ही

* शक्ति उपासना के विशाल क्षेत्र मे दस महाविद्याओं की उपासनाओं मे तारा देवी का नाम प्रमुख है।

इसकी सिद्धि शीघ्र ही प्राप्त हो जाती है। इसी से इसे सर्वसिद्धियों में सर्वोतम स्थान प्राप्त है। इतनी सरलता भला किस देवता की आराधना में प्राप्त होगी ? सरलता और बंधन मुक्ति की हद है। ऐसे निष्कण्टक सुखप्रद मार्ग पर भला कौन न चलना चाहेगा ?

शास्त्रों में ऐसा उल्लेख आता है कि प्राचीन काल में जब देवताओं और राक्षसों में युद्ध हुआ तो इन्द्र ने बलवृद्धि, यशवृद्धि एवं विजय के लिए भगवती तारा का पूजन कर उनसे शत्रुनाश की प्रार्थना की थी। तारा शक्ति सर्वत्र व्याप्त है, तथापि इसे विभिन्न नामों यथा तारिणी तरला, त्रिरूपा, तरणी नामों से भी जाना जाता है। तारा को उग्रतारा भी कहते है। भारतवर्ष में सर्वप्रथम महर्षि वशिष्ठ ने तारा की उपासना की इसलिए तारा को 'वशिष्ठाराधिता तारा' भी कहा जाता है।

ब्रह्माण्डपुराण के ललितोपाख्यान मे जो तारा का वर्णन दिया है उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह भगवती मुख्यतया जलौघ या जलाप्लावजन्य दुःखों का नाश करने वाली है। अर्थात् तारा भगवती मानस नामक महाशाल स्थित एक अमृतवापिका के द्वार की रक्षा करती है, वहां बिना नौका और तारा की आज्ञा के कोई नहीं जा सकता। वहीं तारा की अनेक परिचायिकाएं रहती है, जो इस वापी के आर-पार जाती रहती है। वे भगवती का यशोगान करती है, नाचती है और प्रसन्न रहती है। तरण-शक्तियों का और तारा का मिलाप बहुत ही सुन्दर है और ताराम्बा ही जलौघजन्य दुःख दूर करने मे समर्थ है। इसके आगे कुरुकुल्ला का वर्णन आता है। उसको नौकेश्वरी कहा गया है और उसके ध्यान में उसके हाथ मे 'अदित्र' या डांड (चप्पे) दिये गये है। बौद्ध शास्त्र मे कुरुकुल्ला को तारा का रूपान्तर कहा गया है। इन दोनों वर्णनों से तारा का जलयात्रा से स्पष्ट सम्बन्ध दीख पडता है। कन्हेरी मे जो तारा की मूर्ति है उसमें तो जहाज भी बना हुआ है।'

तारा शब्द का शाब्दिक अर्थ है तारण करने वाली एवं अज्ञानरूपी अंधकार से ज्ञान के प्रकाश में लाने वाली।

तारकत्वात्तु सदा तारा सुखमोक्ष-प्रदायिनि।
उग्रतापात्तारिणी यस्मादुग्रतारा प्रकीर्तिता॥

जो हमेशा रक्षा करती है, दु ख से उबारती है इसलिए तारा कहलाती है। कठोर कष्टों से तारती है इसलिए इसे उग्रतारा कहते है।[1] तारा शक्ति ही वाग्ब्रह्मस्वरूप, सकल विद्याधिष्ठात्री है।

'इय सा मोक्षमाणानामजिह्मा राजपद्धति' अर्थात् यही वाक् शक्ति मोक्ष चाहने वालो के लिए अकुटिल सीधा सरल मार्ग है।

देवी तारा की उपासना विद्या प्राप्ति के लिए भी की जाती है।[2] **लीलया 'वाक्प्रदा चेति तेन लीलसरस्वती'** सहज ही म जिसकी आराधना से विद्या प्राप्त हो जाय उसे लीलसरस्वती कहते है।[3]

भगवती तारा के तीन रूप बताये गये है। तारा, एकजटा और नीलसरस्वती।

तारा शक्ति भी दुर्गा शक्ति का ही रूप है। तारा और काली यद्यपि एक है तथापि तारा की स्थिति का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है– सम्पूर्ण विश्व मे व्याप्त जल से निकले एक श्वेत कमल पर विराजमान है। उनकी नील रग की आकति नील कमला की भाति तीन नेत्र तथा हाथ मे कैची, कपाल, नीलकमल और खड्ग है। कुण्डल, हार, कगन आदि से वे विभूषित है। सर्पा से वेष्टित एक पीली जटा वाली, सिर पर 'अक्षोभ्य' (शिव) धारण किये हुए है, अर्थात् जल से निकले हुए कमल पर स्थित तारा जलभय से मुक्त रखती है अर्थात् जल की बाढ या तूफान' मे तारा का स्मरण करके प्राणी विपत्तिया मे उभर जाता है। वे उग्रतारा हे, पर भक्तों पर कपा करने के लिए उनकी तत्परता अमोघ हे। इस कारण से वे महा करुणामयी हे। आगमोक्त दस महाविद्याओ म उग्रतारा का द्वितीय स्थान है।

आगमा मे शक्ति की उपासना प्रसग मे 'चीनाचार आदि कई तन्त्रो मे लिखा है कि वसिष्ठ देव ने चीन देश मे जाकर बुद्ध के उपदेश से तारा का दर्शन किया था। कुलालिकाम्नाय या कुब्जिकामत तन्त्र मे भगवान् शकर भगवती को आदेश देते है कि––

---

१ हलायुधकाष पृ ३३१
२ उपरात्त, पृ ३३१
३ उपरात्त, पृ ३३१

गच्छ त्व भारते वर्षे अधिकाराय सर्वत ।
पीठोपपीठ - क्षेत्रेपु कुरु सृष्टिरनेकधा॥
गच्छ त्व भारतेवर्षे कुरु सृष्टित्वमीदृशा।
पञ्चवेदा पञ्चैव यागिन पीठपञ्चकम्॥
एतानि भारतवर्षे यावत्तु पीठा स्थाप्यते।
तावत् न मे त्वया सार्धं सङ्गमश्च प्रजायते॥'

'हे देवि! सर्वत्र अधिकारार्थ भारतवर्ष में जाओ। पीठ, उपपीठ और क्षेत्रो मे बहुतो की सृष्टि करो। भारतवर्ष में जाओ। वहाँ पाचवेद, पाच योगी और पाच पीठो की सष्टि करो। जब तक पीठादि प्रतिष्ठित नही हो जाते, तब तक तुम्हारे साथ मेरा सगम नहीं होगा।'

इससे ज्ञात होता है कि भारतवष मे वामाचार बाहर से आया है। यह भी स्पष्ट होता है कि चीन के शाक्त तारा के उपासक थे और तारा की उपासना भारत मे चीन से आयी। नेपाली बौद्धों के 'साधन-माला-तन्त्र' मे एक-जटा-साधन' प्रसग म लिखा है—

आर्यनागार्जुनपादैर्भोटे समुद्धृता इति'

अर्थात् एकजटा नाम्नी तारादेवी विभिन्न मूर्ति महायान-मत के प्रतिष्ठाता आर्य नागार्जुन भोट (तिब्बत) देश से उद्धार करके लाये थे। 'स्वतन्त्र तन्त्र' मे लिखा है—

मेरो पश्चिम कूले तु चोलनाख्यो ह्रदो महान्।
तत्र जज्ञे स्वय तारा देवी नीलसरस्वती॥'
(हिन्दुत्व– रामदास गौड-पृ ७१८-७१९)

स्वतन्त्र-तन्त्र के अनुसार तारा का प्रादुर्भाव मेरु पर्वत के पश्चिम भाग मे (लद्दाख के आसपास) चोलना' नाम की नदी या चालन सरोवर के तट पर हुआ था। ऐसा स्वतन्त्र तन्त्र म वर्णित है—

मेरो पश्चिमकूल नु चालनाख्यो ह्रदा महान्।
तत्र जज्ञे स्वय तारा देवी नीलसरस्वती॥

अर्थात् तारा मेरु-पर्वत के पश्चिम म उत्पन्न हुई। इस आधार पर कहा जा सकता है कि इसकी उपासना का प्रारम्भ लद्दाख के आसपास कही हुआ होगा।

"यह धधकती हुई अग्नि की प्रखर ज्वाला में रहती है। उसके शरीर का गठन दृढ तथा अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट है। शव की गर्दन पर उसका बाया पैर, टांगों पर दाहिना पैर सुस्थित है। यह सुस्थिर और मौन होकर खडी है। इसी रूप में वह भक्तो के कष्ट, विपदा, शोक, चिन्ता का हरण करती है— दु ख और विपदाए अर्थात् आध्यात्मिक, आधिदैविक और आदिभौतिक ताप मनुष्यो को अग्नि की उग्र लपटो के समान बराबर जलाया करते है। यह सभी मानते है कि विपदाओ मे पडकर मनुष्य अपने कर्तव्य-धर्म का सम्यक् पालन नही कर सकता। यदि विपदाओं से छुटकारा नही हुआ तो मनुष्य अशक्त हो जाता है। अत यह परम आवश्यक है कि उनसे छुटकारा पाया जाय। जब ये तीनो प्रकार के दु ख मनुष्य पर भयानक रूप से आक्रमण करते हैं, तब उसे देवी-देवता बचा नही सकते। ऐसे समय मे जगदम्बा 'तारा' रूप मे मनुष्य की रक्षा करती है। इसी हेतु उसके इस रूप को 'भगवती' विपद् विदारिणी कहा गया है।"

बिहार के सहरसा स्टेशन के पास पसिद्ध बनगा महिषि' ग्राम के समीप उग्रतारा का सिद्धपीठ है। कहते है कि सती देह का नेत्र भाग यहा गिरा था। यहा एक यत्र पर तारा, जटा तथा नील-सरस्वती की तीनो मूर्तिया एक साथ है। इसके अतिरिक्त दुर्गा, काली, त्रिपुर-सुन्दरी, तारकेश्वरी तथा तारानाथ की भी मूर्तिया है। कहते है महर्षि वसिष्ठ ने मुख्यत यही तारा की उपासना से सिद्धि प्राप्त की थी।

इसी प्रकार पश्चिमी बगाल के 'रामपुर हाट' रेल्वे स्टेशन से पाच कि मी की दूरी पर भी 'तारा पीठ' नाम का एक शक्तिशाली पीठ है। यह स्थान श्मशानो मे विद्यमान हे, किन्तु अब यहा बाजार बन गये है। धर्मशालाय बनती जा रही है। फिर भी मंदिर की प्राचीनता अक्षुण्ण है। यहा की मूर्ति चमत्कारिक है। मूलरूप से प्रतिमा के दो हाथ है। भगवती की गोद मे शिव स्तनपान कर रहे है।

काशी मे भूत-भावन बाबा 'विश्वनाथ' काशी के मणिकर्णिकाघाट पर मरने वाला के कान मे 'तारक' मत्र देते है। यह तारक मत्र 'राम' शब्द है— राम नाम। उपनिषद्, वाल्मिकि व्यासादि स लेकर तुलसीदास तक राम-नाम' को ही 'तारक'-तारण' करने वाला मत्र कहा है। शक्ति-उपासना-प्रधान इस

देश मे सीता-राम' के नाम कण्ठ-कण्ठ मे, जिह्वा-जिह्वा पर विराजमान है। यह 'राम नाम' तारक मत्र होने से इसमे गुप्त रूप से 'तारा' ही विद्यमान है। यथा- सीताराम' के बीच सीता का 'ता' और राम का 'रा' मे तारा (तारिणीशक्ति) विद्यमान हे। इसीलिए किसी प्राचीन गाथा कथा म कहा गया है कि **'अद्य मे तारिणी तारा राम रूपा भविष्यति।'**

मखदूमपुर गया स्टेशन (गया-पटना लाइन पर) से लगभग १२-१३ कि मी दूर भगवती तारा का मदिर है। काश्यप मुनि ने यहा तपस्या कर देवीमूर्ति की स्थापना की थी।

चण्डीपुर ग्राम (हावडा-म्यूल रेल्वे लाइन पर रामपुर स्टेशन से लगभग १२ १३ कि मी पहले) तारा देवी का मदिर है। इसे सिद्धपीठ माना गया है।

माता की पूजा

जगज्जननी जगदम्बा की पूजा तीन प्रकार की है– सात्त्विक पूजा, राजस् पूजा ओर तामस पूजा। इनमे से कामना रहित सात्त्विक-भाव की पूजा सत्त्वगुण से होती है। इसके लिए न चिन्ता ही करनी चाहिए ओर न उसकी आवश्यक्ता ही है। भक्त अपनी सारी इच्छा भगवती की इच्छा मे लय कर देता हे, अत फल की प्राप्ति भी भगवती की इच्छा पर ही निर्भर है। सर्वोत्तम पूजा यही है। राजसिक पूजा म भिन-भिन प्रकार की बुराइयाँ और दुर्गण आ जाते हैं, जिससे ससार का अहित होता है। बहुत से लोग उपासना का मूल-तत्त्व न समझ सकने के कारण आसक्तिपूर्वक मत्स्य, मास, मदिरा आदि का सेवन करते है। साधन तो करते है, सासारिक सुख भोग का और समझते है कि दवी की उपासना करत है। यह तामसिक उपासना है और इसका समर्थन शास्त्रों म नही किया गया है।'

'देवी की उपासना के लिए दिव्य पदार्थ ही सर्वथा उपयुक्त है, न कि सासारिक पदार्थ। इसके अतिरिक्त यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जिन पदार्थों को हम सासारिक जीव, घृणा और अरुचि की दृष्टि से देखते है वे देवता की उपासना के लिए कभी उपयुक्त नही हो सकते। वे पदाथ दवता की पूजा म चढ़ाने के लिए सवथा अनुपयुक्त है।'

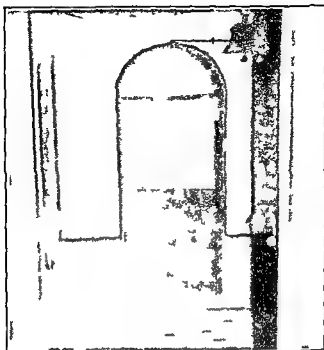
भारतवर्ष के अतिरिक्त अन्य देशों यथा चीन तिब्बत लद्दाख आदि क्षेत्रों में भी तारा की उपासना प्रचलित है। वहां भी इसकी पूजा की जाती है।

कुलदेवी

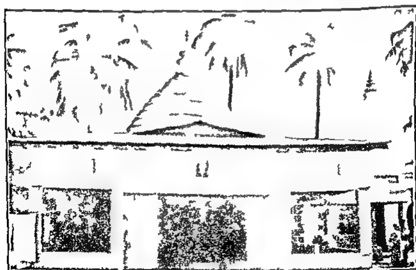
पारीकों के पदमाणियाँ (जोशी) अवटक की कुलदेवी* तारा है।

---

* कुछ विद्वान् पदमाणियाँ अवटक की कुलदेवी त्रिपुर सुन्दरी भी बताते हैं।



उग्रतारा माता का विग्रह – गुवाहाटी (आसाम)



उग्रतारा (गुवाहाटी आसाम) के मदिर का बाह्य दृश्य

त्रिपुर सुन्दरी : त्रिपुरा : तिपराय माता

त्रिपुर-सुन्दरी का शक्ति सम्प्रदाय म असाधारण महत्त्व सर्वविदित है। इसी नाम पर सुविदित स्वय त्रिपुरा राज्य है। त्रिपुरा से लगभग डेढ मील दूर पर्वत पर राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी देवी का भव्य मदिर है। कहा जाता है कि सती की मृत देह के अङ्ग भगवान् विष्णु के सुदर्शन-चक्र द्वारा खण्ड-खण्ड करने पर विभिन्न स्थानो पर गिरे थ उनसे इक्यावन (कहीं कहीं बावन शक्तिपीठो का भी उल्लेख है) शक्तिपीठ बने। अङ्ग और आभूषणादि से जो पीठ बने उनमें से यह भी अन्यतम है।[1]

माता का दक्षिणपाद यहा गिरा था। यहा देवी त्रिपुर-सुन्दरी और शिव, त्रिपुरेश कहे जाते है। त्रिपुरा राज्य के राधाकिशोरपुरा ग्राम से ढाई किलोमीटर दूर पूर्व-दक्षिण के कोण पर पूर्व पर्वत के ऊपर यह शक्तिपीठ स्थित है।[2]

माता त्रिपुर-सुन्दरी भगवान शिव की पत्नी है। यह जगदम्बा महाशक्ति का ही एक रूप हे।[3]

त्रिपुर-सुन्दरी का स्वरूप

माया शक्ति का आश्रयण कर वे ही त्रिपुर-सुन्दरी भुवनेश्वरी, विष्णु, शिव, कृष्ण, राम, गणपति, सूर्य आदि रूपो मे व्यक्त होती है। स्थूल, सूक्ष्म, कारणरूप त्रिपुर (तीन देहो) के भीतर रहने वाली सर्वसाक्षिणी-चिति ही त्रिपुर-सुन्दरी कहलाती है।

त्रिपुर-सुन्दरी[4]

महाशक्ति 'त्रिपुरा' त्रिपुर महादेव की स्वरूपा शक्ति है। कालिका पुराण के अनुसार शिवजी की भार्या त्रिपुरा श्रीचक्र की परम नायिका है। परम शिव

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४०२

२ उपरोक्त, पृ ३७७

३ हिन्दू धर्मकोष डा राजबलि पाण्डय पृ ३०६

४ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ २६४

इन्ही के सहयोग से सूक्ष्म-स-सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल रूपों म भासते है। त्रिपुर भैरवी महात्रिपुरसुन्दरी की रथवाहिनी है, ऐसा उल्लेख मिलता है।

श्री चक्र

प्राय सभी देविया के मदिर म विशेषत त्रिपुर-सुन्दरी के मदिर म श्रीचक्र का पूजन होता है, जिसका विवरण इस प्रकार है[१]—

यह ससार शक्ति का ही काय है। उसका आविर्भाव हाने पर तीना जगत् (इच्छा, ज्ञान ओर क्रिया-जन्य) उत्पन्न होते है और उसका तिराभाव हान पर उनका अभाव हो जाता हे, इसलिए उसी शक्ति का चिन्तन करना चाहिए।

> शक्तिजात हि ससार तस्मिन् सति जगत्त्रयम्।
> तस्मिन् क्षीण जगत् क्षीण तच्चिकित्स्य प्रयत्नत ।।

इच्छा, ज्ञान और क्रिया अथवा नाद, बिन्दु और कला इन तीनों में आविर्भूत शक्ति ही त्रिपुरा है। त्रिपुरा ही त्रिपुरा-बाला, त्रिपुर-सुन्दरी और त्रिपुर भैरवी इन तीना रूपा का सामूहिक नाम है। इन्ही तीना से जगत् में विविध त्रिदेवा (ब्रह्मा विष्णु, महेश) तीना प्रकार की अग्नि (गार्हपत्य, आहवनीय दक्षिणा), तीनाशक्तियों (महासरस्वती, महालक्ष्मी, महाकाली), (ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेश्वरी) तीनो लाको (भू भुव , स्व) स्वर्ग, मृर्त्य पाताल, तीनो स्वर (मन्द, तार, प्लुत, उदात्त अनुदात्त, समाहार अथवा ह्रस्व, दीर्घ प्लुत) तीना वर्ण (अ,उ,म्) गायत्री, गगा, विष्णुपदी यह त्रिपदी, हृदय, भूमध्य और शिर ये त्रिपुष्कर त्रिब्रह्म अर्थात् तीना वद, जो भी तीन की सख्या से परिमित है व सब त्रिपुरा से अन्वित है—

> देवाना त्रितय त्रयी हुतभुजा शक्तित्रय त्रिस्वराम्
> त्रैलोक्य त्रिपदी त्रिपुष्करमथ त्रिब्रह्मवर्णास्त्रय ।
> यत्किचिज्जगति त्रिधा नियमित वस्तुत्रिवर्गादिक
> तत्सव त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वत ।।
>
> (लघुस्तव, १६)

यह महाशक्ति मूल रूप से समष्टिगत अव्यक्त चेतन्य की चित् शक्ति है, अत सब भूतो के चित्तो म भी नाना वृत्ति-रूप से निवास करती है, यथा–

---

१ श्री ललितासहस्रनामस्तात्रम भूमिका– गापालनारायण बहुरा, पृ VIII XII

विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, तृष्णा, शान्ति, जाति, लज्जा, क्षान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, दया, दीप्ति, पुष्टि, भ्रान्ति आदि। आराधक अपनी भावना के अनुसार दुर्गा, महाकाली, महासरस्वती, महालक्ष्मी, अन्नपूर्णा आदि नामो से उसकी उपासना करते है।

सवेदन से पूर्व की अवस्था परमज्ञान की अवस्था होती है। वह 'परासवित्' कहलाती है। सवेदन अथवा स्पन्दन के अनन्तर होने वाले प्रपञ्च (जगत्) के ज्ञान के आधार पर वह 'सवित्' विविध कलाओ के रूप म व्यक्त होती है। (सौभाग्य रत्नाकर)

आद्या महाशक्ति अगाध और अपार सौन्दर्य राशि की भी स्वामिनी है। वे त्रिपुर की अधिष्ठात्री है। इसलिए महात्रिपुरसुन्दरी कही जाती है। ललिता सुन्दरी का ही पर्यायवाची है। ललिता, परा, परमभट्टारिका आदि नामो से पूजित चरम सौन्दर्य रूपिणी माता को श्रीचक्र से व्यक्त किया जाता है और इसकी आराधना को श्रीविद्या कहते है। श्री शब्द का अर्थ सामान्यतया 'लक्ष्मी' लिया जाता है, परन्तु 'श्री' तो उस परम-आद्या महाशक्ति का वाचक है जो श्रीचक्र म निवास करती है। इसी के माध्यम से श्रीतत्त्व का चिन्तन किया जाता है।

सामान्यतया श्रीचक्र षट्कोण के रूप मे बनाया जाता है। दो त्रिभुज एक दूसरे को काटते हुए इस तरह बनाये जाते है कि एक का शीर्ष ऊपर होता है और दूसरे का नीचे, एक की आधार रेखा दूसरे की बगल वाली रेखा क मध्य-बिन्दुओ मे होकर निकलती है। दोनो त्रिभुजो के बीच की जगह में दोनों (त्रिभुजों) का छूता एक वृत्त (गाला) बनाते है जिसके केन्द्र मे बिन्दु रहता है जो प्रकाश बिन्दु कहलाता है। यह शिवतत्त्व के अनुप्रवेश पर बनता है और घेरने वाले वृत्त को नाद (अथवा शक्ति) का प्रतीक माना जाता है। इस प्रकार ये नाद और बिन्दु की स्थिति दर्शाते है। ऊपर से आने वाला अधोमुखी शीर्षक त्रिभुज शक्ति का और नीचे से आने वाला ऊर्ध्वमुख त्रिभुज शिव का प्रतीक है। शक्ति का वर्ण लाल और शिव का श्वेत माना गया है। लाल सोम है और श्वेत अग्नि, इन दाना कलाओ से ही सृष्टि होती है। 'अग्नीषोमात्मक जगत्'। यह चित्र ही श्री, परा ललिता ओर त्रिपुरसुन्दरी के प्रतीक रूप में पूजा जाता है।

यह तो हुआ सरल श्रीचक्र, इसका विदग्ध रूप कुछ जटिल होता है। उसम पहले एक वृत्त खींचते है। उसमे नौ त्रिभुज एक दूसर को काटते हुए बनाए जाते हे। इनम महात्रिपुरसुन्दरी अपने नौ रूपो मे निवास करती है। इनके नाम श्री अथवा त्रिपुरसुन्दरी के पर्यायवाची रूपा म इस प्रकार दिये गये हैं– त्रिपुरा, त्रिपुरेशी, त्रिपुरमालिनी, त्रिपुरसुन्दरी, त्रिपुरवासिनी, त्रिपुरश्री, त्रिपुरसिद्धा और महात्रिपुरसुन्दरी। ये नौ त्रिभुज नौ योनियो के प्रतीक है। वृत्त को एक आठ कमल दल वाला वलय घेरता है, जो विविध द्वीपो के प्रतीक है, फिर उसक चारा ओर एक सोलह कमलदल वाला वलय होता है। अष्टदल कमल और षोडशदल कमल वाले वलया के बीच मे आठ रिक्त स्थान छूट जाते है, जो सप्त सागर और एक व्योम का सूचन करते है। षोडशदल कमल वाले वलय के सोलह भाग चन्द्रमा की पद्रह कलाओं तथा एक शाश्वत् कला के द्योतक हे। इसको सदा' भी कहते है। दूसरे वलय के बाहर की ओर तीन गुण खींचे जाते है जो सत्व, रज और तम गुणा को बताने वाले है। इस प्रकार यह श्रीचक्र मूल शक्ति महात्रिपुरसुन्दरी के नौ योनि-विग्रहा, देश-खण्डा, काल विभागो और गुणा को व्यक्त करने वाला होता है।

सोलह कलाओ ओर आदिकला सहित महात्रिपुर-भैरवी 'षोडशी' कहलाती है वह उसका सर्वोपरि रूप है। वही 'परम शिव' की प्रिया और स्वामिनी बनकर मणिद्वीप म विराजती है। वही सदा' कला ललिता नाम से भी प्रसिद्ध है।

वृत्त की परिधि गतिशील काल का प्रतीक है। इसकी आदि बिन्दु और अतिम बिन्दु अर्थात् आदिकाल ओर षोडशी अर्थात् महात्रिपुरसुन्दरी एक ही हे। दोना ही महिमा-मम्पन्न है। वही ललिता है। षाडश नित्याआ के नाम इस प्रकार है– महात्रिपुरसुन्दरी, कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वह्निवासिनी, महाविद्येश्वरी, दूती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, नीलपताका, विजया, सर्वमगला ज्वालामालिनी, चित्रा और षोडशी।

श्रीचक्र प्राय स्वर्ण, रजत अथवा ताम्रपत्रो पर बनाया जाता है। सामान्य-जन इसको स्फटिक, प्रस्तर-खण्ड या भूर्ज-पत्र पर भा आलखित कर लेते है। वामकेश्वर तत्र म कहा गया है कि नो त्रिभुज नौ आवरणा के प्रतीक है। पाच त्रिभुजो के शीर्ष ऊपर की ओर और चार के नीचे की ओर होते है। इसको सष्टिक्रम-चक्र

कहते है। यदि इस चक्र को उलटा रखा जाय तो वह सहारक्रम-चक्र बन जाता है।

ऊपर से देखने पर श्रीचक्र मे बिन्दु, त्रिकोण कोण, पटल या दल तथा वृत्त दिखाई देते है। वृत्तों को मेखला और तीन समानान्तर रेखाओ से बने समकोण चतुर्भुजो को भूपुर कहते है। दो रेखाओ के मिलन स्थल को सन्धि और जहा तीन रेखाए मिलती है वह 'मर्म' कहा जाता है। ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि यह चक्र नौ भागो मे विभक्त होता है। जिनको आवरण कहते है। इनमे ही परमा-शक्ति के निर्वाण-चैतन्य से जगत् की उत्पत्ति होती है। यों सच्चिदानन्दरूपिणी महाशक्ति का सूक्ष्म रूप नामरूपात्मक स्वरूप मे नौ अवतरणो मे प्रकट होता है, जिनसे पूर्ण श्रीचक्र की रचना सम्भव होती है। ये आवरण महाशक्ति को उद्भासित ही नही आवृत भी करते है। श्रीचक्र के नौ भागो के नाम ये है– १ बिन्दु (मध्य में) २ त्रिकोण, ३ त्रिकोण को घेरता हुआ अष्टकोण चक्र, ४ अष्टकोण चक्र के चारो ओर दश कोणो वाला अन्तर्दशार चक्र, ५ अन्तर्दशार चक्र को घेरे हुए पुन दश कोणो वाला बहिर्दशार चक्र, ६ इसको घेरता हुआ चतुर्दशकोणात्मक चतुर्दशार चक्र, ७ इसके चारो ओर षोडशदल पद्म वत्त होता है और इसके बाहर की ओर तीन वृत्त होते है, जिनको मेखलात्रय कहा गया है, ९ तीन समानान्तर रेखाओ से बना समकोण जिसकी प्रत्येक दिशा मे द्वार बना होता है। इसको भूपुर कहते है।

यही श्रीचक्र नौ आवरणो एव उपागो सहित सम्पूर्ण जगत् का द्योतक है। यही ब्रह्माण्ड, जीव और मातृका सहित श्रीललिता महाशक्ति के स्वरूप का प्रतीक है। पाच अधोशीर्ष त्रिकोण शक्ति को और चार ऊर्ध्वशीर्ष त्रिकोण शिव को बताते हुए 'शिव शक्त्या युक्तो' स्वरूप को व्यक्त करते है।

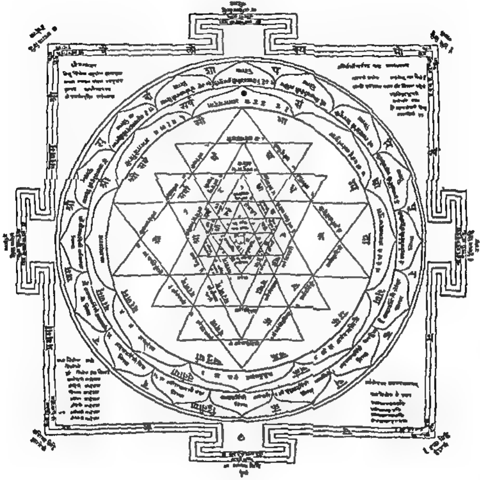
समयाचार मत के अनुसार चक्र के मध्य में स्थित बिन्दु के चारों ओर का वृत्त बैन्दव स्थान कहलाता है। यह बिन्दु चक्र मे किसी भी रेखा, त्रिकोण अथवा कोष्ठक से सम्बद्ध नही है। यही चित्कला या श्रीललिता का अधिष्ठान है। अब त्रिकोणे को लीजिए। प्रथम त्रिकोण आज्ञाचक्र है अष्टकोण विशुद्ध चक्र है, अन्तर्दशार चक्र अनाहतचक्र का द्योतक है, बहिर्दशारचक्र मणिपूरक

को ओर चतुर्दशारचक्र स्वाधिष्ठानचक्र को सूचित करते है। भूपुर मूलाधार का प्रतीक है। इसके चारा द्वार वेदा के सूचक है। यह नवावरण चक्र शब्द और नाद की चतुर्दशाओ– परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी तथा जीव की चारो अवस्थाओ– जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति ओर तुरीय एव अन्त स्थित चित् प्रकाश का भी द्योतक है। सबसे भीतर बिन्दु को घेरे हुए त्रिकोण का शीर्ष, नीचे की आर होता है। इसको शक्तिचक्र कहते है। यही चित् शक्ति का विमर्शशक्ति के रूप म सृष्टि के लिए उन्मुख हाना दर्शाता है। इसके तीनो शीर्ष इच्छा, ज्ञान ओर क्रिया शक्ति को बतलाते है। यह त्रिकोण ही नाम रूपात्मक जगत् का उत्पत्ति स्थान कहा गया है तथा यही परा वाक् का स्थान है, जो पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी वाणी तथा मातृकाआ को जन्म देता है। शेष सातो आवरण इन्ही 'प्रकाश' और विमर्श' शक्तियो से आलोकित होते है। यह सप्तवर्णात्मक त्रिकोण त्रिपुटी' भी कहलाता है अथात् इसमे ज्ञाता, ज्ञात ओर ज्ञान का समावेश रहता है, इसी का कामकला' कहते है। यह चन्द्रमण्डल को द्योतित करता है ओर सुषुप्ति-अवस्था का प्रतीक है। उक्त दाना आवरणा स रुद्रग्रन्थि भी सम्बद्ध है। अष्टकोण चक्र पश्यन्ती-वाक् का प्रतीक है। अन्तर्दशार और बहिदशार आवरण भी उक्त बिन्दु ओर त्रिकोण आवरणों क रश्मि-समूह से प्रकाशित होते है ओर जीव की स्वप्नावस्था के पतीक है। सूर्यमण्डल और विष्णु ग्रन्थि इनस ऊपर अवस्थित है। ये मध्यमा-वाक् के भी प्रतीक है और शरीर मे 'अनाहत' तथा मणिपूरक-चक्रो का प्रतिनिधित्व करते हैं। चतुर्दशारचक्र ही स्वाधिष्ठानचक्र है और वेखरी-वाक् तथा पञ्चाशत (५०) वर्णो को प्रकट करता है। भूपुर ही मूलाधार है जहा चित् शक्ति का आवरण पूरा होकर बिन्दु अथवा सहस्रार कुण्डलिनी मूलाधार के रूप म स्वाधिष्ठान सहित अवस्थित रहता है। यह जीव की जागृत-अवस्था, अग्निमण्डल और ब्रह्म-ग्रन्थि को द्योतिक करता है। अष्ट-दल-कमल तथा पोडश-दल-कमल एव बाहरी वत्त प्रकाशाश और शेष पाच विमर्शाश हे। समयाचार के अनुसार यही श्रीचक्र का सक्षिप्त विवरण है।

आयुध

त्रिपुर-सुन्दरी माता चतुर्भुजी है। इनके हाथो मे पाश, अकुश, ईख का धनुष और पुष्पबाण है। माता कमल पर निवास करती है।

॥ श्रीयन्त्रम् ॥



श्रीविद्या ही त्रिपुरा[1]

श्री कामराज विद्या की अधिष्ठात्री 'श्रीविद्या' का ही नामान्तर त्रिपुरा है। त्रि = त्रिमूर्तियों से पुरा पुरातन होने से 'त्रिपुरा' अर्थात् गुणत्रयातीता त्रिगुणनियन्ता शक्ति। गौडपादीय सूत्र में भी कहा है— 'तत्त्वत्रयेण भिदा'। 'त्रिपुरार्णव' में 'त्रिपुरा' शब्द की प्रकारान्तर से निरुक्ति की है— तीन नाडियां, इडा, पिङ्गला, सुषुम्ना ही त्रिपुरा है। वह मन, बुद्धि और चित्तरूपी तीन पुरों में निवास करने वाली शक्ति है, अतः 'त्रिपुरा' कही जाती है।

ग्रन्थान्तर में और भी प्रकारान्तरों से 'त्रिपुरा' शब्द की निरुक्ति कही है— त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) की जननी होने से 'त्रयी' (ऋक्, यजु, साम) मयी होने से या महाप्रलय में त्रिलोकी को अपने में लीन करने से जगदम्बा 'श्रीविद्या' का त्रिपुरा नाम प्रसिद्ध हुआ।

'सङ्केत पद्धति' तथा 'वामकेश्वर-तन्त्र' में त्रिपुरा का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है— ब्रह्मा, विष्णु, ईशरूपिणी 'श्रीविद्या' के ही ज्ञान-शक्ति, क्रिया-शक्ति और इच्छा-शक्ति– ये तीन स्वरूप हैं। इच्छा-शक्ति उसका शिरोभाग है, ज्ञानशक्ति मध्यभाग तथा क्रियाशक्ति अधोभाग है। इस प्रकार उसका रूप शक्तित्रयात्मक होने से ही वह 'त्रिपुरा' कही जाती है।

त्रिपुरा

कालिकापुराण ६२वां अध्याय–

त्रीन् धर्मार्थकामान् पुरति ददासीति,
पुर अग्रगमने अत्र अग्र दाने॥

तन्त्र-मन्त्र ध्यानिका– यथा–

शृणुत त्रिपुरामूर्तं कामाख्यास्तु पूजनम्।
एतस्या मूलमन्त्रस्तु पूर्वमुत्तर-तन्त्रके॥
सुवयोरिष्टकया सम्यक् क्रमात्तु प्रतिपादितम्।
वाङ्मयं कामराजन्तु डामरेश्वेति तत्त्रयम्॥

---

[1] कल्याण– शक्तिउपासना अंक वर्ष ६१ (१९८७) पृ. २३८

सर्वधर्मार्थकामादि साधन कुण्डलीयकम्।
त्रीन यस्मात् पुरता ददयात् दुर्गा ध्याना न्महेश्वरी॥
त्रिपुरेति तत ख्याता कामाख्या कामरूपिणी।
तस्यास्तु स्नायन यादृक् कामाख्याया प्रकीर्त्तितम्॥
तेनैत्र स्थापन कुर्यात् मूलमन्त्रेण साधक।
त्रिकोण मण्डल चास्यास्त्रिपुरन्तु त्रिरेखकम्॥
मन्त्रस्तु त्र्यक्षर ज्ञेय तथा रूपत्रय पुन।
त्रिविधा कुण्डली शक्तिस्त्रिदेवानाञ्च सृष्टय॥
सर्व भय त्रय यस्मात् तस्मात्तु त्रिपुरा मता॥
दहन प्लवन कृत्वा आद्या मूर्तिं विचिन्तयेत्।
त्रिधावत्याथ हृदये ता मूर्तिं शृणु भैरव॥
सिन्दूरपुञ्ज-सकाशा त्रिनत्रान्तु चतुर्भुजाम्।
वामार्द्धे पुष्पकोदण्ड धृत्वाध पुस्तक तथा।
दक्षिणोर्द्ध पञ्चबाणानक्षमाला दधात्यध॥
चतुणा कुणपानान्तु पृष्ठेन्य कुणपान्तरम्।
निधाय तस्य पृष्ठे तु समपादेन सस्थिताम्॥
जटाजूटार्द्धचन्द्रैस्तु समाबद्धशिरोरुहाम्।
सर्वालङ्कार-सम्पूर्णा सवाङ्गसुन्दरीं शुभाम्॥
सर्वद्रविण-सदोहा सर्वलक्षणसयुताम्।
एवन्तु प्रथम ध्यात्वा त्रिधात्मानञ्च चिन्तयेत्॥

तृतीय रूप भी वैसा ही है, यानि मुद्रा का चिन्तन करते है—

वधूकपुष्पसकाशा जटाजूटेन्दुमडिताम्
सर्वलक्षण-सम्पूर्णां सर्वालकारभूषिताम्।
उद्यप्रवि पुरस्थवस्त्रा पद्मपयक सस्थिताम्॥
मुक्ता-रक्तावलीयुक्ता पीनोन्नतपयाधराम्।
वलीविभङ्गा चतुरामसिनामोदमोदिताम्॥

नेत्राह्लादकरीं शुद्धा क्षोभिणीं जगता तथा।
त्रिनेत्रा योगनिद्रा यामीषद्धास समायुताम्॥
नवयौवन सम्पन्ना मृणालाभ चतुर्भुजाम्।
वामोर्द्ध पुस्तक धत्ते अक्षमालान्तु दक्षिणे॥
वामनाभयदा दर्वी दक्षिणाधावरप्रदाम्।
प्रसुवद्रक्तसूर्याभा शिरोमालान्तु विभ्रतीम्।
आपादलम्बिनीं कल्पद्रुममासादच संस्थिताम्॥

त्रिपुर-सुन्दरी के स्थान

राजस्थान मे भगवती त्रिपुर-सुन्दरी का भव्य मंदिर बांसवाडा जिले के 'तलवाडा' ग्राम के पास स्थित 'महलय उमराई' ग्राम के पास स्थित जंगल में है। तलवाडा बांसवाडा से १८ कि मी दूर है। मंदिर की प्राचीनता के सम्बन्ध मे यद्यपि अभी तक कोई प्रमाण नहीं मिला है तथापि माता के मंदिर के पास उत्तर दिशा की ओर महाराजा कनिष्क के समय का एक शिवलिंग है, अत यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि माता का यह मंदिर सम्राट कनिष्क के समय के पूर्व का है।

उपलब्ध शिलालेखो के अनुसार माता के मंदिर का जीर्णोद्धार आज से लगभग ९०० वर्ष पूर्व स ११५७ मे पाताभाई चांदाभाई लुहार, जो पांचाल जाति के थे, द्वारा कराया गया था। मंदिर के पास ही लोहे की खान थी। पांचाल जाति के लोग इसी खान से लोहा निकालते थे। पाताभाइ चांदाभाई द्वारा मंदिर के जीर्णोद्धार के सम्बन्ध मे एक किंवदन्ती यह भी है कि एक बार माता त्रिपुर-सुन्दरी एक वृद्धा का रूप धर कर खदान के द्वार पर भिक्षाटन हेतु गई। पांचाल जाति के लोगो ने माता को भिक्षा नही दी, फलत माता उनसे रुष्ट हो गई तथा उन्हे अभिशाप दिया। खदान ढह गई। पांचाल जाति के अनेकानेक व्यक्ति खान मे दबकर मर गये। उक्त पाताभाई चांदाभाई ने माता की स्तुति की तथा माता को प्रसन्न किया। माता के प्रसन्न होने पर उसने माता के मंदिर का जीर्णोद्धार कराया। माता के मंदिर का जीर्णोद्धार १६वी शताब्दी में हुआ तथा उसके बाद समय समय पर होता रहा है। वि स १९३० मे पांचाल समाज द्वारा मंदिर पर नया शिखर चढ़ाया गया तथा इसी समाज

द्वारा वि स १९९१ में मंदिर का जीर्णोद्धार कराया गया। मंदिर का जो भव्य स्वरूप आज हमारे सामने है, वह सन् १९७७ में निर्मित हुआ।

मंदिर के गर्भगृह म माता की काले पत्थर की भव्य मूर्ति स्थापित है तथा माता की अठारह भुजाओं में विभिन्न आयुध शोभायमान है। माता की सवारी सिंह पर है। सिंह की पीठ पर अष्टदल-कमल है, जिस पर विराजमान माता का दाहिना पैर मुड़ा हुआ है तथा माता का बाया पैर श्रीयन्त्र पर है। माता की प्रतिमा के पीछे आठ देविया की छोटी-छोटी मूर्तिया भी है जो अपने-अपने वाहनों पर आसीन है तथा आयुध धारण किये हुए है। पीछे पीठ पर ५२ भैरव व ६४ योगिनिया की भव्य एव सुदर मूर्तिया अंकित है। माता की मूर्ति के दाहिनी और बाईं ओर श्रीकृष्ण तथा अन्य देवियों तथा विशिष्ट पशु अंकित है तथा देवताओ और दानवो के सग्राम की झाकी दृष्टिगत होती है।

माता के दर्शनार्थ प्राय प्रतिदिन भक्तजन आते ही रहते है किन्तु दोना नवरात्रा म यहा मेला लगता है तथा भक्तजन यहा जात-जडूले उतारने आते है।

माता के मंदिर म अखण्ड ज्योति का दीपक प्रज्ज्वलित रहता है।

महात्रिपुर-सुन्दरी पीठ[1] (प्रयाग क्षेत्र)

कानपुर परिक्षेत्र मण्डल के अन्तर्गत फर्रुखाबाद जिले के तिरवा नामक स्थान म एक चबूतर पर सगमरमर पत्थर पर बने एक विशाल श्रीयन्त्र पर भगवती त्रिपुर-सुन्दरी की सुन्दर मूर्ति बनी हुई है।

केन्द्रीय बिन्दु के ऊपर पाशाङ्कुश धनुर्वाणधरा चतुर्भुजा भगवती की बडी ही सुन्दर मूर्ति है।

जनसाधारण इसे अन्नपूर्णा मंदिर कहते है। फर्रुखाबाद म शक्तिपीठो के रूप म इसकी विशेष मान्यता है। जिले के कान्यकुब्ज (कन्नौज) नगर में भी अनेक प्राचीन शक्तिपीठ पाये जाते है। इस मंदिर का एक साधक-महात्मा के आदेशानुसार लगभग सौ-डेढ सौ वर्ष पूर्व तिरवा नरेश ने बनवाया था।

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३८७

मोरवी का त्रिपुर-सुन्दरीपीठ[१] (गुजरात)

पौराणिक महाराजमयूरध्वज के नाम पर वर्तमान मे प्रचलित मौरवी' नगर मे, नगर के बाहर पश्चिम मे ग्राम-देवता त्रिपुराबाला बहुचरा का मंदिर था। मंदिर अत्यन्त छोटा होने से पूजा-अर्चना मे असुविधा देख उसी मंदिर के समीप ही माता की प्रेरणा पर श्री कामेश्वर शर्मा की पत्नी गोदावरी ने माता का सुविशाल मंदिर बनवाया और वहा सुन्दर श्रीचक्र स्थापित किया है। इस स्थापित यन्त्र-राज के पृष्ठभाग मे अम्बिका बहुचरा, कामेश्वरी आदि के चित्र है। मंदिर के चारो ओर दश महाविद्याओ के चित्र, महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती के चित्र है। इस प्रदेश के साधक भक्तो के लिए यह महत्त्वपूर्ण उपासना-स्थली है जहा नवरात्रादि महापर्वो के अतिरिक्त वर्ष भर उनकी साधना-उपासना चलती रहती है।

कामाक्षी (शिव काची)[२]

एकाम्रेश्वर– मंदिर से लगभग दो फर्लाग पर (स्टेशन की ओर) कामाक्षी देवी का मंदिर है। यह दक्षिण भारत का सर्वप्रधान शक्तिपीठ है। कामाक्षी देवी आद्या-शक्ति भगवती त्रिपुरसुन्दरी की ही प्रतिमूर्ति है। इन्हे कामकोटि भी कहते है।

कामाक्षी मंदिर विशाल है। इसके मुख्य मंदिर मे कामाक्षी देवी की सुन्दर प्रतिमा है। इसी मंदिर मे अन्नपूर्णा तथा शारदा के भी मंदिर है। एक स्थान पर आदिशंकराचार्य की मूर्ति है। कामाक्षी मंदिर के निज द्वार पर काम-कोटि यंत्र मे आद्यालक्ष्मी विद्यालक्ष्मी सतानलक्ष्मी, सौभाग्यलक्ष्मी, धनलक्ष्मी, धान्यलक्ष्मी, वीर्यलक्ष्मी तथा विजयलक्ष्मी का न्यास किया हुआ है। इस मंदिर के घेरे मे एक सरोवर भी है।

कामाक्षी देवी का मंदिर आदिशंकराचार्य का बनवाया हुआ कहा जाता है। मंदिर की दीवार पर श्रीरूप लक्ष्मी सहित श्री चोरमहाविष्णु (जिसकी १०९ वैष्णव दिव्य देशा मे गणना है) तथा मंदिर के अधिदेवता श्रीमहाशास्ता के

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अंक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४१९
२ कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) पृ ३५६

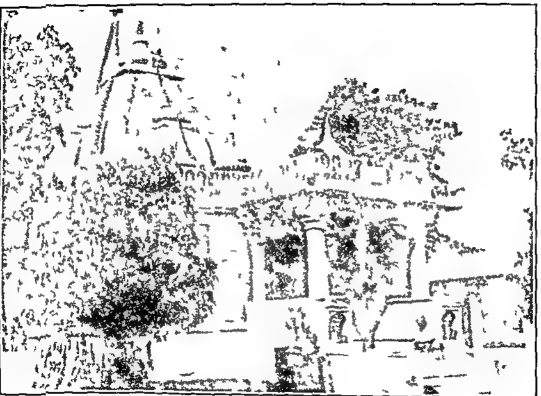
विग्रह है, जिनकी सख्या एक सो के लगभग होगी। शिव काची के समस्त शैव एव वैष्णव मदिर इस ढग से बने है कि उन सबका मुख कामकोटिपीठ की ओर ही हे और उन देव-विग्रहो की शोभायात्रा जब-जब होती है, वे सभी इस पीठ के प्रदक्षिणा करते हुए ही घुमाये जात है। इस प्रकार इस क्षेत्र मे कोटिपीठ की प्रधानता सिद्ध होती है।[1]

पारीको के निम्न अवटका की यह कुलदेवी हे—

१	जेरठा	तिवाडी
२	पापड	तिवाडी
३	पदमानिया	जोशी

१ कुछ विद्वान पदमाणिया अवटक की कुलदेवी जहाँ त्रिपुरसुन्दरी बताते है वहीं कुछ विद्वान् पदमाणिया अवटक की कुलदेव तारा भी बताते है। माता एक ही है उसका स्वरूप अलग हो सकता है। अत मान्यता एव पारिवारिक परम्परा के अनुसार कुलदेवी मानते हुए उसका पूजन करना चाहिए।





श्री त्रिपुरा सुन्दरी मंदिर – बांसवाड़ा

नारायणी : नानण : लहण माता

माँ नारायणी को देवियो का केन्द्र बिन्दु माना जाता है। मार्कण्डेय पुराण मे मधु-कैटभ वध, महिषासुर की सेना का वध, महिषासुर का सेनापतियो सहित वध, धूम्रलोचन वध, चण्ड और मुण्ड के वध, रक्त-बीज वध, निशुम्भ वध, शुम्भ वध के बाद जब देवताओ ने देवी की स्तुति की तो उन्होने देवी के समस्त रूपो मे भगवती की स्तुति की और देवताओ ने देवी से वरदान भी प्राप्त किया। उसे ही बल सम्पन्न वैष्णवी शक्ति भी माना—

त्व वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या, विश्वस्य बीज परमासि माया।
सम्मोहित देवि समस्तमतत, त्व वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतु ॥५॥[1]

वैष्णवी, भगवान् विष्णु (नारायण) की शक्ति है, यथा—

यशसा तेजसा रूपैर्नारायणसमा गुणे
शक्तिर्नारायणस्येय तेन नारायणी स्मृता।
(ब्रह्मवैवर्त्त, प्रकृति खण्ड ४५वा अध्याय)

नारायणार्द्धाङ्गभृता तेन तुल्या च तजसा।
तदा तस्य शरीरस्य तेन नारायणी स्मृता॥
(ब्र वै श्रीकृष्ण जन्मखण्ड २७वा अध्याय)

इस नारायणी शक्ति को शक्तियो का केन्द्रबिन्दु मान कर देवी की जो प्रार्थना की गई है, वह इस प्रकार है—

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ-साधिके।
शरण्य त्र्यम्बके गौरिर्नारायणि नमोस्तुते॥
(मार्कण्डेय पुराण ९१/९)

प्रार्थनापरक श्लोको का पूरा हिन्दी रूपान्तर नीचे दिया जा रहा है—

देवी के द्वारा वहा महादैत्यपति शुम्भ के मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता अग्नि को आगे करके उन कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। उस समय

---

१ कल्याण– सक्षिप्त मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ २२१

अभीष्ट की प्राप्ति होने से उनके मुखकमल दमक उठे थे और उनके प्रकाश से दिशाएं भी जगमगा उठी थीं। देवता बोले— शरणागत की पीडा दूर करने वाली देवि! हम पर प्रसन्न होओ। सम्पूर्ण जगत् की माता! प्रसन्न होओ। विश्वेश्वरि! विश्व की रक्षा करो। देवी! तुम्हीं चराचर जगत् की अधीश्वरी हो। तुम ही इस जगत् का एकमात्र आधार हो, क्योकि पृथ्वी रूप मे तुम्हारी ही स्थिति है। देवी! तुम्हारा पराक्रम अलङ्घनीय है। तुम्ही जलरूप मे स्थित होकर सम्पूर्ण जगत् को तृप्त करती हो। तुम अनन्त बलसम्पन्न वैष्णवी-शक्ति हो। इस विश्व की कारणभूता परा-माया हो। देवी! सम्पूर्ण विद्याएँ तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप है। जगत् मे जितनी स्त्रियाँ है वे सब तुम्हारी ही मूर्तियां है। जगदम्बे! एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है? देवी! जब तुम सर्वस्वरूप स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हो, तब इसी रूप मे तुम्हारी स्तुति हो गयी। तुम्हारी स्तुति के लिए इससे अच्छी उक्तियां और क्या हो सकती है? बुद्धिरूप से सब लोगो के हृदय मे विराजमान रहने वाली तथा स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली नारायणी देवी! तुम्हे नमस्कार है। कला, काष्ठा आदि के रूप से क्रमश परिणाम (अवस्था परिवर्तन) की ओर ले जाने वाली तथा विश्व का उपसहार करने मे समर्थ नारायणी! तुम्हें नमस्कार है। नारायणी! तुम सब प्रकार का मगल प्रदान करने वाली मगलमयी हो। कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रो वाली एव गौरी हो। तुम्हें नमस्कार है। तुम सृष्टि का पालन और सहार की शक्तिभूता, सनातनी देवी, गुणों का आधार तथा सर्वगुणमयी हो। नारायणी! तुम्हे नमस्कार है। शरण में आये हुए दीनो एव पीड़ितो की रक्षा मे सलग्न रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवी! तुम्हे नमस्कार है। नारायणी! तुम ब्रह्माणी का रूप धारण करके हसो से जुते हुए विमान पर बैठती तथा कुश-मिश्रित जल छिडकती रहती हो। तुम्हे नमस्कार है। माहेश्वरी रूप से त्रिशूल, चन्द्रमा एव सर्प को धारण करने वाली तथा महान् वृषभ की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवी! तुम्हे नमस्कार है। मोरो और मुर्गों से घिरी रहने वाली तथा महाशक्ति धारण करने वाली कौमारीरूपधारिणी निष्पापे नारायणी! तुम्हें नमस्कार है। शख, चक्र, गदा और शार्ङ्गधनुषरूप उत्तम आयुधो को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणी!

तुम प्रसन्न होओ। तुम्हे नमस्कार है। हाथ मे भयानक महाचक्र लिये और दाढो पर धरती को उठाये वाराहीरूपधारिणी कल्याणमयी नारायणी! तुम्हें नमस्कार है। भयकर नृसिहरूप मे दैत्यो के वध के लिए उद्योग करने वाली तथा त्रिभुवन की रक्षा म सलग्न रहने वाली नारायणी! तुम्हें नमस्कार है। मस्तक पर किरीट और हाथ मे महावज्र धारण करने वाली, सहस्र नेत्रा के कारण उद्दीप्त दिखायी देने वाली और वृत्रासुर के प्राणो का अपहरण करने वाली इन्द्रशक्तिरूपा नारायणी देवी! तुम्हे नमस्कार है। शिवदूतीरूप से दैत्यों की महती सेना का सहार करने वाली भयकर रूप धारण तथा विकट गर्जना करने वाली नारायणी! तुम्हे नमस्कार है। दाढो के कारण विकराल मुखवाली मुण्डमाला से विभूषित मुण्डमर्दिनी चामुण्डारूपा नारायणी! तुम्हे नमस्कार है। लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि तथा महा-अविद्यारूपा नारायणी! तुम्हे नमस्कार है। मेधा, सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा), भूति (ऐश्वर्यरूपा), बाभ्रवी (भूरे रग की अथवा पार्वती), तामसी (महाकाली), नियता (सयमपरायणा) तथा ईशा (सबकी अधीश्वरी), रूपिणी नारायणी! तुम्हे नमस्कार है। सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकार की शक्तिया से सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे देवी! सब भयो से हमारी रक्षा करो, तुम्हे नमस्कार है। कात्यायनी! यह तीन लोचनों से विभूषित तुम्हारा सौम्य-मुख सब प्रकार के भयो से हमारी रक्षा करे। तुम्हे नमस्कार है। भद्रकाली! ज्वालाओं के कारण विकराल प्रतीत होन वाला, अत्यन्त भयकर और समस्त असुरो का सहार करन वाला तुम्हारा त्रिशूल भय से हमे बचाये। तुम्हे नमस्कार है। देवी! जो अपनी ध्वनि से सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करके दैत्यो के तेज का नष्ट किये देता है, वह तुम्हारा घटा हम लोगा की पापो से उसी प्रकार रक्षा करे, जेसे माता अपने पुत्रो की बुरे कर्मो से रक्षा करती है। चण्डिके! तुम्हारे हाथों में सुशोभित खड्ग, जो असुरों के रक्त और चर्बी से चर्चित है, हमारा मगल करे। हम तुम्हे नमस्कार करते है। देवी! तुम प्रसन्न होने पर सब रोगो को नष्ट कर देती हो और कुपित होने पर सभी कामनाओ का नाश कर देती हो। जो लोग तुम्हारी शरण मे जा चुके है, उन पर विपत्ति तो आती ही नही। तुम्हारी शरण मे गये हुए मनुष्य दूसरो को शरण देने वाले हो जाते है। देवी! अम्बिके! तुमने अपने स्वरूप को अनेक भागों म विभक्त करके नाना प्रकार के रूपो से जो इस समय इन धर्मद्रोही महादैत्यों का सहार किया

है, यह सब दूसरी कौन कर सकती थी ? विद्याआ में ज्ञान को प्रकाशित करने वाले शास्त्रो मे तथा आदिवाक्यो (वेदो) म तुम्हारे सिवा और किसका वर्णन है तथा तुमको छोड़कर दूसरी कौन ऐसी शक्ति है, जो इस विश्व को अज्ञानमय घार अन्धकार से परिपूर्ण ममतारूपी गढे म निरन्तर भटका रही हो ? जहाँ राक्षस, भयकर विषवाले सर्प, शत्रु, लुटरा की सेना और जहा दावानल हो, वहा तथा समुद्र के बीच में भी साथ रहकर तुम विश्व की रक्षा करती हा। विश्वेश्वरी' तुम विश्व को धारण करती हो। विश्वरूपा हो, इसलिए सम्पूण विश्व को धारण करती हो। तुम भगवान् विश्वनाथ की भी वदनीया हो। जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारे सामने मस्तक झुकाते है, वे सम्पूर्ण विश्व को आश्रय देने वाले बन जाते हे। देवि' प्रसन्न होओ। जैसे इस समय असुरों का वध करके तुमने शीघ्र ही हमारी रक्षा की है, उसी प्रकार सदा हमे शत्रुओं के भय से बचाओ। सम्पूर्ण जगत् का पाप नष्ट कर दो और उत्पात एव पापों के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले महामारी आदि बडे-बडे उपद्रवो को शीघ्र दूर करो। विश्व की पीडा दूर करनेवाली देवी' हम तुम्हारे चरणो मे पडे हुए है, हम पर प्रसन्न होओ। त्रिलोकनिवासियो की पूजनीया परमेश्वरी' सब लोगो का वरदान दो।

देव्युवाच

वरदाह सुरगणा वर यन्मनसेच्छथ।
त वृणुध्व प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ।।३७।।

देवी बोलीं– देवताआ' मै वर देने का तैयार हू। तुम्हार मन म जिसकी इच्छा हो, वही वर माँग लो। ससार के लिये उस उपकारक वर को मै अवश्य दूगी।

सर्वाबाधाप्रशमन त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ।।३९।।

देवता बोले– सर्वेश्वरि' तुम इसी प्रकार तीनो लोकों की समस्त बाधाओ को शात करो और हमार शत्रुओं का नाश करती रहो।

शाकम्भरीति विख्याति तदा यास्याम्यह भुवि।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्य महासुरम् ।।४९।।

/

दुर्गा देवीति विख्यात तन्मे नाम भविष्यति।
पुनश्चाह यदा भीम रूप कृत्वा हिमाचले॥५०॥
रक्षासि भक्षयिष्यामि मुनीना त्राणकारणात्।
तदा मा मुनय सर्वेस्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तय ॥५१॥
भीमा देवीति विख्यात तन्मे नाम भविष्यति।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधा करिष्यति॥५२॥
तदाह भ्रामर रूप कृत्वाऽसख्येयषट्पदम्।
त्रैलोक्यस्य हिताथाय वधिष्यामि महासुरम्॥५३॥
भ्रामरीति च मा लोकस्तदा स्तोष्यन्ति सर्वत ।
इत्थ यदा कदा बाधा दानवोत्था भविष्यति॥५४॥
तदा तदावतीर्याह करिष्याम्यरिसक्षयम्॥ॐ॥५५

देवी बोलीं– देवताओ! वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाईसवें युग मे शुम्भ और निशुम्भ नाम के दो अन्य महादैत्य उत्पन्न होगे। तब म नदगोप के घर मे उनकी पत्नी यशोदा के गर्भ से अवतीर्ण हो विध्याचल मे जाकर रहूगी और उक्त दोनो असुरो का नाश करूगी। फिर अत्यन्त भयकर रूप से पृथ्वी पर अवतार ले, मै वैप्रचित्त नाम वाले दानवो का वध करूगी। उन भयकर महादैत्यो का भक्षण करते समय मेरे दाँत अनार के फूल की भाति लाल हो जायेगे। तब स्वर्ग में देवता और मर्त्यलोक मे मनुष्य सदा मेरी स्तुति करते हुए मुझे 'रक्तदन्तिका' कहेगे। फिर जब पथ्वी पर सौ वर्षो के लिय वर्षा रुक जायगी और पानी का अभाव हो जायेगा, उस समय मुनियो के स्तवन करने पर मै पथ्वी पर अयोनिजा रूप मे प्रकट होऊगी और सौ नेत्रो से मुनियों की ओर देखूगी। अत मनुष्य 'शताक्षी' इस नाम से मेरा कीर्तन करेगे। देवताओ! उस समय मै अपने शरीर से उत्पन्न हुए शाको द्वारा समस्त ससार का भरण-पोषण करूगी। जब तक वर्षा नही होगी, तब तक वे शाक ही सबके प्राणो की रक्षा करेगे। ऐसा करने के कारण पथ्वी पर 'शाकम्भरी' के नाम से मेरी ख्याति होगी। उसी अवतार म मै दुर्गम नामक महादैत्य का वध भी करूगी। इससे मेरा नाम 'दुर्गादेवी' के रूप मे प्रसिद्ध होगा। फिर मैं भीमरूप धारण करके मुनियो की रक्षा के लिये हिमालय पर रहने वाले राक्षसो का भक्षण करूगी। उस समय सब मुनि भक्ति से नतमस्तक होकर मेरी स्तुति करेगे। तब मेरा

नाम 'भीमादेवी' के रूप मे विख्यात होगा। जब अरुण नामक दैत्य तीनों लाको मे भारी उपद्रव मचायेगा तब मै तीनो लोको का हित करने के लिय छ पैरोवाले असख्य भ्रमरो का रूप धारण करके उस महादेत्य का वध करूगी। उस समय सब लोग 'भ्रामरी' के नाम से चारा ओर मेरी स्तुति करेगे। इस प्रकार जब-जब ससार म दानवी बाधा उपस्थित होगी, तब-तब अवतार लेकर मै सहार करूगी।

नारायणी मे शक्ति के इक्यावन पीठों मे, जहाँ सती के अग गिरे थे, उसमें सती के ऊपर के दाँत जहा गिरे उसके मबध मे निम्न कथानक आता है[1]–

शुचि- यहाँ सती के ऊर्ध्वदत' (ऊपर के दाँत) गिरे थे। यहा सती नारायणी' और शकर को सहार' या ' सकूर'' कहते है। तमिलनाडू मे तीन महासागरो के सगम-स्थल कन्याकुमारी से तेरह कि मी दूर 'शुचिन्द्रम्' मे स्थाणु शिव का मदिर है, उसी मदिर मे यह शक्ति पीठ है।[2]

नानण[3]– इस माता का स्थान ग्राम नाद है, जो जग प्रसिद्ध तीर्थस्थान पुष्कर (अजमेर) से ९ कि मी पश्चिम मे पहाडिया के नीचे सुरम्य वन आच्छादित स्थान पर अवस्थित है।

माता का मदिर ऊपर पहाड पर है। माता के दर्शनार्थ जान हेतु मदिर तक सीढियाँ बनी हुई है, मदिर के भोपा (सेवायत) के अनुसार सीढियो की सख्या ७७५ है।

इस माता को निम्न नामा से भी भक्त लोग पूजते है—

१ नदराय
२ वैष्णवमाता
३ नानण माता
४ ब्रह्माणी माता
५ नदराणी
६ नदा सरस्वती देवी (सरस्वती नदी के पास होने से माता को इस नाम से भी जाना जाता है।)

---

१ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१(१९८७) पृ ३७४
२ माता क दर्शनार्थ लखक ि ३ १ १९९९ का शुचिन्द्रम गया। साथ थ ि शाभित व माहित।
३ लखक ि्नाक २८ ७ १९९९ का माता क दर्शनार्थ गया था साथ थ ि शाभित तिवाडी व श्री भगवानसहाय नी पारीक खडीवाल।

इस मंदिर म वर्तमान म सगमरमर की दो मूर्तिया विराजमान है, एक मूति कालका माता की हे तथा दूसरी मूर्ति ब्रह्माणी माता की है। सगमरमर की दोनो मूतियाँ लगभग ५०० वर्ष पूर्व मदिर म स्थापित की गई थी। इसके पूर्व यहाँ काले पत्थर की काली माता एव ब्रह्माणी की मूर्तिया थी, जो लगभग २००० वर्ष पुरानी बताई जाती है। ये दोना प्राचीन मूर्तिया पहाड पर स्थित मदिर से लाकर नीचे पहाड की तलहटी म एक छाटे मदिर में स्थापित कर दी गई है। इन दोनो मूर्तिया के पास ही दा अन्य मूर्तिया, जो इन मूर्तियो से बडी है, तथा कालिका एव ब्रह्माणी क्री ही बताई गई, अपेक्षाकृत इन मे भी पुरानी बताई गइ है।

माताए चतुर्भुजी हैं– दोनो माताये कालका एव ब्रह्माणी चतुर्भुजी है।

नानन माता के हाथा मे त्रिशूल, तलवार, चक्र, आयुध है तथा चौथा हाथ वरदमुद्रा (आशीर्वाद) के रूप मे है। माता की सवारी सिह पर है।

कालका माता क हाथा म खप्पर, तलवार, त्रिशूल एव चौथे हाथ मे चोटी पकडे हुए नरमुण्ड की है। माता की सवारी भैसे पर है।

मासिक मेला

शुक्ल पक्ष की हर अष्टमी को गॉव क एव आसपास के भक्त माता की पूजा अर्चना करते है। इस दिन ग्रामवासी कोई काम नहीं करते, यहॉ तक कि जो नौकरी करते ह वे भी उस रोज अवकाश लेकर माता की पूजा-अर्चना करते है। खेत खलिहान मजदूरी आदि सभी कार्य इस दिन स्थगित रहते है। माता के मदिर के रास्त म ग्रामवासी पानी की व्यवस्था करते है, इस प्रकार की जिम्मेदारी ग्राम का कोई व्यक्ति स्वेच्छा से लेता है।

नवरात्रा में मेला

माता के यहॉ चैत्र एव आश्विन मास के दोनो नवरात्रा म मेला भरता है, जिसमे न केवल आसपास के भक्त अपितु दूरस्थ स्थाना के भक्त भी माता के दर्शनार्थ एव जात-जडूले उतारने आते है। यात्रियो के सुख-सुविधा हेतु ग्रामवासी पूर्णत जागरूक रहते हे। नवरात्राओं मे नौ दिन तक यात्री आते रहत है।

माता के क्षेत्र म १०-१२ बीघा का ओरण भी बताया गया।

माता के वर्तमान भोपे श्री रामपालजी है इनका परिवार ही प्रारम्भ से माता की सेवा पूजा करता आया है। इनके योग-क्षेम हेतु गाँववालो ने इन्हें कृषि-भूमि मय कुए के दे रखी हे।

माता के मदिर मे अन्य मूर्तिया

पहाडी पर स्थित माता के मदिर मे अन्य मूर्तिया भी है यथा-

(१) यहाँ एक अष्टकोणीय शिवलिग है, जो लगभग पॉच हजार वर्ष पुराना बताया जाता हे। इस शिवलिग म बभूत जैसे निशान होने से इसे बभूत-माता भी कहा जाता है। ऐसी मान्यता है कि इसकी सेवा अर्चना करने से आदमी के बभूत (शरीर पर सफेद निशान) मिट जाते है।

(२) यहाँ श्रीकृष्ण भगवान् की लेटी हुई मुद्रा मे एक अत्यन्त प्राचीन मूर्ति है। इन्ह कामदेव भी कहत है, ग्रामवासियो के अनुसार यह कन्हैया का ग्रामीण सबाधन है।

(३) शिवजी का मदिर है। इस शिव मदिर के सबध म ऐसी मान्यता है कि ब्रह्माजी ने जब पुष्कर मे यज्ञ किया था, तब इस शिव लिग की स्थापना तथा शिवमदिर का निमाण कराया गया था।

भोग

ब्रह्माणी माता के मीठा भोग यथा नारियल, मिठाई आदि का लगता है जबकि काली (कालका) माता के मदिर के भोग के अतिरिक्त बकरे की बलि भी चढाई जाती है। बकरे की बलि ऊपर पहाड़ी पर नही दी जाती, अपितु पहाडी की तलहटी मे निर्मित छोटे मदिर के सामने, जहाँ माता की पुरानी मूर्तियाँ विराजमान हे, दी जाती है।

मदिर निर्माण की कहानी

माता की प्राचीन मूर्तिया जो पहाड़ी के नीचे मदिर में विराजमान है, वहाँ पहले केवल चबूतरा था तथा ४-५ फुट ऊची दीवार थी बाद म एक भक्त एव ग्रामवासियो के जनसहयोग स माता के मदिर पर पट्टिया डाल दी

गई और अभी १९९८ मे ही माता के मदिर पर शिखर का निर्माण भी एक भक्त एव ग्रामवासियो के सहयोग से निर्मित किया गया है।

माता का मूल मदिर जो पहाडी शिखर पर है, उसका निमाण पुष्कर बसने के समय का बताया जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि मदिर का निमाण लगभग पॉच-साढे पॉच हजार वर्ष पूर्व हो गया था। मदिर निर्माण के सबध मे ऐसी किवदति है कि माता के मदिर निर्माण हेतु निर्माण-सामग्री यथा चूना-पानी आदि रात्रि का पहाड क नीचे एकत्रित किया जाता था और चमत्कारी रूप से वह समस्त सामग्री प्रात पहाडी चोटी पर जहाँ माता के मदिर का निर्माण कार्य चल रहा था, पहुचा जाती थी।

प्राचीनता

नाद क्षेत्र मे ब्रह्माजी ने यज्ञ वेदी बनाई थी तथा उस समय भी इसका नाम नदनस्थान' था, पोराणिक कथा के अनुसार चन्द्रन नदी के उत्तर, सरस्वती नदी क पश्चिम नदन स्थान के पूर्व तथा कनिष्क पुष्कर क दक्षिण के मध्यवर्ती क्षेत्र को यज्ञवेदी बनाया। इस यज्ञवेदी मे उन्होंने ज्येष्ठ पुष्कर, मध्यम पुष्कर तथा कनिष्ठ पुष्कर ये तीन पुष्कर तीर्थ बनाये। ब्रह्मा के यज्ञ मे सभी देवता तथा ऋषिगण पधारे। ऋषियो ने आसपास अपने आश्रम बना लिये। भगवान् शकर भी कपालधारी बनकर पधारे।

नाद ग्राम नदा का अपभ्रश है। यह स्थान उतना ही पुराना है जितना पुष्कर क्षेत्र मे ब्रह्माजी द्वारा कराया गया यज्ञ। पद्म पुराण के अनुसार 'चन्द्रननदी के उत्तर प्राची सरस्वती तक और नदन नामक स्थान स पूर्व क्रम्य या कल्पनामक स्थान तक जितनी भूमि है, वह सब पुष्कर तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। 'इस क्षेत्र म भगवान् ब्रह्मा सदा निवास करते है। (माता ब्रह्माणी का मदिर नाद गाँव के पहाडी शिखर पर हजारो वर्ष पुराना है) यह वही क्षेत्र है, जहाँ ऋषिमुनि ज्ञानी, तप, तपस्या करत रहते हे। 'पुष्कर तीर्थ मे सरस्वती नदी सुप्रभा, काञ्चना, प्राची, नदा और विशाला नाम से प्रसिद्ध पाच धाराओं में प्रवाहित होती है।' पुष्कर क्षेत्र में यज्ञ समाप्ति के पश्चात् सरस्वती नदी 'अदृश्य होकर वहाँ से पश्चिम दिशा की ओर चली। पुष्कर से थोड़ी ही दूर जाने पर एक खजूर का वन मिला, जो फल और फूलों से सुशोभित था, सभी ऋतुओं क पुष्प

उस बनस्थली की शोभा बढा रहे थे, यह स्थान मुनियों के भी मन को मोहने वाला था। वहाँ पहुच कर नदियो मे श्रेष्ठ सरस्वती देवी पुन प्रकट हुई। वहाँ क नदा' नाम से तीना लोको म प्रसिद्ध हुई।

इसी नदा नदी के नाम से ग्राम नाद (नदा) प्रसिद्ध है तथा ब्रह्माणी, कालका माताए, ग्राम नाद मे विराजमान होने से ग्राम के नाम से भी "नानण" माता के नाम से जानी जाती है।

सरस्वती नदी का नदा नाम पडने का इतिहास

पद्मपुराण म बडे विस्तार से यह प्रसग दिया गया है कि सरस्वती नदी के नाम नदा नदी किस पकार हुआ। इसका कथानक इस प्रकार बताया गया कि किसी समय पथ्वी पर प्रभञ्जन नामक एक प्रसिद्ध एव शक्तिशाली राजा हुए। एक दिन जब वे शिकार खलने गये तो बन म एक मृगी को अपने बाण का निशाना बना दिया। आहत मगी ने राजा की ओर देखकर कहा, अरे मूर्ख! यह तूने क्या किया ? एक निरपराध अबला को, जो अपने नवजात शिशु को स्तन पान करा रही हो, उस तूने वज्र के समान बाण का निशाना बनाया है। तेरी बुद्धि खोटी है, मै तुझे शाप देती हू कि तू कच्चा माँस खाने वाली पशु-योनि से जन्म लेगा। जा तू इस कण्टकाकीर्ण वन मे व्याघ्र हो जा' मृगी का शाप सुनकर मृगी के सामने खडा राजा थरथर कॉपने लगा और आर्त स्वर म हाथ जोडकर मृगी से बोला- हे कल्याणी! मुझे यह नही मालूम था कि तुम नवजात शिशु को दूध पिला रही थी, मुझसे अनजाने मे ही यह महा-अपराध हो गया- 'मने तुम्हारा वध किया है, इसके लिए मै क्षमा प्रार्थी हू, हे दया की सागर! तुम मुझ पर प्रसन्न होओ। हे करुणामयी! मुझ पर इतनी ता कृपा करो कि म पुन मानव योनि म आऊ, वह समय भी मुझे बताओ तथा इस शाप से उद्धार की अवधि बताने की कृपा करो। राजा का आर्त-स्वर सुनकर मृगी बाली- राजन् आज स सौ वर्ष बीतने पर यहाँ नाद नाम की एक गाय आवेगी, उसक साथ तुम्हारा वार्तालाप होने पर मेरे द्वारा दिये शाप का अत हो जावेगा।

मृगी क शाप से राजा प्रभञ्जन व्याघ्र हो गये। उसकी आकृति बड़ी भयानक थी। इस व्याघ्र योनि में रहकर वह मृगों, अन्य चौपायों व मनुष्यो को भी मार मार कर खान लगा। वह यह चिंतन करता रहा कि मेरी जीवन-वृत्ति

हिंसा की हो गई, अब कब पुन मै मानव देह धारी बनूगा और किस प्रकार व कब इस मृगी की शाप मुक्त होने की बात सत्य होगी।

सौ वर्ष पश्चात् एक दिन गौओ का एक झुण्ड इधर से निकला। उसमें नदा नामक एक गाय उन सबकी पथ प्रदर्शक थी, वह धीर, गभीर स्वाभाव की थी। एक रोज वह अपने झुण्ड से बिछुड कर जगल मे चली गई जहाँ वही व्याघ्र था। उसने हृष्ट-पुष्ट गाय को देखकर कहा, 'अहा आज मुझे अनायास ही भोजन मिल गया' और वह गाय की ओर बढ़ा। व्याघ्र को देखकर नदा नामक गाय थर-थर काँपने लगी। उसने बड़े आर्त एव विभीत-भाव से व्याघ्र से कहा- हे व्याघ्रराज! मै नवजात प्रसूता हू, मैंने अभी एक बछड़े को जन्म दिया है, आप कृपा कर मुझ पर इतनी दया करे कि मुझे इतने समय का अवकाश दे दे कि मै अपने नवजात शिशु को स्तनपान करा आऊ तथा उसकी देखभाल हेतु अपनी सहेलियो को सभला आऊ। व्याघ्र ने कहा मै इतना मूर्ख नहीं कि आये हुए भोजन को छोड़ दू। तब नदा गाय ने पुन कहा मै ईश्वर को साक्षी रखकर कहती हू कि मै अपने बछड़े को दूध पिलाकर आ जाऊगी। यदि मै न आऊ तो मुझे वही पाप लगे जो ब्राह्मण तथा माता-पिता का वध करने से होता है, सोते हुए प्राणी को मारने से होता है। व्याघ्र ने इस पर विश्वास कर कहा, 'अब तुम जाओ। पुत्रवत्सले! अपने पुत्र को देखो, दूध पिलाओ उसका मस्तक चूमकर माता, भाई, सखी, स्वजन एव बधु, बाधवों का दर्शन करके सत्य को आगे रखकर शीघ्र ही यहाँ लौट आओ।'

नदा नामक वह गाय बड़ी सत्यवादिनी थी। व्याघ्र से आज्ञा ले वह अपने झुण्ड म आयी। माँ को आती देख बछडा पुलकित हो उठा, माता के पास जाकर जब उसने अपनी माता की आँखों मे आसू देखे तो उसने पूछा हे माता! आप उदास क्यो है? क्या कारण है? गाय ने सारी बात बताते हुए कहा, 'वत्स मै व्याघ्र से वादा करके आई हू कि तुम्हे स्तनपान करवाकर उसके पास जाऊ, यह अपनी अतिम मुलाकात है।' फिर नदा गाय ने अपनी सहेली गायों से कहा- मेरे पुत्र का तुम सभी ध्यान रखना। आज से तुम ही इसकी माता हो। यह कहकर नदा गाय अपने झुण्ड से विदा लेकर व्याघ्र के पास चली गई। उसके पीछे उछलता कूदता वह बछड़ा भी आ गया। माता ने उसे पुन लौट जाने को कहा- तब बछडे ने कहा माता बिना माता

के पुत्र का जीना व्यर्थ है। इतने में व्याघ्र आ गया उसे अपने पूर्व जन्म की घटनाओं का स्मरण होने लगा। गाय ने उसके सामने जाकर कहा- हे व्याघ्र राज! मै अपने वायदे के अनुसार आपके समक्ष आ गई हू, अब आप दयाकर, मुझे अपना भोजन बनाये। व्याघ्र ने कहा तुम बडी सत्यवादी निकली अन्यथा कौन मौत के मुह म वापिस आता है? व्याघ्र ने गाय से पूछा तुम्हारा नाम क्या है? गाय ने अपना नाम नदा बताया । नदा नाम सुनते ही व्याघ्र ने उसे प्रणाम किया तथा तत्काल ही वह व्याघ्र-योनि से मुक्त होकर पुन राजा के रूप म परिवर्तित हो गया।

इसी समय सत्य भाषण करने वाली यशस्विनी नदा का दर्शन करने के लिए साक्षात् धर्म वहा आये और इस प्रकार बोले- 'नदे! मै धर्म हू, तुम्हारी सत्यवाणी से आकृष्ट होकर यहाँ आया हू। तुम मुझसे कोई भी श्रेष्ठ वर मागलो' धर्म के ऐसा कहने पर नदा ने यह वर मागा- 'धर्मराज आपकी कृपा से मै पुत्र सहित उत्तम पद को प्राप्त होऊ तथा यह स्थान मुनियो को धर्म प्रदान करने वाला शुभ तीर्थ बन जाये। देवश्वर! यह सरस्वती नदी आज से मेरे ही नाम से प्रसिद्ध हो- इसका नाम नदा' पड़ जाय। आपने वर देने को कहा, इसलिए मैने यही वर मागा है' तभी से इसका नाम नदा हो गया।

चमत्कार

यो तो माता के अनेकानेक चमत्कार है, जो माता के भक्तो को माता ने दिये है। उन में से एक चमत्कार का सक्षिप्त कथानक इस प्रकार है—

पटवा जाति के सभी पुरुष कही से आ रहे थे। रात्रि हो जाने के कारण, स्त्री, पुरुष इस ग्राम के पास रुक गये। रात्रि को चोर ने आकर इनका माल चोर लिया तथा पुरुष की तलवार से हत्या कर सिर व धड़ को अलग-अलग कर भाग गये। स्त्री अपने पति की मृत्यु से विलाप करने लगी तभी माता एक वद्धा के रूप म प्रकट होकर इस स्त्री के पास गई तथा उसके रोने एव विलाप करने का कारण पूछा। स्त्री द्वारा समस्त घटना बताने पर माता ने उस स्त्री को कहा, 'तेरे पति के शरीर पर चादर ओढा दे तथा उसका सिर धड से लगा दे।' स्त्री ने माता के बताये अनुसार अपने पति का सिर, धड से लगा दिया। रात्रि का समय था। पुरुष की चोटी बडी थी, अत धड़ लगाते

समय चोटी का कुछ भाग पीछे की ओर न रहकर गले पर भी लटका हुआ रह गया। माता के चमत्कार से धड से सिर का स्पर्श होते ही वह व्यक्ति जीवित हो उठा। कुछ समय पश्चात् माता पुन प्रकट हुई तथा उनका चोरी गया सामान उन्हे दिया। माता क हाथ म चोर का सिर था जिसकी चोटी पकड़े हुए माँ थी। कहते है चोर का वह सिर चोटी पकड़े हुए माता के हाथ म है। यह घटना दो हजार वर्ष पुरानी बताई गई।

पटवा जाति क लोग माता की मान्यता रखते है तथा माता की सेवा पूजा करने हेतु आते है। जिनम फुलेरा के पटवा प्राय आते ही रहते है। ऐसा भी बताया गया कि प्राय पटवा जाति क लोगों के गले के सामने कुछ बालो का गुच्छा सा जन्म से ही रहता है। जो उनके पूर्व पुरप के गले के सामने धड़ एव सिर को जोड़ते समय रह गया था।

ग्राम की नववधु की जात

राजपूत एव ब्राह्मण समुदाय मे शादी के बाद नववधु को सर्वप्रथम आशीर्वाद लेने हतु माता के मदिर मे ले जाया जाता है। माता के ढोक देने के बाद ही अन्य धार्मिक काय एव रीति रिवाज सम्पन्न कगये जाते है।

देवी के अन्य स्थान

(१) नारायणी का पीठ स्थान सुपार्श्व कहा गया है, यथा—

नारायणी सुपार्श्वे तु त्रिकुटे भद्रसुन्दरी।
(देवी भागवत ७/३०/६६)

नारायणी माता का एक प्रतिहारकालीन देवालय दौसा-अलवर मार्ग पर टेहला ग्राम से १२ मील पर (अलवर जिले मे) स्थित है। राजोरगढ की ऊची पर्वत-शृखलाओ मे ऊचे पर्वतो स आच्छादित इस रमणीक स्थान मे एक प्राकृतिक जल-स्रोत के तट पर मदिर म शिवलिग स्थापित है। मदिर के सामने निर्मित कुड मे उक्त स्रोत का जल आकर सग्रहीत होता है। यह मदिर मूल रूप मे ८वीं शताब्दी का है। मदिर की प्राचीनता का प्रमाणित करने के लिए इस मदिर मे बारह प्रतिमाओ के साथ सिहो की दो प्रतिमाएँ ही व्यवस्थित रही है।

पूर्वाभिमुख इस मंदिर मे सभा-मण्डप के दोनों पार्श्वों में दो लघु प्रतिमाएँ स्थापित हे, जिन पर सिन्दूर चर्चित है। गर्भगृह के बाहर की दोनों प्रतिमाएं शिव की है। उत्तर दिशा की ओर की अर्द्धपर्यङ्कासन मुद्रा में शिव प्रतिमा नन्दी पर आसीन है, जिसके एक हाथ मे त्रिशूल और दूसरे में पुष्प है। दक्षिण पार्श्व की अर्द्धपर्यकासनस्थ मुद्रा मे प्रतिष्ठित शिव के एक हाथ मे डमरू है ओर दूसरा हाथ जघा पर टिका है।

गर्भगृह मे नदी पर आरूढ उमामहेश्वर की भव्य प्रतिमा है। चतुर्हस्त शिव प्रतिमा के एक हाथ मे त्रिशूल, दूसरे मे पुष्प, एक मे कोई अस्पष्ट आयुध और एक हाथ उमा (पार्वती) के स्तन पर अवस्थित बताया गया है। शिव अर्धपर्यङ्कासन मुद्रा मे नन्दी की पीठ पर आगे की ओर आरूढ है और पार्वती उनके पीछे एक ओर पॉव लटकाये आरूढ है। पार्वती का मुख शिवजी की ओर है। प्रतिमा मे केश-विन्यास तथा अग-प्रत्यगो की रचना अत्यन्त मनोहर हुई है।

मदिर के मण्डावर भाग मे मध्यस्थ प्रमुख भाग मे गणेश आदि उभय पार्श्वो म स्थित मूर्तिया म से एक मे शिव की प्रतिमा है। दूसरी ओर की प्रतिमा सभवत पार्वती की हो-जा सिन्दूर से चर्चित हो जाने से स्पष्ट नहीं है। शिव प्रतिमा के एक हाथ म पुष्प है– दूसर हाथ का आयुध अस्पष्ट है। प्रतिमा के पृष्ठ भाग मे पर्ण-लता है। अधो-भाग मे नन्दी और शिव उत्कीर्ण है। शिव के एक हाथ मे त्रिशूल है और दूसरा हाथ जघा पर अवस्थित दर्शाया गया है।

पृष्ठ भाग मे स्थित प्रतिमात्रय म से मध्य म ताक मे अपन हाथों म त्रिशूल और बीजपूर लिये अर्द्धपर्यकासन मुद्रा म शिव प्रतिष्ठित है जिनके दोनों ओर परिचारक उत्कीर्ण है। वही मयूर पर आरूढ स्कन्द कार्त्तिकेय की प्रतिमा भी अवस्थित है, जिसके एक हाथ मे दण्ड है और दूसरा हाथ जघा पर रखा है।

उत्तर पार्श्व म स्थित तीन रथिकाआ में से मध्यस्थ रथिका म पार्वती की चतुर्हस्त प्रतिमा है जिसके एक हाथ म त्रिशूल ओर दूसरे म कोई फूल प्रदशित है। अन्य हाथ रिक्त है। इनके दोनो पार्श्वो म नन्दी पर आसीन शिव की प्रतिमाएँ हे।

रथिकाओ मे स्थित इन प्रतिमाओ मे मध्य की ताको मे स्थित प्रतिमाएँ बाहर उत्कीर्ण की गई है। शेष के साथ उनके वाहन है। सभी प्रतिमाएँ अर्धपर्यकालीन है।

नाई जाति के लोग इसको अपनी जाति का तीर्थ मानते है– सभवत नाम साम्य ही इसका प्रमुख कारण है। उन्होने मदिर का जीर्णोद्धार कराकर इसको नया ही रूप दे दिया है।

(२) पारीको के रावों की पोथियो मे नारायणी माता का स्थान टोडा भीम तालाब के पापड पर बताया गया है।

(३) तन्त्रचूडामणि मे ५१ शक्तिपीठो मे नारायणी का पीठसहार (सक्रूर नामक भैरव के साथ शुचीन्द्रम मे बताया गया है, जो कन्यकुमारी से ८ मील दूर स्थित है। यथा—

'सहाराख्य ऊर्ध्वदते देवी नारायणी शुचौ'।

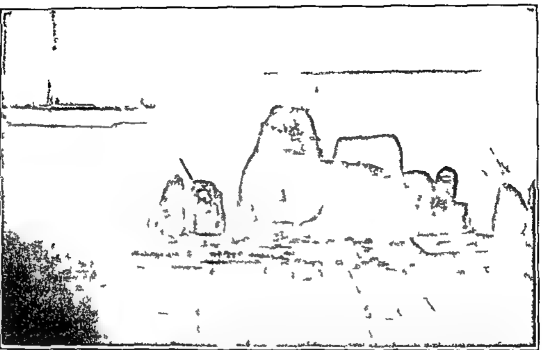
यहा भगवती का ऊर्ध्वदत गिरा था।

(४) टोडा रायसिह मे अम्बा तालाब पर नारायणी माता का मदिर है।

पारीको के केसोट (पुरोहित) व गार्ग्य (मिश्र-बोहरा) अवटको की यह कुलदेवी है।

- कहीं कहीं गार्ग्य की कुलदेवी ललिता भी बताई गई है।
- भवाल माता (दधि– चतुर्भुजी माता) की कालिका माता का भी लाहणा/लहण माता कहते हैं।
- कुछ विद्वान् इस माता के स्वरूप को ललिता के रूप मे भी मानते है।

□□□



नानन माता (नॉद–पुष्कर)
पहाडी के नीचे मदिर मे स्थित माता ब्रह्माणी व कालिका की प्राचीनतम प्रतिमाये

परा. पराख्या: पाडोखा: पडाय: पाडला: पाढा माता पाण्डोख्या: पाण्डुक्या माता

परा शब्द अनेक अर्थो का वाची है। भावप्रकाश-पूर्वखण्ड- प्रथम भाग मे 'परा' शब्द वन्ध्याकर्कोटकी के अर्थ म प्रयुक्त हुआ है जो कफ का शमन करने वाली, व्रणशोधिनी, सर्पदर्पहारिणी तथा विसप विप का हरण करने वाली है। दूसरा अलकार कौस्तुभ मे मूलाधार से उदित प्रथम भाव को परा सज्ञा दी गयी है। काशीखण्ड (२९।१०६) के अनुसार पूरयति सागर भक्तमनोरथव्रेति व्युत्पत्य गङ्गा अर्थ है। (१२।६।९०) के अनुसार परा गायत्री को कहते है। यथा परानन्दा प्रकृष्टाथा प्रतिष्ठा पालकी परा पार्वती को कहते है– यथा पार्वती परमोदारा परब्रह्मात्मिका परा।'

परा, पराख्या, पाडोखा, पडाय, पाडला, पाढा माता के नाम से जिस माता की मान्यता है, वह माता डीडवाना से १२ कि मी दूर नमक की खान पर है। जहॉ माता की दा मूर्तिया हे। पहली मूर्ति बालिका के रूप म व दूसरी मूर्ति महिपासुर-मर्दिनी के रूप म। माता का एक मदिर डीडवाना नगर मे भी बनाया गया है, जिससे भक्तो को दूर न जाना पडे।

पण्डोख्या व पाण्डुक्या, नाम से पूजित माता का स्थान मेडता सिटी से पश्चिम मे ६ कि मी दूर, मेडता रोड से पूव की ओर ९ कि मी की दूरी पर पाण्डोराई स्थान पर अवस्थित है। इस माता का रूप भी महिपासुर-मर्दिनी का हे।

दोनो माताओ का स्वरूप महिपासुर-मर्दिनी का है अत माताओ के केवल नाम भेद एव स्थान भेद का ही अतर है। पाठको एव भक्तो की सुविधा हेतु दोनो स्थानो पर विराजमान माताओ का विवरण परामाता की सामान्य जानकारी के बाद अलग-अलग दिया जा रहा है।

महामाया पराविद्या–जगद रचियित्री महामाया पराविद्या[१]

महामाया हरेश्चैषा तया सम्मोह्यते जगत्।
ज्ञानिनामपि चेतासि दवी भगवती हि सा॥

बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति।
तया विसृज्यते विश्व जगदेतच्चराचरम्॥
(दुर्गा-सप्तशती १ /५५७६)

'जिसके द्वारा सम्पूर्ण जगत् मोहित हो रहा है, वह भगवान् विष्णु की महामाया है। वह महामाया देवी भगवती ज्ञानियो के चित्त को भी बलपूर्वक आकर्षित कर मोह में डाल देती है। उसी के द्वारा यह सम्पूर्ण चराचर जगत् रचा गया है।'

पराशक्ति सर्वपूज्य और आराधनीया है—

आराध्या परमा शक्ति सर्वैरपि सुरासुरै ।
नात परतर किचिदधिक भुवनत्रये॥
सत्य सत्य पुन सत्य वेदशास्त्रार्थनिर्णय ।
पूजनीया परा शक्तिर्निर्गुणा सगुणाथवा॥
(श्रीमद्देवी भागवत १/८६-८७)

'सभी देवता और दानवो के लिए ये चिन्मयी परमाशक्ति ही आराधना करने योग्य है। तीनो लोको में भगवती से बढ़कर अन्य कोई भी नही है। यह बात सत्य है। वेद ओर शास्त्रो का यही सच्चा तात्पर्य-निर्णय है कि निर्गुण अथवा सगुणरूपा चिन्मयी पराशक्ति ही पूजनीया है।'

पराशक्ति प्रकृति

वेद के अद्वैत सिद्धान्त के अनुसार एक ब्रह्म से भिन्न कुछ भी नहीं है। सारे ब्रह्माण्ड मे इस विश्व-प्रपञ्च की स्थिति-सहारकारिणी विश्वेश्वरी महामाया प्रकृति पराशक्ति भी उस एक पर-ब्रह्म का पृथक् नाममात्र ही है। ब्रह्म, ईश्वर, विराट् पुरुष और ब्रह्म शक्ति या ईश्वरी— ये भेद सब उस महामाया पराशक्ति की महिमा को प्रकट करने वाले वैभव के समर्थक नाम रूप है। प्रकृति ईश्वर है और ईश्वर पराशक्ति प्रकृति है।

पराशक्ति का स्वरूप एव ध्यान [१]

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुण-सरोजाधिरूढा-कराब्जै।
पाश कोदण्डमिक्षूद्भवमणिगुणमप्यङ्कुश पञ्च बाणान्॥

---

१ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३१८

विभ्राणासृक्कपाल त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या-
देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्ति परा न ॥

जो रक्तसागर मे स्थित पोत-सदृश उत्फुल्ल लाल कमल पर स्थित रहती है, कर कमलों में पाश, ईख का धुनुष, त्रिशूल, अकुश, पञ्चवाण और रुधिरयुक्त कपाल धारण करती है, तीन नेत्रों से सुशोभित है, स्थूल स्तनों से युक्त है और सूर्य-सदृश वर्णवाली है, वे परा देवी प्राणशक्ति हम लोगों क लिए सुखकारी है।

पराशक्ति के विभिन्न रूप [२]

भारत के प्राचीन ऋषि-मुनि इस जगत् के वैचित्र्य के कारणा तथा तात्त्विक स्थिति को जानने के प्रयत्न मे जी-जान से लग गये। फलस्वरूप उन्हें यह ज्ञात हुआ कि यह विश्व विभिन्न स्तर की शक्तियो से सम्पन्न जड-वस्तुओं से भरा पडा है। एक ही पराशक्ति इन सभी मे विभिन्न मात्रा म भरी है। यही नही, इसी पराशक्ति ने विभिन्न जड वस्तुआ के भी रूप धारण कर लिये ह और यही सजीव वस्तुओं मे जीव के रूप में विलसित होती है।

आधुनिक विज्ञान जा चद शताब्दी पूर्व तक जड एव चेतन शक्ति का अलग-अलग मानता था, इसे स्वीकार न कर सका। पर अब वह भी भारतीय ऋषि-मुनियों के इस तत्त्व का 'राम-राम' करता हुआ स्वीकार करता है और घोपित करता है कि शक्ति जड के रूप में परिणत हो सकती है।

इस पराशक्ति की दो मुख्य स्थितियाँ है— निगुणा एव सगुणा। निगुण स्थिति में वह परिपूर्ण ज्ञानस्वरूपिणी एव कृपासमुद्ररूपिणी है। इसी न ज्ञान एव कृपा का एक अश हममे विकसित हुआ है। अतएव प्रत्येक में ज्ञान-कोप बहुत है, प्रम भी उसी पराशक्ति के आज्ञारूप है। वेद तो हर एक का अलग-अलग कतव्य निर्धारित करता है। उन सब कतव्यों को निभाना पड़ता है। एसा निभाने से ही पराशक्ति की सत्यस्थिति का ज्ञान सकत है। यही सत्य निम्नलिखित गीता-वाक्य म भी वताया जाता है—

'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानव

---

१ कल्याण–शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३३

२ कल्याण–शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३०

कर्तव्य पूरा करने मे निमग्न मन, जो स्वभावत ही चचल है, कभी द्वेष एव क्रोध से भर जाता है। अत स्वीकार्य प्रसन्नता और प्रेम के बहिष्कार्य से द्वेष का होना अनिवार्य है। तो भी व्यावहारिक स्थिति तक इन भावनाओं को स्थगित कर प्रेम की भावना को बढाना चाहिये। पहले तो यह असाध्य मालूम पडगा। परतु कर्तव्य को पूरा कर और उसे पराशक्ति को अर्पित कर, तो यह सुलभ-साध्य हागा।

एस अपण करने से सुदृढ आधार बनेगा, पराशक्ति क विभिन्न सगुणरूपो मे— जिसमे जिसका मन विशेष लगता हो, उसम सुदृढ लगाना चाहिये। श्रीदुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि इसी पराशक्ति के विद्यमान रूप आप है। श्रीशिवजी, भगवान् विष्णु, श्रीगणपतिदेव, श्रीकार्तिकेय, श्रीसूर्यनारायण के रूपो म भी यह शक्ति विद्यमान है। भगवान श्री आदिशकराचार्य जी के निम्नलिखित वाक्य म इसी तत्त्व का उल्लेख है—

शिव शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्त प्रभवितु
न चेदेव देवो न खलु कुशल स्पन्दितुमपि।

अस्तु, हम अपनी कतव्यपरायणता के रूप म पराशक्ति की पूजा करे एव सतुष्ट हो। दातृ-शक्ति तो पराशक्ति ही हे, हमारी तो केवल स्वीकरण करने की ही है। पराशक्ति से हमारी प्रार्थना है कि चाहे शरीर तक की भावना सीमित कर द्वेत-भाव ही दे द, पर आप सतुष्ट हा। चाहे कैलाश वैकुण्ठ, मणिद्वीप आदि लोको मे नित्य उसका आनन्दानुभव किया जाय, पर आप सतुष्ट हो अथवा चाहे अपने म ही लीन कर अद्वैत स्थिति मे कर लें पर आप सतुष्ट हो। यही हम सबका कर्तव्य है।

वास्तव म हमारा कर्तव्य तो कोई अभिलाषा किये बिना सर्वशक्ति की किसी-न-किसी स्वरूप म भक्ति करना ही है। हमे जो मिलता है, उससे सतुष्ट रहकर उनकी सेवा म तत्पर रहना उच्चस्तर की उपासना है—

यदृच्छालाभसतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सर ' इत्यादि।

श्री दुर्गा-सप्तशती की सक्षिप्त कथा [१]

पराशक्ति के तीन चरित्र— दूसर मनु के राज्याधिकार म 'सुरथ' नामक एक चैत्रवशीय राजा हुए थे। जब शत्रुओं और दुष्ट मत्रियों ने उनका राज्य,

खजाना और सेना सभी कुछ छीन लिया, तब वे शांति पाने के लिए मेधा ऋषि के आश्रम में पहुचे। इसी बीच उस आश्रम में राजा सुरथ की समाधि नामक एक समदु खी वैश्य से भेट हुई। राजा और वैश्य दोनों मेधा ऋषि के निकट पहुचे और उन्हे नमनकर पूछा— 'महाराज! कृपा करके बताइये कि जिन विषयों मे दोष देखकर भी ममतावश हम दोना का मन उनमें लगा रहता है, क्या कारण है कि ज्ञान रहते हुए भी ऐसा मोह हो रहा है?'

ऋषि से कहा— 'राजन्! ज्ञानियो के चित्तों को भी महामाया बलात् खीचकर मोहग्रस्त बना देती है। यह सुनकर राजा ने उन महामाया देवी के विषय म प्रश्न किया। तब ऋषि ने कहा— 'वे भगवती नित्य है और उन्होंने सारे विश्व को व्याप्त कर रखा है। जब वे देवा के कार्य के लिए आविभूत होती है, तब उन्हे 'उत्पन्ना' कहा जाता है।' राजा के पूछने पर ऋषि ने उन्हें पराशक्ति के तीन चरित्र बताये, जो इस प्रकार है—

प्रथम चरित्र— जब प्रलय के पश्चात् शेषशय्या पर योगनिद्रा मे निमग्न भगवान् विष्णु के कर्ण-मल से मधु और कैटभ नाम के असुर उत्पन्न हुए और वे श्रीहरि के नाभि-कमल पर स्थित ब्रह्मा को ग्रसने के लिए उद्यत हो गये, तब ब्रह्मा ने भगवती योगनिद्रा की स्तुति करते हुए उनसे तीन प्राथनाए की— १ भगवान् विष्णु को जगा दीजिए, २ उन्ह दोना असुरो के सहारार्थ उद्यत कीजिए और ३ असुरा को विमोहित कर श्रीभगवान् द्वारा उनका वध करवाइये।' तब भगवती ने ब्रह्मा को दशन दिया। भगवान् योगनिद्रा से उठकर असुरों से युद्ध करने लग। दोना असुरा ने योगनिद्रा द्वारा मोहित कर दिये जाने पर भगवान् से वर मागने को कहा। अन्त म उसी वरदान के अनुसार वे भगवान् विष्णु के द्वारा मारे गये।'

मध्यम चरित्र— प्राचीनकाल म महिष नामक एक महाबली असुर ने जन्म लिया। वह अपनी अदम्य शक्ति से इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, यम, वरुण, अग्नि, वायु तथा अन्य सभी देवों को पराजित कर स्वय इन्द्र बन बैठा और सभी देवा को स्वग से निकाल दिया। स्वर्ग सुख से वचित देव मत्युलोक म भटकने लगे। अन्त म उन लोगों ने ब्रह्मा के साथ भगवान् विष्णु और

---

१ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३१

शिव के निकट पहुचकर अपनी कष्ट-कथा कह सुनायी। देवों की करुण-कहानी सुनकर हरि-हर के मुख से एक महान् तेज निकला। तत्पश्चात् ब्रह्मा, इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, यमादि देवों के शरीर से भी तेज निकले। वह तेज एकत्र होकर एक दिव्य देवी के रूप म परिणत हो गया।

विधि, हरि और हर त्रिदेवा ने तथा अन्य प्रमुख देवा ने उस तेजोमूर्ति को अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र प्रदान किये। तब देवी अट्टहास करने लगी, जिससे त्रैलोक्य काप उठा। उस अट्टहास को सुनकर असुरराज सम्पूर्ण असुरों को साथ लेकर उस शब्द की ओर दौड़ पड़ा। वहाँ पहुचकर उसने उग्र स्वरूपा देवी को देखा। फिर तो वे सभी असुर देवी से युद्ध करने लगे। भगवती और उनके वाहन सिंह न कई कोटि असुरो का विनाश कर दिया। भगवती के हाथो असुर के पन्द्रह सेनानी— चिक्षुर, चामर, उदग्र, कराल, वाष्कल, ताम्र, अन्धक, असिलामा, उग्रास्य, उग्रवीर्य, महाहनु, विडालास्य, महासुर, दुर्धर और दुर्मुख आदि मारे गये। तब महिषासुर महिष, हस्ती, मनुष्यादि का रूप धारणकर भगवती स युद्ध करने लगा और अन्त म मारा गया।

अपन समग्र शत्रुओ के मारे जाने पर आह्लादित हो देवो ने आद्याशक्ति की स्तुति की, और वर मागा कि 'हम लोग जब-जब दानवों द्वारा विपद्ग्रस्त हों, तब-तब आप हमे आपदाओ से विमुक्त करे तथा इस चरित्र को पढने सुनने वाला प्राणी सम्पूर्ण सुख-ऐश्वर्य से सम्पन्न हो जाए।' 'तथास्तु' कहकर देवी ने देवो को इप्सित वरदान दिया और स्वय तत्काल अन्तर्धान हो गयी।

उत्तर चरित्र— पूर्वकाल मे शुम्भ और निशुम्भ नामक दो महापराक्रमी असुर हुए। उन्होंने इन्द्र का राज्य और यज्ञों का भाग तक छीन लिया। वे दोनो सूर्य, चन्द्र, कुबेर, यम, वरुण, पवन और अग्नि क अधिकारो क अधिपति बन बैठे। तब देव शोकग्रस्त हो मर्त्यलोक म आये और हिमालय पर पहुचकर करुणार्द्र हृदय से प्रार्थना करने लगे। भगवती पार्वती प्रगट हुईं। उन्होंने देवा से पूछा— 'आप लोग किसकी स्तुति कर रहे है?' इसी समय देवी के शरीर से 'शिवा' निकली और कहने लगी— 'शुम्भ-निशुम्भ से पराजित होकर स्वर्ग से निकाले गये ये इन्द्रादि देव मेरी स्तुति कर रह है।' पार्वती के शरीर से निकलने के कारण अम्बिका कौशिकी' कहलायी। उनके निकल जाने से पार्वती कृष्णवर्णा हो गयी तथा काली' नाम धारण कर हिमालय पर रहने लगीं।

इधर परमसुन्दरी अम्बिका को शुम्भ-निशुम्भ के भत्य चण्ड-मुण्ड ने देखा तो दोनो ने जाकर शुम्भ से उनके अतुल सौन्दर्य की प्रशसा की। भृत्यो की बात सुनकर शुम्भ ने सुग्रीव नामक असुर को अम्बिका को ले आने के लिए भेजा। सुग्रीव ने भगवती के पास पहुचकर शुम्भ-निशुम्भ के ऐश्वर्य और शौर्य की प्रशसा करते हुए उनसे परिग्रह (विवाह) की बात कही। देवी ने उत्तर दिया— 'जो मुझे सग्राम मे पराभूत करके मेरे बल-दर्प को नष्ट करेगा, उसी को मे पति-रूप मे स्वीकार करूगी, यही मेरी अटल प्रतिज्ञा है।' सुग्रीव ने शुम्भ-निशुम्भ के निकट पहुच कर भगवती अम्बिका की प्रतिज्ञा विस्तारपूर्वक कह सुनायी। असुरेन्द्रों ने कुपित होकर देवी को बाल पकडकर खीच लाने के लिए धूम्रलोचन असुर को भेजा, किन्तु दवी ने तो हुकार मात्र से ही उसे भस्म कर दिया।

पश्चात् असुरराज ने भारी सेना के साथ चण्ड-मुण्ड नामक असुरो को भगवती कौशिकी को पकड लाने के लिए भेजा। वे वहा भगवती को पकडने का प्रयत्न करने लगे। तब उनके ललाट से एक भयानक काली देवी प्रकट हुई। उन्होने सारी असुर-सेना का विनाश कर दिया और चण्ड-मुण्ड का सिर काटकर वे अम्बिका के पास ले आयी। इसी कारण उनका नाम 'चामुण्डा' पडा। चण्ड-मुण्ड का वध सुनकर असुरेश ने सात सेनानायको को भगवती से युद्ध करने के लिए भेजा। उस समय ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, वराह, नृसिह, कार्तिकेय— इन सात प्रमुख देवो की शक्तिया असुर-सेना के साथ युद्ध करने के लिए पहुची। फिर अम्बिका के शरीर से एक भयकर शक्ति निकली, जो लोक मे शिवदूती नाम स विख्यात हुई। उसने ईशान को शुम्भ-निशुम्भ के पास भेजकर कहलवाया कि यदि तुम लोग अपना कल्याण चाहते हो तो देवताओ के लोक और यज्ञाधिकार उन्हे लौटाकर पाताल मे चले जाओ।

बलोन्मत्त शुम्भ-निशुम्भ देवी की बात की अवहेलना करके युद्धस्थल में सेना सहित आ डटे। भगवती ने देव-शक्तियों की सहायता से असुर-सैन्य का सहार प्रारम्भ कर दिया, तब असुर-सेनाध्यक्ष रक्तबीज, भगवती और देवशक्तियों से युद्ध करने लगा। उसके शरीर से जितने रक्तबिन्दु भूमि पर गिरते थे उतने ही रक्तबीज उत्पन्न हो जाते थ। अन्त म देवी ने चामुण्डा को आज्ञा दी कि वह अपने मुख का विस्तार कर रक्तबीज के शरीर के रक्त को अपने मुख

म ले ले और इस तरह उन नये असुरा का भक्षण कर डाले। चामुण्डा ने ऐसा ही किया ओर भगवती ने उस असुर का सिर काट डाला। तत्पश्चात् निशुम्भ भगवती से युद्ध करने लगा और मारा गया।

अब शुम्भ ने क्रोधित होकर अम्बिका से कहा— 'तू दूसरे का बल लेकर अभिमान कर रही है?' भगवती ने उत्तर दिया— ससार मे मै एक ही हू। ये समस्त मेरी विभूतिया है। ये मुझसे ही उत्पन्न हुई है और मुझमे ही विलुप्त हो जायेगी।' इसके बाद् सातो शक्तिया देवी के शरीर मे प्रविष्ट हो गयीं और शुम्भ भी देवी के कौशल से मारा गया। देवगण ने हर्षित होकर अम्बिका की स्तुति की। अन्त म प्रसन्न होकर देवी बोली— 'ससार का उपकार करने वाला वर मागिये।' देवा ने कहा— 'जब जब हमारे शत्रु उत्पन्न हों आप उनका नाश कर हमे आश्वस्त कर?' भगवती आद्या शक्ति ने 'एवमस्तु' कहा और भविष्य म सात बार भक्तरक्षार्थ अवतार लेने की कथा तथा दुर्गाचरित्र के पाठ का महात्म्य वर्णन कर वे अन्तर्धान हो गयी।

उपसहार— भगवती की उत्पत्ति और प्रभाव के तीन चरित्र सुनाकर मेधा ऋषि ने राजा सुरथ और समाधि वैश्य को भगवती की उपासना का आदेश दिया। दोनों ने कठोर उपासना की। अन्त मे देवी ने प्रकट होकर राजा को उनका राज्य वापस मिलने तथा वैश्य को ज्ञान-प्राप्ति का वरदान दिया। उस वरदान के प्रभाव से राजा सुरथ सूर्य से उत्पन होकर सावर्णि मनु हो गये।

देवी कुमारी की तपस्या और प्रतिष्ठा [१]

पराशक्ति के सम्बन्ध म एक कथानक निम्न प्रकार भी मिलता है—

हजारा वर्ष पहले भरत नामक एक राजर्षि हमारे देश का शासन करते थे। उस राजा के एक पुत्री ओर आठ पुत्र थे। पुत्री का नाम था कुमारी। बुढापे के कारण राजा भरत ने सारी सम्पत्तिया को अपनी सतानों मे बाट दिया। तब कन्याकुमारी का वर्तमान भू-भाग कुमारी के जिम्मे आ गया। उस दिन से इस स्थान का नाम कन्याकुमारी बन गया। पुराण मे प्रस्ताव है कि देवी पराशक्ति यहा तपस्या करने आयी थी और परशुराम के परिश्रम से तब देवी

---

१ कन्याकुमारी ल वी मीणा पृ ६

की प्रतिष्ठा यहा स्थापित हो गयी। मदिर के कुछ शिलालेखो से यह मालूम होता है कि पाड्य राजाओ के काल मे ही उस प्रतिष्ठा को वहा से हटाकर समुद्र तट के इस मदिर मे रख दिया गया।

दक्षिण भारत मे कन्याकुमारी के साथ पराशक्ति की कहानी निम्न प्रकार से कही जाती है, जिसमें वाणासुर वध का प्रसग है[१]---

'वेद' हिन्दुओ के लिए बहुत ही प्रधान धर्मशास्त्र है। वेद चार है– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। ऋग्वेद काशी की महिमा को कहता है। यजुर्वेद कन्याकुमारी के महत्त्व को बताता है।

कश्यप प्रजापति शोनितपुर का राक्षस राजा था। उनके बाण, मूक, शुभ और महिष नाम के चार असुर पुत्र थे। इन चारो में बाणासुर ने कठिन तपस्या करके परमेश्वर से 'अमरत्व' का वर पाया था। लेकिन उसने ऐसा वर प्राप्त नही किया था, जो कि किसी कन्या के हाथो से नही मरेगा।

उस वर के घमड से वह देवी-देवताओं और नर-नारियो पर बहुत अत्याचार करने लगा। उस समय ससार मे असुरो का अत्याचार बहुत बढ गया था। धर्म घटने और अधर्म बढने लगा। स्त्रियो का पातिव्रत धर्म असुरो के द्वारा नष्ट होने लगा।

लोग वर्णाश्रम-धर्म का पालन नही कर सके। मदिरो मे पूजा-पाठ चल नही सका। पथ्वी माता का बल इन अत्याचारो से एकदम घट गया। इसलिए वह जाकर ब्रह्मदेव से अपने हाल का वर्णन करने लगी। लेकिन ब्रह्मदेव ने सुनकर एकदम कह दिया कि मै कुछ भी नही कर सकता। उसके बाद वे दोनो मिलकर शख-चक्र-गदा-पद्मधारी श्रीविष्णु भगवान् के पास पहुचे। पृथ्वी माता गाय का रूप धारण कर चली थी। उसी समय देवता और मुनीश्वर सब मिलकर भगवान से प्रार्थना कर रहे थे।

उस समय भगवान महाविष्णु ने कहा कि बाणासुर का वध करना आसान काम नही है। यह काम पराशक्ति महामाया द्वारा ही हो सकता है। पराशक्ति को प्रसन्न करने के लिए एक बडा यज्ञ कीजिए। उस यज्ञाग्नि में आप लोगों

---

१ कन्याकुमारी– सुचीन्द्रम महिमा पृ ४८

की अपनी-अपनी शक्ति को होम-आहूति में प्रदान करना होगा। उसी समय उस होम कुण्ड से एक ज्योतिर्मय देवी मूर्ति स्त्री प्रगट होगी, उसके द्वारा ही आप लोगो का कल्याण होगा। उस होम कुण्ड से आने वाली देवी का नाम 'चितग्नि-कुण्ड सम्भूता' रखकर प्रार्थना कीजिए।

भगवान की एसी आज्ञा पाकर सब देव वापस आ गये, सबन मिलकर महायज्ञ' करना शुरू कर दिया। भगवान के कहे अनुसार उस होम-कुण्ड स पराशक्ति देवी का उद्गम हुआ। वह देवी दक्षिण समुद्र के तट पर आकर तपस्या करने लगी। धीरे-धीरे देवी बड़ी हो गयी और विवाह के योग्य होने पर विवाह के लिए सब तरह के प्रबन्ध होने लगे।

यह बात जब नारद मुनि को मालूम हुई तब वे बडी चिन्ता मे पड गये। उन्होने सोचा कि अगर देवी का विवाह पूरा हो जायेगा तो बाणासुर का वध नही हो सकेगा। इस तरह सोचकर नारद मुनि पराशक्ति के पास पहुचे और देवी को प्रणाम करते हुए कहने लगे-- 'हे दुष्टो के नाश करने वाली लोक माता, आपके विवाह के लिए व्यवस्था करना बिल्कुल सही है, परन्तु आपको असुरा के माया जाल में फसे बिना अपने कार्य को पूरा करना चाहिए। इसलिए आपसे विवाह करने के लिए आने वाले परमेश्वर से, 'आख न होने वाला नारियल' गाठ न होने वाला गन्ना और नस न होने वाला पान' इन तीना को सूर्योदय होन से पहले ला देने की आज्ञा कीजिए। अगर वे उस आज्ञा को पूरा कर सके तो विवाह पूरा हो जायेगा।

नारद मुनि के कहे अनुसार शक्ति ने भी परमेश्वर को आज्ञा दी। जब परमेश्वर उन तीनो को लेकर आ रहे थे तब नारद मुनि एक मुर्गी का रूप लेकर 'सुचिन्द्रम्' से कन्याकुमारी को आने वाले रास्ते मे वक्कम् पारै' नाम की जगह पर खड होकर मुर्गी की तरह बोलने लगे।

जब यह आवाज परमेश्वर के कानो मे पडी तब वे एकदम स्तम्भित हो गये। उनके मन में यह बात आई कि अब सवेरा हो गया है। इतनी देर के बाद हमारा वहा जाने से कोई फायदा नही है और हमारा विवाह भी रुक जायेगा। इस तरह सोचते-सोचते वे सुचिन्द्रम में ही स्तम्भित होकर खड़े हो गये और वही पर स्थाणु-मूर्ति बन गये। इसलिए इधर विवाह भी रुक गया

और विवाह के लिए जितने सामान तैयार किये गये थे वे सब पत्थर या बालू बनकर नष्ट होने लगे। उन कई रग वाले बालू को हम आज भी कन्याकुमारी के समुद्र के पास देख सकते है। इसके अलावा मंदिर के आगन म एक बहुत बडा बर्तन पत्थर बनकर विराजमान है। इसको आज भी हम अपनी आखो से देख सकते है।

बाणासुर का वध

तीनो लोका का दमन करके राज्य करने वाले बाणासुर के दूत 'दुर्मुख', 'मूक' आदि दक्षिण दिशा म तपस्या करने वाली देवी को देखकर बाणासुर के पास गये ओर उस देवी के सौदर्य के बारे मे वर्णन किया। उनकी बात सुनकर बाणासुर भी देवी के मोह म पड़ गया और सीधे उसके पास जाकर अपने मन की बात कहने लगा। बाणासुर की बात सुनकर देवी ने कहा– 'अगर तुम मुझसे विवाह करना चाहते हो, तो पहले मुझसे लडो और युद्ध मे हराकर ही मुझे पा सकते हो?' इतना कहकर पगशक्ति युद्ध करने को तैयार हो गई। दोनो के बीच घमासान लडाई होने लगी। उस समय बाणासुर को मदद देने के लिए मूक भी युद्ध म शामिल हो गया।

इसी समय पर देवी ने भद्रकाली की सृष्टि करके मूक के साथ युद्ध करने के लिए उसको भेज दिया। मूक भद्रकाली को उठाकर ले जा रहा था लेकिन उसका मूकाबिका नाम की भद्रकाली ने उसी जगह सहार कर दिया। उस जगह पर आज भी उसके चिह्न के रूप में एक त्रिशूल विद्यमान है। इसके बाद बाणातीर्थ की जगह पर बाणासुर का वध हुआ। सब देव और देवता प्रसन्न होकर पुष्पवर्षा करने लगे। उस समय जब बाणासुर मरणासन्न पडा था तब वह देवी से प्रार्थना करने लगा, 'हे। अखिल ब्रह्माण्ड चराचरो की जननी। मरे सब अपराधो को क्षमा करके मुझे सद्गति प्रदान कीजिए। इसके अलावा मेरे मरणस्थान पर एक पवित्र तीर्थ घाट बनाकर उसमें स्नान करने वालो को गगा स्नान का फल प्राप्त होने दीजिए।' देवी ने भी उसकी इच्छा के अनुसार वर दिया और उसके मरण स्थान पर बाण-तीर्थ स्थापित करके लोगो मे यह खबर पहुचाई कि हर साल 'आषाढ की अमावस्या' के दिन जो लोग यहा आकर इस तीर्थ मे स्नान करके अपने पितृ कर्मों को करगे, वे सब गगा-स्नान

का महापुण्य और सद्गति प्राप्त कर सकते है। आज भी हर वर्ष आषाढी अमावस्या के दिन लोगा के झुण्ड के झुण्ड यहा आकर इस तीर्थ मे स्नान करके सद्गति पाते है।

बाणासुर के नाश के बाद देवी यहा आकर हाथ म जयमाला लिए तपस्या करती दीखती थी। देवी की सखी भद्रकाली उसके मदिर के उत्तर मे अग्रहार के बीच मे एक सुन्दर मदिर म बडी प्रसन्नता से रहती थी। उसके मदिर के पास जो तीर्थ है उसको भद्रकाली तीर्थ' कहते है। मदिर के अदर पूजा के पानी के लिए शूल से चट्टान को छेदने से पानी निकला हुआ था, उसी को आज भी देवी के अभिषेक और मदिर की आवश्यकताओ के काम म लाते है।

इस तीर्थ स्थान को गगा के समान मर्यादा दी है। पानी लाने के लिए पानी की गहराई तक सीढिया है। इस सीढी द्वारा नीचे आकर के पुरोहित मडली जब अति आश्चर्यजनक ढग से जल लाती है, तब उसको देखकर सचमुच ही आश्चर्य होता है।

पराशक्ति ही विभिन्न नामो से लोक म पूजी जाती हे, परा, पराट्या, पडाय, पाडला, पाढा, पाडाखा, पाण्डाख्या, पाण्डुक्या। माता क दो मदिर है। एक मदिर डीडवाना मे है जहा माता परा, पराट्या पाडाखा, पड़ाय, पाडला व पाढा आदि नामा स पूजी जाती है। माता का दूसरा मदिर पाण्डाराई स्थान पर है, जहा माता पण्डोरट्या, पाण्डुक्या नाम स पूजी जाती है। इन दोना माताओ क स्थान पर लेखक ने जाकर माता के दर्शन की जानकारी प्राप्त की है, जिसका विवरण निम्न प्रकार ह—

पाढा माता के मदिर का निर्माण वि स ९०२, वार गुरुवार आसोज सुदी ९ को मकराना म हुआ। माता का स्थान नमक की खान पर है, जो डीडवाना से १२ कि मी की दूरी पर है। *वाया मारवाड बालिया स्टेशन स* २ कि मी की दूरी पर है।

माता के प्रगट होन एव मदिर निर्माण का कथानक इस प्रकार है कि माता मदिर प्रागण म स्थित कैर के पेड म से प्रगट हुई। वि स ९०२ मे यह स्थान पूर्णत जगल था यहा गाय चरने आती थी। उन गायो म भैसा

नामक सेठ की गाय भी जगल मे चरने आती थी और कैर के पेड के नीचे बैठा करती थी। सायकाल जब गाय जाती तो पाढा माता कन्या के रूप मे उस गाय का दूध पी जाती। यह क्रम बहुत दिना तक चलता रहा। एक दिन सेठ ने ग्वाले को कहा कि गाय का दूध कोन निकाल लेता है, ग्वाले द्वारा अनभिज्ञता प्रकट करने पर सेठ ने इस तथ्य की जानकारी करने हेतु ग्वाले को हिदायत दी। सायकाल ग्वाले ने देखा कि कैर के पेड से एक कन्या आई ओर उसने गाय के थनो से दूध पीया। ग्वाले ने जो देखा वह यथावत् उसने सेठ को कह सुनाया। सेठ ने ग्वाले के कथन को सही नही माना तो ग्वाले ने कहा आप स्वय इसकी जाच कर ले। एक दिन सेठ स्वय सायकाल उस स्थान पर गया, जहा बालिका द्वारा गाय के थनों से दुधपान की बात ग्वाले ने बताई थी। सेठ यह दृश्य देखकर अचम्भित रह गया जब एक कन्या कैर के पेड मे से प्रगट हुई ओर गाय के थना से दुधपान करने लगी। सेठ तत्काल उस स्थान पर गया और उस बालिका से पूछा, 'तू कौन है? तू दूध पीती है तो कोई बात नही, यदि तेरी मुक्ति नही हुई तो वह बता, मै विधि-विधानपूर्वक तेरी मुक्ति कराऊगा।' तब उस कन्यारूपी भगवती ने कहा— हे सेठ! मे कोई अलाय-बलाय नहीं हू, अपितु आदि-शक्ति हू। मै अब प्रगट होऊगी। मेरे प्रगट होने का समय आ गया हे। तू मेरा मदिर बना। सेठ द्वारा आर्थिक रूप से अपने को असमर्थ बताने पर माता ने भैसा सेठ से कहा— 'तू तेरा घोडा दौडा, पीछे मुडकर मत देखना। तेरा घोडा जहा तक दोडेगा वहा तक चादी की खान हो जावेगी।' सेठ ने माता के आदेशानुसार अपना घाडा दौडाया। कुछ समय बाद कैर का पेड फटा, धरती धूजी, भूकम्प आया। भयकर आवाज को सुनकर एव भूकम्प आने पर सेठ ने सोचा— उस कन्या की माया से यह सब कुछ हो रहा है। सेठ घबरा गया ओर वह आवाज सुनकर पीछे की ओर देखने लगा— सेठ देखता है कि माता प्रगट होकर वही रह गई। सेठ के पीछे मुडकर देखने के कारण माता का आधा पाव धरती मे ही रह गया। यह सब देखकर सेठ माता के प्रभाव को जान गया तथा उसे पूर्णविश्वास हा गया कि कन्यारूपी माता चमत्कारी है। वह आद्याशक्ति है। सेठ तत्काल लौटकर माता के पास आया। उसने माता का प्रणाम किया। उसे यह विश्वास हा गया था कि माता का कहा हुआ अटल है, वह टल नही सकता। अत

उसने प्रार्थना की– हे माता! यदि इस क्षेत्र को तुमने चादी का बना दिया तो लोग उसे लूट लेंगे, अत आपकी यदि मुझ पर कृपा ही है, तो मुझे ऐसी चीज दो जिस बिना भय के मै और मेरी आस-औलाद उसका उपयोग एव उपभोग कर सके एव उससे जीविकोपार्जन भी कर सके। माता ने कहा ऐसा ही होगा और उसने चादी की खान के स्थान पर उस स्थान को कच्ची चादी की खान (नमक की खान) बना दी। तब से यहा नमक की खान है।

माता के यहा मेला चैत्र के नवरात्रो म भरता है जो चैत्र सुदी एकम से चौदस तक चलता है। माता को चोला, वर्ष मे दो बार चैत्र एव आसोज के नवरात्रा के बाद चौदस को चढाया जाता है। माता के सात्विक उजला भोग यथा लापसी, चावल, चूरमा आदि का लगता है।

माता के मदिर म कुल चार शिलालेख है। प्रथम शिलालेख इस मदिर के निमाण से सम्बधित है जिसके अनुसार मदिर का निर्माण वि स ९०२ म आसोज सुदी ९ गुरूवार को भैसा सेठ द्वारा कराया बनाया गया हे।

इस मदिर की बनावट एव गुबद सुदर्शना माता के मदिर के समान ही है। जो इस क्षेत्र मे ही स्थित है और ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों मदिर एक ही समय मे बने थे।

माता के मण्डप म पीछे नटराज की प्रतिमा उत्कीण हे। मण्डप के दक्षिण में गणशजी की तथा उत्तर की आर महिषासुर मर्दनी की प्रतिमा उत्कीर्ण है।

मदिर का दूसरा शिलालख सम्वत् १६१० जेठ वदी २ मगलवार का है, जो मुगल काल म किसी अग्रवाल द्वारा माता के मदिर क किवाडों की जोडी बनाने से सम्बधित है।

मदिर मे उत्कीर्ण शिलालेखो के सम्बध मे मदिर के पुजारीजी ने बताया कि मदिर मे इस आशय का शिलालेख भी हे कि मदिर का द्वार सम्वत् १८०३ में सावण सुदी ४ शुक्रवार को पुरोहित खेमराज सहदेव गोलवाल व्यास ने बनवाया।

मदिर का चौथा शिलालेख सम्वत् १७६५ का एक अग्रज अधिकारी द्वारा बरामदा बनाने का है।

माता के मदिर मे दो मूर्तिया है, सामने जो मूर्ति है वह माता की बालिका रूप की मूर्ति है तथा उसकी बगल मे जो मूर्ति है वह माता की वीर रूप महिषासुर-मर्दिनी के रूप मे है। इनके बाई ओर भैरूनाथ बाबा की प्रतिमा है।

दोनों माताये अष्टभुजायुक्त हैं। माता की सवारी शेर पर है तथा महिषासुर का वध करती प्रतिष्ठापित हुई है।

माता के सभा मण्डप मे १६ खम्भे है।

(१) ऐसी किवदती है कि भैसा सेठ को जगत्-जननी माता का यह भी आशीर्वाद था कि तेरी मूछ के एक बाल की कीमत एक लाख रुपया होगी। एक बार सेठ की मा तीर्थयात्रा को गई। सेठ ने उसे अपनी मूछ का एक बाल दे दिया तथा कहा कि मा यदि तुम्हे रुपयो की आवश्यकता हो तो यह बाल किसी के गिरवी रख देना और बदले मे एक लाख रुपये मिल जायेगे। यात्रा के दौरान गुजरात मे सेठ की मा अपने लडके की बात को आजमाने के उद्देश्य से एक सेठ की दुकान पर गई जो तेल का बडा व्यापारी था। उसने व्यापारी से कहा यह बाल रख लो और मुझे एक लाख रुपये दे दो। मे डीडवाना के भैसा सेठ की मा हू। व्यापारी ने भैसा सेठ की मा को दुत्कार दिया तथा कहा क्या बाल के बदले भी रुपये मिलते है? भैसा सेठ की मा जब तीर्थ यात्रा कर वापस लौटी तो उसने अपने बेटे भैसा सेठ को सारी कहानी सुनाई तथा साथ ही यह भी कहा कि कही बाल के बदले रुपये मिलते है और वह भी एक लाख' तुमने नाहक ही मेरी और अपनी मूछ का एक बाल देकर खिल्ली उडवाई। सेठ ने विचार किया फिर मन मे यह सोचकर कि वरदान तो मुझे मिला है, उसने अपनी माता से व्यापारी का पता ठिकाना पूछा तथा उस व्यापारी के यहा गया। भैसा सेठ ने तेल व्यापारी से उसके पास उपलब्ध सारे तेल का सोदा किया तथा वही तेल व्यापारी के यहा ही एक कुण्डी बनवाई तथा व्यापारी से कहा अपने सौदे का तेल इस कुण्डी मे डाल दो, तेल डालते जाओ और पैसे लेते जाओ। व्यापारी ने अपने गोदाम का सारा अकूत तेल उस कुण्डी मे डाल दिया किन्तु तेल स वह कुण्डी नही भरी, आखिर तेल के व्यापारी न भैसा सठ स यह कहते हुए माफी मागी कि मेरे पास अब और अधिक तेल नहीं है तथा अपने द्वारा किये गये सौदे के लिए माफी चाहता हू तथा साथ ही विनमतापूर्वक कुण्डी

नही भरने का रहस्य पूछा तो भैसा सेठ ने कहा, 'मै वही भैसा सेठ हू जिसके बाल के बदले तूने मेरी मा को रुपये नहीं दिये थे और कहा था मूछ के बदले रुपये लेने वाले बहुत भैसा सेठ आते है। तेल नहीं भरने का कारण मातेश्वरी भगवती का चमत्कार है। जिसका मै अकिंचन सेवक हू।' भैसा सेठ ने तेल व्यापारी को सौदे के अनुसार पूरा तेल नही देने पर अपनी टाग के नीचे से निकाला। कहते है तब से वहा एक लाग की धोती बाधते है। ऐसा भी कहते है कि भगवती माता की कृपा से कुण्डी मे डाला गया सारा तेल डीडवाना आ गया। यह भी कहा जाता है कि गुजरात म उसके बाद तोलने की तखड़ी मे चार के स्थान पर तीन डोरिया ही लगाते है।

(२) लक्खी बनजारे का भी एक कथानक है। उसन माताजी के मदिर के चौक म पानी सग्रह के लिए एक हौज बनवाया। इस हौज (टाके) म वर्षा का पानी एकत्रित किया जाता है। कहते है कि वह लक्खी बनजारा अपनी बाळद लेकर जा रहा था। उसके पीछे डाकू लग गये। बनजारा मदिर मे आकर रुका तथा माता के चरणों में गिरकर माता की स्तुति करने लगा। उसका पड़े-पड़े ही आवाज आई 'जा चला जा तेरा कोई अनिष्ट नही होगा।' लक्खी बनजारे ने मान्यता मागी, हे मा! यदि मेरी लाज रह गई तो मै मेरे हाथ से तेरे मदिर म टाका बनवाऊगा।' यह कहकर वह चला गया। देवी कृपा से डाकुओं की मति ऐसी फिरी कि वे दूसरी तरफ चले गये। लक्खी बनजारा अपने नियत स्थान पर अपना माल रखकर पुन माता की शरण मे आया और उसने अपने हाथ से १६ खम्भे का टाका माता के मदिर में बनाया जो अभी भी मदिर के चौक म है तथा उसमे वर्षा के जल का सग्रह किया जाता है।

(३) माता के चमत्कार के सम्बध म मदिर के पुजारी जी ने बताया कि इस इलाके मे एक अग्रेज अफसर आया था। अग्रेज देवी देवताओ आदि के अस्तित्व को नही मानता था। एक बार नमक की झील मे पानी ही पानी भर गया। झील से पानी निकलवाने का यत्न निरन्तर कई दिन तक उस अग्रेज अफसर ने किया किन्तु जितना पानी रोज झील से निकाला जाता उतना ही पानी प्रात फिर झील मे भर जाता। यह क्रम कई दिना तक चलता रहा। एक दिन वह अग्रेज अधिकारी इधर से जा रहा था। उसे ८-९ साल की

एक बालिका मिली। उस बालिका ने उस अग्रेज अफसर को आवाज लगाई तथा कहा 'अभी तेरे समझ म आई कि नही'। अग्रेज अफसर उस बालिका के कथन क रहस्य को नही समझ सका, किन्तु उसका सहायक जो हिन्दू था, माता के कहे गये रहस्यपूर्ण वाक्य का अर्थ समय गया तथा उसने अग्रेज अफसर से कहा यह आदिशक्ति है, उसके वरदान से ही यहा नमक की खान बनी है, आपने इसकी स्तुति नही की, इसके हाथ नही जोड़े, यही कारण है कि झील से पानी नही निकल पा रहा है। 'आप माता के अस्तित्व को स्वीकार करत हुए उस परम आद्याशक्ति भगवती के प्रति आस्था प्रकट करते हुए उनसे प्राथना करें। भगवती भक्ता के मनोरथ को अवश्य पूर्ण करती है।' अग्रज अधिकारी न माता की स्तुति की। इसके बाद झील का पानी स्वत ही अपने आप सूख गया। अग्रज ने इस अद्भुत चमत्कार को देखकर मदिर में, मदिर के *बाईं ओर अपनी श्रद्धा के प्रतीकस्वरूप एक बरामदा बनवाया* जिसका शिलालेख भी है। बरामदा अभी भी ठीक दशा मे है।

– इस माता को– पेड़ से प्रगट होने के कारण पाडा माता कहते है
– नमक का सर हाने से इसे नमक की माता भी कहते है
– गाव के बाहर हाने से इसे बारली माता भी कहते हैं
– इस भैसा माता भी कहते है, क्याकि (१) भैसा का यह वध कर रही है तथा (२) भैसा सेठ ने मदिर का निर्माण कराया था

पारीकों के अलावा माहेश्वरियो के कई अवटको, कुलडिया जाटो, फूल मालियो एव अन्य जातिया की भी यह कुलदेवी है।

प्रारम्भ से ही इस माता के पुजारी सेवक जाति के है तथा वर्तमान में इसके पुजारी प पूनमचदजी सेवक है।

माता की सेवा-पूजा एव पुजारी का योग-क्षेम भक्तो द्वारा चढाये गये चढ़ावे से ही होता है।

मदिर मे यात्रियो के रहने-ठहरने के लिए ३-४ कमरे है।

औरगजेब के समय म माता की दोनों मूर्तिया तो सुरक्षित रही किन्तु मदिर के बाहरी हिस्से की मूर्तियो को खडित किया गया। आततायियो को माता ने कन्या रूप मे ही भगाया, जिससे मदिर की मूल मूर्तिया सुरक्षित रह सकी।

पाण्डुका पण्डोखा पाण्डुक्या माता

पाण्डुक्या माताजी के निज मदिर में तीन मूर्तिया है। मध्य में महिपासुर-मर्दिनी माताजी की मूर्ति है, बाईं ओर (मूर्ति के दाहिनी ओर) कुन्ती (पाण्डवों की माता) की मूर्ति है। यह मूर्ति माताजी की मूर्ति से छोटी है तथा दाहिनी ओर (माताजी की मूर्ति के बाईं ओर) सिह पर सवार दुर्गा माता की सगमरमर की मूर्ति है जो वर्तमान म ही स्थापित की गई है। पाण्डुका माता का विग्रह महिपासुर-मर्दिनी के रूप में है। वह महिप को मारती हुई है। पाण्डुका माता एव कुन्ती की मूर्तिया नवी शताब्दी की है।

मदिर के निर्माण के सम्बन्ध म जाधपुर राज्य के इतिहास[१] के अनुसार यह मेड़ता से ४ मील पश्चिम में है। गाव के बाहर पुराने मदिरा के सामान से बना हुआ एक प्राचीन कुआ है। इस पर दिल्ली क सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के समय वि स १३५८ (चैत्रादि १९५९) वैशाख वदी ६ (ई स १३०२ ता २० मार्च) का एक लेख है। मेड़ते म उसने अपना एक फौजदार नियुक्त किया था।

कुए के निकट एक माता का मदिर है।

माता के वर्तमान पुजारी सोहनलालजी वैष्णव है, जिनका परिवार सन् १९६० के लगभग यहा आया था। इसके पूर्व के पुजारिया की जानकारी नही हो सकी। पुजारी जी ने बताया कि इसके पहले कई पुजारी आये और चले गये।

मदिर मे सवत् २०१८ की आसाढ़ की पूनम को कन्हैयालालजी सुनार ने कुछ निर्माण कार्य कराया जिसमे कुन्ती माता का भवन (रहने का मकान जिसे कुती माता का नाम दिया गया) तथा पुजारी जी के रहने हेतु कमरे बनवाये। अजमेर के एक कायस्थ परिवार ने मदिर मे तिबारे का निर्माण कराया।

खटोड व्यासो (पारीक) द्वारा भी यात्रियो के विश्राम हेतु एक कमरे का निर्माण कराया गया। मदिर म एक शिलालेख सम्वत् १३५८ का है जैसा कि पूर्व मे वर्णित किया गया है।

---

१ जाधपुर राज्य का इतिहास (प्रथम खण्ड), ले गौरीशकर हीराचद आझा पृ ३३ ३४

माता की मूर्ति चर्तुभुजी है। माता की सवारी सिह पर है। माता के मदिर के सामने सीढिया के बाईं ओर शिवजी का चित्र, दीवार पर चित्रित है।

माता का स्वरूप महिषासुर मर्दिनी का है जिसका त्रिशूल भैसे के माथ पर है।

मदिर मेड़ता सिटी से पश्चिम में ६ कि मी मेड़ता रोड से पूर्व की ओर ९ कि मी की दूरी पर है। माता का मदिर जगल मे प्राकृतिक वातावरण से परिपूर्ण स्थान पर अवस्थित है। मदिर पहाडी की एक ऊची टेकरी पर बना हुआ है।

मदिर के बाहर गणेशजी की एक प्रतिमा है।

माता के सामने सभा-मण्डप म दो सिह है जो अति प्राचीन है। इनमे से एक सिह का धड खडित है तथा दूसरे सिह का एक पैर खण्डित है। मदिर के सामने एक तालाब है।

मदिर के बाहर ही माता के दो भक्त जो गुरु चले के रूप में यहा रहते थे उनकी समाधियाँ है जो काफी पुरानी है।

मदिर के पास अनेकानेक खण्डित-मूर्तिया इधर-उधर बिखरी पडी है। सभव है मदिर की अनेकानेक मूर्तियों को खण्डित किया गया हो एव मदिर का भी तोड़ा गया हो।

मदिर के योग-क्षेम हेतु १०० बीघा पक्की जमीन है।

पाण्डुका माता का नामकरण इस आधार पर हुआ कि पाण्डुओ ने बनवास की अवधि मे यहा तपस्या की थी। अत यह स्थान पाण्डुओ के ओरण नाम से जाना जाता है। पाण्डुओ का ओरण होने से पाण्डुका माता कहलाई। मूर्ति महिषासुर मर्दिनी की है। पाण्डुओं द्वारा तपस्या करने के कारण उनकी माता कुन्ती की भी यहा मूर्ति है।

माता का एक अन्य मदिर पुण्ड्रवर्धन पीठ म 'पाडला'[१] माता के नाम से है जहा देवी 'पाडला' नाम से विराजमान है।

---

१ कल्याण- सक्षिप्त देवी भागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ४०१

पराशक्ति का एक मंदिर गाव– भरूच से नर्बदा प्रवाह की ओर उत्तर तट के तीर्थों के अन्तर्गत यह एक तीर्थ स्थान है। यहा गणिता तीर्थ म पराशक्ति का नित्य सानिध्य है। (यह स्थान पश्चिम रेल्वे की बम्बई-वड़ौदा लाइन पर है)।

विद्वानो के अनुसार उक्त दोना माताए कुलदेवियों के रूप में एक ही है तथापि प श्रीपति शास्त्री, श्री एस एल शर्मा से उपरोक्तानुसार दो भिन्न माताए मानी है।

पारीको के निम्न अवटकों की ये कुलदेविया है—

१ ओजाया	व्यास	मकराना की झील	परा
२ गोलवाल	व्यास	मकराना की झील	परा
३ ओहोरा	व्यास	मकराना की झील	परा
४ घुघाट	तिवाड़ी	मकराना की झील	परा
५ अगरोटा	तिवाडी	मकराना की झील	परा
६ ठकुरो	जोशी	मकराना की झील	परा
७ बुलबुला	जोशी	मकराना की झील	परा
८ खटोड़ (खटवड़)	व्यास	पाण्डरोइ (मेडता के पास)	पाण्डुक्याँ
९ मेडतवाल	तिवाडी	पाण्डरोई (मेडता के पास)	पाण्डुक्याँ

चूंकि पारीको की दोनों कुल देवी माताए एक ही स्वरूप महिषासुर मर्दिनी की है अत नाम भेद एव अलग-अलग स्थान होते हुए भी परा, पराख्या, पाडोखा, पड़ाय, पाडला, पाढा एव पाण्डाख्या, पाण्डुक्या एक ही माता है। इन सभी अवटकों की कुलदेविया है।

१ जाधपुर राज्य का इतिहास (प्रथम खण्ड) ल गौरीशकर हीराचद आझा पृ ३३

□□□

१

बींजल : विद्युद्रूपा माता

विद्युद्रूपा का शाब्दिक अर्थ है विद्युत् के समान प्रभा या कांति वाली। विद्युद्रूपा का ही अपभ्रंश रूप बींजल है।

बींजल की पौराणिकता

मधु-कैटभ नामक दो राक्षसों की उत्पत्ति जब हुई और वे जब तरुण हो गये तो उनके मन में यह प्रश्न उठा कि हमारी उत्पत्ति क्यों हुई और किसने की। हमारा जन्मदाता कौन है? वे जन्मदाता पिता कहाँ है?

मधु-कैटभ को देवी का वरदान देने के संदर्भ में देवी भागवत में यह कथानक आया है कि मधु-कैटभ जब किसी निर्णय पर नहीं पहुँचे और इस विषय पर चिंतन कर रहे थे तभी 'आकाश में गूँजता हुआ सुन्दर वाग्बीज मंत्र 'ऐं' सुनाई पड़ा। सुनकर वे दोनों उसका अभ्यास करने में तत्पर हो गये। तब उस वाग्बीज की आकृति आकाश में इस प्रकार चमक उठी मानो बिजली कौंध रही हो। फिर तो उन्होंने विचारा कि यही मंत्र है, इसमें कुछ भी संदेह करने की बात नहीं। ध्यान लगाया तो उसी सगुण मंत्र की झाँकी उपलब्ध हुई। अब तो वे उसी मंत्र का ध्यान और जप करने में लग गये। अन्नजल छोड़ दिया। मन और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली। यों एक हजार वर्ष तक उन्होंने बड़ी कठिन तपस्या की। फिर तो वह परम आराध्य शक्ति मधु और कैटभ पर प्रसन्न हो गई। उस समय वे निश्चिंत होकर तप कर रहे थे। उनकी स्थिति देखकर शक्ति का मन कृपा से ओत-प्रोत हो गया। अतः आकाशवाणी होने लगी— 'दैत्यो! तुम्हारी तपस्या से मैं प्रसन्न हूँ। स्वेच्छानुसार वर मांगो, उसे मैं पूर्ण कर दूँ।'

सुनने के पश्चात् मधु और कैटभ ने कहा— 'सुन्दर व्रत का पालन करने वाली देवी! तुम हमें स्वेच्छा-मरण का वर देने की कृपा करो।'

'आकाशवाणी हुई— 'दैत्यो! मेरी कृपा से इच्छा करने पर ही मौत

तुम्हे मार सकेगी, यह निश्चित है, देवता और दानव किसी से भी तुम दोनो भाइ पराजित न हा सकोगे।'[१]

यही महामाया आद्याशक्ति भगवती देवी वाग्बीज के रूप मे बिजली के सदृश्य कौधी। विद्युद्रुपा शक्ति आद्या शक्ति भगवती का ही रूप है।

देवीभागवत के तीसरे स्कन्ध मे भगवती आद्या शक्ति के प्रभाव का जो वणन किया गया है उसम देवी क स्वरूप का विस्तृत वर्णन करते हुए लिखा है— वे ऐसी प्रभापूर्ण देवी थी, मानो करोडो बिजलियाँ एक साथ चमक रही हा।'[२]

बीजल माता (विद्युत् प्रभा) का प्रसग वराह पुराण म भी आया है। 'अन्धक' नामक राक्षस ने जब सभी देवताओ को सताना प्रारम्भ कर दिया तथा देवता जब उसके अत्याचार से पीडित हो गये तो वे ब्रह्माजी के पास गये, देवताओ की बात सुनकर ब्रह्माजी शिवजी के पास गये तथा ब्रह्माजी ने वहाँ विष्णु का ध्यान किया तब विष्णु भी वहाँ प्रगट हा गये। तीनों देव परस्पर प्रेमपूर्वक देखने लगे। उनकी इस दिव्य दृष्टि से तत्काल एक कन्या का प्रादुर्भाव हुआ जिसका स्वरूप परम दिव्य था। उसके अग नीले कमल के समान श्यामल थे तथा उसके सिर के बाल भी नीले घुघराले एव मुडे हुए थे। उसकी नासिका, ललाट और मुख की सुन्दरता असीम थी। विश्वकर्मा ने शास्त्रो मे जो अग्निजिह्व के अग लक्षण बताये है, वे सभी सुन्दर प्रतिष्ठा पाने वाली उस कुमारी कन्या म एकत्र दिखाई देते थे। ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इन तीनो देवताओ ने उस दिव्य कन्या को देखकर पूछा— 'शुभे! तुम कौन हो? ओर विज्ञानमयी! देवी! तुम क्या करना चाहती हो?' इस पर शुक्ल, कृष्ण एव रक्त इन तीन वर्णो से सुशोभित उस कन्या ने कहा— दव श्रेष्ठा! मै तो आप लोगो की दृष्टि से ही उत्पन्न हुई हूँ। क्या आप लोग अपने से ही उत्पन्न अपनी पारमेश्वरी शक्ति मुझ कन्या को नहीं पहचानते?'

दिव्य कुमारी का यह वचन सुनकर तीनो देवताआ ने प्रसन्न होकर उसे वर दिया— देवी! तुम्हारा नाम त्रिक्ला होगा। तुम विश्व की सदा रक्षा करोगी।

---

१ कल्याण– सक्षिप्त देवी भागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ५०

२ उपरात्त पृ १०७

महाभागे! गुणो के अनुसार तुम्हारे अन्य भी बहुत से नाम होगे और उन नामो में सम्पूर्ण कार्यों को करने की शक्ति होगी। देवी! तुममें जो ये तीन वर्ण दिखाई पड़ते है तुम इनसे अपनी तीन मूर्तियाँ बना लो।'

देवताओ के इस प्रकार कहने पर उस कुमारी ने अपने श्वेत, रक्त और श्यामल रग से युक्त तीन शरीर बना लिये। ब्रह्मा के अश से 'ब्राह्मी' (सरस्वती) नामक मगलमयी सौम्यरूपिणी शक्ति उत्पन्न हुई जो प्रजाओं की सृष्टि करती है। सूक्ष्म कटिभाग, सुन्दर रूप तथा लालवर्ण वाली जो दूसरी कन्या थी, वह वैष्णवी कहलाई। उसके हाथ मे शख एव चक्र सुशोभित हो रहे थे। वह विष्णु की कला कही जाती है तथा अखिल विश्व का पालन करती है जिसे विष्णु माया भी कहते हे। काले रग से शोभा पाने वली रुद्र की शक्ति थी जिसने हाथ मे त्रिशूल ले रखा था, जिसके दाँत बड़े विकराल थे, वह जगत् का सहार करने वाली 'रुद्राणी' है। तीनो देवियाँ तपस्या करने को चली गई। ब्राह्मी शक्ति 'श्वेत गिरि' पर, वैष्णवी शक्ति 'मदराचल पर्वत' पर तथा रुद्र की शक्ति 'नीलगिरि' पर चली गई।

कुछ समय पश्चात् ब्रह्माजी प्रजाओ की सृष्टि मे तत्पर हुए। उन्होने योगाभ्यास के सहारे अपने हृदय म ध्यान लगाया तो श्वेत पर्वत पर स्थित 'सृष्टि' कुमारी की तपस्या की बात उनकी समझ म आ गई। ब्रह्मा जी द्वारा फिर सृष्टि की रचना की गई। पहले मानस पुत्रा की और फिर स्वेदज, उद्भिज जरायुज और अण्डज इन चार प्रकार क प्राणियो की उत्पत्ति हुई। इन सबकी रचना में सृष्टि देवी का ही हाथ है।

यह सृष्टि देवी सम्पूर्ण अक्षरो से युक्त होने पर 'वागीशा' और कही 'सरस्वती' कही जाती है। इसे 'ज्ञान निधि' अथवा 'विभावरी' देवी भी कहते है। वेदो की उत्पत्ति भी इसी से हुई है।

वैष्णवी देवी तपस्या करने के लिए मदराचल पर्वत पर गई थी– उस देवी ने कौमारव्रत धारण कर विशाल क्षेत्र मे एकाकी रहकर कठोर तप आरम्भ किया। बहुत दिनों तक तपस्या करने के पश्चात् उस देवी के मन मे विक्षोभ उत्पन्न हुआ, जिससे अन्य बहुत-सी कुमारियाँ उत्पन्न हो गई। उनके नेत्र बडे

के शरीर से दिव्य प्रकाश फैल रहा था। एसी अनक कुमारियॉ उस वैष्णवी देवी क शरीर स प्रगट हुई थी, जिनके लिए देवी ने नगर एव महलो का निर्माण किया। देवी के शरीर से प्रगट प्रधान-प्रधान कन्याओ के नाम इस प्रकार है— **विद्युत्प्रभा, चन्द्रकान्ति, सूर्यकान्ति, गम्भीरा, चारुकशी, सुजाता, मुक्तकेशिनी, उर्वशी, शशिनी, शीलमण्डिता, चारुकन्या, विशालाक्षी, धन्या, चन्द्रप्रभा, स्वयप्रभा चारुमुखी, शिवदूती, विभावरी, जया, विजया, जयन्ती अपराजिता।**

वहाँ नारदमुनि के आगमन पर उन्हाने देवी के सौदर्य को देखा तथा बाद मे महिषासुर को दवी की सुन्दरता का बखान किया। महिषासुर का देवी से युद्ध होने पर देवी के शरीर से प्रगट अन्य शक्तिया ने, जिनमे **विद्युतप्रभा** भी थी, दैत्या के सहार म अद्भुत पराक्रम दिखाया।

बिजल माता (विद्युतप्रभा) का मदिर नागोर जिलान्तर्गत डेगाना के पास कुवाडिया खेडा की ढाणी क पश्चिम की ओर एक टेकरी पर अवस्थित है। कुवाडिया खेड़ा, चादारूण के पूर्व म दो कि मी की दूरी पर है। डेगाना से चादारूण पॉच कि मी है। जयपुर जोधपुर मार्ग पर डेगाना रेल्वे जक्शन है। सडक मार्ग स भी डेगाना के लिए सुगम साधन उपलब्ध है।*

कहत है पहल यह गाँव सातारूण था जो बाद मे उजड गया। सन् १८९६-९७ म भीषण अकाल पडा तथा भयकर बीमारी से ग्रसित यह गाव उजड़ गया। अधिकाश व्यक्ति कालकवलित हा गये शप ने यह गाँव छोड दिया। इसक पश्चिम म नवीन गाव बसा जा चॉदारूण क नाम स जाना जाता है।[१]

यह स्थान अत्यन्त प्राचीन है। माता का स्थान जिस टेकरी पर है वहाँ ठीकरियाँ बहुतायत म मिलती है। ये ठीकरिया पत्थर के समान कठोर व मजबूत है।

मदिर निमाण के सम्बन्ध म ऐसा बताया गया है कि यह मदिर मालियों द्वारा बनाया गया है। मदिर का चबूतरा महाजना द्वारा बनाया गया बताते है।

---

* माता क दर्शनार्थ दिनाक २ ६ १९९९ का लखक गया। साथ म मित्र शाभित एव माहित भी थ। माता का स्थान बतान क लिए हमार साथ डगाना स श्री नृसिह प्रसाद जी (कठोत्या) पुराहित व श्री अशाक कुमार जी बाहरा गय।

१ श्री जगदीश प्रसाद पानी क पत्र क आधार पर।

मदिर के पास झोपडी में रहने वाले सज्जन ने ऐसा बताया कि एक नवरात्रा मे कोई पण्डित (पारीक?) यहाँ आता है और नौ दिन तक यहाँ रहकर पूजा-पाठ करता है।

माता का स्वरूप

माता की प्रतिमा एक चोकोर पत्थर पर उत्कीर्ण है। माता के दाहिने हाथ मे त्रिशूल व बाये हाथ मे मुद्गर है जो माता के वाहन सिह के मस्तक पर रखा है। माता के मदिर मे ही माता की प्रतिमा के पास दो खण्डित मूर्तियाँ और है जो काफी प्राचीन प्रतीत होती है।

माता का यह मदिर 'ओरण' (जगल) के मध्य म बना हुआ है। एक खेजडी के नीचे लगभग दस फुट लम्बे और दस फुट चाडे चबूतरे पर निर्मित माताजी का मदिर, जैसा पूर्व म अकित किया गया है, एक छोटी गुमटी के रूप मे है। माता के दर्शन, दर्शनार्थी बैठकर ही कर सकते है। मदिर में काई परिक्रमा स्थल नही है। माता का ओरण मूलत बीस बीघा का था जो अब अतिक्रमण होते-होते आधा ही रह गया बताया। इस ओरण क्षेत्र मे खेजडी व कैर के पेड बहुतायत मे है। माता के मदिर के पास दो झोपडियो के अतिरिक्त कोई मकान, झोपडी या आबादी नही है। माता के मदिर के उत्तर मे खेजडी के ही नीचे भैरुजी का स्थान है।

माता की नियमित रूप से पूजा-अर्चना नही होती।

माताजी के सामिष एव निरामिष दोनो प्रकार के भोग लगते है।

माता सर्वसमाज द्वारा पूजित है। स्थानीय भक्त माता को चामुण्डा एव कालका माता के रूप मे भी पूजते है। इसे कुल्वाड़िया खेडा की माता एव पुत्रदायिनी माता भी कहते है।

माताजी के चमत्कार

यो तो माता के अनेकानेक चमत्कार है। उनमे से कतिपय का उल्लेख किया जा रहा है।

ऐसा कहते है कि माता के स्थान पर पहले खजाना था। वह खजाना एक लोहे की कडाही में था तथा उसका केवल कडा ही दिखता था। पास

के ही गॉव मिठड़िया (यहाँ से ३ कि मी दूर) के बावरिया ने खजाने को निकालने हेतु खुदाई प्रारम्भ की। खुदाई प्रारम्भ करते ही सर्प आने लगे, जब उन्होने सर्पो को मारना चाहा तो उनके गॉव मीठडिया मे आग लग गई। वे खजाने की खुदाई को छोड़कर अपने गॉव आग बुझाने को भागे। वे पुन खजाना प्राप्त करने हेतु खुदाई करने आये तो उनके सिर पर जो वस्त्र (साफा, पगडी, कपडा) आदि था उसम आग लग गई, वे घबराकर भाग गये, फिर कभी उस ओर नही आये।

चूकि माँ ने अग्नि प्रज्वलित की थी इसलिए इसका नाम विद्युद्रूपा पड़ा है।

एक अन्य कथानक के अनुसार लगभग १० वर्ष पूर्व (१९८८) की घटना है। बीकानेर के किसी व्यक्ति की बहू की बोली बद हो गई। किसी ने उसे माताजी की मान्यता करने एव उनके दरबार म जाने की सलाह दी। इसके पूर्व उसका इलाज सभी स्थानो पर कराया जा चुका था। अन्तत निराश होकर व माता की शरण मे आये। दीन-दु खियो के कष्ट निवारण माँ करती है, उस स्त्री की बोली पुन आ गई। उस भक्त द्वारा माता के एक चॉदी की जीभ चढाई गई।

माता के मदिर के पास जुझारों के दो चबूतरे है। ऐसा बताया गया कि जब यह गॉव उजाड हुआ तब ये जुझार बने थे। आततायियो से लडते-लड़ते इन्होंने वीर गति प्राप्त की थी। इन देवलियो पर सम्वत् ११३०, ११२०, ११९० के लेख भी उत्कीर्ण है।

मदिर के पास पानी का एक विशाल टाका है तथा वर्ष १९९८ में पानी की टकी का निर्माण हुआ है। पास ही जानवरो के पानी पीने के लिए एक खेळी बनी हुई है।

एक जाट के लडका नही होता था। उसने माताजी की मान्यता की। माता की कृपा स उसके लड़का हो गया। वह जाट एव उसका परिवार हर माह शुक्ल पक्ष की अष्टमी को माता के दरबार मे आता है। कदाचित् अपरिहार्य कारण से अष्टमी को नही आ पाने पर वह चौदस को माता के यहाँ आता है।

पारीकों के निम्न अवटको की यह कुल देवी है—

१ विलसरा विणसरा	जोशी
२ बावर	तिवाडी

३ वय्या*   तिवाडी

* बींजल माता के सम्बन्ध में यहाँ यह बताया गया है कि बींजराजजी के वशज (वय्या अवटक क तिवाड़ी) अपनी कुलदेवी का नहीं पूजत। इसका कारण यह बताया कि माता ने किसी बात पर रुष्ट हाकर कहा बताया कि सुबह हान स पहले रात रात म अपना स्थान छाडकर चले जाओ अन्यथा भारी अनिष्ट हा जायगा। माता की आज्ञा स व चल गय तथा इसक बाद व नृसिहजी की पूजा करने लग।

श्री जगदीश प्रसाद जी तिवाड़ी (वय्या) पाली जिनकी कुलदेवी बींजल माता है। वय्या तिवाड़ियों द्वारा माता नहीं पूजने का एक कारण लखक का प्रेषित किया है जा इस प्रकार है—

माता द्वारा वय्या तिवाड़ियों क त्याग सम्बन्धी किंवदन्ती बड़ी पादु, जिला नागौर निवासी वयोवृद्ध राव श्री गुलाबचद द्वारा निम्न प्रकार बताई गई—

ग्राम 'सातारूण' में वय्या तिवाड़िया के काफी घर थे। उनम श्री बींजराज नामक व्यक्ति बड़े ही तपस्वी तथा मातृभक्त थे। अत उन पर माता की कृपा थी। कहत है उन्ह माता बींजल साक्षात् दर्शन देती थीं। उनके याद करन पर माता प्रगट हाती एव याद करने का कारण पूछती और उनकी समस्या का तुरन्त समाधान करतीं। स्पष्ट है, जिस व्यक्ति पर ऐसी मातृकृपा हो उसके यहाँ किस वस्तु की कहाँ कमी रहती है? चारा तरफ सम्पन्नता ही सम्पन्नता थी। बींजराज जी की भौतिक एव आध्यात्मिक सम्पन्नता दखकर अन्य भाइयों को अन्दर ही अन्दर जलन हाती थी पर वे मन मसोस कर रह जात। बींजराज जी पर मातृ कृपा पूर समाज म जाहिर थी। अन्य द्वषी बन्धु मौके की तलाश म थ कि किस तरह उन्हें गिराया जाय। भगवान् जिस पर कृपा दृष्टि रखे उसका बाल भी बाका नहीं हा सकता। लकिन इसका एक दूसरा पक्ष भी है। एक लोकोक्ति है 'रविहैं की इक दिवस म तीन अवस्था होय।' अर्थात् समय एक जैसा नहीं रहता। उस व्यक्ति म ईश्वर 'घमण्ड' रूपी दीमक लगा देता है जा उस धीरे धीरे खा जाती है। एक लाकोक्ति है 'अतिगर्वेण लका नष्टा।' अर्थात् घमण्ड स आदमी का पतन हाता है। तिवाड़ी बींजराज जी क साथ भी एसा ही कुछ हुआ।

एक दिवस प्रात काल ग्राम सातारूण म रावजी बही लेकर पधार। पारीकों के वास में स्थित एक सामूहिक स्थान जिसे 'हथाई' कहा जाता है वहाँ बैठ गये और सभी यजमानों क नवागतुकों के नाम अंकित करने लगे। सभी भाइयों ने अपने अपने परिवार के नव सदस्यों के नाम रावजी की बही म लिखवाय। बींजराज जी नाम लिखाने हतु नहीं आय। उन्हें बुलवाया गया। सभी भाइयों न कहा कि अरे! भाई तूने अपने परिवार क नवीन सदस्यों के नाम नहीं लिखवाय क्या बात है? 'मै बाद म लिखवा दूगा' श्री बींजराज ने उत्तर दिया। इतन पर एक भाई जा उनस अत्यधिक द्वेष रखता था कटाक्ष करते हुए बाला, 'आप बाद में नाम

लिखवा कर रावजी को कौनसा सिंह दक्षिणा में दे रहे हो? बींजराज ने इस चुनौती के रूप में लिया और वे इस कथन को बिना तौले किये व बिना महत्त्व समझे बोल उठे हाँ हाँ मैं रावजी को दक्षिणास्वरूप सिंह ही दूंगा। इतना कहकर उन्होंने अपने परिवार के नवीन सदस्यों के नाम राव की बही में लिखवा दिये। अब बींजराज जी अच्छी खासी दक्षिणा रावजी को देते हुए बोले कि आपको सिंह भी दिया जायगा। घोषणा के तुरन्त बाद उनको ध्यान आया कि सिंह कहाँ से लाकर दें? इतने में सभी भाईयों ने कहा कि सिंह घरों में नहीं पाले जाते जो आप रावजी को दे देंगे। उन्होंने बींजराज जी से उक्त वचन पुनः वापस लेने का अनुरोध किया लेकिन बींजराज जी भी कहा मानने वाले थे। उन्होंने तुरन्त मातेश्वरी बींजल का ध्यान किया। आह्वान पर माता प्रगट हुई और बोली वत्स! मुझे इस समय याद करने का क्या कारण? हे माता! मुझे सिंह चाहिए श्री बींजराज ने उत्तर दिया। माता ने पूछा सिंह क्यों चाहिए तुम्हें पुत्र? हे माता! मैंने रावजी को दक्षिणा में सिंह देने का वचन दिया है इसलिए मुझे सिंह दो। श्री बींजराज ने कहा।

मातेश्वरी बींजरावजी की इस दक्षिणा के वचन से अति कुपित हुई। उन्होंने कहा सिंह तो मेरा वाहन है उसको दान कर तूने उचित कृत्य नहीं किया। फिर भी तेरा दिया हुआ वचन रखूँगी पर मेरी भी एक शर्त है आज के बाद तुम्हें मेरी पूजा और यह स्थान छोड़ना होगा। इतना कहकर माता अन्तर्धान हो गई। बींजराज जी के बाड़े में जो गायें व बछड़े थे वे सभी सिंह हो गये। उन्होंने रावजी को कहा जो अच्छा सिंह हो उसे ले लो। रावजी ने माता को मन ही मन प्रणाम किया तथा बींजराजजी का वचन पूरा हुआ, ऐसा कहा।

माता के आदेश को शिरोधार्य समझकर वे अपने कुटुम्ब सहित ग्राम सातारूण से चल दिये। रवाना होने पर उन्हें ध्यान आया कि माता ने स्थान त्याग के साथ साथ उनकी पूजा का त्याग करने का भी आदेश दिया है। अब वे किसकी पूजा करेंगे? इस प्रश्न के समाधान हेतु उन्होंने मातेश्वरी बींजल का फिर आह्वान किया और वे किसकी पूजा करेंगे यह बताने का निवेदन किया। माता ने कहा, सूर्यास्त के समय जिस स्थान पर तुम्हारी गाडी का पहिया रुक जाय वहाँ जमीन की खुदाई करना एवं खुदाई में जो मूर्ति प्राप्त हो उसकी पूजा करना। इतना कहकर माता पुनः अन्तर्धान हो गई। कहते हैं बींजराजजी की बैलगाड़ी सातारूण से तिलानेस ग्राम आकर रुकी। वहाँ उन्हें सूर्यास्त हो गया। उस स्थान पर उन्होंने खुदाई की तो नरसिंह भगवान् की मूर्ति निकली। उस गाँव में आज भी नरसिंह भगवान् का एक भव्य मन्दिर है और ये लोग आज भी नृसिंह भगवान् की पूजा करते हैं।

इस प्रकार बव्या तिवाडिया में बींजराज जी के वंशजों द्वारा माता बींजल की पूजा नहीं की जाकर नृसिंह भगवान् की पूजा की जाती है। ये लोग नवरात्रि भी नहीं करते।

□□□

ललिता* माता

दक्षिण भारत के दक्षिणमार्गी शाक्तो क मत से ललिता सुन्दरी देवी न, जो आँखों को चौंधिया देने वाली आभा से युक्त है, चण्डी का स्थान ले लिया है। इनके यज्ञ, पूजा आदि की पद्धति चण्डी के समान ही है। चण्डी (दुर्गा) पाठ क स्थान पर ललितोपाख्यान, ललितसहस्रनाम, ललिता-त्रिशती का पाठ होता है। ये तीनो ग्रथ ब्राह्माण्ड पुराण से लिये गये है। ललितोपाख्यान में देवी द्वारा भण्डासुर तथा अन्य दैत्या के वध का वर्णन है। ललिता की पूजा मे पशुबलि निषिद्ध है।[१]

ललिता-परम सुन्दरी या ललिता देवी-रूपिणी है।[२]

आद्यामहाशक्ति अगाध और अपार सौन्दर्य-राशि की भी स्वामिनी है। व त्रिपुर की अधिष्ठात्री है, इसलिए महात्रिपुरसुन्दरी कही जाती है। ललिता सुन्दरी का ही पर्यायवाची है। ललिता, परा, परम-भट्टारिका आदि नामों से पूजित चरम सौदर्य रूपिणी माता को श्री चक्र से व्यक्त किया जाता है और इनकी आराधना को श्री विद्या कहते है। श्री शब्द का अर्थ सामान्यतया 'लक्ष्मी' लिया जाता है परन्तु 'श्री' तो उस परम आद्या महाशक्ति का वाचक है, जा श्री चक्र मे निवास करती है। इसी क माध्यम से श्री तत्व का चिन्तन किया जाता है।[३]

ललिता देवी का प्रादुर्भाव और भण्ड नामक असुर के वध का सक्षिप्त कथानक निम्न प्रकार है।[४]

---

* कुछ विद्वानों न ललिता माता को ललिता क साथ वृद्धा व लहण क नाम स भी सम्बोधित किया है।

१ हिन्दू धर्मकाष डॉ राजवली पाण्डय पृ ५६६

२ कल्याण सक्षिप्त दवी भागवताक वर्ष ३४ (१९६०) गायत्री सहस्रनाम् पृ ६४७

३ श्री ललिता सहस्र नामस्तोत्रम् प्रस्तावना गापाल नारायण बहुरा पृ ९ (ix)

४ कल्याण शक्ति अक (शक्ति तत्त्व ल डॉ भगवानदासजी) वर्ष ९(१९३४) पृ ११९-२०

पूर्वकाल मे भण्ड नाम के असुर ने श्री शिवजी की आराधना की और उन से अभयरूप वर प्राप्त कर त्रिलोकाधिपत्य करते हुए देवताओ के हविर्भाग का भी स्वयमेव भोग करना आरम्भ कर दिया। इन्द्राणी उसक डर से गौरी के निकट आश्रयार्थ गयी। इधर भण्ड ने विशुक्र को पृथ्वी का और विषङ्ग को पाताल का आधिपत्य दे दिया। स्वय इन्द्रासन पर आरूढ होकर इन्द्रादि देवताओ को अपनी पालकी ढोने पर नियुक्त किया। शुक्राचार्यजी ने दयार्द्र होकर इन्द्रादि को इस दुर्गति से मुक्त किया। असुरा की मूल राजधानी शोणितपुर को ही मयासुर के द्वारा स्वर्ग से भी सुन्दर बनवाकर उसका नया नाम शून्यकपुर रखा और वहीं पर भण्ड दैत्य राज्य करने लगा। स्वर्ग को उसने नष्ट कर डाला। दिक्पालों के स्थान पर अपने बनाये हुए दैत्यो को ही उसने बैठाया। इस प्रकार एक सौ पाँच ब्रह्माण्डो पर उसने आक्रमण किया और उनको अपने अधिकार में कर लिया। अनन्तर भण्ड दैत्य ने और भी घोर तपस्या कर शिवजी से अमरत्व का वरदान पाया। इन्द्राणी ने गौरी का आश्रय पाया है, यह सुनकर वह कैलास गया और गणेशजी की भर्त्सना कर उनसे इन्द्राणी को अपने लिये मागने लगा। गणेशजी बिगडकर प्रमथादि गणो को साथ लेते हुए उससे युद्ध करने लगे। पुत्र को युद्धप्रवृत्त देखकर उसकी सहायता करने के लिए गौरी अपनी कोटि-कोटि शक्तियो के साथ युद्धस्थल में आकर दैत्यो से युद्ध करने लगीं। इधर गणेशजी की गदा के प्रहार से मूर्च्छित होकर पुन प्रकृतिस्थ होते ही भण्डासुर ने उनको अकुशाघात से गिराया। गौरी यह देखकर बहुत क्रुद्ध हुई और हुकार से भण्ड को बाँधकर ज्योंही मारने के लिये उद्यत हुई त्योही ब्रह्माजी ने गौरी को शकरजी के दिये हुए अमरत्व-वर-प्रदान का स्मरण दिला दिया। लाचार होकर गौरी ने उसको छोड दिया।

इस प्रकार भण्ड दैत्य से त्रस्त होकर इन्द्रादि देवो ने गुरु की आज्ञानुसार हिमाचल मे त्रिपुरा देवी के उद्देश्य से तात्रिक महायाग करना आरम्भ किया। अतिम दिन याग समाप्त कर जब देवगण श्रीमाता की स्तुति कर रहे थे, इतने मे ही ज्वाला के बीच से महाशब्दपूर्वक अत्यन्त तेजस्विनी त्रिपुराम्बा प्रादुर्भूत हुई। उस महाशब्द को सुनकर तथा उस लोकोत्तर प्रकाश-पुञ्ज को देखकर गुरु बहस्पति के सिवा सब देवगण बधिर तथा अध होते हुए मुर्च्छित हो गये। गुरु तथा ब्रह्मा ने हर्षगद्गद स्वर से श्रीमाता की स्तुति की। श्रीमाता ने प्रसन्न

होकर उनका अभीष्ट पूछा। उन्होने भी भण्डासुर की कथा सुनकर उसके नाश की प्रार्थना की। माता ने भी उसको मान्ना स्वीकार किया और मूर्च्छित इन्द्रादि देवा को अपनी अमृतमय कृपा-दृष्टि से चैतन्य करते हुए अपने दर्शन की योग्यता प्राप्त करने के लिये उनको विशेषरूप से तपस्या करने की आवश्यकता बतलायी। देवगण भी माता की आज्ञानुसार तपस्या करने लगे। इधर भण्डासुर ने देवा पर धावा बोल दिया। कोटि-कोटि सेनिको के साथ आते हुए भण्ड दैत्य को देखकर देवो ने त्रिपुराम्बा की प्रार्थना करते हुए अपने शरीर अग्नि-कुण्ड म डाल दिये। त्रिपुराम्बा की आज्ञानुसार ज्वालामालिनी शक्ति ने देवगणो के आसमन्तात् ज्वालामण्डल प्रकट किया। देवो को ज्वाला म भस्मीभूत समझकर भण्ड दैत्य सैन्य के साथ वापस चल गया। दैत्य के जाने के बाद देवगण अपने अवशिष्टागो की पूर्णाहुति करने के लिए ज्यो ही उद्यत हुए त्यो ही ज्वाला के मध्य से तडित्पुञ्जनिभा त्रिपुराम्बा आविर्भूत हुई। देव गणो ने जयघोषपूर्वक पूजानादि द्वारा उनको सतुष्ट किया। देवा को अपना दशन सुलभ हो, इसलिये श्रीमाता ने विश्वकर्मा के द्वारा सुमेरुश्रृग पर निर्मित श्रीनगर म सर्वदा निवास करना स्वीकार किया। उसके बाद श्रीमाता ने देवो की प्रार्थना अनुसार श्रीचक्रात्मक रथ पर आरूढ होकर भण्ड दैत्य को मारने के लिये प्रस्थान किया। महाभयानक युद्ध हुआ। श्रीमाता के कुमार श्री महागणपति तथा कुमारी बालाम्बाने भी युद्ध मे बहुत पराक्रम दिखाया। श्रीमाता की मुख्य दो शक्तियाँ १ मन्त्रिणी-राजमातगीश्वरी, २ दण्डिनी-वाराही ओर इतर अनेक शक्तिया ने अपने प्रबल पराक्रम के द्वारा दैत्य-सैन्य म खलबली मचा दी। अत में बडी मुश्किल से जब श्रीमाता ने महाकामेश्वरास्त्र चलाया तब सपरिवार भण्ड दैत्य मारा गया। देवो का भय दूर हुआ।

पराम्बा ललिता का प्रात स्तवन-कीर्तन[१]

प्रात स्मरामि ललितावदनारविंद बिम्बाधर पृथुलमौक्तिकशोभिनासम्।
आकर्णदीर्घनयन मणिकुण्डलाढ्य मदस्मित मृगमदोज्ज्वलभालदेशम्॥
प्रातर्भजामि ललिताभुजकल्पवल्लीं रक्ताङ्गुलीयसदङ्गुलिपल्लवाढ्याम्।
माणिक्यहेमवलयाङ्गदशोभमाना — पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषुसृणीदधानम्॥

---

१ कल्याण भक्तिनाङ्क वर्ष ६०(१९८६) पृ १०

प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्द भक्तेष्टदाननिरत भवसिन्धुपोतम्।
पद्मासनादिसुरनायकपूजनीय पद्माकुशध्वजसुदर्शनलाञ्छनाख्यम्॥
प्रात स्तुवे परशिवा ललिता भवानीं त्रय्यन्तवेद्यविभवा करुणानवद्याम्।
विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूता विद्येश्वरीं निगमवाङ्मनसातिदूराम्॥
प्रातर्वदामि ललिते तव पुण्यनाम कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति।
श्रीशाम्भवीति जगता जननी परेति वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति॥
य श्लोकपञ्चकमिद ललिताम्बिकाया सौभाग्यद सुललित पठति प्रभाते।
तस्मै ददाति ललिता झटिति प्रसन्ना विद्या श्रिय विमलसौख्यमनन्तकीर्तिम्॥

मै प्रात काल श्रीललिता देवी के उस मनोहर मुखकमल का स्मरण करता हू, जिसके बिम्ब-समान रक्तवर्ण अधर, विशाल (मोतीवाली) नकबेसर से सुशोभित नासिका कर्णपर्यन्त फैले हुए विशाल नयन है, जो मणिमय कुण्डल और मद मुस्कान से युक्त है तथा जिसका ललाट कस्तूरी के तिलक से सुशोभित है। मै श्रीललितादेवी की भुजारूपिणी कल्पलता का प्रात काल सम्मरण करता हू, जो लाल अगूठी से सुशोभित सुकोमल अगुलि-रूप पल्लवोवाली तथा रत्नजटित सुवर्णमय ककण और अगदादि से भूषित हे एव जो पौड़ा-ईख के धनुप, पुष्पमय बाण ओर अकुश धारण किय हुए है। मे श्रीललितादेवी के चरणकमलो को, जो भक्तो को अभीष्ट फल देने वाले और ससार सागर के लिए सुदृढ जहाज-रूप है तथा कमलासन श्री ब्रह्माजी आदि देवेश्वरो से पूजित और पद्म, अकुश, ध्वज एव सुदर्शनादि मगलमय चिन्हो से युक्त है, प्रात काल नमस्कार करता हू। मै प्रात काल परमकल्याणरूपिणी श्रीललिता भवानी की स्तुति करता हू, जिनका वैभव वेदान्तवेद्य है, जा कल्याणमयी होने से शुद्धस्वरूपा है, विश्व की उत्पत्ति स्थिति ओर लय की मुख्य हेतु है, विद्या की अधिष्ठात्री देवी है तथा वेद, वाणी और मन की गति से अति दूर है। ललिते! मै आपके पुण्यनाम कामेश्वरी, कमला, महेश्वरी, शाम्भवी, जगज्जननी, परा, वाग्देवी तथा त्रिपुरेश्वरी आदि का प्रात काल अपनी वाणी से उच्चारण करता हू।'

माता ललिता के अति सौभाग्यप्रद और सुललित इन पाँच श्लोको को जो पुरुप प्रात काल पढता है, उसे ललितादेवी शीघ्र ही प्रसन्न होकर विद्या, धन, निर्मल-सुख और अनन्त कीर्ति देती है।

स्थान

काञ्चीपुरे तु कामाक्षी मलय भ्रामरी तथा।
केरले तु कुमारी सा अम्बाऽऽनर्तेपु संस्थिता।।
करवीरे महालक्ष्मी कालिका मालवेषुत्रा।
प्रयागे ललितादेवी विन्ध्ये विन्ध्यवासिनी।।
वाराणस्या विशालाक्षी गयाया मङ्गलावती।
वङ्गेपु सुन्दरीदेवी नेपाले गुह्यकेश्वरी।।
इति द्वादशरूपेण संस्थिता भारते शिवा।
एतेषा दर्शनादेव सर्वपापै प्रमुच्यते।।
अशक्तो दर्शने नित्य स्मरेत् प्रात समाहित।
तथाप्युपासक सर्वैरपराधैर्विमुच्यते।।
(त्रिपुरा-रहस्य, महात्म्य ख अ ४८/७१-७५)

ललिता सहस्त्रानाम मे देवी को बारह पीठो की अधिष्ठात्री माना गया है। वे स्थान क्रमश इस प्रकार है[१]-

१ कामाक्षी (काचीपुरम)
२ भ्रामरी (मलयगिरी पर)
३ कन्या या कन्याकुमारी (केरल) मे
४ अम्बा (आनर्त्त, गुजरात मे)
५ महालक्ष्मी (करवीर म)
६ कालिका (मालव मे)
७ ललिता (प्रयाग में)
८ विन्ध्यवासिनी (विन्ध्याचल म)
९ विशालाक्षी (वाराणसी मे)
१० मूलचण्डी (गया मे)
११ सुन्दरी (बगाल मे)
१२ गुह्येश्वरी (नेपाल म)

वस्तुत ये देवी के बारह रूप है। इनके अतिरिक्त प्रधान तीन स्थान है (१) कामगिरि (पूर्वसागर तट पर) (२) जालधर (मेरुशिखर पर) (३) पूर्णगिरि (पश्चिम सागर तट पर)। ये त्रिकोण के तीन बिन्दु है।

---

१ श्रीललितासहस्त्रनाम स्त्रोत्रम् भूमिका– डॉ अर्कनाथ चौधरी पृ xx

तीर्थराज प्रयाग मे सती के हाथ की अगुली गिरी थी। यहाँ सती को 'ललिता' देवी एव शिव को 'भव' कहा जाता है। अक्षयवट के निकट ललिता देवी का मदिर है। कुछ विद्वान् इसे ही शक्तिपीठ मानते है। यो शहर मे एक और (अलोपी माता) ललितादेवी का मदिर है। इसे भी शक्तिपीठ माना जाता है। निश्चित ही निष्कर्ष पर पहुचना कठिन है।[१] प्रयाग में देवी ललिता का मदिर हे।[२]

नैमीषारण्य मे भी भगवती ललिता का परम पवित्र स्थान है। वहाँ सम्पूर्ण शुभलक्षणो से शोभा पाने वाली भगवती ललिता विराजती है।[३]

कुल देवी

पारीको के गर्ग (गार्ग्य) बोहरा अवटक की यह कुलदेवी है।

कही-कही जहाँ देवपुरा व रोजड़ा अवटको की माता ललिता बताई गई है, वहीं कही कही रोजडा अवटक की कुलदेवी बूढण माता बताई गई है। कही देवपुरा की कुलदेवी बूढण माता बताया गया है, तो कही गार्ग्य की कुलदेवी लहण, नारायणी बताया गया है।

---

१ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३७६ कल्याण सक्षिप्त मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ ११८

२ कल्याण सक्षिप्त दवी भागवताक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ४००

३ उपराक्त पृ ४१७

□□□

श्री सच्चियाय माता

श्री सच्चियाय माताजी को सुच्चाय माता, सच्चिका माता व सूचिकेश्वरी माता के नाम से भी भक्त लोग पूजते है।

माता का आदिनाम

महिषासुर मर्दिनी, सच्चियाय माता के रूप में पूजित है।[१] श्री दुर्गासप्तशती[२] में नव दुर्गाओं के जो नाम दिये गये है, उनमें शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदात्री बताया गया है। महिषासुर का मर्दन (वध) माता कात्यायनी के द्वारा किया गया था। मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणाक[३] में इस माता को अम्बिका, वामन पुराण[४] में अम्बा, सरस्वती, नारायणी आदि नामों से भी सम्बोधित किया है। इस प्रकार सुच्चयाय माता को कात्यायनी, अम्बा-अम्बिका, सरस्वती, नारायणी भी कहा गया है।

भगवती कात्यायनी दुर्गा का छठा रूप है। देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए देवी महर्षि कात्यायन के आश्रम पर प्रगट हुई और महर्षि ने उन्हे अपनी कन्या माना इसलिए यह कात्यायनी नाम से प्रसिद्ध हुई। इस देवी के तीन नेत्र और आठ भुजाए है, जिनम शस्त्र धारण किये हुए है। इनका वाहन सिह है।

वृन्दावन की गोपियों ने श्रीकृष्ण को पति रूप में पाने के लिए मार्गशीर्ष के महीने में कालिन्दि-यमुना नदी के तट पर 'कात्यायनी' की पूजा की थी, जिससे सिद्ध होता है कि वृजमण्डल की यह आद्येश्वरी देवी है।[५]

---

१ कल्याण– तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७), पृ २९२
२ श्री दुर्गासप्तशती– कल्याण प्रेस पृ १९-२०
३ कल्याण– सक्षिप्त मार्कण्डेय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ १९५
४ कल्याण– वामन पुराण वर्ष ५६ (१९८२) पृ ११७ ११८ १२३
५ कल्याण– शक्ति उपासना अक वर्ष ६१(१९८७) पृ ४९१

देवताओं के तेज से देवी का प्रादुर्भाव और महिषासुर की सेना, सेनापतियों सहित महिषासुर का वध [१]

सुच्चाय माता महिषासुरमर्दिनी कत्यायनी के रूप मे है। माता के स्वरूप एव आयुधो का भक्त निम्न प्रकार ध्यान करता है—

'मे कमल के आसन पर बैठी हुई महिषासुरमर्दिनी भगवती महालक्ष्मी का भजन करता हू, जो अपने हाथा मे अक्षमाला, फरसा, गदा, बाण, वज्र, पद्म, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, खड्ग, ढाल, शख, घण्टा, मधुपात्र, शूल, पाश और चक्र धारण करती है तथा जिनके श्रीविग्रह की कान्ति मूगे के समान लाल है।'

पूर्वकाल में देवताओ और असुरों म पूरे सौ वर्षो तक घोर-सग्राम हुआ था। उसम असुरा का स्वामी महिषासुर था और देवताआ क नायक इन्द्र थे। उस युद्ध मे दवताओ की मेना महाबली असुरो से परास्त हो गयी। सम्पूर्ण देवताओ को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा। तब पराजित देवता प्रजापति ब्रह्माजी को आग करके उस स्थान पर गय जहा भगवान् शकर और विष्णु विराजमान थे। देवताओ ने महिषासुर के पराक्रम तथा अपनी पराजय का यथावत् वृत्तान्त उन दोनो देवेश्वरो से विस्तारपूर्वक कह सुनाया। वे बोले— 'भगवान्! महिषासुर सूय, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरुण तथा अन्य देवताआ के भी अधिकार छीनकर स्वय ही सबका अधिष्ठाता बना बैठा है। उस दुरात्मा महिष ने समस्त देवताओ को स्वर्ग से निकाल दिया है। अब वे मनुष्यो की भाति पृथ्वी पर विचरते है। देत्या की यह सारी करतूत हमने आप लोगो से कह सुनाई। अब हम आपकी ही शरण मे आये है। उसके वध का कोई उपाय सोचिए।'

इस प्रकार देवताओ के वचन सुनकर भगवान् विष्णु और शिव ने दैत्यों पर बडा क्रोध किया। उनकी भौंहे तन गयीं और मुह टेढा हो गया। तब अत्यन्त कोप म भरे हुए चक्रपाणि श्रीविष्णु के मुख से एक महान् लाल तेज प्रगट हुआ। इसी प्रकार ब्रह्मा, शकर तथा इन्द्र आदि अन्यान्य देवताओ के शरीर से भी बडा भारी तेज निकला। वह सब मिलकर एक हो गया। महान् तेज

---

१ कल्याण– मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ १९०

का वह पुंज जाज्वल्यमान पर्वत-सा जान पड़ा। देवताओं ने देखा, वहा उसकी ज्वालाए सम्पूर्ण दिशाओं मे व्याप्त हो रही थी। सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से प्रगट हुए उस तेज की कहीं तुलना नहीं थी। एकत्रित होने पर वह एक नारी के रूप में परिणत हो गया और अपने प्रकाश से तीनो लोकों में व्याप्त जान पड़ा। भगवान् शकर का जो तेज था, उससे उस देवी का मुख प्रगट हुआ। यमराज के तेज से उसके सिर मे बाल निकल आये। श्रीविष्णु भगवान् के तेज से उसकी भुजाए उत्पन्न हुईं। चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तनो का और इन्द्र के तेज से मध्य भाग (कटि प्रदेश) का प्रादुर्भाव हुआ। वरुण के तेज से जघा और पिंडली तथा पृथ्वी के तेज से नितम्ब भाग प्रगट हुआ। ब्रह्मा के तेज से दोनो चरण और सूर्य के तेज से उनकी अगुलिया हुई। वसुओं के तेज से हाथो की अगुलिया और कुबेर के तेज से नासिका प्रगट हुई। उस देवी के दात प्रजापति के तेज से और तीनो नेत्र अग्नि के तेज से प्रगट हुए थे। उसकी भौंहे सध्या के और कान वायु के तेज से उत्पन्न हुए थे। इसी प्रकार अन्यान्य देवताओं के तेज से भी उस कल्याणमयी देवी का आविर्भाव हुआ।

तदन्तर समस्त देवताओं के तेज पुञ्ज से प्रगट हुई देवी को देखकर महिषासुर से सताये हुए देवता बहुत प्रसन्न हुए। पिनाकधारी भगवान् शकर ने अपने शूल से एक शूल निकालकर उन्हे दिया, फिर भगवान् विष्णु ने भी अपने चक्र से चक्र उत्पन्न करके भगवती को अर्पण किया। वरुण ने भी शख भेट किया, अग्नि ने उन्हे शक्ति दी और वायु ने धनुष तथा बाण से भरे हुए दो तरकश प्रदान किये। सहस्र नेत्रोवाले देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से वज्र उत्पन्न करके उन्हे दिया और ऐरावत हाथी से उतारकर एक घण्टा भी प्रदान किया। यमराज ने कालदण्ड से दण्ड, वरुण ने पाश, प्रजापति ने स्फटिकाक्ष की माला तथा ब्रह्माजी ने कमण्डलु भेंट किया। सूर्य ने देवी के समस्त रोम कूपों मे अपनी किरणो का तेज भर दिया। काल ने उन्हे चमकती हुई ढाल और तलवार दी। क्षीर-समुद्र ने उज्ज्वल हार तथा कभी जीर्ण न होने वाले दो कुण्डल, कडे, उज्ज्वल अर्धचन्द्र, सब बाहुओं के लिए केयूर, दोनो चरणो के लिए निर्मल नूपुर, गले की सुन्दर हसली और सब अगुलियो मे पहनने के लिए रत्नों की बनी अगूठिया भी दी। विश्वकर्मा ने उन्हें अत्यन्त निर्मल फरसा भेट किया।

साथ ही अनेक प्रकार के अस्त्र और अभेद्य कवच दिये, इनके सिवा मस्तक और वक्ष स्थल पर धारण करने के लिए कभी न कुम्हलाने वाले कमलो की मालाए दी। जलधि ने उन्हे सुन्दर कमल का फूल भेट किया। हिमालय ने सवारी के लिए सिह तथा भाँति-भाँति के रत्न समर्पित किये। धनाध्यक्ष कुबेर ने मधु से भरा पानपात्र दिया तथा सम्पूर्ण नागो के राजा शेष ने, जो इस पृथ्वी को धारण करते है, उन्हें बहुमूल्य मणियो से विभूषित नागहार भेंट दिया। इसी प्रकार अन्य देवताओ ने भी आभूषण और अस्त्र-शस्त्र देकर देवी का सम्मान किया। तत्पश्चात् देवी ने बारम्बार अट्टहासपूर्वक उच्च स्वर से गर्जना की। उनके भयकर नाद से सम्पूर्ण आकाश गूज उठा। देवी का वह अत्यन्त उच्च-स्वर से किया हुआ सिहनाद कहीं समा न सका, आकाश उसके सामने लघु प्रतीत होने लगा। उससे बडे जोर की प्रतिध्वनि हुई, जिससे सम्पूर्ण विश्व मे हलचल मच गयी और समुद्र काप उठे। पृथ्वी डोलने लगी और समस्त पर्वत हिलने लगे। उस समय देवताओं ने अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सिहवाहिनी भवानी से कहा–– देवी, तुम्हारी जय हो। साथ ही महर्षियो ने भक्तिभाव से विनम्र होकर उनका स्तवन किया।

सम्पूर्ण त्रिलोकी को क्षोभग्रस्त देख दैत्यगण अपनी समस्त सेना को कवच आदि से सुसज्जित कर, हाथो मे हथियार ले सहसा उठकर खडे हो गये। उस समय महिषासुर ने बडे क्रोध में आकर कहा–– आ ! यह क्या हो रहा है ? फिर वह सम्पूर्ण असुरो से घिरकर उस सिहनाद की ओर लक्ष्य करके दौड़ा और आगे पहुचकर उसने देवी को देखा, जो अपनी प्रभा से तीनो लोको को प्रकाशित कर रही थी। उनके चरणों के भार से पृथ्वी दबी जा रही थी, तथा वे अपने धनुष की टकार से सातों पातालो को क्षुब्ध किये देती थी। देवी अपनी हजारो भुजाओ से सम्पूर्ण दिशाओं को आच्छादित करके खडी थीं। तदन्तर उनके साथ दैत्यो का युद्ध छिड गया। नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से सम्पूर्ण दिशाए उद्भासित होने लगी। चिक्षुर नामक महान् असुर महिषासुर का सेनानायक था। यह देवी के साथ युद्ध करने लगा। अन्य दैत्यों की चतुरगिणी सेना साथ लेकर चामर भी लड़ने लगा। साठ हजार रथियो के साथ आकर उदग्र नामक महादैत्य ने लोहा लिया। एक करोड़ रथियो को साथ लेकर महाहनु नामक दैत्य युद्ध करने लगा। जिसके रोए तलवार के समान

तीखे थे, वह असिलोमा नाम का महादैत्य पाच करोड़ रथी सैनिको सहित युद्ध मे आ डटा। साठ लाख रथियो से घिरा हुआ वाष्कल नामक दैत्य भी उस युद्धभूमि में लडने लगा। परिवारित नामक राक्षस हाथी सवारों और घुड़सवारों के अनेक दला तथा एक करोड रथियों की सेना लेकर युद्ध करने लगा। विडाल नामक दैत्य पाच अरब रथियों से घिरकर लोहा लेने लगे। इनके अतिरिक्त और भी हजारो महादैत्य रथ, हाथी और घोड़ा की सेना साथ लेकर वहा देवी के साथ युद्ध करने लगे। स्वय महिपासुर उस रणभूमि म कोटि-कोटि सहस्र रथ, हाथी और घोडा की सेना से घिरा हुआ खडा था। वे दैत्य देवी के साथ तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मूसल, खड्ग, परशु और पट्टिश आदि अस्त्र-शस्त्रो का प्रहार करते हुए युद्ध कर रहे थे। कुछ दैत्यो ने उन पर शक्ति का प्रहार किया, कुछ ने पाश फके तथा कुछ दूसरे दैत्यो ने खड्गप्रहार करके देवी को मार डालने का उद्योग किया। देवी ने भी क्रोध मे भरकर खेल-खेल में ही अपने अस्त्र-शस्त्रा की वर्षा करके दैत्यो के वे समस्त अस्त्र-शस्त्र काट डाले। उनके मुख पर परिश्रम या थकावट का रचमात्र भी चिह्न नहीं था, देवता और ऋषि उनकी स्तुति कर रहे थे और वे भगवती परमेश्वरी दैत्यो के शरीरों पर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करती रही।

देवी का वाहन सिह भी क्रोध मे भरकर गर्दन के बालों को हिलाता हुआ असुरा की सेना में इस प्रकार विचरने लगा, मानो वनो मे दावानल फैल रहा हो। रणभूमि मे दैत्यो के साथ युद्ध करती हुई अम्बिका देवी ने जितने नि श्वास छोड़े, वे सभी तत्काल सैकडो-हजारा गणा के रूप मे प्रकट हो गये और परशु, भिन्दिपाल, खड्ग तथा पट्टिश आदि अस्त्रो द्वारा असुरो का सामना करन लगे। देवी की शक्ति से बढे हुए वे गण असुरों का नाश करते हुए नगाड़ा और शख आदि बाजे बजाने लगे। उस सग्राम-महोत्सव में कितने ही गण मृदग बजा रहे थे। तदन्तर देवी ने त्रिशूल से, गदा से, शक्ति की वर्षा से और खड्ग आदि से सैकड़ो महादैत्यों का सहार कर डाला। कितनों को घंटे के भयकर नाद से मूर्च्छित करके मार गिराया। बहुतेरे दैत्यों को पाश से बाधकर धरती पर घसीटा। कितने ही दैत्य उनकी तीखी तलवार की मार से दो-दो टुकड़े हो गये। कितने ही गदा की चोट से घायल होकर धरती पर सो गये। कितने ही मूसल की मार से अत्यन्त आहत होकर रक्त वमन करने लगे। कुछ

दैत्य शूल से छाती फट जाने के कारण पृथ्वी पर ढेर हो गये। उस रणागण मे बाणसमूहो की वृष्टि से कितने ही असुरा की कमर टूट गयी। बाज की तरह झपटने वाले देवपीड़क दैत्यगण अपने प्राणा से हाथ धोने लगे। किन्हीं की बाहें छिन्न-भिन्न हो गयीं, कितनो की गर्दने कट गयी। कितने ही दैत्यों के मस्तक विदीर्ण हो गये। कितने ही महादैत्य जाघ कट जाने से पृथ्वी पर गिर पडे। कितना को ही देवी ने एक बाह, एक पैर ओर एक नेत्र वाले करके दो टुकडो मे चीर डाला। कितने ही दैत्य मस्तक कट जाने पर भी गिरकर फिर उठ जाते और केवल धड के ही रूप मे अच्छे-अच्छे हथियार हाथ मे ले देवी के साथ युद्ध करने लगते थे। दूसरे कबन्ध युद्ध मे बाजो की लय पर नाचते थे। कितने ही बिना सिर के धड़ हाथो म खड्ग, शक्ति और ऋष्टि लिए दौडते थे तथा दूसरे-दूसरे महादैत्य ठहरो! ठहरो!! यह कहते हुए देवी को युद्ध के लिए ललकारते थे। जहा वह घोर सग्राम हुआ था, वहा की धरती देवी के गिराये हुए रथ हाथी, घोडो और असुरों की लाशों से ऐसी पट गयी थी कि वहा चलना-फिरना असम्भव हो गया था। दैत्यो की सेना मे हाथी घोडा और असुरो के शरीरो से इतनी अधिक मात्रा मे रक्तपात हुआ था कि थोडी ही देर म वहा खून की बडी-बडी नदिया बहन लगी। जगदम्बा ने असुरों की विशाल सेना को क्षण भर म नष्ट कर दिया— ठीक उसी तरह, जैस तृण ओर काठ के भारी ढेर को आग कुछ ही क्षणो मे भस्म कर देती है। ओर वह सिह भी गदन के बालों को हिला-हिलाकर जोर-जोर से गर्जना करता हुआ दैत्यो के शरीरा का मानो उनके प्राण चुने लेता था। वहा देवी के गणो ने भी उन महादैत्या के साथ ऐसा युद्ध किया, जिससे देवतागण उन पर आकाश से फूल बरसाने लगे और उन सबसे बहुत सतुष्ट हुए।

दैत्या की सेना को इस प्रकार तहस-नहस होते देख महादैत्य सेनापति चिक्षुर क्रोध म भरकर अम्बिका देवी से युद्ध करने को आग बढा। वह असुर रणभूमि म देवी के ऊपर इस प्रकार बाणो की वर्षा करने लगा जेसे बादल मेरुगिरि के शिखर पर पानी की धाराय बरसा रहा हो। तब देवी ने अपने बाणो स उसके बाण समूह को अनायास ही काटकर उसके घोड़ो और सारथि को मार डाला। साथ ही, उसके धनुष तथा अत्यन्त ऊची ध्वजा को भी तत्काल काट गिराया। धनुष कट जाने पर उसके अगो को अपने बाणो से बीध डाला।

धनुष, रथ, घोडे और सारथि के नष्ट हो जाने पर वह असुर ढाल और तलवार लेकर देवी की ओर दोडा। उसने तीखी धारवाली तलवार से सिह के मस्तक पर चोट करके देवी की भी बायीं भुजा मे बडे वेग से प्रहार किया। देवी की बाह पर पहुचते ही वह तलवार टूट गयी, फिर तो क्रोध से लाल आख करके उस राक्षस ने शूल हाथ मे लिया और उसे उस महादैत्य ने भगवती भद्रकाली के ऊपर चलाया। वह शूल आकाश से गिरते हुए सूर्यमण्डल की भाति अपने तेज से प्रज्वलित हो उठा। उस शूल को अपनी ओर आते देख देवी ने भी शूल का प्रहार किया। उससे राक्षस के शूल के सैकडों टुकडे हो गये, साथ ही महादैत्य चिक्षुर की धज्जिया उड़ गयीं। वह प्राणो से हाथ धो बैठा।

महिषासुर के सेनापति उस महापराक्रमी चिक्षुर के मारे जाने पर देवताओ को पीड़ा देने वाला चामर हाथी पर चढकर आया। उसने भी देवी के ऊपर शक्ति का प्रहार किया किन्तु जगदम्बा ने उसे अपने हुकार से ही आहत एव निष्प्रभ करके तत्काल पथ्वी पर गिरा दिया। शक्ति को टूटकर गिरी हुई देख चामर को बडा क्रोध हुआ। अब उसने शूल चलाया, किन्तु देवी ने उसे भी अपने बाणो द्वारा काट डाला। इतने म ही देवी का सिह उछलकर हाथी के मस्तक पर चढ बैठा और उस दैत्य के साथ खूब जोर लगाकर बाहुयुद्ध करने लगा।, वे दोनो लडत-लडते हाथी से पृथ्वी पर आ गये और अत्यन्त क्रोध मे भरकर एक दूसरे पर बडे भयकर प्रहार करते हुए लडने लगे। तदन्तर सिह बडे वेग से आकाश की ओर उछला और उधर से गिरते समय उसने पजा की मार से चामर का सिर धड से अलग कर दिया। इसी प्रकार उदग्र भी शिला आर वक्ष आदि की मार खाकर रणभूमि मे देवी के हाथ से मारा गया तथा कराल भी दातो, मुक्को और थप्पडो की चोट से धराशायी हो गया। क्रोध मे भरी हुई देवी ने गदा की चोट से उद्धत का कचूमर निकाल डाला। भिन्दिपाल स वाष्कल को तथा बाणा स ताम्र और अन्धक को मौत के घाट उतार दिया। तीन नेत्रो वाली परमेश्वरी ने त्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य तथा महाहनु नामक दैत्या को मार डाला। तलवार की चोट से विडाल के मस्तक का धड से काट गिराया। दुर्धर और दुमुख- इन दानों को भी अपने बाणो से यमलोक भेज दिया।

इस प्रकार अपनी सेना का सहार होता देख महिषासुर ने भैसे का रूप धारण करके देवी के गणो को त्रास देना आरम्भ किया। किन्ही को थूथुन से मारकर, किन्ही के ऊपर खुरों का प्रहार करके, किन्हीं-किन्ही को पूछ से चोट पहुचाकर, कुछ को सीगो से विदीर्ण करके, कुछ गणो को वेग से, किन्ही को सिहनाद से, कुछ को चक्कर देकर और कितनो को नि श्वास वायु के झोंके से धराशायी कर दिया। इस प्रकार गणों की सेना को गिराकर वह असुर महादेवी के सिह को मारने के लिए झपटा। इसस जगदम्बा को बडा क्रोध हुआ। उधर महापराक्रमी महिषासुर भी क्रोध मे भरकर धरती को खुरों से खोदने लगा तथा अपने सीगो से ऊचे-ऊचे पर्वतों को उठाकर फेंकने और गर्जने लगा। उसके वेग से चक्कर देने के कारण पृथ्वी क्षुब्ध होकर फटने लगी। उसकी पूछ से टकराकर समुद्र सब ओर से धरती को डुबोने लगा। हिलते हुए सींगों के आघात से विदीर्ण होकर बादलों के टुकडे-टुकड हो गये। उसके श्वास की प्रचण्ड वायु के वेग से उडे हुए सैकडा पर्वत आकाश से गिरने लगे। इस प्रकार क्रोध मे भरे हुए उस महादैत्य को अपनी ओर आते देख चण्डिका ने उसका वध करने के लिए महान क्रोध किया। उन्होने पाश फककर उस महान् असुर को बाध लिया। उस महासग्राम मे बध जाने पर उसने भैसे का रूप त्याग दिया और तत्काल सिह के रूप म प्रकट हो गया। उस अवस्था मे ज्यो ही जगदम्बा उसके मस्तक काटने को उद्यत हुई, त्यो ही वह खड्गधारी पुरुष के रूप मे दिखायी देने लगा। तब देवी ने तुरन्त ही बाणो की वर्षा करके ढाल और तलवार के साथ उस पुरुष को बींध डाला। इतने मे ही वह महान गजराज के रूप म परिणत हो गया तथा अपनी सूड से देवी के विशाल सिह को खीचने और गर्जने लगा। खीचते समय देवी ने तलवार से उसकी सूड काट डाली। तब उस महादैत्य ने पुन भैस का शरीर धारण कर लिया और पहले की भाति चराचर प्राणिया सहित तीना लोका को व्याकुल करने लगा। तब क्रोध से भरी हुई जगन्माता चण्डिका बारम्बार उत्तम मधुका पान करने और लाल आख करक हसने लगी। उधर वह बल और पराक्रम के मद से उन्मत्त हुआ राक्षस अपने सीगो से चण्डी के ऊपर पर्वतों को फेकने लगा। उस समय दवी अपन बाणा के समूह स उसके फेंके हुए पर्वता को चूर्ण करती हुई बोली। बोलते समय उनका मुख मधु के मद से लाल हो रहा था और वाणी लड़खडा रही थी। देवी ने कहा– ओ मूढ! मै जब तक

मधु पीती हू तब तक तू क्षण भर के लिए खूब गर्ज ले। मेरे हाथ से यही तेरी मृत्यु हो जाने पर अब शीघ्र ही देवता भी गर्जना करेंगे।'

यो कहकर देवी उछली और उस महादैत्य के ऊपर चढ गयी। फिर अपने पैर से उसे दबाकर उन्होंने शूल से उसके कण्ठ पर आघात किया। (उनके पैर से दबा होने पर भी महिषासुर अपने मुख से दूसरे रूप मे बाहर होने लगा)। अभी आधे शरीर से ही वह बाहर निकलने पाया था कि देवी ने अपने प्रभाव से उसे रोक दिया। आधा निकला होने पर भी वह महादैत्य देवी से युद्ध करने लगा। तब देवी ने बहुत बडी तलवार से उसका मस्तक काट गिराया। फिर तो हाहाकार करती हुई दैत्यो की सारी सेना भाग गयी तथा सम्पूर्ण देवता अत्यन्त प्रसन्न हो गये। देवताओ ने दिव्य महर्षियो के साथ दुर्गा देवी का स्तवन किया। गधर्वगण गान तथा अप्सराए नृत्य करने लगीं।

कात्यायनी का नाम

महिषासुर मर्दिनी-कात्यायनी का नाम सच्चिकाय माता किस प्रकार हुआ इस सम्बन्ध में एक कथानक है[१] जिसके अनुसार– महावीर स्वामी के निर्वाण के ५२ वर्ष बाद एक बार रत्नप्रभुसूरिजी अपने पाच-सौ शिष्यो सहित उकेशपुर पधारे। उस समय राजा का मत्री ऊहड़ कृष्ण-मदिर का निर्माण करवा रहा था। कहते है कि मदिर का जितना हिस्सा दिन मे बनता था, वह रात मे वापिस ढह जाता। सूरिजी की आज्ञा के अनुसार उस स्थान पर महावीर स्वामी का मदिर बनवाया जाने लगा और कुछ ही समय मे वह मदिर बनकर तैयार हो गया। मत्री ऊहड़ की एक गाय के स्तन से नगर के किसी निश्चित स्थान पर दूध अपने आप ही बहने लगा। ऊहड ने यह बात रत्नप्रभुसूरि जी को कही और उनके निर्देशानुसार उक्त स्थान की खुदाई की, तो वहा एक मूर्ति मिली लेकिन समय से पूर्व मूर्ति को जमीन से बाहर निकालने से मूर्ति के स्तनो पर दो गाठ (ट्यूमर) रह गई। उक्त मूर्ति की प्रतिष्ठा करवा दी गई।

कालान्तर मे लोगों ने विचार किया कि मूर्ति की गाठ मिटा दी जाय, तो एक मिस्त्री को बुलाया जिसने वे गाठ काट दी। परन्तु गाठों से खून बहने लगा और वह मिस्त्री वहीं मर गया। आधी रात में देवी ने नगरवासियो को

---

१ श्री सच्चियाय माता मदिर की पावन तीर्थ स्थली का सक्षिप्त परिचय से उद्धृत पृ ४ ५

स्वप्न मे कहा कि वे तत्काल नगर खाली कर दे। शाप के भय से लोग नगर छोड अन्यत्र जा बसे- तब से जैन ओसवाल यहा नही रहते है।

नगर खाली होने के कुछ समय बाद (याने छठे पोहर) तत्कालीन जैन आचार्य कक्वसूरिजी को ओसिया बुलाकर उनके सामने सारी स्थिति रखी। उन्होने विविध उपायो से तथा अष्ट-द्रव्यादि से देवी का अभिषेक कर उन्ह प्रसन्न किया। इस देवी महिपासुर- मर्दिनी ने सत्य वचन कहने के कारण लोगो को क्षमा प्रदान की, इसलिए सच्चियाय माता' क नाम से पहिचानी जाने लगी।

स्व प जुगराज शमा[१] द्वारा प्रकाशित माता क सक्षिप्त परिचय पुस्तिका मे मूर्ति विवाद के सम्बन्ध मे कुछ तथ्य अकित किये है। विभिन्न विद्वानो के मतो को उद्धृत करते हुए, अत म यह निष्कर्ष निकला कि मूर्ति कात्यायनी माता की सच्चियाय माता के रूप मे है। उक्त पुस्तिका के अनुसार--

मूर्ति विवाद--श्री सच्चियाय का मूल मदिर स्थापत्य के आधार पर १२वी शताब्दी का माना जाता है और ऐसी भी मान्यता है कि जैनाचार्य रत्नप्रभूसूरि ने मॉस एव सुरा सेवन करन वाली इस देवी की सात्विक आहार करने वाली बनाकर इनको सच्चियाय अथवा सच्चिका' नाम दिया। पर विवाद खड़ा हुआ कि यह देवी कौन है?

उपकेश-गच्छ पट्टावलियों से-- उपकेशगच्छ पट्टावली मे इस देवी को चण्डिका या चामुण्डा आदि नामा से अभिहित किया गया है। वि स १२३४ के गयापाल के शिलालेख म इसे सच्चिका, क्षेमकरी और शीतला क नाम से सम्बोधित किया गया है। वर्तमान महिपासुर मर्दिनी ही सच्चियाय है अथवा नही, इस विषय में विद्वाना म मतभेद है।

प्रमाण-- एम ए ढाक के अनुसार मुख्य मूर्ति क्षेमकरी की थी, अन्य विद्वान कुछ और ही देविया का नाम बतलाते है। किन्तु उनके पास सतोषजनक उत्तर नहीं है। पुरातत्त्व एव सग्रहालय विभाग जयपुर क पूर्व निदशक रतनचद्र अग्रवाल ने इस विषय म काफी खोज कर यह निष्कर्ष निकाला कि महिपासुर-मर्दिनी ही सच्चियाय है। उन्ह मारवाड़ क असवतपुरा स्थान पर एक मूर्ति मिली थी,

[१] श्री सच्चियाय माता मन्दिर की पावन तीर्थ स्थली का सक्षिप्त परिचय-- पृ ८ ९

जो वि स १२३७ की है। उसके शिलालेख म महिपासुर मर्दिनी को सच्चियाय कहा गया है।

वि स १३७१ शत्रुजय पर्वत पर सच्चियाय देवी की प्रतिमा स्थापित की गई थी। वि स १४२२ म चूरू (बीकानेर) मे स्थापित सच्चियाय मदिर की मूर्ति भी महिपासुर मर्दिनी की ही है। इसी प्रकार कुछ और भी जैन मदिरों के उदाहरण है, जहा महिपासुर मर्दिनी ही सच्चियाय मानी गई है और आराधित है।

ओसियाँ स्थित सच्चियाय माता के वयोवद्ध पुजारी श्री जुगराज शर्मा के मतानुसार जिस मदिर के दाये और बाये तथा पृष्ठ भाग म जो मूर्ति होती है तथा ताकों में जिस देवी-देवता की मूर्ति होती है, वही मूर्ति निश्चित रूप से मुख्य मदिर मे होती है और इस सच्चियाय मदिर मे भी दाये-बाये और पृष्ठभाग के ताको मे महिपासुर-मर्दिनी ही है, अत यह मूर्ति महिपासुर-मर्दिनी की ही है। यही तथ्य जैन मदिर की मूर्तियों पर भी लागू होता है– जैसे महावीर स्वामी के मदिर म बाये, दाये और पीछे महावीर स्वामी की मूर्ति विद्यमान है– ओसियाँ के अन्य मदिरा मे इसी प्रकार सनातन धर्म की या जैन धर्म की मूर्तिया होती है तो पुरातत्त्ववेत्ता या इतिहासकार इसी आधार पर उस मदिर की पहिचान करते है।

मदिर स्थान

माता के वर्णित नामो यथा कात्यायनी, अम्बा-अम्बिका, सरस्वती, नारायणी नामों से मदिर देश के अनेकानेक स्थानो पर पूजित है, तथापि सच्चियाय माता के नाम से जो मदिर प्रसिद्ध है, वह जोधपुर जिले के ओसियाँ कस्बे में है।

ओसियाँ कस्बा जोधपुर से ६१ कि मी उत्तर-पूर्व मे अवस्थित है तथा पुरातत्त्व दृष्टि से एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। आवागमन की दृष्टि से जोधपुर शहर से यह स्थान रेल एव सडक मार्ग से जहा जुड़ा हुआ है वही नागौर, बीकानेर एव जैसलमेर से भी सडक मार्ग से जुडा हुआ है।

सुचयाय माता का मदिर

माता का भव्य मदिर है। यह मदिर सम्पूर्ण भारतवर्ष में विशेषत राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्र मे कुलदेवी के रूप में श्रद्धापूर्वक पूजित है। मदिर ओसिया

मे पूर्व दिशा मे एक पहाडी पर अवस्थित है, जो भूमि तल से १०० फीट ऊपर है। माता की मूर्ति तक पहुचने के लिए सीढिया निर्मित है, जिनकी कुल सख्या १०६ है। मार्ग मे नो तोरण द्वार निर्मित है, जो भक्त को अनायास ही मदिर की भव्यता दर्शित कराते है। इन तोरणद्वारो पर अनेक देवियो यथा ब्रह्मचारिणी, त्रिपुरसुन्दरी, चन्द्रघण्टा, कालिका, चद्रिका, कात्यायनी, दुर्गा, सच्चियाय आदि देवियो के नाम लिखे हुए है। सीढियो के दोनो ओर की दीवारा पर कई देवलिया है।

मण्डप द्वार के बाहर दोनो ओर बाये व दाये चवर डुलाती हुई दो सेविकाओं की भव्य प्रतिमाये हे। मदिर के मुख्य मण्डप मे भगवती चामुण्डा, वीरवर पवनसुत हनुमान रेवत भगवान नृसिह, महिपासुर-मर्दिनी माता पार्वती, वाराह भगवन एव बलराम आदि देवी-देवताओ की प्रतिमाये भी है।

माता के मदिर म परिक्रमा एव सुन्दर यज्ञ-मण्डप है। मदिर का शिखर अपनी अद्भुत छटा बिखेरता है तथा उसके चारों ओर अनेकानेक देवी-देवताओ की प्रतिमाये उत्कीर्ण है। यह मदिर आठवी सदी का बना हुआ है, किन्तु वर्तमान मदिर का अधिकाश भाग ईसा की बारहवी सदी मे बना है, जिसकी पुष्टि मदिर मे लगे स्तम्भो के शिलालेखो से होती है। इन शिलालेखो के अनुसार ब्राह्मणो के अनेकानेक परिवारा ने धन एकत्रित कर ईसा की बारहवी शताब्दी के अत मे मदिर के विभिन्न भागो का निर्माण कराया। इस मदिर के शिलालेखो के सम्बन्ध मे गोरीशकर हीराचद ओझा[१] ने लिखा है– 'उक्त माता के मदिर मे वि स १२३६ कार्तिक सुदी १ (एकम) (ई स ११७९ ता ३ अक्टूबर) बुधवार वि स १२३४ (चैत्रादि १२३५) चैत्र सुदी १० (ई स ११७८ ता ३० मार्च) गुरुवार और वि स १२४५ फाल्गुण सुदी ५ (ई स ११८९ ता २२ फरवरी) के छोटे-छोटे लेख है। दूसरे लेख से ज्ञात होता है कि सेठ गयपाल ने यहा पर चडिका, शीतला, सच्चिका, क्षेमकरी और क्षेत्रपाल की मूर्तिया स्थापित कराई थी। इसका सभा-मण्डप स्तम्भा पर स्थित है।

माता की मनमोहक मूर्ति महिपासुर-मर्दिनी की प्रतिमा है। माता अनेकानेक आभूपणा से अलकृत है। कल्याण[२] म माता के सदर्भ म बताया गया है कि

१ जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड– पृ ३०
२ कल्याण तीर्थाक वर्ष ३१ (१९५७) पृ २१२

महिषासुर-मर्दिनी देवी को ही यहा सच्चियाय माता कहते है। माता के बाई ओर वैष्णवी माता की आकर्षक प्रतिमा है। यह मूर्ति नृत्य मुद्रा में है तथा शख, चक्र, गदा व पद्म इनके हाथों की शोभा बढ़ाते है। वि स १२४७ के शिलालेख के अनुसार कोल्ही नामक एक ब्राह्मण ने देवी के कुम्भोस्तम्भ और छत्र का निर्माण कराया था।

मूर्ति के भोग

मूर्ति के वर्तमान म शाकाहारी भोग लगाया जाता है। एसा कहते है कि पूर्व म माता के मास-मदिरा का भोग लगता था, किन्तु जैन आचार्य रत्नप्रभसूरि के समय से माता को शाकाहारी भोजन का ही भोग लगाया जाने लगा। इस सम्बन्ध में एक कथानक इस प्रकार है कि यहा (ओसिया) क राजा उत्पलदेव के पुत्र को एक बार सर्प ने डस लिया। फलत राजकुमार का निधन हो गया। तत्समय जैनाचार्य रत्नप्रभसूरि वहीं विराज रहे थे। उन्होंने अपनी मत्र शक्ति से राजकुमार को जीवित कर दिया। उनके आग्रह पर माता को चढाई जाने वाली पशुबलि एव मदिरा-पान की जो व्यवस्था थी वह समाप्त हो गई तथा उसी समय से माता के शाकाहारी भोग लगने लगा। माता के प्राय लापसी का भोग लगता है।

प्राचीनता

पुरातत्त्व की दृष्टि से यह स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ओसवाल महाजनो का उत्पत्ति-स्थान ओसिया ही माना जाता है। इसका प्राचीन नाम जैन-ग्रन्थो के अनुसार 'उपकेश पट्टन' था। श्री के सी जैन[१] के अनुसार इसका प्राचीन नाम उवाशिशा व उपकशा था, जैसा कि शिलालेखो व प्रशस्तियो म उल्लखित है। स्थानीय लोगो स जानकारी लने पर इसके प्राचीन नाम उकसागाल, उकेश, उपकेशपुर, पट्टन भी बताये गये। इस कस्बे की प्राचीनता के सम्बन्ध मे जोधपुर राज्य के इतिहास[२] मे निम्न वृत्तान्त मिलता है– 'रत्नप्रभसूरि ने यहा के राजा और सारी प्रजा को जैन बनाया। जैन यतियों ने ओसवालो की उत्पत्ति का

---

१ एनसियन्ट सिटीज एण्ड टाउन्स ऑफ राजस्थान पृ १८०

२ जोधपुर राज्य का इतिहास– प्रथम खण्ड ले गौरीशकर हीराचद ओझा, पृ २८ २९

समय वीर-निर्वाण सवत्[1] ७० (विक्रम सवत् से ४०० और ईस्वी सन् से ४५७ वर्ष पूर्व) और भाटो ने वि स २२२ (ई स १६५) दिया है, जो कल्पित है क्योंकि उस समय तक तो ओसिया नगर की स्थापना का भी पता नही चलता। ओसवालो की उत्पत्ति का समय वि स ११वी शताब्दी के आसपास माना जा सकता है।' महावीर स्वामी के मदिर के शिलालेख से यह विदित है कि ईसा की आठवी शताब्दी के अत म यहा गुर्जर प्रतिहार शासक वत्सराज शासन करता था। अनेकानेक अन्य तथ्यो के आधार पर यह शहर प्राचीन शहर था।

मदिरों की शृखला

ओसिया विभिन्न मदिरो की एक लम्बी शृखला के लिए प्रसिद्ध रहा है। इसे राजस्थान का खजुराहो भी कहते है। ये मदिर आकार की दृष्टि से छोटे अवश्य है, किन्तु दक्षिण भारत के विशाल मदिरो से सरचना एव स्थापत्य-कौशल मे किसी भी प्रकार कम नही है। 'ओसिया के मदिर अपने आप मे अद्भुत है।[2] ब्राह्मण एव जैन समुदाय का यह एक अति श्रद्धास्पद तीर्थ-स्थान है। ब्राह्मण एव जैन समुदाय क यहा १६ प्रसिद्ध मदिर है, जिनमे से अधिकाश मदिर झालरापाटन (पाटन, चन्द्रावती) मे निर्मित मदिरो के स्थापत्य के अनुरूप है। ये मदिर सातवी, आठवी शताब्दी के है। प्रत्येक मदिर की स्थापत्य कला दूसरे मदिर से भिन्न है। इनके प्रवेश द्वार देखते ही बनते है, जो अन्य कलाकृतियो के साथ नवग्रह प्रतिमाओ से भी अलकृत है। यहा का सूर्य-मदिर अपनी विशिष्टता रखता है तथा प्राचीन मदिरो में यह सबसे आकर्षक है। इसके शिखर एव स्तम्भो पर उत्कीर्ण सजावट प्रशसनीय है। सूर्य भगवान की अनूठी मूर्ति है। महावीर स्वामी का मदिर भी अपने किस्म का अनूठा मदिर है। पिपला देवी का भव्य मदिर है जिसका जगमोहन (सभा

---

१ वीर निर्वाण सवत् क सम्बन्ध म गौरीशकर हीराचन्द ओझा न अपनी पुस्तक भारतीय प्राचीन लिपिमाला (द्वि सस्करण) म पृ १६३ पर लिखा है कि जैना क अतिम तीर्थंकर महावीर (वीर, वर्द्धमान) क निर्वाण (मोक्ष) स जो सम्वत् माना जाता है उसको वीर निर्वाण सवत् कहत है।

२ राजस्थान थ्रू एजज, डॉ दशरथ शर्मा पृ २०९

मडप) बहुत बडा है तथा तीस स्तम्भो पर आधारित है। सूर्य मदिर के अतिरिक्त विष्णु भगवान के मदिर तथा भगवान सत्यनारायण का मदिर भी है, जिसका जीर्णोद्धार वि स १९६२ में कराया गया। इसके अतिरिक्त भैरव, चण्डिका, शीतला, क्षेमकरी क्षेत्रपाल आदि की प्रतिमाये भी सच्चियाय मदिर मे हे।

मुहता नैणसी के अनुसार माता ने राजा उत्पलदेव को तालाब मे खजाना बताया था। तालाब की खुदाई में जो खजाना मिला उससे देवी का मदिर बनाया गया तथा तभी से तालाब का नाम नवलखा तालाव पडा, जो ओसिया कस्बे के दक्षिण-पूर्व में है।

मुगलो द्वारा मदिरो के भव्य-स्थलों एव मूर्तियो को निर्दयतापूर्वक तोडा गया। के सी जैन[1] के अनुसार इस क्षेत्र से गुजरते हुए सन् ११९५ मे मुस्लिम सेना ने इस कस्बे का विध्वस किया। सभवत यह पथ्वीराज तृतीय पर मोहम्मद गौरी के आक्रमण का समय था। मदिरो के भग्नावशेष इस बात का प्रमाण देते है कि यह क्षेत्र मदिरो की शृखला स परिपूर्ण था।

चमत्कार

यो तो माता के अनेकानेक चमत्कार है तथापि मुहता नैणसी री ख्यात[2] भाग १ मे स्वप्न म माता द्वारा युद्ध मे विजयी होने का जो वृत्तान्त दिया गया है, वह उन्ही के शब्दो मे उद्धृत किया जा रहा है–

वाघ पवार, तिवारी औलादरा साखला[1] हुवा तिण साखलारी दोय ठाकुराई सारीखी हुई तिणरी विगत–

वाघ पवार छहोटण, बाहडमेर छोडनै वाघोरियै आइ रह्यो। पडिहार गेचदरै घरै भुवा सुदर हुती, तिण परसग आयो। वाघोरियारो भाखर[2] दिखायो। इणरी भुवा खरच दै। पछै गैचदनू रजपूते भखायो,[3] कह्यो–– तिणरी इसी दछा दीसै छै[4], थानू मार धरती अै लेसी[5] तरै गैचद इण ऊपर फौज मेली। वाघनू मारियो। घणा साखला मारिया। मुहतो सुगणो उबरियो।[6] वैरमी वाघावत पेट

---

१ एनसिएट सिटीज एण्ड टाउन्स ऑफ राजस्थान पृ १८४
२ सम्पादक– बद्रीप्रसाद साकरिया पृ ३२४ २५
(१ साखला वाय जिसकी औलाद क साखल हुए २ पहाड ३ बहकाया ४ इसकी एसी हालत दीखती है ५ तुमको मार करके तुम्हारी धरती य ले लग ६ बच गया।)

हुतो[१] सु मुहते सुगणो इणरी मानू लेनै अजमेर गयो। उठै गया पछै वैरसी वेगोही जायो[२] मोटो हुवो। अजमेर धणी था तिणनू मु। सुगणो वैरसीनू लेजाय मिळियो। घणा दिन चाकरी की। पछै मुजरो हुवो तरै कह्यो— 'जाणै सो माग'[३] तरै इण कह्यो— 'म्हारो वाप गैचद बिना खून[४] मारियो छै, तिणरी ऊपर करो[५] फौज दो। तरै फौज उणे[६] दी। तरे वैरसी माताजीरी इछना मनमे करी[७]— म्हारे वापरो वैर वळे[८]। गैचद हाथ आवै तो हू क्वळपूजा करनै श्री सचियायजीनू माथो चढ़ाऊ।' पछै सचियायजी आय सुपनै मे हुकम दियो, वासै[९] हाथ दिया नै कह्यो— काळै, वागै, काळी टोपी, वैहलरै[१०] काळी खोळी, काळा बळद जोतरिया[११] जिदारै[१२] रूप किया साम्हा मिळसी। ओ गैचद छै, तू मत चूकै कूट मारै।' पछै वैरसी मूधियाड़ ऊपर फौज लेनै दोड़ियो। साम्हा उण रूप आयो, सु गैचद मारियो। पछै ओसिया जात आयो। आप एकत देहुरो जड़नै क्वळपूजा करणी माडी[१३] तरै[१४] देवीजी हाथ झालियो[१५] खण्डो महेधारी सेवा पूजा सो[१६] राजी हुवा तोनै माथो बगसियो, तू सोनारो माथो कर चाढ।' आपरे हाथरो सख वैरसीनू दियो, कह्यो— 'ओ सख वजायनै साखलो कहाय।[१७]

पछै वेरसी आय रूणवाय वसियो। मधियाडरो कोट पड़िहारारो उपाडनै साखलै रूणकोट करायो।[१८]

पुजारी

माताजी की पूजा सेवक ब्राह्मणों द्वारा की जाती है, जो अपने को शाकद्वीपी ब्राह्मण बतलाते है तथा उनके द्वारा सेवा करने के कारण वे सेवक कहलाये, ऐसी लोक-मान्यता है। सवत् १२३६ के कार्तिक सुदी १ (एकम) के एक

---

१ बाघा का बटा वैरसी उस समय गर्भ म था २ वहा जान क बाद जल्दी ही वैरसी का जन्म हा गया ३ तेरी इच्छा हा सो माग ४ अपराध ५ उसक लिए सहायता करो ६ उसन ७ तब वैरसी न अपन मन म सचियाय माताजी का ध्यान करक अपनी इच्छा प्रकट की। ८ मेरे बाप का वैर निकले ९ पीछ १० बहल क ११ काले बैल जुते हुए ५ जिन्न का। १२ बाद म आसिया की यात्रा करन को आया १३ मन्दिर का बद करक एकान्त में कमल पूजा करनी शुरू की १४ तब १५ पकड़ा १६ स १७ यह शख बजा और साखला प्रसिद्ध हा १८ पडिहारा क अधीनस्थ मूधियाड़ गाव का कोट गिरवा कर साखलों न उसस रूणावाय म रूणकोट बनवाया।

शिलालेख से जो माता के मंदिर के पृष्ठभाग में है, से यह विदित है कि उस समय से ही 'सेवक' माताजी की पूजा करते है।

मंदिर की व्यवस्था

मंदिरो के जीर्णोद्धार मे माता के भक्त एव पुजारी जी की प्रेरणा प्रमुख रही है और यही कारण है कि मंदिर सुव्यवस्थित हालत में है। जनसहयोग, जिसमे ओसिया नगरवासियों का महत्त्वपूर्ण योगदान है, के आधिक सहयोग से सभी मंदिरो पर ध्वजा, दण्ड स्थापित है तथा नवदुर्गा के तीन मंदिरो मे मूर्ति स्थापित की गई है, जहा प्रतिवर्ष वैशाख सुदी ८ मे वैशाख सुदी ११ तक अभिषेक पूजन होता है।

यो तो माता के दर्शनार्थ प्रतिदिन भक्त लोग आते है किन्तु चैत्र एव आसोज के नवरात्राओं मे यहा विशाल मेला लगता है।

वर्तमान मे सच्चियाय माता के मंदिर की व्यवस्था एक ट्रस्ट द्वारा की जा रही है।

यात्रियों की सुख-सुविधा

यात्रियो की सुख-सुविधा के लिए ट्रस्ट द्वारा ३० कमरो का निर्माण कराया जा चुका है जहा पानी, बिजली की समुचित व्यवस्था है तथा यात्रियों को बिस्तर भी उपलब्ध कराये जाते है। मंदिर प्रागण मे भोजनशाला है, जहा यात्री की माग पर भगवती का प्रसाद (लापसी) बनाया जाता है।

माता के भक्त जात-जडूले उतारने आते है। शादी के बाद गठजोड़े की जात भी देने आते है। जडूले एव जात देने प्राय नवरात्रो के समय भक्तजन अधिक आते है।

पारीको के निम्न अवटको की यह कुलदेवी है—

१	बमणा	जोशी
२	गलवा	जोशी
३	गणहड़ा	जोशी
४	पण्डिता (पिण्डताणा)	जोशी
५	भुरभुरा	जोशी

६ केशवाणा (किवाण्या)	तिवाडी
७ पाईवाल	तिवाडी
८ सजोगी	तिवाडी
९ नगलाडा (नगलाण्या)	मिश्र (बोहरा)
१० भण्डारी	मिश्र (बोहरा)
११ गोगडा	उपाध्याय
१२ वामण्या (बामणिया) (बमन्या)	व्यास

● लखक सुन्धाय माता क दर्शनार्थ दिनाक २१ मई १९९९ का गया। साथ थे चि खगन्द्र शाभित व माहित। चि दीपकराज व सुरेन्द्र पारीक।

□□□

शाकम्भरीः सकरायः समराय माता

पद्मपुराण[१] मे मा भगवती शाकम्भरी का ध्यान निम्न प्रकार दिया गया है—

शूल पाशकपालचापकुलिश बाणान् सृणि खेटक
शख चक्रगदाहिखड्गमभय खट्वाङ्गदण्डधराम।
वर्षाभावशाद्धतान् मुनिगणान् शाकेन यारक्षयत।
त्रैलोक्या जननीं महेशदयिता ता स्तौमि शाकम्भरीम्।।
(पद्मपुराण)

जिन्होंने अपने हाथो मे क्रमश शूल, पाश, कपाल, धनुष, वज्र, बाण, अकुश, मूसल, शख, चक्र, गदा, सर्प, तलवार, अभयमुद्रा, खट्वाङ्ग और दण्ड धारण कर रखा है तथा वर्षा के अभाव मे दीर्घकाल तक अकाल पड़ जाने के कारण जिन्होने अपने शरीर से शाक आदि पदार्थो को उत्पन्न करके मतप्राय मुनियो के प्राणो की रक्षा की थी, उन त्रैलोक्य-जननी, भगवान् शकर की प्रिय वल्लभा भगवती शाकम्भरी की मै स्तुति करता हू।

श्री दुर्गा सप्तशती म माता के स्वरूप का जा वर्णन किया गया है, वह निम्न प्रकार है[२]—

शाकम्भरी-नीलवर्णा-नीलोत्पलविलोचना।
गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी।। १२।।
सुकर्कशसमोत्तुङ्गवृत्तपीनघनस्तनी।
मुष्टिं शिलीमुखापूर्ण कमल कमलालया। १३।।
पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्य शाकसञ्चयम्।
काम्यानन्तरसैर्युक्त क्षुत्तृण्मृत्युभयापहम्।। १४।।
कार्मुक च स्फुरत्कान्ति बिभ्रती परमेश्वरी।

---

१ कल्याण– भगवत लीला अक वर्ष ७२ अक ९ सितम्बर १९९८
२ श्री दुर्गासप्तशती गीता प्रेम गारखपुर पृ २१० ११

शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता॥ १५॥
विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम्।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती॥ १६॥
शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायञ्जपन् सम्पूजयन्नमन्।
अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृत फलम्॥ १७॥

शाकम्भरी देवी के शरीर की काति नीले रग की है। उसके नेत्र नील कमल के समान है, नाभि नीची है तथा त्रिवली से विभूषित उदर (मध्यभाग) सूक्ष्म है॥१२॥ उनके दोनो स्तन अत्यन्त कठोर, सब ओर से बराबर, ऊचे, गोल और हाथो मे बाणो से भरी मुष्टि, कमल, शाक-समूह तथा प्रकाशमान धनुष धारण करती है। वह शाकसमूह अनन्त मनोवाञ्छित रसो से युक्त तथा क्षुधा, तृषा और मृत्यु के भय को नष्ट करने वाला तथा फूल, पल्लव, मूल आदि एव फलो से सम्पन्न है॥१३-१५॥ वे ही शाकम्भरी, शताक्षी तथा दुर्गा कही गयी है। वे शोक से रहित, दुष्टो का दमन करने वाली तथा पाप और विपत्ति को शात करने वाली है। उमा गौरी सती, चण्डी, कालिका और पार्वती भी वे ही है॥१६॥ जा मनुष्य शाकम्भरी देवी की स्तुति, ध्यान, जप, पूजा और वन्दन करता है, वह शीघ्र ही अन्न पान एव अमृतरूप अक्षय फल का भागी होता है॥१७॥

शाकम्भरी पराशक्ति भगवती जगदम्बा का ही रूप है।[१] एक बार वर्षा के अभाव में सूखा पड़ गया। पृथ्वी पर एक बूद भी जल नही रहा। कुए, बावड़िया, पोखरे और नदिया बिल्कुल सूख गईं ब्राह्मणों के प्रार्थना करने पर शाक और खाद्य पदार्थ रस वाले फल हाथ म धारण कर करोड़ों सूर्यों के समान चमकने वाला विग्रह करुण रस का अथाह समुद्र था। उनके नेत्रों से गिरत जल द्वारा नो दिन-रात तक अथाह वृष्टि होती रही। भगवती न अनेक प्रकार के शाक तथा स्वादिष्ट फल अपने हाथ से दिय। भाति-भाति के अन्न उत्पन्न हुए। पशुओं के लिए घास हुआ। अत भगवती का एक नाम शाकम्भरी भी पड़ गया।

---

१ कल्याण– सक्षिप्त देवीभागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ३९५ १७ का साराश।

ऐसा होने पर दुर्गम नामक दैत्य अपनी सेना को लेकर अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर युद्ध के लिए चल पडा। उसके पास एक अक्षौहिणी सेना थी। देवी ने देवता और ब्राह्मणो की रक्षा के लिए तेजोमय चक्र खडा कर दिया। देवी और दैत्य दोनो की लड़ाई ठन गई। देवी के विग्रह से बहुत सी उग्र शक्तिया प्रकट हुई। कालिका, तारिणी, बाला, त्रिपुरा, भैरवी, रमा, बगला, मातङ्गी, त्रिपुर-सुन्दरी, कामाक्षी, देवी तुलजा, जम्भिनि, मोहिनी, छिन्नमस्ता, गुह्यकाली और दशसहस्त्रबाहुका आदि नाम वाली बत्तीस शक्तियों के पश्चात् चौसठ और फिर अनगिनत शक्तियो का प्रादुर्भाव हुआ। देवी के बाणो से राक्षस की मृत्यु हो गई और वह देवी के रूप मे समा गया।

महाभारत के वनपर्व[१] मे भगवती शाकम्भरी की महिमा का गुणगान निम्न प्रकार किया गया है—

शाकम्भरीति विख्याता त्रिषु लोकेषु विश्रुता।
दिव्य वर्षसहस्त्र हि शाकन किल भारत॥
आहार सा कृतिवती मासि मासि नराधिप।
ऋषयोऽभ्यागतास्तत्र देव्या भक्तास्तपोधना ॥
आतिथ्य च कृत तेषा शाकेन किल भारत।
तत शाकम्भरीत्येव नाम तस्या प्रतिष्ठितम्॥
शाकम्भरीं समासाद्य ब्रह्मचारी समाहित ।
त्रिरात्रमुषित शाक भक्षयेन्नियत शुचि ॥
शाकाहारस्य यत् सम्यग्वर्षैर्द्वादशभि फलम्।
तत् फल तस्य भवति देव्याश्छन्देन भारत॥
(महा वनपर्व तीर्थ ८४/१४-१८,पद्म आदि २८/१४-१८)

भगवती शाकम्भरी का नाम तीनों लोकों मे विख्यात है। उन्होंने हजार दिव्य वर्षो तक महीने के अन्त मे एक बार शाक का आहार करके तप किया था और जब देवीभक्त ऋषिगण उनके आश्रम पर आये, तब शाक से ही उनका आतिथ्य किया था। अत एव उनका नाम शाकम्भरी कहा जाता है। शाकम्भरी के पास जाकर ब्रह्मचर्यपूर्वक ध्यानपरायण होकर यदि तीन दिनों तक स्नानादि

---

१ कल्याण तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७), पृ ६६

से पवित्र रहे एव शाकाहार करे, तो बारह वर्षो तक शाकाहार करने का जो फल है, वह उसे देवी की कृपा से प्रसाद के प्राप्त हो जाता है।

शाकम्भरी माता क स्थान या तो अनेकानेक स्थानों पर है, किन्तु प्राचीनता की दृष्टि से निम्न स्थान अपना विशिष्ट एव ऐतिहासिक महत्त्व रखते है—

१ उदयपुरवाटी स्थित सकराय माता।
२ साभर स्थित शाकम्भरी (समराय) माता।
३ बहेट, सहारणपुर (मेरठ) स्थित शाकम्भरी , शताक्षी माता।

शाकम्भरी माता के मदिर यद्यपि ७वी शताब्दी म या इसके पूर्व मे निर्मित हुए है, तथापि यह अनादि देवी है। श्रीदुर्गा सप्तशती मे शाकम्भरी माता की स्तुति मार्कण्डेय पुराण के आधार पर की गई है तथा माता द्वारा राक्षसो के सहार का विषद वर्णन किया गया है। मार्कण्डेय पुराण के ग्यारहवे अध्याय म देवी ने कहा है[१]—

ततोऽहमखिल लोकमात्मत्मदेहसमुद्भवै ।
भरिष्यामि सुरा शाकै-रावृष्टे प्राणधारकै ॥ ४८॥
शाकम्भरीति विख्याति तदा भाविष्यायह भुवि।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्य महासुरम्॥ ४९॥

देवताओ। उस समय मै अपने शरीर से उत्पन्न हुए शाका द्वारा समस्त ससार का भरण पोषण करूगी। जब तक वर्षा नही होगी, तब तक वे शाक ही सबके प्राणों की रक्षा करेंगे॥४८॥ ऐसा करने के कारण पृथ्वी पर 'शाकम्भरी' नाम स मेरी ख्याति होगी। उसी अवतार मे मै दुर्गम नामक महादैत्य का वध भी करूगी॥४९॥

शाकम्भरी माता के तीन प्राचीन मदिर है—

१ सकराय माता (उदयपुरवाटी, जि झुन्झुनू)
२ शाकम्भरी, समराय (साभर)
३ शाकम्भरी, शताक्षी (सहारनपुर)।

---

१ कल्याण– सक्षिप्त मार्कण्डय-ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ २३०

माता के विभिन्न स्थानो म प्रसिद्ध मंदिरों की जानकारी के क्रम में सवप्रथम उदयपुरवाटी स्थित सकराय माता का आलेख प्रस्तुत है।

स्थिति

अरावली पवतमाला की खण्डेला, उदयपुरवाटी, रघुनाथगढ, सीकर आदि की पर्वतीय उपत्यकाओ के पास प्रसिद्ध लोहार्गल तीर्थ स्थान के समीप सकराय माता का मंदिर अवस्थित है। माता के मंदिर क चारो ओर पवतमालाये है। यह सम्पूर्ण क्षेत्र धार्मिक भेत्र है जहा हिमालयपुत्र लाहागल तीर्थ-स्थान है। इस क्षेत्र का विशद वर्णन महाभारत के सभापर्व तथा वनपर्व पद्मपुराण, वायुपुराण इत्यादि प्राचीन ग्रन्थो म किया गया है। माता के मंदिर के चारो ओर जहा प्रकृति का निश्चल साम्राज्य है, वहीं चारो ओर बहते झरने कल-कल करती शकरा नदी, आम्र कुञ्जा, कनीर व सीताफल के वृक्ष तथा अनेकानेक अन्य फलदार वृक्षा व पुष्पलताओ से आच्छादित क्षेत्र यहा के वातावरण को सुवासित करता है--मनोहारी छटा बिखेरता है।

सड़क माग से माता के मंदिर तक आने का उदयपुर (उदयपुरवाटी) से ही एकमात्र रास्ता है। माता का स्थान सडक मार्ग से निम्न स्थानो से है–

(i) खण्डेला
(ii) सीकर
(iii) झुन्झुनू
(iv) लोहागल

यात्रीगण माताजी के दर्शनार्थ गोल्याणा, खण्डेला, पलसाना, राणोली, गोरचा आदि ग्रामो स भी आते है, किन्तु इन स्थानों से सीधे आने वाल यात्रियों को पहाड़ी की चढाई करके आना होता है, अत सुगम रूप से आने के लिए सड़क मार्ग उदयपुरवाटी, जिसे उदयपुर चिराणा भी कहते है, से ही है।

स्थान की प्राचीनता[१]

यह क्षेत्र अत्यन्त प्राचीन है। लोहार्गल-महात्म्य में इसकी प्राचीनता का विशद वर्णन किया गया है। यहा का ब्रह्महृद-तीर्थ देवताओं का

---

१ विस्तृत अध्ययन क लिए लाहार्गल महात्म्य' दख।

अत्यन्त प्रिय तीर्थ था। कलियुग मे पापप्रवण लोग स्नान करके इस तीर्थ को दूषित न कर दे, इस आशका से देवताओ ने ब्रह्माजी से इस तीर्थ की रक्षा करने की प्रार्थना की। ब्रह्माजी के आदेश से हिमालय ने अपने पुत्र केतु नामक पर्वत को यहा भेजा। केतु ने अपनी आराधना से तीर्थ के अधिदेवता को प्रसन्न किया और उनकी आज्ञा से तीर्थ का आरक्षित कर लिया। इस प्रकार ब्रह्महृद-तीर्थ पर्वत के नीचे लुप्त हो गया किन्तु उसकी सात धाराए पर्वत के नीचे से प्रवाहित होने लगीं। वे धाराए आज भी विद्यमान है।

इस क्षेत्र मे सूर्यनारायण ने विष्णु भगवान् की आराधना की, इन्द्र ने यहा तपस्या की, रावण ने वर प्राप्ति हेतु घोर तप किया। परशुरामजी ने पापों से मुक्ति पाने हेतु यज्ञ किया तथा महाभारत के युद्ध के पश्चात् पाण्डवा ने महासहार के पाप से मुक्ति पाने हेतु सभी तीर्थों की यात्रा की। कृष्ण भगवान के यह कहने पर कि जहा भी तुम्हारे अस्त्र-शस्त्र गल जावे, वही तुम पाप मुक्त हो जाओगे। लोहार्गल तीर्थ स्थान पर ही भीम की गदा एव अन्य के शस्त्र गल गये। इस क्षेत्र की प्राचीनता के सम्बन्ध मे अनेकानेक प्राचीन ग्रन्थो एव पुराणो मे विशद वर्णन प्राप्त है।

लोहार्गल माहात्म्य

सकराय माता का स्थान लोहार्गल (लोहागढ़) क्षेत्र मे है। लोहार्गल माहात्म्य मे इस क्षेत्र की परिक्रमा का वर्णन किया गया है तथा माता द्वारा मानव मात्र क कल्याणार्थ शाक (भाजी) द्वारा रक्षा की गई जिसका इन्द्र द्वारा स्तुति करने का वर्णन है[१] —

यत्रेन्द्रस्तपसा पूर्वं जगाम स्वपद द्विजा ॥६॥
शक्रधारा नर स्नात्वा स्वर्गलोके महीयते।
तत्र शाकम्भरीं नत्वा सर्वकामफलप्रदाम् ॥७॥
अनावृष्ट्या पुरा शाक सृष्ट्वा सभरिता प्रजा ।
तेन शाकम्भरी नाम्ना ख्याता सर्वार्थदायिनी ॥८॥

फिर वहा से तीनो लोको मे प्रसिद्ध, जो शक्रतीर्थ है, वहा जाना चाहिए। हे विप्रो! यह वही स्थान है, जहा पर पहले देवराज इन्द्र ने तपस्या करके

१ लाहार्गल महात्म्य– ल रामनरश मिश्र पृ ७८

अपनी पदवी पुन प्राप्त की थी॥६॥ उस शक्रतीर्थ मे स्नान कर समस्त कामनाओ के पूर्ण करने वाली शाकभरी दवी का पूजन करने से मनुष्य स्वर्ग लोक मे आनन्द पाता है॥७॥ यह वही देवी है जिसने पहले किसी समय अनावृष्टि के कारण अकाल पड़ने पर केवल शाक (भाजी) के द्वारा समस्त प्रजाओ की प्राणरक्षा की थी। इसी से लोक मे उसका अन्वर्थ नाम 'शाकम्भरी' प्रसिद्ध है। वह सब प्रकार के मनोरथो को प्रदान करने वाली है॥८॥

लोहागल महात्म्य मे इस क्षेत्र के सूर्यकुण्ड, ब्रह्मकुण्ड, कोह कुण्ड (कुह कुण्ड), नागकुण्ड, खुरकुण्ड तथा गगा, सरस्वती, सध्या, शक्रा, शोभाग्यवती (शोभावती) नदियों का भी वर्णन आया है।

शक्रधारा नदी के उद्गम स्थल पर माता सकराय का स्थान है। यह स्थान ब्रह्मकुण्ड के दक्षिण की ओर तथा इस स्थान के पश्चिम की ओर कुह कुण्ड भी है।

नामकरण

माता के नाम के सम्बन्ध म अनक विद्वानो के अलग-अलग मत है। सभव है— शक्र नदी के पास होने से इसका नाम शक्रा और बाद म सकराय हो गया हो। शक्र (इन्द्र) ने यहा तपस्या की थी, अत शक्र से सकराय हो गया हो।

डॉ बाबूलाल शर्मा[1] क अनुसार— 'प्राचीन काल मे देवी का नाम शकरा था। शकरा से ही बाद म 'शकराई', 'सकराई', 'सकराइ' और 'सकराय' नाम हो गया। मदिर से थोडी दूर पर कोह-कुण्ड नामक स्थान के पास 'शकराणक' नाम का गाव था, जिसका उल्लेख हर्षनाथ पर्वत के सम्वत् १०३० के शिलालेख में हुआ है। गाव का यह नाम देवी के शकरा नाम स ही पडा था। शकराणक' से भी शक्रायण, सक्रायण और फिर 'ण' के लोप से सकराय' नाम बनता है। हिन्दू धर्मकोष[2] के अनुसार— शाकम्भरी दुगा का नाम है। इसका शाब्दिक अर्थ है 'शाक से जनता का भरण करन वाली।'

---

१ शाकम्भरी श्री पृ ९०

२ डॉ राजबली पाण्डय पृ ६२२

आठवी शताब्दी से ग्यारहवी शताब्दी विक्रमी तक के यहा पर उपलब्ध तीन शिलालेखो मे देवी का शकरा के नाम से ही स्मरण किया गया है। शकरा शब्द का ही प्रचलित रूप सकराय है। इस प्रदेश के सर्वसाधारण जन, परम्परा से इस देवी को इसी नाम से पुकारते आ रहे है। किन्तु यहा के आधुनिक सस्कृतज्ञ विद्वानो ने शकरा (सकराय) को शाकम्भरी कहना शुरू कर दिया है, जो असगत है। शाकम्भरी (साभरि-साभर), अजमेर के प्रतापी चौहान राजाओ की पहली राजधानी थी। वही पर शाकम्भरी देवी का इतिहास-प्रसिद्ध मदिर है और शाकम्भरी के नाम पर ही उस स्थान का नाम शाकम्भरी (साभर) प्रसिद्ध हुआ था। इसलिए इस सकराय स्थान को शाकम्भरी कहना इतिहास सम्मत नही है। इसका सही नाम शकरा या सकराय है।'[1]

कल्याण के सक्षिप्त श्रीदेवीभागवत अक[2] मे माता के नामो के इतिहास का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

प्राचीन समय की बात है– दुर्गम नाम का एक महान दैत्य था। उसकी आकृति अत्यन्त भयकर थी। हिरण्याक्ष के वश मे उसका जन्म हुआ था। उस महानीच दानव के पिता राजा रुरु थे। देवताओ का बल वेद है। वेद के लुप्त हो जाने पर देवता भी नही रहेगे, इसमे कोई सशय नही है। अत पहले वेद को ही नष्ट कर देना चाहिए– यो सोचकर वह दैत्य तपस्या करने के विचार से हिमालय पर्वत पर गया। मन में ब्रह्माजी का ध्यान करके उसने आसन जमा लिया। वह केवल वायु पीकर रहता था। उसने एक हजार वर्षो तक बडी कठिन तपस्या की। उसके तेज से देवताओ और दानवो सहित सम्पूर्ण प्राणी सतप्त हो उठे। तब विकसित कमल के समान सुन्दर मुख से शोभा पाने वाले चतुर्मुख भगवान् ब्रह्मा प्रसन्नतापूर्वक हस पर बैठकर वर देने के लिए दुर्गम के पास पधारे। उस समय दुर्गम समाधि लगाये था। उसकी आखे मुदी हुई थी। ब्रह्माजी ने उससे स्पष्ट स्वर म कहा— 'तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हारे मन में जो वर पाने की इच्छा हो, वह माग लो। मै वरदाताओं का स्वामी हू। आज तुम्हारी तपस्या से सतुष्ट होकर मै यहा आया हू।'

---

१ शेखावाटी के शिलालेख– ले सुरजनसिह शेखावत पृ १० एनसिएन्ट सिटीज एण्ड टाउन्स ऑफ राजस्थान ले कैलाशचन्द जैन पृ ३९४

२ कल्याण– स क्षि श्रीदेवी भागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ३९५

राजन्! ब्रह्माजी के मुख से निकली हुई यह वाणी सुनकर दुर्गम सावधान होकर उठ पड़ा। उसने पितामह की पूजा करके यह वर मागा कि हे सुरेश्वर! मुझे सम्पूण वेद देने की कृपा कीजिए। सब वेद मेरे पास आ जाए। महेश्वर! साथ ही मुझे वह बल दीजिए, जिससे मै देवताओं को परास्त कर सकू।'

दुर्गम की यह बात सुनकर चारो वेदो के परम अधिष्ठाता ब्रह्माजी 'ऐसा ही हो' कहते हुए सत्यलोक मे चले गये। तब से ब्राह्मणो को समस्त वेद विस्मृत हो गये। स्नान, सध्या, होम, श्राद्ध, यज्ञ और जप आदि वैदिक क्रियाए बन्द हो गयीं। सारे भूमण्डल में भीषण हाहाकार मच गया। ब्राह्मणगण आपस में आश्चर्यपूर्वक कहने लगे— 'यह क्या हो गया ? यह क्या हो गया ? अब वद के अभाव में हमे क्या करना चाहिए ?'

इस प्रकार सारे ससार म घार अनर्थ उत्पन्न करने वाली अत्यन्त भयकर स्थिति हो गयी। देवताओं को हवि का भाग मिलना बद हो गया। अत निर्जर होत हुए भी वे सजर हो गये— स्वभावत जिनके पास बुढापा नही आ सकता था, उन्हें अब बुढापे ने ग्रस लिया। फिर उस दैत्य ने बल से अमरावती नामक नगरी घेर ली। दुर्गम का शरीर वज्र के समान कठोर था। देवता उसके साथ युद्ध करने मे असमर्थ होकर भाग गये। पर्वत की कदराओ और शिखरो पर–जहा कही भी स्थान मिला, वही रहकर वे पराशक्ति भगवती जगदम्बा का ध्यान करते हुए समय बिताने लगे। राजन्! अग्नि मे हवन न होने के कारण वर्षा भी बद हो गयी। वर्षा क अभाव मे घोर सूखा पड गया। पथ्वी पर एक बूद भी जल नहीं रहा। कुए, बावडिया, पोखर और नदिया बिल्कुल सूरा गयीं। ऐसी अनावृष्टि सौ वर्षो तक रही। बहुत-सी प्रजा तथा गाय-भैस आदि पशु प्राणो से हाथ धो बेठे। घर-घर मे मनुष्यो की लाशे बिछ गयी।

इस प्रकार का भीषण अनिष्टप्रद समय उपस्थित होने पर कल्याणस्वरूपिणी भगवती जगदम्बा की उपासना करने के विचार से ब्राह्मण लोग हिमालय पर्वत पर गये। समाधि, ध्यान और पूजा के द्वारा उन्होंने देवी की स्तुति की। वे निराहार रहते थे। मन एकमात्र भगवती म लगा था। दवी के शरणापन्न होकर वे स्तुति करने लगे— 'परमेश्वरी! हम पामर जनों पर दया करो। अम्बिके! हम सब तरह से अपराधी है। तथापि हम पर कृपा न करना तुम्हे शोभा नही

देता। सबके भीतर निवास करने वाली देवेश्वरी! तुम्हारी प्रेरणा के अनुसार ही वह दुष्ट दैत्य सब कुछ करता है अन्यथा, वह कर ही क्या सकता था? महेश्वरी! तुम बारम्बार क्या देख रही हो? तुम जैसा चाहो, वैसा ही करने मे पूर्ण समर्थ हो। महेशानी! घोर सक्ट उपस्थित है। तुम इससे हमारा उद्धार करो। अम्बिके! जीवन के अभाव मे हमारी स्थिति कैसे रह सकती है? अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड पर शासन करने वाली महेश्वरी! जगदम्बिके! प्रसन्न हो जाओ, प्रसन्न हो जाओ। हम तुम्हे प्रणाम करते है। कूटस्थरूपा, चिद्रूपा, वेदान्तवद्या तथा भुवनेशी! तुम्हे बारम्बार नमस्कार है। सम्पूण आगम-शास्त्र 'नेति-नेति' वाक्यो से जिनका सकेत करते है, उन सर्वकारणस्वरूपिणी भगवती के हम सम्यक् प्रकार से शरणागत है।'

इस प्रकार ब्राह्मणो के प्रार्थना करने पर भगवती पार्वती ने जो 'भुवनेशी' एव 'महेश्वरी' नाम से विख्यात है, अपनी अनन्त आखों से सम्पन्न दिव्यरूप के दर्शन कराये। उनका वह विग्रह कज्जल के पवत की तुलना कर रहा था। आखे ऐसी थी, मानो नीले कमल हो। कध ऊपर उठ हुए थ। विशाल वक्ष स्थल था। हाथो मे बाण, कमल के पुष्प, पल्लव और मूल सुशोभित थे। जिनसे भूख प्यास और बुढापा दूर हो जाते है, ऐसे शाक आदि खाद्य पदार्थो को उन्होने हाथ में धारण कर रखा था। अनन्त रसवाले फल भी हाथ म थ। महान् धनुष से भुजा सुशोभित थी। सम्पूर्ण सुन्दरता का सारभूत भगवती का वह रूप बडा ही कमनीय था। करोडो सूर्यो के समान चमकने वाला वह विग्रह करुण-रस का अथाह समुद्र था। ऐसी झाकी सामने उपस्थित करने के पश्चात् जगत् की रक्षा म तत्पर रहने वाली करुणार्द्र-हृदया भगवती अपनी अनन्त आखो से सहस्रो जलधाराए गिराने लगी। उनके नेत्रो से निकले हुए जल के द्वारा नौ रातो तक त्रिलोकी पर महान् वृष्टि होती रही। सम्पूर्ण प्राणियो को दुखी देखकर भगवती की आखो से आसू के रूप मे यह जल गिरा था। जल पाने से प्राणियो को बड़ी तृप्ति हुई। सम्पूर्ण ओषधिया भी तृप्त हो गयीं। राजन! उस जल स नदी और समुद्र बढ गय। जो देवता पहले लुप्त-छिपकर रहते थे, वे अब बाहर निकल आये। वे देवता ओर ब्राह्मण सब एक साथ मिलकर भगवती का स्तवन करने लगे—

'वेदान्त के अध्ययन से समय म आने वाली ब्रह्मस्वरूपिणी देवी! तुम्हे बार-बार नमस्कार है। अपनी माया से जगत् को धारण करने वाली तथा भक्त

के लिए कल्पवृक्ष एव श्रद्धालु व्यक्तियो के कल्याणार्थ दिव्य विग्रह धारण करने वाली देवी। तुम्हे अनेक प्रणाम है। सदा तृप्त रहने वाली अनुपम रूपो से सुशोभित भुवनेश्वरी। तुम्हे नमस्कार है। देवी। तुमने हमारा सकट दूर करने के लिए सहस्रो नेत्रो से सम्पन्न अनुपम रूप धारण किया है। अतएव अब तुम 'शताक्षी' इस नाम से विराजने की कृपा करो। माता। भूख से अत्यन्त पीडित होने के कारण तुम्हारी विशेष स्तुति करने मे हम असमर्थ है। अम्बिके। महेशानी। तुम दुर्गम नामक दैत्य से वेदो को छीन लेने की कृपा करो।'

ब्राह्मणो और देवताओ का यह वचन सुनकर भगवती शिवा ने अनेक प्रकार के शाक तथा स्वादिष्ट फल अपने हाथ से उन्हे खाने के लिए दिये। भाँति-भाति के अन्न सामने उपस्थित कर दिये। पशुओ के खाने योग्य कोमल व अनेक रसो से सम्पन्न नवीन तृण भी उन्हे देने की कृपा की। राजन्। उसी न से भगवती का एक नाम 'शाकम्भरी' भी पड गया।

'उदयपुरवाटी स्थित सकराय माताजी के मदिर म दो मूर्तिया विराजमान है। जिनमे एक सकराय माता (ब्रह्माणी जी) है व दूसरी रूद्राणी है जिसे काली माता भी कहत है। काली माता के सम्बन्ध मे ऐसी लोकोक्ति है कि ये पास के ही एक कुण्ड म से प्रकट हुई थीं जो काली कुण्ड के नाम से प्रसिद्ध '। काली कुण्ड माता के प्रवेश द्वार एव मध्य द्वार के मध्य मे अवस्थित ', जिसे कालान्तर मे पट्टियो से बद कर दिया गया है।

डॉ बाबूलाल शर्मा[१] ने माताओ के विग्रह के सम्बन्ध मे जो वर्णन । किया है वह दृष्टव्य है। उनके अनुसार वैसे ये दोनो प्रतिमाए महिषासुरमर्दिनी देवी की है। दोनों देविया के ही आठ भुजाए है जिनमे विभिन्न अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए है। देवी सिह पर आरूढ है और महिषासुर का वध कर रही है। दोना प्रतिमाए लगभग समान आकार-प्रकार की है और बडी सुन्दर है। देवी के मुखो पर सिन्दूर मडित है। दोनो प्रतिमाओ मे आधारभूत अतर यही है कि रुद्रायी की प्रतिमा स्थानीय मैड-पत्थर से निर्मित है जबकि ब्रह्माणी अथवा शाकम्भरी की प्रतिमा सगमरमर से निर्मित है। रुद्राणी अथवा कालीजी की प्रतिमा अपेक्षाकृत प्राचीन है और गुप्तकाल अर्थात् वि स ४००-५०० के आसपास की प्रतीत होती है जबकि ब्रह्माणी अथवा शाकम्भरी देवी ...

शाकम्भरी श्री– पृ ३

प्रतिमा अपेक्षाकृत अर्वाचीन है और वि स ११००-१२०० के आसपास में बनी प्रतीत होती है। इससे प्रकट होता है कि कालीजी के प्रतिमा के अनुक्रण मे ही बाद मे ब्रह्माणी अथवा शाकम्भरी देवी की प्रतिमा का निर्माण हुआ।'

माता के नामो के सम्बध मे विद्वान कोई भी मत रखें, किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि आदि शक्ति के अनेक रूप है, भक्त अपनी श्रद्धा एव मान्यता के आधार पर माता को किसी भी रूप एव नाम से पूजें, माता उनकी रक्षा अवश्य करती है, मनोकामना पूरी करती है।

दोनो देविया निज मदिर में चादी के सिहासन पर (गर्भगृह में) विराजमान है। गर्भगृह के सामने यात्रियो के दर्शनार्थ एव पाठ पूजा करने वाले भक्तों, पण्डितो के लिए विशाल सभामडप है। माता का विशाल उच्च शिखरबध मदिर दूर तक अपनी निराली शोभा बिखेरता है।

दोनों देवियो के विग्रह समान से है, तथापि सकराय माता का मुह थोड़ा तिरछा है। दर्शनार्थी भक्त के दाहिने हाथ की ओर सकराय माता या ब्रह्माणी है तथा दर्शनार्थी भक्त के बाये हाथ की ओर माता काली या रुद्राणी का विग्रह है।

मदिर निर्माण

प्राप्त शिलालेखो से यह विदित है कि इस मदिर के मडप का निर्माण वि स ६९९ मे हुआ तथा ११वी एव १२वीं शताब्दियो मे जीर्णोद्धार हुआ। डॉ भण्डारकर के अनुसार मदिर के बाहर की दीवार आठवी शताब्दी के पूर्व की है। कालान्तर मे मदिर जीर्ण-शीर्ण हो गया और भगवती के भक्त नवलगढ़ निवासी श्री रामगोपाल जी डगायच (खण्डेलवाल) ने वर्तमान नवीन मदिर का निर्माण कराया। १० वर्ष की कालावधि मे (वि स १९७० से वैशाख शुक्ला सप्तमी स १९८०) सवा लाख रुपयो की लागत से नवीन मदिर का निर्माण हुआ। मदिर का विशाल शिखरबध है तथा जगमोहन मे ३२ स्तम्भ है।

यह एक भक्त पर देवी की कृपा ही थी कि सेठ रामगोपाल जी डगायच जब सवत् १९८६ के आश्विन नवरात्रो मे देवी के दर्शनार्थ आये तो अष्टमी के दिन माता के मदिर मे भक्ति भाव से भजन करते हुए देह त्याग कर देवी की ज्योति मे विलीन हो गये। उनकी अतिम इच्छानुसार उनका दाहसस्कार

शकरा नदी के तट पर नवमी को किया गया, जहा उनकी स्मृति म उनके वशजों ने चबूतरे का निर्माण कराया है।

माता के आयुध

दुर्गा सप्तशती मे मूर्ति रहस्य बताते हुए माता के हाथों मे बाणो से भरी मुष्टि, कमल, शाक समूह, प्रकाशमान धनुष आयुध लिखे है परन्तु माता के पुजारी के अनुसार सकराय माता के आयुध, जो मूर्ति ने धारण कर रखे हे वे निम्न प्रकार है— गदा, पद्म, शख, त्रिशूल, खड्ग, कमल का पुष्प, वरद हस्त (अभय देता) और मूसल।

भोग

माताजी के मदिर मे जो दो मूर्तिया है वे सकराय माता व काली माताजी की है। वर्तमान में दोनों माताओ को एक ही थाली मे शाकाहारी भोग लगाया जाता है। माताजी को सीरा व पुड़ी अधिक प्रिय है अत प्राय सभी यात्री माताजी के सीरा पुड़ी का ही भोग लगाते है। उनके भोग के सम्बन्ध म ऐसा बताया गया है कि पहले सकराय माता के शाकाहारी तथा काली माता के मदिरा एव पशुबलि का भोग लगता था तथा भोग के समय दोनो माताआ की प्रतिमा के बीच म पर्दा लगा दिया जाता था। मदिर के महत गुलाबनाथ जी के समय की घटना है कि भोग लगाते समय शाकाहारी एव मासाहारी बर्तन आपस मे टकरा गये, फलत सकराय माता को क्रोध हुआ और उसने अपना मुह काली माता की ओर से टेढा (तिरछा) कर लिया, तबसे शाकम्भरी माता का मुह टेढा है। गुलाबनाथ जी को माता की आज्ञा हुई कि भविष्य में दोनो देवियों को शाकाहारी भोग ही लगाया जावे, तदनुसार तबसे ही यह व्यवस्था स्थापित कर दी गई कि भविष्य म दोनों देवियों क शाकाहारी भोग ही लगाया जावे।

शिलालेख [१]

शकरा (सकराय) माता के मदिर मे सलग्न प्रथम शिलालेख (वि स ७४९) से ज्ञात होता है कि उक्त मदिर मे चण्डिका की मूर्ति विराजमान है। उसके एक पार्श्व मे गणपति तथा दूसरे पार्श्व में धनद (कुबेर) की मूर्तिया

---

१ शखावाटी क शिलालख ल सुरजनसिह शखावत पृ १०

है। उस चण्डिका को ही शकरा कहा जाता था। पुरातत्त्वज्ञ डॉ भण्डारकर का भी यही अभिमत रहा है। शकरा देवी के मदिर म तीन शिलालेख उत्कीर्ण है जो प्राचीनता की दृष्टि से महत्त्वपूण है। उन्ही को यहा उद्धत किया जा रहा है—

श्री ओझाजी ने इस शिलालेख का सम्वत् ७४९ विक्रमी पढा था[1] किन्तु इसके विपरीत डॉ डी सी सरकार ने उक्त शिलालेख को वि स ६९९ का माना है। मिति द्वितीय आषाढ शुक्ला २ अक्ति है। उक्त शिलालेख सुन्दर सस्कत छन्दो म आबद्ध है। शिलालेख का सम्पूर्ण पाठ घिसा होने से पढा नही जा सका। महामहोपाध्याय गोरीशकर ओझा के एतद्विषयक उल्लेख एव डॉ दशरथ शर्मा द्वारा उस पर किये गये विवेचन के अनुसार[2] शिलालेख म उत्कीर्ण नाम वाले वैश्य गोष्ठिकों (चदा करके भवन निर्माताओ) ने भगवती शकरा देवी के मदिर के सामन अपनी पुण्यवद्धि हेतु देवताओ के मण्डप का निर्माण कराया। वे सभी गौष्ठिक दूसर ओर धर्कट गोत्र के वैश्य थे। शिलालेख मे उनके नामो का उल्लेख इस क्रम से हुआ है—

१ दूसर वशीय यशोवर्धन का पोत्र तथा श्रेष्ठि राम का पुत्र श्रेष्ठि मण्डन
२ धर्कट वशीय मण्डन का पौत्र ओर वर्धन का पुत्र श्रेष्ठि गर्ग
३ धर्कट वशीय वणिक भट्टियक के पुत्र गणादित्य, देवल और शिव
४ विष्णुवाक् का पुत्र शकर
५ मण्डुवाक् का पुत्र आदित्यवर्धन
६ बाढ़ का पुत्र आदित्यनाग
७ नह्क का पुत्र भद्र
८ जउल्ल का पुत्र उद्योतन
९ सोधक का पुत्र शकर

---

१ प झाबरमल्ल शर्मा तथा खण्डला बडा पाना क युवराज कुमार प्रतापसिह क साथ मान्यनीय ओझाजी न १७ फरवरी १९३५ ई को सकराय की यात्रा की थी तब उन्होन वहा पर सलग्न तीनो शिलालख पढ और माताजी क मन्दिर म रखी बही म उनका आशय अपन हस्ताक्षरों स अकित कर दिया था।

२ डा दशरथ शर्मा लख सग्रह प्रथम भाग पृ ९

उपर्युक्त शिलालेख से ज्ञात होता है कि वि स ७४९ अथवा सवत् ६९९ के पूर्व ही शकरा देवी का मदिर वहा पर विद्यमान था। इस शिलालख म उल्लिखित नाम वाले वैश्य गोष्ठिको ने उसी मदिर के सामने देवताओ का मण्डप बनवाया था। अत उक्त शिलालेख स देवी के मदिर क निमाण काल के समय पर प्रकाश नही पड़ता।

उक्त शिलालेख की प्रशस्ति सुललित एव भावपूर्ण सस्कृत छन्दो म रची गई है। प्रथम छन्द गणपति की प्रार्थना का है। पश्चात् नृत्य करती भगवती चण्डिका की स्तुति की गई है। तीसरे छद म धनद कुबर की प्रशसा की गई है। विघ्न विनाशक गणपति तो भारतीय हिन्दू समाज म आज भी प्रथम पूज्य देव माने जाते है, परन्तु कुबेर पूजा का पचलन आधुनिक काल मे नही रहा है। आठवीं, नवीं शताब्दी विक्रमी के उपलब्ध शिलालखा स सिद्ध होता है कि उस काल धनाध्यक्ष कुबेर की पूजा भी प्रचलित थी। बड़ी तांद, एक हाथ मे मुद्राओं से भरी थैली और दूसर हाथ मे मद्यभाण्ड लिए उन्हे दिखलाया जाता था, जिसका प्रमाण सकराय माता का यह शिलालेख है।[1]

उपर्युक्त शिलालख क मगलाचरण मे रचित छन्दो के पाठ यहा उद्धत किये जा रह है।[2]

प्रथम छन्द गणपति की स्तुति मे है—

गणाद्-रदन-दारण-द्रुत-सुमेरु-रेणूद्भट,
सुगन्ध-मदिरा-मद-प्रमुदितालि-झकृतम्।
अनेक-रण-दुदुभि-विचित्र-गण्डस्थल,
महागणपतेर्मुख दिशतु भूरि भद्राणि व ॥ १॥

दूसरे छद मे नृत्य करती चण्डिका की स्तुति है—

---

१ डॉ शर्मा लखसग्रह प ८
श्री रावत सारस्वत क मतानुसार— उस काल म गणपति की पूजा क साथ कुबर पूजा कवल वैश्य समाज म प्रचलित थी। इसलिए उस काल म निर्मित जिन दव मन्दिरों में गणपति क साथ कुबर प्रतिमा स्थापित पाई जाती है, उन्हें वैश्य समाज द्वारा निर्मित मानना उपयुक्त होगा।

२ डॉ दशरथ शर्मा लखसग्रह प्रथम भाग पृ ७ ८ स साभार उद्धत।

नृत्यन्त्या स्साङ्गहार चरणतल परिक्षोभितक्ष्मातलाया
प्रभ्रष्टेन्दु प्रभाया निशि विसृत नखद्योतभिन्ना धकारा ।
ये लीलोद्वेलिताग्रा विदधति विततम्भोजपूजा इवाशा—
स्ते हस्तास्सम्पद वो ददतु विदलित द्वेषिणश्चण्डिकाया ।। २।।

भगवती चण्डिका हार पहिने नृत्य कर रही है। उनके चरणतल की धमक से पृथ्वी कापती है। मस्तक पर धारण की हुई चन्द्रकला के प्रभ्रष्ट होने से एक बार सर्वत्र अधकार छा जाता है, किन्तु उनके नखों की ज्योति के सामने यह अन्धकार कहा ठहर सकता है ? उनकी लीलामयी नत्य मुद्रा म जब हाथ विकसित कमल का सा रूप धारण करते है तो ऐसा प्रतीत होता है कि सभी दिशाए प्रफुल्लित कमल लिए हुए माना पूजा कर रही है। भक्त प्रार्थना करता है कि शत्रुओ को विदलित करने वाले यही हाथ आपको सम्पदा प्रदान करे।

तीसरे छन्द में धनद यक्ष (कुबेर) की स्तुति है—

मधुमद-जनुदृष्टि स्पष्ट-नीलोत्पलाभा-
मुक्तामणि-मयूखै-रजित पीतवासा।
जलधर इव विद्युच्चक्र-चापानुविद्धो
भवतु धनद नामा वृद्धिदो व सुयक्ष ।। ३।।

खण्डेला के अर्द्धनारीश्वर शिव मदिर के शिलालख (वि स ७०१) एव सकराय वाले इस शिलालेख से प्रमाणित होता है कि उस काल शेखावाटी का यह क्षेत्र सास्कृतिक दृष्टि से बडा समृद्ध था। सस्कृत वाड्मय के प्रकाण्ड विद्वान भगवती शारदा की उपासना मे लीन रहते हुए इस क्षेत्र की शोभा बढा रहे थे। यहा का धनिक वैश्यवर्ग देवमदिरो के निर्माण आदि धार्मिक कार्यो म सद्प्रयत्न द्वारा अजित अपन धन का सदुपयोग दिल खोलकर कर रहा था।

उस काल खण्डेला तथा उसके आसपास के क्षेत्र में दूसर तथा धर्कट नाम से प्रसिद्ध वैश्यो का बाहुल्य था। वे प्राय सभी धनाढ्य श्रेष्ठि वर्ग की श्रेणी मे रहे होंगे। दूसरों के अस्तित्व की जानकारी तो सत्रहवीं शती विक्रमी तक दिल्ली विजेता हेमू (हेमचद्रराय) दूसर की परम्परा के रूप म विद्यमान है एव उसक पश्चात् काल मे तथा वर्तमान में भी दूसर नाम लुप्त नही हुआ है। किन्तु धर्कट नाम जनमानस के लिए अटपटा एव अज्ञात-सा है। धर्कट

नाम सभवत कई शताब्दिया पूर्व ही लुप्त हो गया होगा। धर्कट वैश्य कौनसे है? आज यह कोई नही जानता। सभव है कि वे खण्डेले के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त खण्डेलवाल वैश्य वर्ग मे ही समा गए होगे। श्री कैलाशचद जैन का अभिमत है कि धर्कट वेश्य जैन और माहेश्वरी दोना वेश्य समुदायो में पाए जाते है। अलबत्ता ओसवालो मे वे नही है। (Ancient Cities and Towns of Rajasthan p 395 Shri Kailash Chand Jain)

सकराय माता का द्वितीय शिलालेख (वि स १०५५ माघ शुक्ला ५)

इस शिलालेख के सम्बन्ध मे मान्यनीय ओझाजी की राय इस प्रकार है— 'इस लेख के बीच का अधिकाश भाग घिस गया है, जिससे पूरा लेख पढने मे नही आता है। केवल बच्छराज और उसकी पत्नी दयिका के नाम पढे जाते है, जिन्होंने शकरा देवी के मदिर का जीर्णोद्धार कराया। अन्त मे सवत् के स्थान पर ५५ माघ सुदी ५ उत्कीर्ण है। इससे अनुमान होता है कि पहले के दो अक (१) तथा (०) छोड दिये गये है। ठीक सवत् १०५५ होना चाहिए। यह समय साभर के चौहान राजा विग्रहराज द्वितीय का है। हर्षनाथ के शिलालेख से ज्ञात होता है कि वत्सराज साभर के राजा सिहराज का छोटा भाई एव विग्रहराज का काका था।[१]

डॉ देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर के अनुसार भी यह लेख चोहान राजा विग्रहराज द्वितीय के शासनकाल का है। वे लिखते है— 'बच्छराज की रानी दयिका ने शकरा देवी के मदिर का जीर्णोद्धार कराया। बच्छराज नि सदेह विग्रहराज का काका वत्सराज है, जिसका पता हर्ष वाले लेख से चलता है। शिलालेख के अत मे काल का उल्लेख 'सवत्सर ५५ माघ सुदी ५ किया गया है। सचमुच यह कौतुहलजनक है कि वहा सवत्सर का उल्लेख सैकडे की सख्या को छोडकर किया गया है। किन्तु हर्ष के शिलालेख से स्पष्ट है कि विग्रहराज विक्रम सवत् १०३० मे विद्यमान था। इसी कारण इस लेख का सवत् १०५५ विक्रमी होना चाहिए।[२]

---

१ सकराय माता के मदिर की सुरक्षित बही (Visitors Book) मे ओझाजी द्वारा लिखित विवरण १७ फरवरी १९३५ई।

२ आर्कियालॉजीक्ल सर्वे आफ इडिया (वर्स्टर्न) रिपोर्ट सन् १९१० ११ई डॉ डी आर भण्डारकर।

डॉ दशरथ शर्मा ने इस लेख का समय वि स ११५५ अनुमानित करके इसे चोहान राजा विग्रहराज तीसरे के शासनकाल का माना है।[1] शिलालेख मे उल्लिखित बच्छराज को उसके अधीनस्थ किसी भूभाग का सामन्त माना है।[2] प झाबरमल्ल शमा ने शेखावाटी क खोह (रघुनाथगढ) गाव मे विद्यमान एक कुए के कीर्तिस्तम्भ पर उत्कीर्ण लख का सवत्सर ११५० विक्रमी पढा है और उसे वहा के चदेल शासक द्वारा चौहान महाराज पृथ्वीराज प्रथम के शासनकाल मे उत्कीर्ण कराया गया माना है।[3] कीर्तिस्तम्भ के उक्त लेख को प्राचीन लिपि विशेषज्ञ विद्वान यदि पुन पढकर जाच करे और उक्त पाठ को सही रूप मे पढने मे सफल हो तो सकराय माता वाले इस शिलालेख के सही सवत् का निर्णय आसानी से हो सकता है।

सकराय का तीसरा शिलालेख (वि स १०५६ श्रावण बदी १)

भारतीय पुरातत्व के अध्येता विद्वान ओझाजी ने इस लेख के सम्बन्ध मे लिखा है— तीसरा लेख सम्वत् १०५६ विक्रमी का है। उसके आरभ के तीन अक्षर टूटे हुए हिस्से मे जाते है। जिनमे तीसरा अक ५ का होना चाहिए। क्योकि इसके दायी तरफ की खडी लकीर का कुछ अश दिखाई देता है। लेख का आशय इस प्रकार है— सम्वत् (१०५) ६ सावण बदी १ के दिन महाराजाधिराज दुर्लभराज के राज्य म श्री शिवहरी के पुत्र तथा उसके भतीजे (भ्रातृव्यज) सिद्धराज ने शक्रा देवी का मण्डप कराया। काम किया सावट के पुत्र आहिल ने जो देवी के चरणो मे नित्य प्रणाम करता है। प्रशस्ति खोदी बहुरूप के पुत्र देवरूप ने।[4]

सकराय माता परिक्रमा वर्णन

लोहार्गल की परिक्रमा म सकराय माता क्षेत्र की परिक्रमा भी आती है। इस परिक्रमा के करने से मानव मात्र के दैहिक, दैविक, भौतिक ताप नष्ट होते है। परिक्रमा के समय रात्रि विश्राम सकराय माता के यहा ही किया जाता है। शर्करा नदी (शक्रधारा, सकराय) में स्नान कर मातेश्वरी के मदिर

---

१ चौहान सम्राट पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग पृ १२ डॉ दशरथ शर्मा।
२ अर्ली चौहान डायनस्टीज पृ ३७ डॉ शर्मा।
३ वरदा श्रावणी २००२ वि शखावाटी क शिलालख प झाबरमल्ल शर्मा।
४ मन्दिर की बही म ओझाजी द्वारा अकित विवरण १७ फरवरी १९३५ई।

के दर्शन कर यात्री आगे बढते है। लोहार्गल क्षेत्र की परिक्रमा पहले जहा २४ कोस थी वहीं इसकी दूरी अब कम कर दी गई है तथा वर्तमान मे यह १२ कोसी परिक्रमा है। तीर्थराज लोहार्गल का वार्षिक मेला या तो भाद्रपद के आरम्भ से ही प्रारम्भ हो जाता है किन्तु विशाल मेला भाद्रपद कृष्णा नवमी से १४-१५ (अमावस्या) तक चलता है और इसी अवधि मे परिक्रमा की जाती है। परिक्रमा क्षेत्र का सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार—[१] (विस्तृत जानकारी के लिए देखिए लोहार्गल माहात्म्य)

परिक्रमा

'लोहार्गल महात्म्य के अनुसार यहा की परिक्रमा का आरम्भ सूर्य कुण्ड, चित्रवति, ब्रह्म कुण्ड, ज्ञानवापी के क्रमानुसार स्नान-दर्शन प्रार्थना आदि करके चिराना की नलिनी मे नहाने के बाद किरोडी कर्कोटकी मे प्रवेश कर और वहा से निवृत्त हो पहाडी पगडडी के सहारे अग्रसर हो सकराय माता के स्थान पर पहुचते है। शक्रधारा का उद्‌गम स्थान यही है। यहा से जटाशकर, सध्या नदी, कुह कुण्ड, रावणेश्वर, नागकुण्ड, टपकेश्वर, शोभावती नदी, खोह (खुर) कुण्ड आदि पुण्य स्थानो पर स्नानादि कर पुन ज्ञानवापी सूर्य कुण्ड मे स्नान कर रघुनाथ जी के बडे मदिर से होते हुए प्रसिद्ध बाबा मालकेतु जी के दर्शन कर अपनी मनोकामना पूर्ण करने हेतु प्रार्थना कर यात्रा समाप्त करते है।'

अन्य मदिर

सकराय माता क्षेत्र म मातेश्वरी के मदिर के अतिरिक्त अन्य अनेकानेक प्राचीन एव दर्शनीय धार्मिक स्थान है जिनमे से कतिपय का सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

जटाशकर मदिर

माताजी के मदिर की दाहिनी आर तथा शक्रधारा के निकट ही भगवान् आशुतोष शकर भगवान् का अति प्राचीन मदिर है जिसमे भगवान् शकर की

---

१ लाहार्गल तीर्थ का एतिहासिक व पौराणिक महत्त्व तथा रुद्राक्ष महिमा ल महन्त लक्ष्मणानन्दाचार्य श्री बालानदा पीठाधीश व माहन प्रकाश कौशिक।

एक मुखी प्रतिमा है जो सजीव लगती है। भगवान् शकर की यह प्रतिमा गुप्तकाल की है ऐसा विद्वानो का मत है क्योकि मूर्ति शिल्प गुप्तकालीन है।

मदनमोहन जी का मदिर

माताजी के मदिर के बाईं ओर मदनमोहन जी का मनमोहक मदिर है। ऐसा कहा जाता है कि मदनमोहन जी का मदिर खण्डेला राजा वृन्दावनदास जी द्वारा बनवाया गया था। खण्डेला का इतिहास[1] के अनुसार वृन्दावनदास जी ने ब्राह्मणो से कर लिया था तथा कर वसूली के विरोध मे एक ब्राह्मण ने तो अस्त्रघात कर अपने प्राणो की बलि भी दे दी थी। बाद मे वृन्दावनदासजी ने अनेकानेक धार्मिक स्थान बनाये, ब्राह्मणो को भूदान दिया उसी प्रसग मे इस मदिर का निर्माण हुआ। खण्डेला राज्यान्तर्गत धार्मिक स्थल रैवासा के मदनमोहन जी का मदिर एव सकराय का मदिर एक समान नक्शे के ही है। वृन्दावनदास जी का शासन काल सवत् १७८८ से १८३४ का है तथा उन्होने ४६ वर्ष राज्य किया। इस प्रकार उनके द्वारा निर्मित यह मदिर २२५ वर्ष पूर्व से भी पुराना है। पूर्व मे इस मदिर मे शालिग्राम की पूजा होती थी। वर्तमान म यहा राधाकृष्ण की प्रतिमाए है।

मुनि आश्रम

शक्रधारा कुण्डों के ऊपरी भाग पर एक पहाडी ढलान पर मुनि आश्रम है। आश्रम पर जाने के लिए सीढियो का निर्माण कराया गया है। यह स्थान अत्यन्त ही रमणीय है। विभिन्न प्रकार के फूल पौधो से सुवासित यह आश्रम मन को शाति प्रदान करता है। मध्य मे एक कुटिया मे सदा धूना रहता है।

वाराही देवी का स्थान

मातेश्वरी के मदिर के दक्षिण-पूर्व मे लगभग ३ किलोमीटर की दूरी पर वाराही देवी का अत्यन्त प्राचीन स्थान है। यहा गोरखनाथजी के अनुयायियो की गद्दी है।

कोह कुण्ड

माताजी के मदिर के पश्चिम में कोह कुण्ड है। इसे केरू कुण्ड एव खो कुण्ड भी कहते है। लोहार्गल महात्म्य मे इस कुण्ड का वर्णन आता

---

१ ल प सूर्यनारायण शर्मा पृ ११०

है जिसके अनुसार लकाधिपति रावण ने यहा तपस्या की थी। बाबूलाल शर्मा के अनुसार रावणेश्वर महादेव का एक मदिर भी यहा है। 'किसी जमाने मे यहा ८४ मदिर थे पर अब सब नष्ट हो गये है। अब केवल गणेशजी, देवीजी व भैरूजी के मदिर ही शेष है।'[1]

नाग कुण्ड

माता के मदिर से लगभग ३ कि मी उत्तर की ओर नाग कुण्ड है। यह कुण्ड प्राकृतिक रूप से बना हुआ है। इस कुण्ड मे झरने का पानी गिरता है जो ४०-५० फुट की ऊचाई पर है। वर्षाकाल में यहा का मनोहारी दृश्य देखने योग्य है। इस कुण्ड का माहात्म्य भी लोहार्गल माहात्म्य मे बताया गया है। यहा भैरूजी एव नाग देवता के मदिर है।

मदिर के महत

मदिर के महन्त पद पर धर्माधिकारी के रूप मे नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी बैठते है जिन्हे स्थानीय लोग भोपा भी कहते है। ये कर्णछेदन कराकर कानो मे कुण्डल धारण करते है। इस गद्दी पर बैठने वाला महन्त आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला होता है। अब तक के ज्ञात इतिहास मे यह जानकारी मिलती है कि इस गद्दी पर यादव जाति के महानुभाव ही आरूढ हुए है। डॉ बाबूलाल शर्मा[2] के अनुसार शिवनाथजी के शिष्य जिसने समाधि नही ली वह भगवती की सेवा पूजा करने लगा। 'इस शिष्य परम्परा मे हुए मदिर के सभी महन्तो के नाम तो ज्ञात नही हो सके परन्तु मदिर में उपलब्ध पट्टे-परवानो मे महन्त सूरतनाथजी, सरधानाथजी, बालनाथजी, ईसरनाथजी, आसानाथजी, भवानीनाथजी, करणीनाथजी, पीथलनाथजी, धमनाथजी, श्योजीनाथजी, दयानाथजी, पृथ्वीनाथजी, धूणीनाथजी, शिवनाथजी (द्वितीय), गुलाबनाथजी, बालकनाथजी ओर दयानाथजी (द्वितीय) वर्तमान महन्त है।

ये सभी महन्त देवी के अनन्य भक्त एव चमत्कारी हुए है। इनके अनेकानेक चमत्कारो की कथाये आज भी बड़े जीवन्त रूप से आसपास के क्षेत्रो मे कही-सुनी जाती है। जिनमे से एक का उल्लेख यहा किया जा रहा है—

---

१ श्री सकराय माताजी का वृत्तान्त– पृ २०
२ शाकम्भरी श्री पृ १२

सकराय माता के मंदिर के पास हथियाज ग्राम से जालजी भोपा माता की पूजा करने हेतु नित्य आया करते थे। ततसमय नाथ सम्प्रदाय के शिवनाथसिहजी घूमते हुए इधर आ गये तथा माता के स्थान के पास ही रहने लगे। वे भक्तिभावपूर्वक आध्यात्मिक चिंतन करते तथा अपना धूना भी वहा लगा लिया। कालान्तर मे जालजी एव शिवनाथजी मे प्रगाढ मित्रता हो गई तथा शिवनाथजी माताजी की सेवा-पूजा करने लग गये। कहते है एक रोज जालजी ने शिवनाथजी की परीक्षा लेने हेतु कुछ चमत्कार दिखाने का आग्रह किया। शिवनाथजी के यह कहने पर कि 'जालजी, पहले आप अपना चमत्कार दिखाओ तथा साथ ही उन्हे अपनी एक छडी दी कि जब मै दूसरे रूप म होऊ, तब पुन इस रूप मे लाने हेतु, इस छडी का मेरे दूसरे स्वरूप से स्पर्श करा देना, मे पुन अपने असली रूप में आ जाऊगा, इस वार्तालाप के बाद जालजी ने तत्काल कुत्ते का रूप धारण कर लिया। जालजी के रूप परिवर्तन पर शिवनाथजी ने सिंह का रूप धारण कर लिया तथा विचरण हेतु चले गये। शिवनाथजी का यह रूप देखकर जालजी घबरा गये। सायकाल जब शिवनाथजी के शिष्य, जो सख्या मे दस बताये जाते है, भिक्षाटन के बाद शिवनाथजी के धूने पर आये और उन्हे नही पाया तो जालजी ने सारा कथानक उन्हे (शिष्यो को) बता दिया तथा वे शिवनाथजी की खोज मे निकल पड़े। थोडी दूर जाने पर ही शिष्यो ने सिह रूप मे शिवनाथजी को देखा तथा उनके द्वारा दी गई छडी का स्पर्श कराते ही वे अपने मूल मानव स्वरूप में आ गये। शिवनाथजी ने अपने शिष्यो से कहा कि सिह रूप मे एक गाय के वध का मै अपराधी हू, अत मैं अब जीवित समाधि लूगा। उनके सभी दस शिष्य उनके साथ जीवित समाधि लेना चाहते थे किन्तु आपने माता की सेवा के लिए एक शिष्य को जीवित समाधि लेने की अनुमति नहीं दी तथा जालजी की उपस्थिति मे ही शिवनाथसिह जी तथा उनके नो शिष्यों ने जीवित समाधि ले ली।[१] जालजी को अपना एक परम मित्र खोने का हार्दिक पश्चात्ताप था, अत उन्होंने पुन यहा नही आने का निश्चय किया और अपने गाव हथियाज चले गये, जहा जाने पर आपको बताया गया कि शिवनाथजी महाराज ने यहा उनकी पत्नी

---

१ शिवनाथजी के समाधि स्थलों पर माघ शुक्ला दूज का विशेष पूजा की जाती है अत यह अनुमान है कि इसी दिन इन्होंने जीवित समाधि ली थी।

ने कहा कि अभी अभी शिवनाथजी आये थे तथा आपको राजपुरा[१] बुलाया है, वहा जाने पर आपको बताया गया कि शिवनाथजी महाराज ने जहा समाधि ले ली है तथा आपको पुष्कर बुलाया है। पुष्कर पहुचने पर जालजी को शिवनाथजी मिले। दोनों मित्र प्रेमपूर्वक मिले तथा शिवनाथजी ने पुष्कर मे भी जीवित समाधि ली।

मेले

माता के दर्शनार्थ यो तो बारह महीनो ही यात्री आते जाते रहते है, किन्तु शुक्ल पक्ष मे यात्री अधिक आते है। चैत्र एव आसोज के नवरात्रो में यहा देश एव विदेश के दूरस्थ स्थानो से भक्तजन माता के दर्शनार्थ एव जात-जडूले उतारने हेतु आते है तथा हजारों यात्रियो के आने जाने से मेले का-सा दृश्य होता है।

माता के स्थान पर सहस्रचण्डी यज्ञ, दुर्गा सप्तशती के पाठ एव अन्य अनुष्ठान होते ही रहते है। यह सिद्धपीठ मानी जाती है।

यात्रियों के लिए सुविधाए

सकराय माता के आने के लिए उदयपुर (उदयपुरवाटी) से सड़क मार्ग है। उदयपुर वाटी से माता के स्थान तक अब पक्की डामर की सड़क है तथा रास्ते मे पडने वाले सभी सात नालो पर भी पत्थर जमाकर कटाव को रोक दिया गया है। वाहनो के आने-जाने में अब कोई असुविधा नहीं है। उदयपुर (उदयपुरवाटी) से दो बसे नियमित रूप से माता के स्थान से आती व जाती है तथा उदयपुर (उदयपुरवाटी) से किराये की जीपे भी मिलती है।

यात्रियो के ठहरने हेतु धर्मप्राण भक्तों की सहायता से यहा अनेकानेक धर्मशालाए एव विश्रामगृह है, जहा यात्री निशुल्क ठहर सकते है। यात्रियो के ओढने-बिछाने हेतु बिस्तर, भोजन बनाने हेतु बर्तन नि शुल्क प्राप्त किये जा सकते है तथा भोजन बनाने हेतु सामग्री उचित मूल्य पर मिलती है। भोजन बनाने वाले भी यहा उपलब्ध रहते है। अल्पाहार के लिए मदिर के मुख्य द्वार पर २-३ कैटीन है। आयुर्वेद विभाग का चिकित्सा उपकेन्द्र भी यहा है। इन सब सुविधाओ का वर्तमान महतजी पूर्ण ध्यान रखते है।

---

१ राजपुरा जीवित रह शिष्य का गाव बताया जाता है।

साभर की शाकम्भरी समराय[1]

साभर एक अत्यन्त प्राचीन कस्बा है। पहले यहा का क्षेत्र (सारा पश्चिमी राजस्थान) समुद्र था। वैज्ञानिक जाच में मरुभूमि मे ऐसे पदार्थ एव अवशेष मिले है, जो समुद्र के तल पर पाये जाते है। पुराणों म जानकारी मिलती है कि प्रथम बार यहा अगस्त्य ऋषि ने अपना कदम रखा, फिर इस पर बस्तिया बसने लगीं।[2] यहा से लगभग ६ कि मी दूरी पर बुद्धकालीन ग्राम नलियासर है। साभर म नमक की झील महामाया शाकम्भरी माता के वरदान से सम्वत् ६०८ (सन् ५५१) म हुई। साभर कस्बा चौहान राजपूत वासुदेवजी द्वारा बसाया गया था। बाद म पृथ्वीराज चौहान यहा के शासक हुए। कुलदेवी ने इस वश की सदा आशाय पूर्ण की इसलिए इस देवी का दूसरा नाम आशापूर्णा या आशापूरा विख्यात हो गया। स्थान-स्थान पर चाहमाना ने अपनी कुल देवी के मदिर बनवाय।[3] साभर के शासक होने से चौहान राजपूतो की उपाधि सम्भरीश्वर या सम्भरीराय थी।

चौहान राजपूतो की भी कुलदेवी शाकम्भरी है जिसे समराय माता भी कहते है।

स्थान

शाकम्भरी माता का मदिर साभर से २५ किलोमीटर पश्चिम मे पहाडी श्रेणी की तलहटी मे स्थित है। यह मदिर साभर झील के मध्य एक प्राकृतिक पुल से जुडा है। मदिर के तीन ओर क्षारीय भूमि है जो नावा, गुढा और साभर की झपोक सीमा से लगी हुई है। इसका क्षेत्रफल करीब ६ मील चौड़ा है और औसत २ फीट गहरा है। पहाडी के पास यह गहराई तीन फीट तक होती है। इस झील को हम शाकम्भरी देवी के वरदान स सहज ही मान सकते है।[4] मदिर झील के किनारे पहाडी की तलहटी के नीचे निर्मित होने से मदिर को दूर स देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो पानी म कोई टापू हो। ग्रीष्मकाल

---

१ शाकम्भरी माता का पौराणिक इतिहास पूर्व मे उदयपुरवाटी स्थित सकराय माता के साथ दिया गया है। यहा साभर मे माता के प्रगट होने एव उसके चमत्कारों का वर्णन दिया गया है।

२ उत्पल – श्री साभर पुस्तकालय– हीरक जयन्ती स्मारिका १९९५ पृ २१

३ चौहानों का वृहद इतिहास– ल दवसिह निर्वाण पृ २६

४ लावण्य– नागरिक विकास समिति साभर लक, स्मारिका पृ १२

में जब झील मे पानी नही होता मदिर के सामने जब दृष्टि जाती है तो जहा तक नजर जाती है भूमि रजतमयी ही नजर आती है जबकि मानसून काल मे झील का विस्तृत पानी माता के मदिर का प्रक्षालन करता है।

माता का स्वरूप

शाकम्भरी माता सोने के मुकुट तथा कानो में कुण्डल व नाक में नथ धारण किये हुए है। माता की मुस्कानयुक्त मूर्ति सहज ही ऐसी प्रतीत होती है, मानो प्रत्यक्षत वह भक्तो को आशीर्वाद दे रही हो। माता की गोदी में गणपति एव भैरव विराजमान है। माता की सवारी सिह पर है। माता के बाईं ओर चोसठ यागिनिया भी विराजमान है। इसे सिद्धपीठ मानते है।

माता की वर्तमान मूर्ति पहाड़ी को तराश कर बाद म बनाई गई है। माता की मूल मूर्ति जो प्रकट हुई थी, वह माता के वर्तमान विग्रह के दाहिनी ओर है, जो निज मदिर में ही पहाड़ी पर उत्कीर्ण है। उनकी गोद मे भी गणेशजी व भैरव है। माता के विग्रह के बाईं ओर गुफा है। ऐसा कहा जाता है कि यह गुफा जोबनेर, पुष्कर एव दिल्ली तक गई है।

माता का वर्तमान मदिर नवनिर्मित है। मदिर के बाहर एक बड़ा कुण्ड है तथा पुराने मकानात है। जयपुर एव जोधपुर के महाराजाओ द्वारा अपने निवास हेतु भी यहा भवन बनाये गये थे, जो आज भी है।

माताजी के मदिर तक जाने के लिए ४३ सीढिया है। सीढ़ियों की समाप्ति पर दोना ओर सिह की प्रतिमाये है। सामने ही माता की विशाल हसमुख मूर्ति है। चौक म एक सिह की प्रतिमा है। निज मदिर के बाहर बड़ा सभा मण्डप है।

भोग

माताजी के तामसी भोग नही लगता। मीठा भोग यथा सीरा, पुडी, चूरमा-बाटी, नारियल आदि का भोग लगता है।

मेले

माताजी के यहा नवरात्रो के अतिरिक्त भादवा सुदी छठ का मेला भरता है। इस अवसर पर हजारो की सख्या मे भक्त माताजी के दर्शनार्थ आते है।

शाकम्भरी माता के प्रगट होने की कथा

माता का मदिर[१] सिरथला ग्राम की पहाडी पर है। यहा वि स ६०८ से पूर्व अम्बिकेश्वर मुनि शक्ति उपासना हेतु माता का गुण-गान करते थे। उनका भोजन कद-मूल-फल था। एक क्विदन्ति है कि एक ब्राह्मण की गाय नित्य प्रति सायकाल मुनि आश्रम मे आती थी तथा मुनि के पात्र मे स्वत ही गाय के थनो से दूध झरकर पात्र भर जाता था। प्रतिदिन गाय के थनो मे दूध कम होने पर ब्राह्मण ने ग्वाले को पूछा। ग्वाले ने इसकी अनभिज्ञता प्रकट की तो ब्राह्मण ने इसकी शिकायत राजा वासुदेव चोहान से की। राजा वासुदेन ने ब्राह्मण एव ग्वाले को यह आश्वासन देते हुए विदा किया कि गाय का दूध कौन निकालता है, इसकी वे स्वय शीघ्र ही जाच करेगे। राजा ने ग्वाले की पगडी गाय के सीगो से बाध दी। सायकाल नित्य की भाति गाय मुनि के आश्रम मे गई तथा मुनि के पास जाकर खडी हो गई। गाय के थना से स्वत दूध झरा और मुनि का पात्र दूध से भर गया। राजा ने यह सारी घटना स्वय अपनी आखा से देखी।

मुनि का ऐसा अद्‌भुत चमत्कार देखकर राजा वासुदेव को अत्यन्त आश्चर्य हुआ तथा वे मुनि के पास गये और उनका आशीर्वाद मागा तथा निवेदन किया प्रभु आपकी कृपा से सभी आनन्द है मुझे आप उस मातेश्वरी के दर्शन कराओ जिसकी आप निरन्तर आराधना करते है।

मुनि ने कहा हे राजन। आप कल मध्यरात्रि में यहा (पहाड़ी पर जहा मुनि का आश्रम था) आना। माता की स्तुति करना माता तुम्हे अवश्य दर्शन देगी। राजा ने भक्तिभावपूर्वक माता की प्रार्थना की तब पहाडी से अट्टहासयुक्त घोर गर्जना हुई। इस भयकर गर्जना से चारा ओर सन्नाटा छा गया। पहाडी स्थल हिल गया मानो भूकम्प ही आया हो, पेड पौधे हिलने लगे, यह सब देख राजा भयभीत हो गया तथा अचेत हो गया। उसी स्थिति म मातेश्वरी ने राजा को दर्शन दिय तथा पहाडी म विलीन हो गई। पहाड़ी स माता की आवाज आई हे नृप तू क्या चाहता है? वर माग। मुनि ने राजा से कहा राजन् माता तुम पर प्रसन्न है जो भी वर मागना चाहो मातेश्वरी से माग लो।

---

१ साभर की समराय माता अर्थात शाकम्भरी महामाया कथा— ल लक्ष्मीनारायण द्वारा लिखा गया है।

राजा ने कहा 'हे मातेश्वरी' यदि आपकी मुझ पर कृपा ही है तो मेरे राज्य की भूमि रजतयुक्त कर दो। मैं निष्कटक होकर राज्य करू, मेरी प्रजा सुखी रहे, मैं निरोग रहू तथा हमेशा आपकी सेवा मे रहू।' माता ने राजा की इच्छानुसार 'तथास्तु' कहकर वर दिया। उसी समय एक घोडा प्रकट हुआ। मुनि ने कहा राजन, इस घोडे पर बेठकर तुम जितनी दूर तक जा सको जाओ, जितनी दूरी तक तुम जाओगे भूमि रजतमय हो जावेगी, पर ध्यान रखना पीछे मुड़कर मत देखना। सायकाल तक राजा ने लगभग चौबीस कोस (लगभग ७० कि मी) तक घोडा दौडाया तथा मुनि आश्रम पर आकर रुका। राजा के घाड़ से उतरते ही घोड़ा अन्तधान हो गया। मुनि से आशीवाद ले राजा अपने महल में गया तथा माता को पहाड़ी की चोटी पर ले जाकर शाकम्भरी के वरदान की सारी बात की, रजतमय भूमि दिखाई तथा कहा मा चाबीस कोस में मातेश्वरी की कृपा से भूमि रजतमयी हो गई है।

जहा तक उसकी दृष्टि गइ भूमि को रजतयुक्त देख राजा की माता अचेत हो गई तथा होश मे आने पर उसने अपने पुत्र से कहा, पुत्र तुम माता से कोई दूसरा वरदान माग लो। इस रजतभूमि से तो तुम्हारे अनेकानेक दुश्मन हो जायेंगे और तुम्हारा जीवन भी दूभर हो जायेगा। तुम्हारी प्रजा भी तुम्हारे कारण सुखी नही रहेगी।

जननी-माता की आज्ञानुसार राजा वासुदेव पुन देवी की शरण में आया तथा माता से निवेदन किया, मातेश्वरी इस धन से तो मेरे अनेक दुश्मन हो जायगे, माता ने पुन वरदान दिया जा राजन् रजतमय भूमि कच्ची चादी की हो जायेगी। और तत्क्षण ही भूमि लवणमय हो गई।

राजा मानकराव के समय कल्पन नामक एक कायस्थ आया तथा उसने देखा कि यहा का पानी लवणयुक्त है। उसने राजा मानकदेव से राजकीय फरमान जारी करवाया तथा एक भरण पर दो पाइ का कर लगवाया तथा नमक उत्पादन पर राजा से हिस्सा कर लिया।

नमक उत्पादन के बाद राजा पुन पहाडी पर गये। माता की स्तुति की। एक रात्रि को माता ने राजा को स्वप्न दिया कि मे यहा प्रगट होऊगी, तुम मेरी यहा स्थापना करो। शाकद्वीपी ब्राह्मण मेरी पूजा करे।[१]

१ माताजी की पूजा हेतु माटाजी एव जसजी सेवक को पूजा हेतु आसिया से लाया गया। आसिया की सुन्थाय माता की भी शाकद्वीपी सेवक पूजा करते है।

मुगल बादशाह गजनी के समय माता की मूर्तियो को तोडने हेतु उसकी फौज मदिर की ओर बढी। मदिर के बाहर के पीपल के वक्ष को काटने के बाद जब मूर्ति तोडने के लिए सेना के सिपाही मदिर की ओर बढे तो जहरीले भवरो ने उन्हे ऐसा काटा कि अनेकानेक की वहा मृत्यु हो गई और जो बचे वे अपने प्राण बचाकर भाग गये।

मुगल बादशाह जहागीर माता के चमत्कारा से ऐसा प्रभावित हुआ कि उसने माता के मदिर के पहाड की चोटी पर एक बहुत बड़ी छतरी का निर्माण कराया, जो आज भी मोजूद है तथा माता का मठ बनवाया गया है। माता द्वारा जो चमत्कार हुए उनके सम्बन्ध मे ऐसा कहा जाता है कि बादशाह ने माता जी जोत पर एक के बाद एक सात लोहे के तवे रखकर, जोत बुयाने का प्रयत्न किया किन्तु माता की असीम कृपा से सातो तवो म माता की जोत प्रज्ज्वलित हो गई।

शाकम्भरी (शताक्षी) मदिर सहारनपुर

शाकम्भरी माता या शताक्षी देवी का सिद्धपीठ सहारनपुर (मेरठ) रेल्वे स्टशन से लगभग ४० कि मी की दूरी पर शिवालिक पर्वत की तलहटी मे है। मदिर से लगभग दो कि मी पूर्व ही भूदेव (भैरव) का एक छोटा सा मदिर है। इसे देवी का पहरेदार माना जाता है। यह शक्तिपीठ हरियाणा, हिमाचल, उत्तरप्रदेश के देहरादून की सीमाआ के पास है।

यहा स्थित माता शाकम्भरी की मूर्ति स्वयभू मूर्ति बताई जाती है। जगद्गुरु शकराचार्यजी ने यहा तीन और मूर्तिया स्थापित की है। माता शाकम्भरी देवी के दाहिनी ओर भीमा देवी और भ्रामरी देवी की तथा बाई ओर शताक्षी देवी की मूर्ति है। भ्रामरी और शाकम्भरी देवी के मध्य गणेशजी की एक छोटी प्रतिमा है। पास ही हनुमान जी की मूर्ति है।

यहा शाकम्भरी देवी के प्रगट होने के सम्बन्ध म एक किवदन्ती यह है कि एक व्यक्ति जा गुर्जर जाति का था जन्मान्ध था वह गाय चराता था। एक दिन उसे यह सुनाई पडा कि यहा मे प्रगट होना चाहती हू- ग्वाले द्वारा

यह पूछने पर कि आप कौन है, आवाज आई मै देवी हू, यह मेरा स्थान है, तुम मरी पूजा अर्चना करो, तुम्हें नेत्र ज्योति मिल जावेगी। ग्वाले ने दवी की आज्ञानुसार देवी की स्तुति की तथा आर्तभाव से स्तुतिपूर्ण होते ही उसकी नेत्र ज्योति आ गई। यह एक अविश्वसनीय-सा आशीर्वादात्मक चमत्कार था, जो माता की कृपा से जन्मान्ध भक्त को मिला ओर शीघ्र ही चारो ओर इसका प्रचार हो गया। लोग इस देवी चमत्कार से स्वत ही माता के दर्शनो को आने लगे और लोग माता का दर्शन-पूजन श्रद्धापूर्वक करने लगे जहा माता ने प्रगट होकर अपने भक्त ग्वाले को दर्शन दिय थे।

मदिर लगभग पाच सो वर्ष पुराना बताया जाता है। माता की मूर्ति के सामने ही ग्वाले भक्त की समाधि है।

माता के भव्य मदिर पर स्वर्ण-कलश है तथा माता के निज मदिर मे छत्र झिलमिलाते रहते है। यहा माता के दोनो ओर धूप के अखण्ड दीप जलते रहते है।

शाकम्भरी माता के आसपास चारों दिशाआ म जहा कमलेश्वर महादेव, इन्द्रेश्वर महादेव और वटेश्वर महादेव के मदिर है वही पहाड पर और भी कई मदिर है।

यद्यपि मूर्ति प्राकट्य के समय यह स्थान बीहड जगल मे था किन्तु आज भगवती कृपा से सभी सुविधाए है। सहारनपुर से मदिर तक पक्की सड़क है तथा मोटर-बस जाती है। बिजली-पानी की समुचित व्यवस्था है। यात्रिया की सुविधा हेतु धर्मशाला तथा टैट आदि उपलब्ध है।

नवरात्रों में यहा मेला लगता है तथा दूर-दूर से भक्त यात्री जात-जड़ूला उतारने एव मनोकामना-सिद्धि हेतु माता के दरबार में आते है।

पारीका के निम्न अवटको की यह कुल देवी है—

१ ओडीटा	त्रिपाठी (तिवाडी)
२ रजलाणा (रजलाणिया)	जोशी
३ लाछणावा	जोशी

४	सोती	उपाध्याय (पादाया)
५	दहलोत	मिश्र (बोहरा)
६	सुमन्त्या	मिश्र (बोहरा)

रावा की पुस्तका में पारीकों की माता समराय-समरेश्वरी का स्थान साभर बताया गया है। सकराय ही समराय और शाकम्भरी है।



सुदर्शना : सुद्रासना माता

सुदर्शना माता भगवान् विष्णु की शक्ति हे, उनकी पत्नी है, इन्हे वैष्णवी माता भी कहते है। शक्ति के विभिन्न स्वरूपों में सप्तमातृकाओ के ध्यान करने के श्लोक है, उनमे माता के स्वरूप एव आयुधो का निम्न प्रकार का वर्णन किया गया है—

> वैष्णवी तार्क्ष्यगा श्यामा, षड्भुजा वनमालिनी।
> वरदा गदिनी दक्ष विभ्रति च करेऽम्बुजम्।
> शखचक्राभ्याम् वामे सा चेय विलसद्भुजा।।

वनमाला धारण करने वाली एव छ भुजाओ से सुशोभित वैष्णवी गरुड़ पर आरुढ़ होती है। उनकी अगकाति श्याम है। दाहिने हाथ में वर मुद्रा, गदा और कमल धारण करती है तथा उनकी बायी भुजाए शख चक्र और अभयमुद्रा से सुशोभित होती है।[1]

शास्त्रकारों का दृढ विश्वास है कि परमात्मा को स्वरचित सृष्टि की मर्यादार्थ युग-युग मे अपनी अलौकिक योगमाया का आश्रय लेकर पुरुष-रूप मे अवतीर्ण होना पड़ता है। जब वे पुरुष-वेष मे अवतार लेते है, तब जगत् उनकी ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि नामों से स्तुति करता है और जब उनकी माया जगत् में अवतीर्ण होती है, तब उन्हे महाकाली, महालक्ष्मी, सरस्वती कहते है।

सत्त्व-प्रधान वैष्णव रूप को महालक्ष्मी कहते है, जो जगत् का पालन करती है।

लक्ष्मी की उत्पत्ति के संबंध मे यह कथानक आता है कि एक समय देवता और दानवा मे सौ वर्षो तक घोर युद्ध हुआ। देवताओं का राजा इन्द्र था और दानवों का महिषासुर। पराक्रमी दानवों द्वारा देवताओ को पराजित

१ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१(१९८७), पृ ३८

कर महिषासुर जब इन्द्र बन बैठा, तब सम्पूर्ण देवगण पद्मयोनि ब्रह्माजी को आगे कर भगवान् विष्णु और शकर के पास गये और उन्हें अपनी सम्पूर्ण विपत्ति गाथा सुनायी। देवताओ की आर्तवाणी सुनकर भगवान् विष्णु तथा शकर कुपित हो गये और उनकी भृकुटी चढ़ गई। उनके शरीर से एक महान् तेज पुञ्ज निकला और वह एक एकत्रित होकर प्रज्वलित पर्वत की तरह सम्पूर्ण दिशाओ का देदीप्यमान करता हुआ नारी शरीर बन गया। उस भगवती को देखकर सब देवता प्रसन्न हुए और उसे अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र समर्पण किये। तब प्रसन्न होकर देवी ने अट्टहास किया, जिससे समस्त दिशाए गूज उठी, समुद्र उछलने लगा, पृथ्वी कॉप उठी और पर्वत भी डगमगाने लग, देवताओ ने जय-ध्वनि की और मुनिगण स्तुति करने लगे। उस भयकर गर्जना को सुनकर, दानव अपनी सेना को लेकर वहाँ आया ओर तेज पुञ्ज महालक्ष्मी को उसने देखा। तदन्तर असुरो का देवी के साथ अति भयकर युद्ध हुआ, जिसमे सम्पूर्ण दानव मारे गये। महिषासुर भी अनेक प्रकार की माया करके थक गया और अत म महालक्ष्मी के द्वारा मारा गया। देवताओ ने भगवती की विविध प्रकार से स्तुति की। इस प्रकार महालक्ष्मी ने रूप धारण किया, जिसका स्वरूप और ध्यान इस प्रकार है—

स्वहस्त-कमल में अक्षमाला, परशु, गदा बाण, वज्र, कमल, धनुष, कुण्डिका, शक्ति, खड्ग, चर्म, शख, घण्टा, मधुपात्र, शूल, पाश और सुदर्शनचक्र को धारण करने वाली कमल स्थित, महिषासुर-मर्दिनी महालक्ष्मी का हम ध्यान करते है।[१]

भगवती महालक्ष्मी मूलत भगवान् विष्णु की अभिन्न शक्ति है। पुराणो के अनुसार पद्मवनवासिनी, सागर-तनया और भृगु की पत्नी ख्याति की पुत्री होने से भार्गवी, जलधिजा इत्यादि नामा से भी अभिहित किया गया है। इनके कई शतनाम तथा सहस्रनाम स्तोत्र उपलब्ध होते है। ये वैष्णवी शक्ति है। महाविष्णु की लीला-विलास-सहचरी, देवी कमला की उपासना वस्तुत जगदाधार शक्ति की ही उपासना है। इनकी कृपा के अभाव म जीव मे ऐश्वर्य का अभाव हो जाता है विश्वम्भर की इन आदि-शक्ति की उपासना आगम-निगम सभी

१ कल्याण दवताक वर्ष ६४ (१९९०) पृ १९६ २०४ के आधार पर।

मे समान रूप से प्रचलित है। लक्ष्मी की दृष्टिमात्र से निर्गुण मनुष्य मे भी शील, विद्या, विनय, औदार्य, गाम्भीर्य, काति आदि ऐसे समस्त गुण प्राप्त हो जाते है, जिससे मनुष्य सम्पूर्ण विश्व का प्रेम तथा उसकी समृद्धि प्राप्त कर लेता है इस प्रकार का व्यक्ति सम्पूर्ण विश्व का आदर एव श्रद्धा का पात्र बन जाता है—

त्वया विलोकिता सद्य शीलाद्यैर खिलैर्गुणै ।
कुलैश्वर्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि।
(विष्णुपुराण– १/९/१३०)

विष्णुपत्नी रूप की सर्व मान्यता है। ये सुवण-वणा चतुर्भुजा अनिन्द्य सौन्दर्य से सम्पन्न है। सवा-भरण-भूषित कमल के आसन पर स्थित हो अपने कृपा कटाक्ष से भक्तों की समस्त कामनाओ की पूर्ति करती हे।[1]

सुदर्शना (सुद्रासना)[2]

सुदर्शना माता का स्थानीय नाम सुरजल माता है। सुदर्शन माता का मदिर ग्राम सुदर्शन मे होने से नाम सुदर्शना पड़ा। सुदशन माता का अपभ्रश नाम सुद्रासना भी है। ग्रामो क नाम माताओ से व माताओं के नाम ग्रामो से भी प्रचलित हो गये है।

गाँव क बुजुर्ग बताते है कि सन् १४०० इ मे इस गाँव पर चदलवशी राजपूतों का अधिकार था। इसके बाद रायमखानी नवाब अलाब्दी खाँ के पुत्र मलू खा ने इस गाव को आबाद किया। इन्ही के वशज मलवान कायमखानी हुए। उसी वक्त गाव की उत्तर दिशा म ठाकुर दातार सब्दल खाँ न एक हजार बीघा गोचर जमीन छोडी थी।[3]

---

१ कल्याण (दवर्तांक) वर्ष ६४ (१९९०) पृ २२७ २९ क आधार पर।

२ दिनाक २१-६ १९९९ का माताजी क दर्शनार्थ गय, साथ म चि शाभित व माहित भी थ। कायमसर म श्री भवरलाल जी पुरोहित राधस्यामजी पुरोहित तथा अरविन्द जी पुरोहित (खातडिया) स सम्पर्क किया। व हमें माता क स्थान पर ल गय।

३ राजस्थान पत्रिका दिनाक २६ २ १९९८

मुगलकाल मे जब मूर्ति भजन का दौर चला तब इस मदिर की मूर्तियों का ही नही मदिर को भी मुगलो द्वारा तहस-नहस किया गया। खडित मूर्तिया अभी भी यत्र-तत्र पडी मिलती है। कुछ मूर्तिया को नवनिर्मित स्थान (मदिर की चाहर दीवारी के अदर) पर चुनाई कर सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।

यह मदिर एक टीले पर अवस्थित है। यहाँ उत्खनन में पुरावतत्व महत्व की बहुत-सी चीजे मिली है। जैन धर्म का यह प्रमुख स्थान रहा है।

सुदर्शन (सुरजल) माता का मदिर ग्राम सुद्रासन के उत्तर में गाँव से लगभग ५०० गज की दूरी पर एक विशाल ओरन (माताजी के नाम से छोडी गई जमीन जिसका क्षेत्रफल ११६० बीघा है) मे पहाडी की टेकडी (टीले) पर अवस्थित है जहाँ माताजी निज मदिर मे विराजमान है। इस मदिर के बारे मे यह कहा जाता है कि यह बहुत प्राचीन मदिर है तथा पाण्डवो के समय भी यह मदिर विद्यमान था। कहते है कि यह मदिर जमीन से स्वत निकला हुआ है। ग्राम सुदर्शन मे खुदाई म अभी भी प्राचीन अवशेष, मूर्तियाँ, पुराने मकानो के अवशेष मिलते हे। बौद्ध एव जैन धर्म की मूर्तियाँ एव मकराना पत्थर की मूर्तियाँ निकली है।

इस मदिर की मूल मूर्तियो को मुगल शासको द्वारा तोड दिया गया था। वर्तमान मे माताजी के मदिर म पुन स्थापित दुर्गा माता की तीन बडी मूर्तिया एव उनके दोना ओर तीन-तीन दुर्गा माता की मूर्तिया स्थापित की गई है। इस प्रकार यहाँ इस मदिर में दुर्गा माता की नौ मूर्तिया है। इन मूर्तियो की स्थापना सुनार जाति के एक भक्त गैदीलालजी सोनी, ग्राम धनकोली द्वारा कराई गई है, जिन्ह माताजी ने चमत्कार देकर मदिर के जीर्णोद्धार हेतु आदेश दिया था। मदिर म स्थापित मूर्तिया के अस्त्र-शस्त्र व वाहन जगदम्बा दुर्गा के अस्त्र शस्त्र व वाहन के अनुरूप हे। माताजी का निजमदिर सुन्दर है तथा प्राचीन स्थापत्य कला का अद्भुत नमूना है। इसका गुम्बद पाचीन है, जिसका जीर्णोद्धार सवत् २०१५ में पुजारी सुखानाथजी के समय मे कराया गया।

---

१ इस माता क दर्शनार्थ दिनाक २१ ६ १९९९ का गया। साथ म चि शाभित व माहित तिवाडी भी थ। लखक न वहाँ अध्ययन एव अन्वषण किया इसक आधार पर माता का वृत्तात प्रस्तुत है।

यहा सूर्य भगवान् का भी एक अति प्राचीन मदिर था जिसके अब अवशेष मात्र ही रह गये है।

मदिर के पास ही एक प्राचीन बावडी है जो काफी गहरी है। बावडी के तल में कुए तक जाने के लिए सीढिया बनी हुइ है। वर्तमान में यहा कुए मे ट्यूब वैल लगा हुआ है। मदिर म शिलालेख भी है जो खण्डित है।

दोनो नवरात्रो यथा चैत एव आसोज के नवरात्रों में यहा मेला लगता है। विशेष रौनक़ अष्टमी एव नवमी को हाती है। नवरात्रा मे दूर-दूर के यात्री यहा जात देने व जडूला उतारने को आते है।

यहा के पुजारी जी एव ग्राम के व्यक्तियो न माता का एक चमत्कार सुनाया। माताजी के ओरण की जमीन सुरक्षित है, इस पर लगे पेडो की टहनियों को कोई नही तोडता। एक जाट जो कि काफी समद्ध था, उसने माताजी की जमीन पर अतिक्रमण किया। फलत न केवल उसकी समद्धि गई अपितु वह भी अनेकानेक कष्ट भोग कर मरा। उसके लड़को ने माताजी से अपनी समद्धि हेतु प्रार्थना की तथा उनके पिता ने जितनी जमीन पर अतिक्रमण किया था, उतनी ही और जमीन अपनी ओर से माताजी के ओरन मे भेंट की। कहते ह बेटो द्वारा प्रायश्चित करने पर उम जाट परिवार पर माताजी की कपादृष्टि हो गई तथा उस परिवार की समृद्धि पुन लौट आई और आज वह जाट परिवार बहुत सम्पन्न परिवार है।

माता के 'सुदर्शन' नाम से इस गाव का नाम सुदर्शन पड़ा।

ग्राम सुदर्शन कायमसर डीडवाना से पूर्व की ओर लगभग ३० कि मी एव सीकर से पश्चिम की ओर लगभग ८० कि मी की दूरी पर अवस्थित है। मदिर के चारों ओर पेड-पोधे है, जिससे यहा का प्राकृतिक वातावरण सोदय से परिपूर्ण है। ऐसा कहा जाता है कि इस ग्राम म ओलावृष्टि से फलसों को हानि नही होती है।

वर्तमान म इस मदिर के पुजारी नाथ जाति के है, जो मदिर परिसर मे सपरिवार रहते हे। यह परिवार गत तीन पीढियो से यहा रहता है। इस परिवार को मदिर की पूजा-अर्चना के लिए गाव वाले लाये थे। इनके पूर्व थोड़े-थोड़े समय के लिए यहा पुजारी रहे है। वर्तमान म रामेश्वरनाथजी पुजारी है।

पुरातत्त्व विभाग वाले इस मदिर को १३००-१४०० वर्ष पुराना मानते है।

मदिर मे सभा मण्डप है। गुम्बद पुराना है, परिक्रमा में पत्थर पर उत्कीर्ण अनेकानेक मूर्तिया है। परिक्रमा म (मदिर की मूर्तियो के पीछे मध्य म) महिपासुरमर्दिनी की मूर्ति है। परिक्रमा के बाये भाग के मध्य मे गणेशजी व दाहिने भाग के मध्य मे विष्णु भगवान् की मूर्ति है। परिक्रमा की इन तीनों मूर्तियो के दोनो ओर तथा ऊपर नीचे भी अनेक मूर्तिया उत्कीर्ण है। इनम से अधिकाश मूर्तिया खण्डित है। इस मदिर की परिक्रमा म उत्कीर्ण मूर्तिया एव पाढा माता (मकराणा) के मदिर मे उत्कीर्ण मूर्तिया एव गुम्बद एक जैसे ही हे, यदि कोई अतर हे तो वह यह कि वहा परिक्रमा की दाई ओर मध्य मे गणेशजी है तथा बाई ओर पीछे नटराज की मूर्ति है तथा बाई ओर (उत्तर दिशा) मे महिपासुर-मर्दिनी की मूर्ति है। परिक्रमा की शेष मूर्तिया सुद्रासना माता के समान है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दानो ही मदिर (सुदर्शना माता एव पाढा माता) का एक ही समय मे बनाये गये थे। सुदर्शना माता के मदिर म मूल मूर्ति महिपासुर मर्दिनी की थी।

गर्भगृह के बाहर १६ खम्भो क सभा मण्डप मे (पाढा माता के सभा मण्डप मे भी १६ खम्भे है)। दाहिनी ओर शिवालय है तथा शिव-पचायत है। य शिव मूर्तिया मदिर म लगभग १०० वर्ष पूर्व के समय की बताई गई, जो सगमरमर पत्थर की हे। पास म ही माता से मनोती चाहने वालो द्वारा नारियल रखे गये है।

यात्रिया के रात्रि-विश्राम हेतु अग्रवाल समाज द्वारा चार कमरा का निर्माण कराया गया है।

पहले यहा जोजरी नाम की नदी थी, उसकी चपेट मे यह गाव आ गया था। मदिर ऊपर पहाड की टेकड़ी पर होने के कारण बचा रहा।

ऐसा कहा जाता है कि मुगल शासक शेरशाह था। उसने मारवाड़ के शासक मालदेव राजा पर आक्रमण किया था। उस समय मूर्तिया खण्डित की गइ एव बाद मे औरगजेब क शासन काल म भी मूर्तिया खण्डित की गईं।

माता का पहले सुरजल नाम था। माता के नाम से ही ग्राम का नाम सुरजल हुआ।

दिनाक २२ ६ ९८ को जब हम आगे जाने का रास्ता मालूम कर रहे थे, श्री भवरू खा जी डीडवाना मे मिल गये। उन्होने बताया कि सुद्रासना का पुराना नाम सुजल नगरी था। माताजी का पहला पुजारी एक मुसलमान था, जिनका नाम श्री सफदल खा था जो कायमखानिया मे मलवान जाति का दाता (प्रवर्तक) था। वह माताजी की पूजा करता था। इस नगरी मे सोना बहुत था। सोने के लालच म बिदासर ठाकुर ने गाव पर कब्जा करना चाहा। सफदल खा जी, जो माता का अनन्य भक्त व चमत्कारी था। भक्त पुजारी की परीक्षा लेने हेतु बिदासर ठाकुर ने पहले अपना एक दूत भेजा जो माता के पुजारी मफदल खा जी के पास आया। सफलद खा जी माताजी की पूजा चद्दा पहनकर व सिर पर तिवाल रख कर करते थे। बिदासर के ठाकुर के दूत ने सोना मागा। कहते है माता प्रगट हुई और सोने की मूदडी (अगूठी) फकी। दूसरी बात फिर बिदासर ठाकुर ने दूत भेजा। दूत ने खाने में गवार की फली व सिट्टा मागा। मदिर के पीछे जहा यात्री हाथ मुह धोते थे दूत को गवार की छोटी फली व सिट्टा मिला। ये सब चमत्कार सुनने के बाद ठाकुर ने तीसरी बार अपना दूत भेजा, उसने आकर सफदल खा जी से कहा मुझे तुम्हारी सुरजल माता के दर्शन करावो। प्रात एव सायकाल माता की पूजन करने वाले सफदल खा ने स्वय ने भी प्रत्यक्ष में माता के दर्शन नही किये थे, अब उसके सामने धर्मसकट पैदा हो गया। उसने माता को असत्य होने से बचाने के लिए यह निश्चय किया कि वह अपने प्राण त्याग दगा, क्योकि माता के दर्शन ठाकुर के दूत को कराय नहीं जा सकते। और दूत का दर्शन नही कराने पर भक्ति पुजारी की भक्ति पर आच आवे, अत सफदल खा जी के लिए एक मात्र रास्ता प्राण त्याग का ही था। जब वह खड्ग से आत्महत्या कर रहा था, माता प्रगट हुई और कहा 'तू अपनी जान क्या दे रहा है? तू क्या चाहता है, सफदल खा ने कहा मैंने माता के कभी भी दर्शन नही किये फिर ठाकुर के दूत का माता के दर्शन कैसे कराऊ? माता ने कहा कल शनिश्चर वार है। ठाकुर क दूत को कल सुबह मदिर के सामने भेज देना मै उसका नजर आ जाऊगी। प्रात काल दूत मदिर के सामने आया,

ता वह देखता है कि माता शेर की सवारी पर मंदिर के बाहर आ रही है। दूत बेहोश हो गया और बाद में वह माता का भक्त बन गया। बाद में उसने माता के मंदिर में ही जीवित समाधि ले ली। एक रात्रि को स्वप्न में माता ने सफदर खा जी को दर्शन दिये और कहा 'बेटे तुम मेरे लिए जगह छोडकर इस दुनिया को छोड़ दो तेरी नगरी की रक्षा मै करूगी। सफदर खा जी जागीरदार थे, उन्होंने पूछा– हे माता, तेरे लिए कितनी जगह छाडूं ? मेरे पास तो बहुत जमीन है', तब माता ने कहा 'तेरे रसाले मे एक टाग टूटी हुई घोडी है उसको सुबह रसाले के दरवाजे पर छोड देना, वह खुद खडी होकर घूमेगी, जितनी जमीन पर घूम कर वह आवे, वह जमीन मेरी हद में छोड देना।' घोडी ११६० बीघा जमीन में घूम कर आई जो जमीन आज भी ११६० बीघा माता के ओरन मे है। माता के ओरन की जमीन को जिस किसी ने भी दबाने की कोशिश की माता ने उसे तत्काल पर्चा दिया।

एक बार यहा बारिश नही हुई। एक बालक प्रण लेकर माता के समक्ष बैठा कि जब तक वर्षा नही होगी, वह अन्न जल ग्रहण नहीं करेगा। करुणामयी माता की कृपा से तीन दिन बाद वर्षा हो गई, माता ने अपने भक्त की लाज रखी।

ऐसा कहा जाता है कि गाव मे जब कभी भी चोर आते थे, माता के मंदिर से आवाज आती थी, चोर आ गये, चोर आ गये और इस प्रकार ग्राम चोरों से मुक्त रहा।

माता के अन्य मंदिर[१]

१ महालक्ष्मी माता का एक मंदिर ग्राम पल्लू (जि चूरू) में भी है। विस्तृत विवरण चतुर्भुखी माता के विवरण में देखे)।

२ कुशीनगर (गोरखपुर) से लगभग १० कि मी अग्निकोण में कुलकुल्ला स्थान है। यहाँ एक छोटी नदी कुल्या है, जिसके तट पर देवी स्थान होने से इसे कुलकुल्या देवी कहते है। (शास्त्रों में भगवती का एक नाम कुरकुल्ला भी आता है, सभव है, उसी का नाम बिगड़कर कुलकुलया हो गया हो)।

---

[१] कल्याण तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) के आधार पर।

इस माता का स्वरूप वैष्णवी देवी का है। अत उनकी पूजा सात्त्विक विधि से होती है। यहा रामनवमी के अवसर पर मेला भरता है। यात्री इस मेले मे दूर-दूर से भगवान् की आराधना करने आते है।

३ सिहपुरी (उज्जैन) मे वैष्णवी देवी व महालक्ष्मी के मदिर है।

४ ओकारेश्वर यात्रा क्रम मे– कुबेर भण्डारी से लगभग ४-५ कि मी की दूरी पर नर्मदा के दक्षिण तट पर सात माता' स्थान है, जहॉ अन्य माताओ के साथ-साथ वेष्णवी माता का भी मदिर है।

५ गोवा प्रदेश के शिरोग्राम मे लयराई देवी का स्थान अत्यन्त प्रसिद्ध है। ये वैष्णवी देवी है। इनका इधर इतना सम्मान है कि इस गाव मे कोई भी घोड़े पर चढकर नहीं निकलता।

वैशाख शुक्ला पचमी को यहा बडा मेला लगता है। पचमी की रात्रि मे गाव के बाहर एक वट-वक्ष के नीचे लकडिया का ढेर एकत्र करके उसमे अग्नि प्रज्ज्वलित की जाती है। कई घटो मे जब लकडिया जल जाती है, लपट तथा धुआ नही रहता, तब अगारो के ऊपर से नगे पॉव, व सब लोग चलते है, जो उस दिन देवी की पूजा के लिए व्रत किय रहते है। ऐसे लोगा की सख्या कई सौ होती है। किसी का न तो पैर जलता है न कोई कष्ट हाता है। यह अद्भुत दृश्य देखने दूर-दूर के विधर्मी लोग भी आत है।

६ रामेश्वरम् मदिर* की परिक्रमा म कुण्डों क समीप अनेकानेक मदिरों व देव-विग्रह क साथ साथ महालक्ष्मी का मदिर भी है।

७ देवी भागवत ७/५५-८४, मत्स्य पुराण १३/२६-५६ के अनुसार देवी के १०८ दिव्य शक्ति स्थानो में कोल्हापुर में महालक्ष्मी का मदिर है। यह महिषमर्दिनी का स्थान है। इस लोग अम्बाजी का मदिर भी कहते है। मदिर बहुत बड़ा है। उसका प्रधान भाग नीले पत्थरों का बना है। यह राज-महल के खजानाघर के पीछे स्थित है। कोल्हापुर- सागली-मीरज-काल्हापुर लाइन पर मीरज से ३६ मील दूर है। यहाँ देवी के तीन नेत्र गिरे थे।

८ श्री शैल स्थान पर देवी की ग्रीवा गिरी थी। यहाँ की शक्ति का नाम *महालक्ष्मी है– यह स्थान हबड़ा-क्यूल लाइन के नलहाटी स्टेशन से लगभग* ३ कि मी नैऋत्यकोण मे एक टीले पर स्थित है।

सुदर्शना पारीको के निम्न अवटको की कुलदेवी है—

१	मलवड	जोशी
२	वाणुण्डचा	जोशी
३	मलवड	तिवाडी



सुरसा : सुरसाय-सरस्वती माता

'सुरसा' शब्द से तात्पर्य है, 'शोभना रसोय स्या', सुखेन रस्यते, सुस्वादु रसयुक्ते। तदनुसार सुरसा शब्द के अनेकानेक शाब्दिक अर्थ है, यथा–

१ तुलसी

२ किसी किसी के मत मे यह दुर्गा का नाम भी है।[१]

३ सुरसा कश्यप की पुत्री नाग माता का नाम है। वाल्मीकि रामायण (सुन्दर काण्ड, सर्ग १) राक्षस का रूप धारे इस देवी का उल्लेख हनुमानजी के सागरोल्लघन के सदर्भ मे हुआ है–

ततो देवा सुगन्धर्वा सिद्धाश्च परमर्षय ।
अब्रुवन सूर्यसङ्काशा सुरसा नागमातरम् ।।
(वा रा स का सर्ग १)

एव विचार्य नागाना मातर सुरसाभिधानाम्।
अब्रवीद्देवतावृन्द कौतुहलसमन्वित ।।
(आध्यात्म रामायण ६/१/८२४)

४ महाभारत मे अप्सराविशेष के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग हुआ है। (म भा – १/१२२/६०)

इसी प्रकार सुरसाय शब्द का सदर्भो के साथ अलग-अलग अर्थ होता है–

१ सुरसाय– (सुरस्वामिनी का राजस्थानी भाषारूप)।

२ शब्द सरस्वती का ग्रामीण अचल म विकृत प्रयोग होते हाते सुरसाय हो गया। अवधी भाषा मे सरसई हो गया सरसइ ब्रह्म विचार प्रचारा।' (गो तु दा) जैसे गावो मे किसी का नाम सरस्वती होने पर उसे सुरसती कहने लग गये।

---

१ हिन्दू धर्मकोष ल राजबलि पाण्डय पृ ६७५

परा, दुर्गा, सरस्वती– विष्णु और शिव आदि की शक्ति है। अत भक्तो द्वारा देवी के इन तीनो रूपो की ही पूजा की जाती है।

सुरसाय का एक शाब्दिक 'सुरसहायक' भी है कि जो देवताओ की सहायता करे। इस सदर्भ म महिषासुर के वध हेतु जिन-जिन दैवी शक्तियो ने अपना योगदान दिया उनमे महासरस्वती देवी का अमित योगदान था। मार्कण्डय पुराण के सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के पाचवे अध्याय मे[१] देवताओ द्वारा देवी की स्तुति की गई है। मार्कण्डेय पुराण के उत्तर चरित्र म महासरस्वती की प्रसन्नता के लिए इस देवी का ध्यान किया गया है।

महासरस्वती की उत्पत्ति

वाग्देवता भगवती सरस्वती समस्त ज्ञान-विज्ञान, विद्या, कला, बुद्धि, मेधा, धारणाशक्ति, तर्कशक्ति और प्रत्यभिज्ञा की प्रतिनिधि-स्वरूपा वाणी की ब्रह्मस्वरूपा, परमा ज्योतिरूपा सनातनी सर्वविद्याधिदेवी, ज्ञानाधिदेवी और अधिष्ठात्री शक्ति है। याज्ञवल्क्य ऋषि ने जगज्जननी सरस्वती की नष्ट-स्मृति, हततज विद्याहीन ओर दु खित मानवो को ज्ञान, स्मति, विद्या, प्रतिष्ठा, काव्य प्रणयनशक्ति ग्रथकर्तत्वशक्ति, सत्सभा म विचार क्षमता ओर प्रतिभा की देने वाली शक्ति के रूप म स्तुति की है। अपने मूल स्थान अमृतमय प्रकाशपुञ्ज म निवसित यह देवी अपन उपासका के लिए निरन्तर पचास अक्षरो के रूप मे ज्ञानामत की धारा प्रवाहित करती रहती है।

शब्द ब्रह्म' शब्द से व्यपदिष्ट ज्ञानात्मिका शक्ति भगवती शारदा साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी ही है ओर ये महालक्ष्मी, महाकाली और महाशक्त्यात्मिका महामाया आदि शक्तिया स भिन्न नही है। समस्त विश्व का दैनन्दिन व्यापार वाणी के व्यवहार पर ही आधृत है।[२] आचार्य व्याडि ने श्री' शब्द के अन्तर्गत लक्ष्मी, सरस्वती, बुद्धि को समाहित किया है। पुराणकारो ने सरस्वती के निम्नाकित बारह नामो– भारती, सरस्वती, शारदा, हसवाहिनी, जगती, वागीश्वरी, कुमुदी, ब्रह्मचारिणी, बुधमाता, वरदायिनी, चन्द्रकान्ति और भुवनेश्वरी को दिवस

---

१ कल्याण– मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक, वर्ष २१ (१९४७) पृ २०५ कल्याण– सक्षिप्त देवी भागवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ५८२

२ स्व स्तुति– सकलनकर्ता– श्रीमती शान्ता पारीक– सहायक निदेशक माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राज अजमेर) पृ १७

की तीना सधिया म स्मरण करते रहने का निर्देश दिया है, जिससे वह ब्रह्मस्वरूपा सरस्वती उनकी रसना पर सदैव विराजमान रहे।[१] यथा—

प्रथम भारती नाम, द्वितीय च सरस्वती।
तृतीय शारदादेवी, चतुर्थ हसवाहिनी॥
पचम जगती ख्याता षष्ठ वागीश्वरी।
सप्तम कुमुदी प्रोक्ता अष्टम ब्रह्मचारिणी॥
नवम बुधमाता च दशम वरदायिनी।
एकादश चन्द्रकान्तिर्द्वादश भुवनेश्वरी॥
द्वादशैतानि नामानि त्रिसध्य य पठेन्नर ।
विश्वरूपे विशालाक्षि विद्या देहि, नमोऽस्तु ते॥

विभिन्न शास्त्रा, पुराणों और ग्रन्थो में भगवती सरस्वती के ध्यान से सम्बद्ध जो स्तुतियाँ प्राप्त हाती है, उन सबम प्राय एक से ही स्वरूप की वदना की गयी है। उनके अनुसार सरस्वती हस अथवा शुभ्रकमल पर आरूढ अथवा आसीन बताई गयी है। उनका वर्ण पूर्णिमा के चन्द्रमा, चन्द्रहार अथवा कुन्दकुसुम (मुक्तापुष्प) के समान उज्ज्वल गार वर्णित है। उनके अग-प्रत्यग कर्पूर, कुन्द पुष्प के समान कान्तिवाले है। उनका मुख-मण्डल दवाधिदव महादेव के अट्टहास के समान प्रफुल्ल और वाणी मदस्मिति (मुस्कान) से अलकृत किया गया है। सम्पूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण उमग और उल्लास म उल्लसित रहने वाली माँ सरस्वती के कर-कमला मे वीणा, पुस्तक, अमृतकलश, अक्षमाला और कहीं-कहीं पद्मपुष्प सुशोभित है। दिव्य आभरणो से विभूषित वह देवी सब की सभी प्रकार की मनोकामनाओ की पूर्ति करने वाली कही गइ है, अत नमस्कारपूर्वक उनका मानसिक ध्यान करने का निर्देश दिया गया है।

देवी के ध्यान स सम्बन्धित कतिपय शास्त्रोक्त स्तुतियाँ यहाँ उद्धृत की जा रही हैं—

हिम चन्दन कुन्देन्दु कुमुदाम्भोज सन्निभा।
वर्णाधिदवी या तस्यै चाक्षरायै नमोनम ॥
विसर्ग बिन्दु मात्रासु यदधिष्ठानमेव च।

---

१ कल्याण–तीर्थांक वर्ष ६४ (१९९०) पृ ६९१

तदधिष्ठातृदेवी या तस्मै वाण्यै नमो नम ॥
यथा विना सख्यावान् सख्या कर्तुं न शक्यते।
कालसख्यास्वरूपा वा तस्मै देव्यै नमो नम ॥
व्याख्यास्वरूपा या देवी व्याख्याधिष्ठातृ-देवता।
भ्रमसिद्धान्तरूपा वा तस्मै देव्यै नमो नम ॥
स्मृतिशक्तिर्ज्ञानशक्तिर्बुद्धिशक्ति-स्वरूपिणी।
प्रतिभा कल्पनाशक्तिर्या च तस्मै नमो नम ॥

—— × ——

शुभ्रा स्वच्छविलेपमाल्यवसना शीतांशुखण्डोज्वला।
व्याख्यामक्षगुण सुधाढ्यकलस विद्यांञ्च हस्ताम्बुजै ।
विभ्राणा कमलासना कुचनता वाग्देवता सस्मिता।
वन्दे वाग्विभवप्रदा त्रिनयना सौभाग्यसम्पत्करीम् ॥

—— × ——

तरुणशकलमिन्दो विभ्रती शुभ्रकान्ति
कुचभरनमिताङ्गी-सन्निषण्णासिताब्जे।
निजकरकमलोद्यल्लेखनी पुस्तकश्री ।
सकल विभवसिद्धये पातु वाग्देवता न ॥

—— × ——

आसीना कमले करैजपपटीं पद्मद्वय-पुस्तक
विभ्राणा तरुणेन्दु-बद्धमुकुटा-मुक्तेन्दु कुन्दप्रभा।
भालोन्मीलितलोचना कुचभराक्रान्ता भवद्भूतये।
भूयाद्वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानानिशम् ॥

—— × ——

मुक्ताहारावदाता शिरसि शशिकलालङ्कृता बहुभि स्त्रै
व्याख्या वर्णाक्षमाला मणिमयकलश पुस्तकञ्चोद्वहन्तीम्।
आपीनोत्तुङ्ग वक्षोरुहभरविलसन्मध्यदेशामधीशा।
वाचामीडे चिराय त्रिभुवननमिता पुण्डरीके निषण्णाम् ॥

—— × ——

हसारूढ़ा हरहसित-हारेन्दु कुन्दावदाता,
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुरेखा।
विद्या-वीणामृतमयघटाक्षस्रजा दीप्त-हस्ता,
शुभ्राब्जवस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात्॥

—— X ——

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभा।
चन्द्रार्द्धाङ्कितमस्तका निजकरैं सम्बिभ्रतीमादरात्॥
वीणामक्षगुण सुधाढ्यकलस विद्या च तुङ्गस्तनीं।
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनु हसाधिरूढ़ा भज॥

—— X ——

यथा तु देवि भगवान् ब्रह्मा लोकपितामह ।
त्वा परित्यज्य नो तिष्ठत् तथा भव वरप्रदा ॥
वेदशास्त्राणि सर्वाणि नृत्यगीतादिक च यत्।
लक्ष्मी मेधा वरा रिष्टिर्गौरी तुष्टि प्रभा मति ॥
एताभि पाहि तनुभिरष्टाभिर्मां सरस्वति।

कल्याण[१] म महासरस्वती की उत्पत्ति का कथानक इस प्रकार दिया गया है—

पूर्वकाल म जब शुम्भ और निशुम्भ न इन्द्रादि देवताआ के सम्पूण अधिकार छीन लिये तथा वे स्वय ही यज्ञभोक्ता बन बैठे, तब अपने अधिकारा को पुन प्राप्त करने के लिए देवताओ ने हिमालय पर जाकर देवी भगवती की अनेक प्रकार से स्तुति की। उस समय पतितपावनी भगवती पार्वती आयी और उनके शरीर से शिवा प्रगट हुई। सरस्वती देवी पार्वती के शरीर-कोष से निकली थी, इसलिए उनका नाम कौशिकी नाम प्रसिद्ध हुआ। कौशिकी के निकल जाने क बाद पार्वती का शरीर काला पड गया, इसलिए उन्हे कालिका कहते है। तदन्तर भगवती कौशिकी परम सुन्दर रूप धारण कर बैठी हुई थी कि उन्हे चण्ड-मुण्ड नामक शुम्भ-निशुम्भ के दूता न देखा। उन्होंने जाकर शुम्भ-निशुम्भ से कहा कि 'हे दानवपति' हिमालय पर एक अति लावण्यमयी परम मनोहरा रमणी बैठी है। वैसा मनोज्ञ रूप आज तक किसी न नही दखा। आपके पास ऐरावत हाथी, पारिजात तरु उच्चैश्रवा अश्व, ब्रह्मा का विमान, कुबेर का

---

१ कल्याण– दवताक वर्ष ६४ (१९९०) पृ १९८ १९

खजाना, वरुण का सुवर्णवर्षी छत्र तथा अन्य विविध रत्न विद्यमान है, पर ऐसा स्त्रीरत्न नही है, अत आप उसे ग्रहण कीजिए।' दूतो की वाणी सुनकर शुम्भ-निशुम्भ ने अपने सुग्रीव नामक दूत को उस देवी को प्रसन्न करके अपने पास लाने को कहा। दूत ने जाकर देवी को शुम्भ-निशुम्भ का आदेश सुनाया और उनके ऐश्वर्य की बहुत प्रशसा की। देवी ने कहा कि तुम जो कुछ कहते हो सो सब सत्य है, परन्तु मैने पहले एक प्रतिज्ञा कर ली थी, कि--

यो मा जयति सग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति॥
(श्री दुर्गासप्तशती ५।१२०)

'जो मुझे सग्राम म जीतकर मेर दप को चूण करेगा, वही मेरा पति होगा।' अत तुम अपने स्वामी को जाकर मेरी प्रतिज्ञा सुना दो कि मुझे युद्ध म जीतकर मेरा पाणिग्रहण कर ले। दूत ने देवी को बहुत समझाया, परन्तु देवी ने नहीं माना। तब कुपित होकर दूत ने सम्पूर्ण वृत्तान्त शुम्भ-निशुम्भ को जाकर सुनाया। जिससे कुपित होकर उन्होने अपने सेनापति धूमलोचन को देवी के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। परन्तु देवी ने थोड ही समय म उसे सेना सहित मार डाला। इसी प्रकार चण्ड और मुण्ड को भी देवी ने मार डाला। तब क्रुद्ध होकर उन्होने अपनी समस्त सेना लेकर देवी को चारो ओर से घेर लिया। भगवती ने घण्टाध्वनि की, जिससे सम्पूण दिशाए गूज उठी। इसी समय ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कार्तिकेय और इन्द्रादि के शरीरो से शक्तियाँ निकलकर चण्डिका के पास आयी। व देवियां जिसकी शक्ति थी, तत्तत् शक्ति के अनुरूप स्वरूप, भूषण और वाहन से युक्त थी। उन शक्तियो के मध्य में स्वय महादेव जी आये और देवी से बोले कि मुझे प्रसन्न करने के लिए सम्पूर्ण दानवो का सहार कीजिए।' उसी समय देवी के शरीर से अति भीषण चण्डिका-शक्ति प्रगट हुई और शिवजी से बोली कि हे भगवन्! आप हमारे दूत बनकर दानवों के पास जाइये और उन्हे कह दीजिए कि यदि तुम जीना चाहते हो तो त्रैलोक्य का राज्य इन्द्र को समर्पित कर पाताल लोक को चले जाओ।' शिवजी ने शुम्भ-निशुम्भ को देवी की आज्ञा सुनायी, पर वे बलगर्जित दानव कब मानने वाले थ। निदान भयकर युद्ध छिड गया और अस्त्र-शस्त्रो के

---

१ कल्याण– देवताक वर्ष ६४ (१९९०) पृ १९८ ९९

प्रहार होने लगे। शक्तियों द्वारा आहत होकर दानव सेना गिरने लगी। तब क्रुद्ध होकर रक्तबीज युद्धभूमि मे आया। इस दानव के रक्त से उत्पन्न दानव समूह से सम्पूर्ण युद्ध स्थल भर गया, जिससे देवगण काप उठे। तब चण्डिका ने काली से कहा कि 'तुम अपना मुख फैलाकर इसके शरीर से निकले हुए रक्त का पान करो, जब यह क्षीणरक्त होगा तब मारा जायेगा।' फिर देवी ने रक्तबीज पर शूलप्रहार किया। उससे जो रक्त निकला, उसे काली पीती गई। क्षीणरक्त होते ही देवी के प्रहार से वह धराशायी हो गया। तत्पश्चात् शुम्भ और निशुम्भ भी युद्धभूमि में मारे गये। देवगण हर्षित होकर जयध्वनि करने लगे। महासरस्वति ने जो रूप धारण किया, उसका स्वरूप और ध्यान इस प्रकार है—

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनु सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवा त्रिजगतामाधारभूता महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यमर्दिनीम्॥

'स्वहस्तकमल में घण्टा, त्रिशूल, हल, शख, मूसल, चक्र, धनुप और बाण को धारण करने वाली, गौरी देह से उत्पन, शरद् ऋतु के शोभा-सम्पन्न चन्द्रमा के समान कातिवाली, तीनो लोकों की आधारभूता, शुम्भादि दैत्यमर्दिनी महासरस्वती का हम नमस्कार करते है।'

देवतागण महासरस्वती की स्तुति करने लगे— 'हे देवि! आप अनन्त पराक्रमशाली शक्ति है, ससार की आदिकारण महामाया आप ही है। आपके द्वारा समस्त ससार मोहित हो रहा है। आप ही प्रसन्न होने पर मुक्ति की दाता है। हे देवि! सम्पूर्ण विद्याएँ आपके ही भेद है, सम्पूर्ण स्त्रियाँ आपका ही स्वरूप है। आपके द्वारा समस्त ससार व्याप्त है। कौनसी एसी विशेपता है कि जिससे हम आपकी स्तुति न करें। हे देवि! आप प्रसन्न हों और शत्रुओं के भय से सर्वदा हमारी रक्षा करे। आप समस्त ससार के पापों का और उत्पात के परिणामस्वरूप उपसर्गो का नाश कर दीजिए।' देवताओ की स्तुति सुनकर भगवती प्रसन्न होकर कहने लगीं— हे देवगण! तुम्हारी की हुई स्तुति के द्वारा एकाग्रचित्त होकर जो मेरा स्तवन करेगा, उसकी समस्त बाधाएँ मै अवश्य नष्ट कर दूगी।' यह कहकर देवगण के देखते-देखते ही भगवती अन्तधान हो गयी।

जैसाकि प्रारम्भ म ही सुरसा' शब्द के शास्त्रोक्त अर्थो पर प्रकाश डालते समय उसका प्रमुख प्रचलित अर्थ नाग माता' बताया गया है– (नागाना सर्पाणा माता)। पुराणो के अनुसार नाग माता दक्ष की कन्या और कश्यप की पत्नी थी। रामायण ३/२०/२९ के अनुसार उसका नाम कद्रु था– यथा––

'रोहिण्या जज्ञिरे गावो गन्धर्व्यां वाजिनस्तथा।
सुरसाऽजनयन्नागान् राम' कद्रुश्च पन्नगान्।'

इस कद्रु का एक पर्याय नाम 'मनसा देवी' भी है। उसका विशेषण नाम विषहरी है। वह कश्यप की पुत्री भी कही गयी है। वह आस्तीक मुनि की माता, वासुकी की बहिन, जरत्कारू मुनि की पत्नी के रूप मे पुराण प्रसिद्ध है। उनके नाम की व्युत्पत्ति के विषय मे ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृतिखण्ड–नारायण नारदीय मनसोपाख्यान के पञ्चचत्वारिंशत् अध्याय मे विस्तार से प्रकाश डाला गया है। कश्यप की मानसी कन्या होने से वह मनसा देवी कही गई। वह लोक मे जगद्गौरी के नाम से विख्यात और पूजित है। शिवजी की शिष्या होने के कारण उन्हे शैवी नाम से भी कहा गया है। जन्मेजय के नागयज्ञ में उसने नागो की रक्षा की। अत नागेश्वरी कहाती है—-

नागाना प्राणरक्षिणी यज्ञे जन्मेजयस्य च।
नागेश्वरीति विख्याता सा नागभगिनीति च।

वह विषहरी, सिद्धयोगिनी के नाम से भी विख्यात है। उसके बारह नामो का पाठ करने से नागा के दशन का भय नही रहता। धन्वन्तरि के दर्प का भजन करने वाली इस देवी का विस्तार से वणन उक्त ब्रह्मवैवत पुराण के प्रकृति खण्ड म ४५ से ५९ अध्याय तक उपलब्ध है।

माता के स्थान

१ सुरसा (सुरसाय) माता का स्थान सुदर्शना माता का स्थान ही बताया गया है।[१] सुद्रासना-कायमसर में सुरजल माता का मदिर है। मदिर अति प्राचीन है। पुरानी मूर्तिया मुगलकाल म तोड़ दी गई थी जो मदिर की दीवारो एव चारदीवारी मे सुरक्षा की दृष्टि से चुना दी गई है। वर्तमान म इस मदिर में दुर्गा की नौ मूर्तियाँ प्रतिष्ठापित है।

---

[१] यह स्थान ग्राम सुद्रासना कायमसर जि नागौर में है। स्थान का विस्तृत विवरण सुदर्शना माता क वृत्तान्त म वर्णित है।

सुरमा सुरसाय माता का भी यही स्थान बताया गया[1] सुरसा, सुरसाय का एक अर्थ देवताओ की सहायता करना भी होता है। सुरसाय का ही नाम बिगाडकर अव्युत्पन्न लिखने वालो ने सुरजल लिख दिया हो।

अब तक की प्राप्त जानकारी के आधार पर इस स्थान की पुरानी मूर्तियों खडित कर देने के कारण एव तत् सम्बन्धित एतिहासिक साक्ष्यो के नष्ट हो जाने के कारण रावो स प्राप्त जानकारी को आधार माने जाने पर सुरसा माता का यह स्थान माना जाना उपयुक्त प्रतीत होता है।

आमेर (जयपुर) का मशा माता मदिर श्री नदकिशोरजी पारीक 'नागरिक' ने आमेर स्थित मशा माता का जो वर्णन किया है, वह निम्न प्रकार है—

जयपुर से आमेर वाले वाली सड़क पर, चार मील चार फर्लांग पर घाटी दरवाजे से आमेर की पुरानी नगरी म प्रवेश करने पर दरवाजे से थोड़ी दूर बायीं ओर एक सडक घूमकर मशादेवी के मदिर तक जाती है जो जयगढ के दुग क दक्षिण छोर, वियजगढी के नीच एक लघु किन्तु दशनीय मदिर है, जिसे 'दवी खाल' ही कहा जाता है।

आमेर म पहले मीणा का राज्य था। यह मदिर उत्कीर्ण स्वयभू है, किसी की तरामी और स्थापित की हुई नही है। मूर्ति के नेत्र, भौहे, ललाट, मुख आदि अपने आप ही इस स्वयभू मूर्ति म आभासित है। ललाट पर सर्प का फन व मूछ भी देखने म आत है। वास्तव मे मशा देवी को सर्पो की देवी भी माना जाता है। 'दवी भागवत्' के ४८ से स्कन्ध मे इसका वणन है। मशा माता जगत्कारू ऋषि की पत्नी थी। जब यह ऋषि पुष्करारण्य म गए तो उन्होंने इस स्थान पर पड़ाव किया था। वही मशा माता का मदिर बना हुआ है।

यद्यपि मदिर का भी जीर्णोद्धार हो गया है और मकानात भी नए बन गए है, तथापि 'देवी खोल' की प्राचीनता सुषमा-सम्पन्न यह स्थल तपोवन की तरह ही है, जहा किसी सिद्ध महात्मा अड़ानन्द ने कभी तपस्या की थी।

---

[1] सुरसा माता का स्थान सुन्दर्शना ग्राम मे हान का उल्लख पारीक मासिक (चैंगलात) में है। ग्राम सुन्दरसना में नवदुर्गाओ की प्रतिमाए कुछ समय पूर्व ही प्रतिष्ठापित हुई हैं। बहुत सभव है मुगलों द्वारा मन्दिर को ध्वस्त करन एव मूर्तिभजन क पूर्व यहा सुरसाय सुरसा सरस्वती माता की प्रतिमा रही हो। मदिर परिसर म खडित मूर्तियों का सुरक्षा की दृष्टि स दीवार म चुनवा दिया गया है।

इस महात्मा की समाधि देवी खोल के छोर पर आज भी विद्यमान है और यहा दो विशाल वट-वृक्षो के नीचे सिद्धेश्वर महादेव का मदिर है। वट-वृक्षा में से एक दूसरे की जटाओ से बना हुआ है और अतीव प्राचीन है।'[१]

पहले यहा पशुबलि हाती थी किन्तु अब पशुबलि एव मदिरापान निषिद्ध हे।

मनशा देवी का एक अन्य मदिर राजस्थान के अलवर जिले मे सरिस्का अभयारण्य मे भर्तृहरि की गुफा के पास स्थित है। समीप ही हनुमानजी का भी प्रसिद्ध मदिर है।

हरिद्वार का मशादेवी का मदिर मशा देवी का एक मदिर हरिद्वार मे शिवालिक पर्वत की चोटी पर है। इस मदिर की मान्यता जग-प्रसिद्ध है। अपनी मनोकामना सिद्धि हेतु भक्त मदिर के पास स्थित एक वृक्ष पर मोली बाधते है। मदिर तक पैदल जाने वालों को लगभग एक कि मी चढाई चढनी होती है। मदिर तक जाने हेतु टूलिया (रोप-वे) भी है, जिसमे बैठकर भक्त माता के मदिर तक दर्शनार्थ जा सकते है।

विन्ध्याचल– उत्तर रेल्वे के मिर्जापुर स्टेशन से ६ कि मी दूर विन्ध्याचल स्टेशन है। यहाँ गगा तट के पास तीन मदिर है। १ विन्ध्यवासिनी (कौशिकी देवी) २ महाकाली ३ अष्टभुजा। इन तीना की यात्रा 'त्रिकोण यात्रा' कही जाती है।

अष्टभुजा– इन अष्टभुजा देवी को कुछ लोग महासरस्वती भी कहते है। विन्ध्यवासिनी को लोग महालक्ष्मी मान लेते है। और इस प्रकार 'त्रिकोण यात्रा' को महालक्ष्मी, महाकाली, महासरस्वती की यात्रा कहते है।

उज्जैन– यहाँ कार्त्तिक चौक मे महासरस्वती का मदिर है।

पारीकों के निम्न अवटका की कुलदेवी सुरसा अथवा सुरसाय (सुरसाराय) है–

१ जहेला	जोशी
२ जावल्या (जावला)*	उपाध्याय
३ दुलीचा	उपाध्याय

*पारीक जाति के सुरसा मातृका के पूजक उक्त अवटकों में जावलिया

१ राजस्थान पत्रिका १३ मार्च १९८९ २ १३ मई १९८९

(जावल्या) उपाध्यायों को प्राप्त विद्याप्रवीण[१] की उपाधि से सिद्ध होता है कि सरस्वती ही सुरसा नाम से उनकी कुल देवी है।[२] जहेला जोशी और दुलीचा उपाध्यायो की भी कुल देवी सरस्वती ही होनी चाहिए। यह भी सम्भव है कि आमेर या अलवर के समीप नागा (मीणो= मेनाको) के क्षेत्र में अवस्थित होने से जहेला और दुलीचा अवटकों ने नागमाता सुरसा को अपनी कुल देवी के रूप में स्वीकार कर लिया हो।

□□□

---

१ पारीक महापुरुष— ल रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी पृ २२४

२ श्री मुरलीमोहन जावलिया।



मन्शा माता का मन्दिर – आमेर

आरती

जै अम्बे गौरी, मैया जै मगल मूर्ति, मैया जै आनन्द करणी।
तुमको निश दिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिव री॥ टे॥

माग सिदूर विराजत टीको मृग-मद को।
उज्ज्वल से दोउ नैना, चन्द्र बदन नीको॥ जै॥

कमल समान कलेवर रक्ताम्बर राजे।
रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजे॥ जै॥

केहरि वाहन राजत खड्ग खपरधारी।
सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दु खहारी॥ जै॥

कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती।
कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति॥ जै॥
शुम्भ निशुम्भ विडारे महिषासुर घाती।
धूम्र विलोचन नैना, निशदिन मदमाती॥ जै॥

चण्ड मुण्ड महारे, शोणित बीज हरे।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे॥ जै॥

ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी।
आगम-निगम बखानी, तुम शिव पटरानी॥ जै॥

चौसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरू।
बाजत ताल मृदगा, और बाजत डमरू॥ जै॥

तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता।
भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता॥ जै॥

भुजा चार अति शोभित खड्ग खपरधारी।
मनवाछित फल पावत, सेवत नर नारी॥ जै॥

कचन थाल विराजत अगर कपूर बाती।
श्रीमाल-केतु मे राजत, कोटि रत्न ज्योति॥ जै॥

या अम्बे जी की आरती जो कोई नर गावे।
भजत भोलानन्द स्वामी, सुख सम्पत्ति पावे॥ जै॥

कर्पूरगौरं करुणावतारं ससारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि॥

आरती

मंगल' की सेवा सुन मेरी देवा हाथ जोड तेरे द्वार खडे।
पान-सुपारी ध्वजा-नारियल ले ज्वाला तेरी भेट धरे।
सुन जगदम्बे। कर न विलम्बे सतन के भडार भरे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ १॥
बुद्ध' विधाता तू जगमाता मेरा कारज सिद्ध करे।
चरण-कमल का लिया शरण तुम्हारी आन परे।
जब-जब भीर पडे भक्तन पर तब-तब आय सहाय करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ २॥
गुरु' वार ते सब जग मोह्यो तरुणी रूप अनूप धरे।
माता होकर पुत्र खिलावै कही भार्या भोग करे।
शुक्र सुखदाई, सदा सहाई सत खडे जयकार करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ३॥
ब्रह्मा-विष्णु-महेश फल लिये भेट देने तब द्वार खडे।
अटल सिहासन बैठी माता सिर सोने का छत्र धरे।
वार शनिश्चर कुकुम वरणी, जब लुकर पर हुकुम करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ४॥
खड्ग खपर त्रैशूल हाथ लिये रक्तबीज कूँ भस्म करे।
शुम्भ निशुम्भ क्षणहि म मारे महिषासुर को पकड दले।
आदित वारी आदि भवानी जन अपने का कष्ट करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ५॥
कुपित होय कर दानव मार चण्ड-मुण्ड सब चूर करे।
जब तुम देखा दया-रूप हो पल म सकट दूर करे।
सौम्य स्वभाव धरचो मेरी माता जन की अर्ज कबूल करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ६॥
सात बार की महिमा बरनी सब गुण कौन बखान करे।
सिहपीठ पर चढ़ी भवानी अटल भवन म राज्य करे।
दर्शन पावे मगल गावे सिध-साधक तेरी भेट करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ७॥
ब्रह्मा देव पढ़े तेरे द्वारे शिवशकर हरि ध्यान करे।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती चँवर कुबेर डुलाय करे।
जय भवानी जय मातु भवानी अचल भवन मे राज्य करे।
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ८॥

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

अखण्ड राष्ट्र ज्योति पत्रिका
अन्नदाकल्प
अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, ले डॉ शर्मा
आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया (वेस्टर्न) रिपोर्ट, सन् १९१०-११, डॉ डी आर भण्डाकर
आध्यात्म रामायण
आवरा माता, ले रूडमल सत्सगी
उत्पल– श्री साभर पुस्तकालय हीरक जयन्ती स्मारिका
ऐनसिएन्ट सिटीज एण्ड टाउन्स ऑफ राजस्थान, ल के सी जैन
कैटेलॉग ऑफ हिस्टोरिकल डाक्यूमेन्ट्स इन कपड़द्वारा ऑफ जयपुर, सम्पा गोपाल नारायण बहुरा, चन्द्रमणि सिह
कन्याकुमारी, ले वी मीणा
कन्याकुमारी– सुचीन्द्रम
करणी कथामृत, ले शार्दूलसिह कविया
कल्याण

तीर्थाक
देवताक
(सक्षिप्त) ब्रह्मवैवर्तपुराणाङ्क
भगवतलीला अङ्क
देवता अङ्क
(सक्षिप्त) देवी भागवताङ्क
(सक्षिप्त) मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणाङ्क
वामन पुराण
शक्ति अक
शक्ति-उपासना अक
शिव पुराण
स्कन्द पुराण
सकीर्ताङ्क

कालिका पुराण
खाटू के श्याम बाबा का इतिहास, ले प झाबरमल्ल शर्मा, प श्यामसुदर शर्मा
खण्डेले का इतिहास, ले प सूर्यनारायण शर्मा
जीण अमृत-वर्षा
(श्री) जीण पूजन-स्तुति-भजन-इतिहास, ले रूडमल सत्सगी
चौहानो का वृहत् इतिहास, ले देवीसिह निर्वाण
चौहान सम्राट पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग, ले डॉ दशरथ शर्मा
जोधपुर राज्य का इतिहास, भाग १, ले डॉ गौरीशकर हीराचद ओझा
तन्त्र-चूडामणि
तीर्थ गुरु पुष्करराज, ले अमरनाथ पाठक
त्रिपुर रहस्य
(डॉ) दशरथ शर्मा के लेख सग्रह भाग १
दी हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग ७, ले सर एच एम इलियट, सम्पा प्रो जॉन डाउसन
(श्री) दुर्गा सप्तशती
देव स्तुति, सकलकर्तृ- श्रीमती शारदा पारीक
धर्मशास्त्र का इतिहास, ले म म डॉ पाण्डुरग वामन काणे
नवदुर्गा
पारीक गौरव (त्रैमासिक), गोहाटी, सम्पा दिनेश पारीक
पारीक जाति का इतिहास, ले रघुनाथ प्रसाद तिवाडी उमग'
पारीक प्रबोध, ले हेमचन्द शास्त्री
पारीक परिचय, ले एस एल शर्मा
पारीक परिचय, ले भवरलाल पारीक
पारीक मासिक, बैगलोर, सम्पा सत्यनारायण जोशी
पारीक महापुरुष, ले रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी उमग'
पारीक वश परिचय, ले प श्रीपति शास्त्री
पारीक वश-गोत्र-शाखा-प्रवर-बोधिनी, ले वासुदेव उडीदवाल
पारीक्ष ब्राह्मणोत्पत्ति, ले नारायण कठवड व्यास
पारीक्ष सहिता, ले पराकुशाचार्य
पश्चिमी भारत की यात्रा, ले कर्नल जेम्स टॉड, अनु गोपाल नारायण बहुरा
वाल्मिकि रामायण
भवगती श्री आवडजी, ले मूलसिह भाटी

भानुप्रकाश
भारत के दुर्ग, ले दीनानाथ दुबे
प्राचीन भारतीय लिपिमाला, ले गो ही ओझा
भीलवाड़ा दर्शन
मरु भारती
महाभारत
मुँहता नैणसी री ख्यात, सम्पा बद्रीप्रसाद साकरिया
राजस्थान जिला गजेटियर, सीकर, सम्पा सावित्री गुप्ता
राजस्थान थ्रू एजेज, ले डॉ दशरथ शर्मा
राजस्थान पत्रिका (दैनिक), जयपुर
राव-भाटो की पोथियाँ
राष्ट्रदूत (दैनिक), जयपुर
(श्री) ललिता सहस्रनाम स्तोत्रम्, भू गोपाल नारायण बहुरा
लावण्य-नागरिक विकास समिति, साभर लेक, स्मारिका
लोक-पूज्य देवियाँ, ले डॉ भवरसिह सामोर
लोहार्गल का ऐतिहासिक व पौराणिक महत्त्व तथा रुद्राक्ष महिमा, ले महन्त लक्ष्मणाचार्य, मोहन प्रकाश कौशिक
लोहार्गल महात्म्य, ले रामनरेश मिश्र
वरदा श्रावणी, २००२ वि , शेखावाटी के शिलालेख, प झाबरमल्ल शर्मा
विष्णु पुराण
स्टोरियो डे मोगोर अर्थात् मुगल इण्डिया, ले निकालो मानूची, अनु सम्पा विलियम इरविन
सकराय माता की विजिटर्स बुक
(श्री) सकराय माताजी का वृत्तान्त, ले बाबूलाल शमा
शाकम्भरीश्री, ले डॉ बाबूलाल शर्मा
शेखावाटी का इतिहास, ले रतनलाल मिश्र
शेखावाटी के शिलालेख, ले सुरजनसिह शेखावत
(श्री) सच्चियाय माता मदिर की पावन तीर्थ-स्थली
साभर की समराय माता, अर्थात् शाकम्भरी महामाया कथा, ले लक्ष्मीनारायण
सिरोही राज्य का इतिहास, ले डॉ गौ ही ओझा
हलायुध कोष
हिन्दुत्व, ले रामदास गौड
हिन्दू धर्म कोष, ले डॉ राजबलि पाण्डेय